

और श्वेताम्बरियोंने उसे मोल ले लिया । इसी प्रकार अन्तरीक्ष पाश्वनाथका मुकुटमा भी बहुत कुछ श्वेताम्बरोंके पक्षमें फैसल हुआ । जब हम यहाँसे और आगे किसी हर्षकी आशामें बढ़ते हैं तो फिर निराश होना पड़ता है । लज्जा एवं दुःखकी बात है खंडगिरीसे ३ जैन मूर्तियोंको पटना अजायबघरवालोंका उठा ले जाना । जो अभी हालमें जैन समाजके घोर आन्दोलन और सत्याग्रहकी आवाजसे विहार सरकारने वापस लौटाई हैं । इसके बाद ही फिर जैन समाजकी धार्मिक आघात सहना पड़ा । वह है फूलफतेके कोलहूदोल मंदिरका लूटा जाना, शाल्योंको फाड़ा जाना और मूर्तिको तोड़ा जाना एवं सुरा ले जाना । यदि यहीं पर इन धार्मिक आघातोंकी इति हो जाती तो भी अच्छा था परन्तु नहीं उधर बटेश्वरमें त्रिनेन्द्र देवकी मूर्त्तिका निकालना रोका गया और इधर आजूके मंदिरमें साहब, लोग जूते पहिने घुस गये । इस प्रकार आघातों पर आघात सहते-हुये समाज जर्जरित हो ही रही थी कि इतनेमें फिर शोलापुरसे समाचार आया कि दानवीर सेठ बालचंद रामचंद और सेठ फूलचंद रामचंदको विकराल फाँड़ने जैन समाजमें सदाके लिये छीन लिया । लिखते हुए दुःख होता है कि समाजके ये घाव पूरे भी नहीं थे कि युद्धज्वर एन्फेजुआने भी समाजके क्षत शरीरमें एक-दमसे कई घाव कर दिये । ये घाव-जातिप्रबोधकके सम्पादक, सुलेखक और सुवक्ता बाबू दयाचंद्रजी गोयलीय, सेठ दासोदासजी मथुरा, पं० उमरावसिंहजी गुणपत, बाबू छेदीलालजी रईस बनारस उप

सभापति स्या० म० वि० कशी, बाबू छेदीलालजी अग्रवाला, बलकृतां और पं० ब्रजलालजीके वियोगसे हुए हैं । इसी वर्ष जैन सिद्धांतों पर भी खूब हाथ साफ किये गये-अनेक जैन शास्त्रोंका खंडन हुआ है और कड़ा गया है कि ये सर्वत्र भाषित नहीं हैं । इस प्रकार जैन समाजको इस वर्ष अनेक दुःखप्रद घटनाओंका सामना करना पड़ा है । संतोष केवल यही हुआ है कि इस वर्ष इन्दौरके दानवीर रायबहादुर सेठ हुकमचंदजी सर की पदब से विभूषित किये गये हैं और दिहलीमें महिला आश्रम, कारंजामें महावीर कर्म-ब्रह्मचर्याश्रम, और शिमलेमें जैन मन्दिरकी स्थापना हुई है । श्रीयुक्त पं० अजुनलालजी सेठीकी नजरबन्दीका दुःख इस वर्ष भी ज्योंका त्यों बना रहा ।

हमें इस बातका भी खेद है कि अनेक विज्ञ चाधाओंके कारण इस वर्ष दिगम्बरजैन नियमित प्रकार पाठकोंकी सेवामें नहीं पहुँच सका है । ग्राहकगण संतोष रखें इस वर्ष समय ही पर-सेवामें पत्र भेजनेका पूर्ण ध्यान रखा-जायगा ।

ॐ ॐ ॐ  
चार वर्षसे युरोपमें जो युद्ध चला रहा था-  
जिसमें लाखों मनुष्योंकी  
शिरखर सम्मेलनका माणाहुति दी गई  
सामला । और अरबों रूपया अग्नि  
और पानीमें झोंक दिया  
गया-वह भी शान्त हो गया । भारतवर्षमें जो  
हिन्दू मुसलमानोंका वैमनस्य सताचिदियोंसे

चला आ रहा था वे भी आज कन्येसे कन्ये  
मिलाकर देशकी उन्नतिमें लग गये; परन्तु शोकके  
साथ लिखना पड़ता है कि दिगम्बरियों और श्वेता  
म्बरियोंका युद्ध-पारस्परिक वैमनस्य जो बीस  
वर्षसे भी अधिक समयसे चल रहा है अभी तक  
शान्त न हुआ। दोनों पक्षोंके कई नेता इसी युद्ध-  
में वीरगतिको प्राप्त हो गये और अब तक लाखों  
रुपये सरकार और वकीलोंके जेबमें गये, पर परि-  
णाम वही जो पहिले था। हम एक बार फिर  
दोनों पक्षोंके नेताओंसे निवेदन करते हैं कि यदि  
जैन धर्म और जैन समानकी उन्नति अभीष्ट है  
तो किसी उपायमें इस धार्मिक युद्धको बन्द  
फरो। अदालतके फैसले पर ही भरोसा रखनेसे  
यह युद्ध शान्त नहीं होनेका। इसके लिये सबसे  
उत्तम उपाय यही है कि दोनों पक्षवाले आगे  
बढ़कर हाथमें हाथ मिलायें और कहें कि हम  
दोनों परमपिता महावीर स्वामीके पुत्र हैं—भाई  
भाई हैं—हमारा और तुम्हारा लड़ाई झगड़ा कैसा।

ॐ ॐ ॐ

हम पहिले ही निवेदन कर चुके हैं कि  
इस वर्ष विशेष अंक नि-  
विशेष अंक— कालनेका पूर्ण विचार नहीं  
या पण्डु पीलेमें हमारा

विचार हो गया। समय बहुत हो चुका था  
इस कारणे श्रीमतासे काम हुआ—इसीसे हम  
इस अंकको सजीव सुन्दर नहीं बना  
सके हैं। तब भी इसमें विद्वानोंके लेख और  
कविताएं सुपात्र हैं। हिन्दी भाषाके लेखोंमें  
पं० जगदीशसिंहजी ग्यायत्रीधर, बाबू मुरनभातुजी  
महाराज, बाबू ज्योतिरामजी आदिके लेख ध्या-

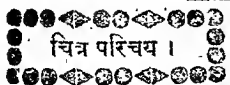
नसे पढ़ने योग्य हैं। मि० हरवर्तवारन लन्डन  
और मि० चंपतराय जैन वैरिस्टर हरदोईके  
अंग्रेजी भाषाके लेख भी पठनीय हैं।

गत वर्षोंमें हम पाठकोंकी सेवामें अनेक  
तीर्थों, प्रसिद्ध स्थानों, संस्थाओं, धनवानों,  
विद्वानों, त्यागियों और मुनियोंके चित्रोंके  
सिवाय विदेशीय विद्वानोंके भी चित्र समर्पण  
कर चुके हैं। इस वर्ष भी अजमेर,  
रामटेक, सिंहपुरी, चन्द्रपुरीके भव्य  
दर्शनीय दि० जैन मन्दिरोंके चित्रोंके  
सिवाय स्वर्गवासी सेठ बालचन्द रामचन्द और  
फूलचन्द रामचन्दजी शोलापुरके चित्र उनकी  
कृतियोंके स्मरण करानेके लिये पुनः दिये  
गये हैं। हमें विश्वास है कि इस वर्ष हम जो  
कुछ लेकर पाठकोंकी सेवामें उपस्थित हो सके  
हैं उसे अवश्य स्वीकार करेंगे जिससे हम भी  
अपने परिश्रमको सफल समझेंगे।

ॐ ॐ ॐ

दि० जैन समानमें यही एक मात्र ऐसा पत्र  
है जो साल भर तक पत्र  
इस वर्षका देनेके अतिरिक्त तीन चार  
उपहार। रुपयेकी पुस्तकें भी ग्राहकोंको  
भेट स्वरूप देता है। इस वर्ष

भी दि० जैनके ग्राहकोंको स्व० दानवीर  
सेठ माणिकचन्दजीका ९०० पृष्ठका  
जीवनचरित्र सुंदर ११ की मिल्दका १।)  
उपहारी मूल्य और डाकभय १।) लेकर उपहा-  
रमें दिया जायगा। जीवन चरित्र तैयार हो  
गया है श्रीमदी मय पत्रके मूल्य ३।) की  
पी० पी० से ग्राहकोंकी सेवामें भेजा जायगा।



### चित्र परिचय ।

स्वर्गवासी सेठ बालचन्द्रजी राम-चन्द्रजी और सेठ फूलचन्द्रजी राम-चन्द्रजी सोलापुरके चित्र हैं—इनके विषयमें विशेष वर्णन—‘दो सठोंकी शोचनीय मृत्यु’ शीर्षक लेखसे ज्ञात होगा ।

अजमेरका दि० जैन मन्दिर और नशियां—यह दोनों मन्दिर और नशियां (बाहरी मन्दिर) श्रीयुत रायबहादुर सेठ नेमीचन्द्रजी टीकमचन्द्रजीके निर्माण कराये हुये हैं । मन्दिरके भीतर काशी अयोध्या आदि तीर्थों और नगरोंकी रचना सोनें चांदीसे की गई है जिसमें लाखों रुपया व्यय हुआ है—सेठजी ऐसे प्रभावनाके कार्यको करके अपना नाम अजर अमर कर गये हैं । यह दोनों स्थान दर्शनीय हैं—अजमेर जानेवालोंको इन स्थानोंको देखना न भूलना चाहिये ।

श्री अतिशय क्षेत्र सिंहपुरीका दि० जैन मन्दिर—यह श्री श्रेयांसनाथ महाराज ग्यारहवें तीर्थंकरका मन्दिर जन्मकल्याणके समयका है । मंदिरजीमें एक पद्मासनस्थ प्रतिविम्ब श्यामवर्ण श्रेयांसनाथ स्वामीकी ३ फुटके अनुमान ऊंची विराजमान है—प्रतिविम्ब पर स्थापनाका संवत् १९०० लिखा है । यह स्थान बनारससे छः मील दूर सारनाथ स्टेशनसे एक मीलपर सारनाथ ग्राममें है । यहां जैनी कोई नहीं है । १०—६० मनुष्योंके रहने लायक एक धर्मशाला है । यहांका ध्वज बनारसके जैनी भाइयोंकी ओरसे होता है ।

श्री अतिशय क्षेत्र चन्द्रपुरी वा चन्द्रावतीका दि० जैन मन्दिर—यह मन्दिर बनारससे १४ मील और सारनाथ रेल्वे स्टेशनसे ९ मील गंगा नदीके किनारे है । चन्द्रपुरी—चन्द्रावती यह तीनों वर्ष पहिले रघुवंशी सरदार देवमनका देवस्थान था । उनका बनाया हुआ किला भी गंगाके किनारे है । यह मन्दिर श्री भगवान चन्द्रप्रभके जन्म कल्याणके समयका है । इसमें श्यामवर्ण पद्मासन दो फुटके अनुमान ऊंची प्रतिमा महाराज चन्द्रप्रभकी विराजमान है । छोटी बड़ी ६ प्रतिविम्ब और हैं । यह मन्दिर स्वर्गवासी बाबू देवकुमारजी आराके पितामह बाबू प्रमूदपालजीका बनवाया है । इसका प्रबन्ध भी उन्हींकी ओरसे होता है । मंदिरके पास एक धर्मशाला है ।

श्री अतिशय क्षेत्र रामटेकके दि० जैन मन्दिर—यह स्थान मध्य प्रदेशमें नागपुरसे २४ मील दूर है—भी० आई० पी० रेल्वेका यहां स्टेशन भी है । यहां कुल आठ मंदिर हैं । कई मंदिर प्राचीन हैं—सबसे पुराना मंदिर लाल पत्थरका बना है । इसमें श्री शान्तिनाथ स्वामीकी प्रतिमा चतुर्थ कालकी जो अति मनोज्ञ और १९ फुट ऊंची है । इन्हींमेंसे कई मंदिरोंका यह दृश्य है ।

श्री अतिशय क्षेत्र रामटेकके मंदिरके—समवधारणका यह प्रतिविम्ब है—यह ऐसी शिल्पकलाका उदाहरण है जो देखते ही बनता है ।



चतुर्थ वार्षिक रिपोर्ट-जैन श्वेताम्बरी  
तेरापंथी सभा कलकत्ता । यह रिपोर्ट माव गुप्त  
सं० १९७३ से चैत्र गुप्त १९७५ तककी  
है। विवरणके पश्चात् सभाश्रित पुस्तकालयका  
परिचय है। इसके बाद उक्त समयके आय  
व्ययका आंकड़ा है। आय ८४१२।=॥ है  
और खर्च ५३४०।।।=॥ हुआ है। सभामें  
पूजी ६०७७५।।=॥ है। सभा द्वारा कोई आ-  
दर्श कार्य हो यह हमारी इच्छा है। रिपोर्ट  
केशरीचंद कोठारी ११९ केनिगस्ट्राट कल-  
कत्ताको लिखनेसे मिल सकती है।

जैन समाचार-श्री जैन सिद्धान्त भुवन  
वर्षद्वैका यह मुख पत्र है। इसी वर्षसे निक-  
लना प्रारम्भ हुआ है। आसोन मासका दूसरा  
अंक हमारे पास समालोचनार्थ आया है।  
इसमें ४ पेज हैं। पत्रके आधे भागमें भुवनके  
उद्देश्य और मूनीपत्र है। शेषमें तीन लेख हैं।  
जैन समाचार एक भी नहीं है। वार्षिक मूल्य  
सर्व साधारणमें १ रुपया, भुवनके सभासदोंको  
मुफ्त दिया जाता है। इसके लिये मनेजर  
श्री जैन सिद्धान्त भुवन वर्षद्वैक नं० ४ से  
पत्रव्यवहार करना चाहिये।

कारिकादास ग्रन्थमालाका छठा और  
दसवां पुष्प। श्रौणिकोंका गान भजनामृत है।  
इंटे पुष्पके रचयिता वाचू जलन्धर जैन पिरो-  
नाचंद हैं और 'प्रकाशक' श्रीमती वसुधादेवी

जैन हैं-मूल्य =॥ है। १० व्रं-पुष्पकी 'संग्रह  
कर्ता' स्व० विदुषीरत्न श्रीमती वसुधादेवी जैन  
हैं और प्रकाशक इंटे पुष्पके रचयिता हैं-मूल्य  
=॥ है। दोनों पुष्पोंमें गजल रसिया आदि  
छन्दोंमें स्त्री और पुरुषोंके गाने लायक उपदेशी  
भजन हैं। छठा पुष्प बी. ए. सी. डी. जैन  
एण्ड कम्पनी और १० वां पुष्प मनेजर  
आनन्द पुस्तकालय शिकोहाबाद (यू० पी०)  
से मिलता है।

जैनधर्मके विषयमें सम्मत्तियों प्रथम  
भाग-इस पुस्तकमें जैन धर्मके विषयमें अजेन  
विद्वानोंकी सम्मत्तियोंका संग्रह है-जिसे श्रीधुत  
माटर पं० विहारीलाल शर्मा वी० ए० अमरोहाने  
संग्रह किया है। यह पुस्तक सर्व साधारणमें  
प्रचार करने योग्य है जिससे जैन धर्मके विषयमें  
जो सम्प्रन्त विचार फैल रहे हैं वह दूर हों।  
पुस्तकका मूल्य ॥॥ सेकड़ा ३) है। अजैन  
विद्वानोंको दिना मूल्य। मंत्री जैन धर्म संरक्षणी  
सभा अमरोहाको लिखनेसे प्राप्त कीजिये।

श्री सामायिक प्रतिक्रमण सूत्र-  
४२ पृष्ठकी पुस्तक है। इसमें श्वेताम्बर शास्त्र-  
नुसार सामायिक और प्रतिक्रमण सूत्रका विधि  
सहित Mr L. C. Ranka ने वर्णन किया  
है। मूल्य एक प्रतिका =) सेकड़ा १५) श्री  
आनुपूर्वी या नित्यमरण-इसमें नित्यम  
रण किसका और किस प्रकार करना चाहिये इसका  
वर्णन है। मूल्य एक प्रतिका ॥ १००) प्रति  
४५) इन दोनों पुस्तकोंके प्रकाशक नीरतनम  
कोठरा और प्रचारक मंत्री श्री भ्रमगोपास  
जैन पुस्तक मंडल अजमेर हैं।



कच्छी जैनमित्र-का विशेष अंक ।

इसके मुखपृष्ठ पर म० गांधीजी कई अवस्थाओंका चित्र बड़ा ही मनोहर और आकर्षक है जिससे महात्मा गांधीके सारे जीवनचरित्रका परिज्ञान हो जाता है । इसमें अनेक लेख, कविता और श्लोक हैं जो अच्छे लेखकोंकी लेखनी द्वारा लिखी गई हैं । हम सम्पादक और प्रकाशकके उत्साहकी सराहना करते हुए गुजराती जाननेवाले ग्राहकोंसे कहेंगे कि इसके ग्राहक अवश्य बनें । मैनेजर 'कच्छी जैनमित्र' काथाप्रान्तर, चम्पईको लिखनेमें मिलता है । वार्षिक मूल्य ४) है ।

'जैनलोकांचा इतिहास' अथवा प्रथमा-  
नुयोग शास्त्र । यह पुस्तक सराठीमें श्री चन्द्रमा-  
गर ग्रन्थमालाका द्वितीय पुष्प है । लेखक हैं  
अनंततनय और प्रकाशक ग्रन्थमालाके सेक्रेटरी  
भैरवभा पद्मव्यापा पाटील होमूर (वेलगांव) । पु-  
स्तकमें, चौबीस तीर्थंकरों, १२ चक्रवर्ती आदि  
त्रैलोक्यशालाका पुरुषोंका संश्लेषमें वर्णन है फिर  
वीर निवारणके ७०० वर्ष बाद तक केवली,  
श्रुत केवली और ग्यारह अंग, दश पूर्वके  
पाठी जो महात्मा हो गये उनके नाम निर्देश हैं,  
फिर वीर निर्माण सं. ५०० से १८०० वर्ष तक  
जो आचार्य और कवि हो गये उनके जीवनकाल  
और नाम दिये हैं तथा उनका संश्लेषमें वर्णन भी  
दिया है । उनके बाद कर्णाटक जैन कवियोंका  
वर्णन देकर जैन राजाओंका वर्णन है फिर, जैन  
ग्रन्थों, तीर्थों, पर्वों और अंजन विद्वानोंकी जैन  
धर्मके विषयमें सम्प्रतिष्ठा देकर पुस्तक समाप्त  
की गई है । पुस्तकका कागज, छपाई आदि  
उत्तम हैं । मूल्य १२ आने । प्रकाशकसे प्राप्य ।

श्री ओसवाल जैन संस्थाएं, अजमेरकी  
रिपोर्ट है । इसमें ता० २७ अप्रैल सं० १९से  
३० जून १८ तकका हिताव और दातारोंकी  
नामावली है । अजमेरमें ओसवाल जैन स्कूल,  
छात्रावास (जो आजकल बंद है) और  
कन्याशाला यह तीन संस्थाएं हैं परन्तु कागज  
और छपाईकी मंहगाईके कारण केवल स्कूलका ही  
व्योरा दिया जा सका है । इतने समयमें करीब  
(०००) का खर्च हुआ और आमदनी भी  
१०००)से अधिक ही हुई है । ओसवाल भाइ-  
योंको इन संस्थाओंकी सहायता करना और  
इनसे लाभ उठाना चाहिए ।



मन्दिर निर्माण-जिमले जैसे महत्त्वके  
स्थानमें श्री जिने द्रव्यके मन्दिरकी स्थापना  
हो गई ।

अनाथाश्रम-देहलीके भारतवर्षीय जैन  
अनाथाश्रममें उन बालकोंके पालन पोषणका प्र-  
बन्ध किया गया है जिनका कोई रक्षान्वेषण कर-  
नेवाला न हो । जैन विधवा स्त्रियों और अप्रहज  
स्त्री पुरुषोंकी भी मासिक वृत्ति आश्रमकी ओर  
से दी जाती है । पञ्चव्यवहार वा० महावीरप्र-  
साद जैन मैनेजर आश्रमसे करना चाहिये ।

सेनाीके लिये, कमीशन-श्रीयुत  
प० अर्जुनलाल सेठी बी० ए० जो कई वर्षोंसे  
बेह्लोरके फिलेय नगरबंद हैं उनके मुकदमेकी  
जांचके लिये भारत सरकारने एक कमीशन

बैठाया है। बाबू अजितप्रसादजी वक़ील लखन-  
ऊने कमीशनके पास एक प्रार्थना पत्र भेजा है  
आशा है सेटीजी अब शीघ्र बंधनमुक्त होंगे  
क्योंकि वे निर्दोष हैं।

**ब्रह्मचर्याश्रम**—कारंजा (आकोल)में श्री महावीर ब्रह्मचर्याश्रमकी स्थापना हुई है। वी० ए० तक शिक्षा प्राप्त अविवाहित नवयुवक दुधनी (शोलापुर) निवासी देवचंद मूरचंदजीने इस आश्रमके लिये जीवन अर्पण कर दिया है। श्रीव्र ही इसके लिये एक लाखका ध्रुवफंड किया जायगा। धर्मशिक्षा देनेके लिये श्रीमान पं० चंशीधरजी शास्त्री नियत हैं।

**सूचना-**श्री कृपम ब्रह्मचर्याश्रमकी प्रवन्ध  
कारिणी कमेटीकी बैठक पहाड़ी पर दिहलीमें  
ता० २१ दिसम्बर और १ जनवरी सन् १९को  
होगी। निषममें स्थान, उद्देश्य और पठनक्रम  
तथा कार्यकर्ताओंकी नियुक्ति पर विचार होगा।

मिलगई-खण्डगिरिसे जो तीन जैनमूर्त्तियां  
पठनाके अनायबखरवाले ले आये थे व्ह ता०  
११ नवम्बरको वापस मिलगई ।

शोकजनक मृत्युपुणः- थोड़े ही दिनमें  
 "ननसमानकी गोदमें कई सज्जनोको निर्दयी कालने  
 छीन लिया । उनमेंमें सेठ दामोदरदासजी मथुरा,  
 ल० भूदयालजी, बाबू छेदीलालजी रईस बनारस  
 उपसभापति श्री स्याहदा महाविद्यालय कानो,  
 नाति प्रबोधकके संपादक श्रीधुत बाबू दयाचंदजी  
 गोवर्धीय बी० ए०, पी० उमरायमिहजी मुनान,  
 पी० ब्रजलालजी पिढान्तगाम्भी, बा० छेदीलालजी  
 "अम्रवाक कनकताका स्वर्गवास होनेमें ननसमा-  
 नकी बहुत क्षति हुई । हम एक लोकन्तर्गत

आत्माओंके लिये हृदयसे शोक प्रकाश करते हैं और उनके कुटुंबियोंसे समवेदना प्रगट करते हैं तथा उनकी आत्माओंको शांति मिले एतदर्थ इष्ट देवसे प्रार्थी हैं।

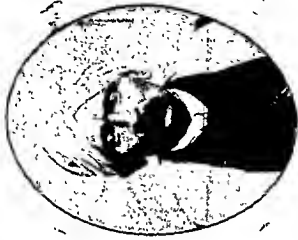
रथ यात्रा—श्री कुलभूषण देशभूषणके निर्वाण स्थान कुंथलगिरिमें मि० मार्गशीर्ष सु० १५ को रथोत्सव और सेतवाल जैन सभा होगी।

दानवीर दो सेठोंकी  
शोचनीय मृत्यु ।

हमको लिखत हुए अत्यंत दुःख होता है कि सोलापुरके सुप्रसिद्ध दानवीर व्यापारी गांधी हरीभाई देवकरणजी नामकी फारमके मालिक व भारतीय जैनसिद्धांत प्रकाशिनी संस्थाके परम संस्थापक व संरक्षक दानवीर सेठ बालचंदजी रामचंदजी गांधीका गत कार्तिक वदि ८ रविवारके दिन मारात्मक इन्फुलर्येजा ज्वरसे स्वर्गवास हो गया । इनके छोटे भ्राता सेठ फूलचंद रामचंदजी गांधीका ७ दिन पहिले कार्तिक वदि २ सोमवारको म्वर्गवास हो गया । वड़े २ प्रसिद्ध वैद्य डाक्टरोंसे इलाज कराया परन्तु निदेयी चिकित्सा फालने जैन समाज और इनके लोगोंपर कुछ भी दया नहीं करके अकालमें ही इन दोनों महानुभावोंके आश्रयसे मक्को प्रेषण कर दिया । वड़े सेठ बालचंदजी अत्यंत शान प्रकटिके होकर वड़े ही हिम्मतवान महान्या थे । निराश्रय गरीबोंपर वड़े ही दयालु थे, उन पर बड़ा प्रेम प्रकट करने थे । धर्मके विषयमें वड़े ही अनुगामी व अभिन

# भारतीय जैनसिद्धांत प्रकाशिनी संस्थाके

परमसंस्थापक और संरक्षक—



दानवीर स्वर्गीय श्रोत बालचंद रामचंदजी गांधी,  
सोलापुर।

जन्म संवत् १९२१.

फाल्गुन सुदी ८.

मृत्यु संवत् १९७४।

आश्विन वदी ८ रविवार.

दानवीर स्वर्गीय सेठ फूलचंद रामचंदजी गांधी,  
सोलापुर।

जन्म सं० १९२७.

श्रेष्ठ वदी ८।

मृत्यु सं० १९७४.

आश्विन वदी ९ सोमवार।

रखनेवाले थे। इन सब गुणोंके होने हुये बड़े ही पुण्यशाली धनाढ्य होने पर भी इनके धनवाले सब ही को गर्व क्या है सो नहीं जानते। सब ही अत्यंत निरभिमानी थे। गरीबसे लेकर धनाढ्य श्रीमंतों तक सर्वके साथ एकसा सरल चर्त्ताव था। इसी कारण सबकी इनके घरानेपर पूज्यबुद्धि थी। बाळचंद सेठकी मृत्यु होने ही सारे शोलापुर शहरमें विजलीकी तट शोकदुःख फैल गया। सबका सब बाजार एकदम बंद होगया और अंतर्मे समय हजारों मनु य इनके मकानपर आये और इनकी रथीके साथ हजारों लोग शोकसंतप्त चेहरा लिये, इनकी दुःख क्रियामें सामिल हुये। शहरका ऐसा कोई भी घर वा शिक्षित अशिक्षित, धनाढ्य गरीब, हाकिम, वकील मुखत्यार नहीं था जो इनकी रथीके साथ न हो। जो लोग मिलके मालिक थे वे भीमार थे। उन्होंने अपना २ प्रतिनिधि भेजा था। जिनमें सुशिक्षित ननता ही बहुत थी। इन्ही सब बातों परमे देखनेमें आया कि इनके घरानेपर सब ही की पूज्य- बुद्धि थी। इनके लघु भ्राता फूलचंदजी सेठ भी बड़े आनंदी पुरुष और दयालु थे। इन दोनों सदगुणी भ्राताओंके वियोगसे इनके घराने पर दुःखका बड़ा भारी पहाड़ ही गिर गया परन्तु आयु नमके अंत होनेपर किसीका भी जोर नहीं चलता। लाचार इनके दोनों पुत्रों व इनके छोटे भ्राता (जो फूलचंदजीसे बड़े हैं) को इस दुःखों धैर्यके साथ सहन करना ही चाहिये। आज समस्त शोलापुर व समस्त जैन समाजकी इनके दुःखमें परम सहानुभूति है।

इस घरानेके मूल पुरुष ईंदर जिलेके जादर नामक ग्रामके रहनेवाले थे। इनके मूल पुरुष सेठ हरिचंद मूलचंदजी विक्रम संवत् १८४९ में पंढरपुर तालुकके अंतर्गत तारापुर गांवमें आये थे और प्रथम ही पंढरपुर शहरमें कारबार किया। तत्पश्चात् थोड़ा सा द्रव्य उपार्जन किये बाद संवत् १८६० में शोलापुर नगरमें गांधी हरिभाई देवकरणके नामका फॉर्म खोला और वि० संवत् १८६४ में मूलचंद नानचंद नामका पूनामें फॉर्म खोला था जो अबतक विद्यमान है। संवत् १८७० में बहुतसा द्रव्य लगाकर पूनेकी वेताल पैठमें चंद्रमभ भगवानका एक मंदिर बनवाया, तत्पश्चात् सं० १९०९ में हजारों रुपये खर्चे करके शुक्रवार पैठ शोलापुर में आदिनाथ महात्मका एक सुंदर मंदिर बनवा कर प्रतिष्ठा कराई। इसके सिवाय इस घराने- वालोंने तथा सेठ हेमचंद दलजीने मांगीतुं- गीजीपर १ उत्तम मंदिर बनवाकर प्रतिष्ठा कराई। तत्पश्चात् संवत् १९३२ में कुंथलगिरी तीर्थपर व संवत् १९३४ में सम्मेल गिलरजी तीर्थपर मंदिर बनवा कर प्रतिष्ठा कराई। तत्प- श्चात् सं० १९९१ में सेठ मोतीचंद परमचंदजी व इस घरानेने काठियावाड़ पालीताना तीर्थपर एक सुंदर मंदिर बनवाकर प्रतिष्ठा कराई। इसी प्रकार अनेक नगहकी दानशाला व पाठशालाओंमें इनकी तरफसे सहायता मिलती है।

कलकत्ते शहरमें जो भारतीय जैनसिद्धांत प्रकाशिनी संस्था अनेक प्राचीन ग्रंथोंका जीर्णो- द्धार करके प्रचार कर रही है उसको (१०००) देकर हरीभाई देवकरण जैन ग्रंथमाला प्रारंभ

कराई और १० हजार देकर प्रसिद्ध महान ग्रंथ गोमटसारणीका संस्कृत भाषाटीका सहित जीर्णोद्धार करा रहे हैं इसके सिवाय एक और भी महान कार्यके लिये प्राइवेट इच्छा प्रगट की हुई है वह कालांतरमें सबके जाननेमें आवेगी। इसके पश्चात् स्वर्गीय न्यायवाचस्पति पंडित गोपालदासजी व प. धन्नालालजी बगैरह डेप्युटेशन लेकर शोलापुर गये थे तो २८०००) हजार रुपये मोरिनाके जैनसिद्धांत विद्यालयमें प्रदान करके अपनी दानवीरता प्रगट की। तथा पुनेके पास हिंगणे बुद्रकमें प्रोफेसर कर्वेका चलाया हुआ अनाथबालिकाश्रम है उसमें अपनी मातुश्री मेनाबाईके स्मरणार्थ 'मेनाबाई श्राविकाश्रम' नामक संस्थाकी विल्डिङके लिये ४०००) रुपये दिये और दश दश रुपयेकी १० स्कालरशिप जैन भगिनिशिक्षा देना स्वीकार किया था। इसके सिवाय शोलापुरके हाईस्कूलमें सबे साधारण विद्यार्थियोंको पढ़ानेका स्थान न मिलनेसे एक और भी हाईस्कूलकी आवश्यकता प्रतीत होनेपर १७०००) हजार रुपये प्रदान करके हाल ही में हरीभाई देवारण हाईस्कूल स्थापित किया है। इसके सिवाय और भी अनेक संस्थाओंमें बराबर हायता देने रहे हैं। इनके दानत्व वीरतामें जैनसन्मान बहुत ही क्लृप्ति है यह बात प्रसिद्ध है। इस परानेके स्त्री पुरुषोंने धर्म कर्मोंमें बहुत द्रव्य लगाया है। ऐसे परानेके एक साथ दो दानि पुरस्कोक पध्द होनेमें जैन सन्मानकी बड़ी भारी हानि होनेके सिवाय गोला, र गहरकी बड़ी भारी हानि हुई है।

उक्त स्वर्गीय सेठ बालचंदजीका जन्म संवत् १९११ में शोलापुरमें हुआ था। सुबई दिगंबर जैन प्रांतिक सभाके सभापतिका मान मिला था। तथा इनकी सर्व प्रकारसे योग्यता जानकर सरकारकी तरफसे आनरेरी मजिस्ट्रेटके अधिकार भी देनेमें आये थे परन्तु शरीरकी अस्वस्थताके कारणसे इस पदको त्याग दिया था। सेठ फूलचंद भाईका जन्म संवत् १९२७ में शोलापुरमें हुआ था। ये होशियार सात्विक प्रकृतिके आनंदी पुरुष थे। हमेशा नैतिक व धार्मिक व्यवसायमें मग्न रहते थे। इस कारण इन्हें अनेक महाशय राजा फूलचंद कक्षा करते थे। ये गायन विद्याके परम भक्त होकर बड़े मार्मिक थे। मृत्यु समयमें भी धर्मार्थ बड़े सेठने ११०००) हजार रुपये और छोटे सेठने ८०००) रुपये देना किये हैं सो किस धर्म कार्यमें किये हैं सो अभी खुलासा प्रगट नहीं हुआ है।

इस परानेके अनेक जगह कारबार चलते हैं। जिनमेंसे बालचंद उगरचंद नामके प्रसिद्ध फारमने ईस्वी सन् १९१२ में रुईकी खरीदका बड़ा भारी सट्टा किया था ऐसा बड़ा हिंदुस्थानमें आज तक किसी व्यापारीने नहीं किया।

उपयुक्त दोनों सेठोंके फालोकवाससे सपको बड़ा भारी दुःख हो रहा है। तथापि इस फारोचारके मालिक वर्तमान में सेठ टीगचंद रामचंदनी गांधी भी बड़े प्रसिद्ध व्यापारी हैं। इनकी प्रगति भी दानत्वगुणमें सुविन है। गरीब लोगोंपर इनकी क्लिप्तनी तथा वे सो नालु वर्तमान मदेगाईमें दिगाई हुई मनकी उदात्ता व दान

धर्म परसे दिम्बती है । गरीबोंके कष्ट दूर करनेके लिये आपने स्वयं प्रत्येक घर पर जा जाकर कपड़े धान्य वगैरह दिये हैं । इसी कारण सबको अपने भ्राताओंकी स्मृति बराबर बनी रहेगी इसमें कोई शक नहीं । शेषमें हम उक्त श्रेष्ठिवर्य हीराचंदनी व उनके भ्रातृपुत्र वगैरहकी दीर्घायु व धर्म कार्यमें दान देनेकी वीरताकी वान्छा करते हुये इस शोकसंवादको पूरा करते हैं ।

संपादक ।



६६ नूतन वर्षाभिर्नन्दन ११

स्वागत नूतन वर्ष तुम्हें है स्वागत आओ,  
आओ पावन हृदय शुभग अन्यागत आओ ।  
गत-गौरव-स्मृति स्वाभिमानके केन्द्र अञ्जवर !  
उच्च गौरवादित्य-स्मृति ! सत् भारत ! आओ ॥१॥  
गौरवास्पद घटनाएं तुम इस भारतकी,  
अपने वक्षस्थलमें धरे हुए हो गतकी ।  
तुम प्रातस्मरणीय ' वीर ' की याद दिलाने,  
महिमा और दिवाते भारतीय-यौवतकी ॥२॥  
कल्याणस्पद ! क्षेमकर ! शुभप्राप्त ! निहासो-  
निज प्रिय भारत-दशा पतित जो हुई विचारो ।  
जाति समाजिक-दशा-पतन कितना गहरा है ?  
नव जीवन-सञ्चार करो फिर हमे उबारो ॥३॥  
निद्रा, साहस, सत्य, स्नेहकी झलक नहीं है,  
जीवनका साफल्य नहीं अब प्राप्य कहीं है ।  
ऐक्य-सलिल-कण जहां बरसते रहे साम्यसे,  
द्वेषानल प्रज्वलित हुई चहुं ओर वही है ॥४॥  
पहिले भेन-विकास आपने होगा देखा,  
सत्य-तत्त्व सिद्धान्त-स्नेहको होगा पेखा ।  
फेर पतन भी डाँट आपके आया होगा,

और हमारी लखो भाग्यकी अब तुम रेखा ॥५॥  
भिन्न भिन्न मत पन्थ और समुदाय चलाए,  
धीन द्वेषका वो फल फूट बैर उपजाए ।  
तिम पीछे यवनोसे मति गति भ्रष्ट हुए हम,  
कर्म धर्म कुल लाज सो, न कुछ भी शरमाए ॥६॥  
अहो ! कहें क्या ? सभी बात तुम स्वयं जानते,  
किन्तु न तब भी दुःख रोए विन हृदय मानते ।  
अतः मान्य ! कुछ हमें और भी कह लेने दो,  
कमा करो ! हम निज दुःखड़ा रो तुम्हें सानते ॥७॥  
दशा विगड़ने लगी अब बर ! फेर हमारी,  
चहुं दिशि छाने लगी अविद्यकी अधिगारी ।  
धर्म चिह्न फिर भ्रष्ट बर दिए गए हमारे,  
भारत भू-होगई यवनपति अधिष्ठत सारी ॥८॥  
पहिले क्षत्रिय लड़े कीर्ति अति जिससे पाई,  
पर पीछे सब त्याग मान मर्याद बड़ाई ।  
अक्रूर आदि यवन-सम्राटोंकी सेवा की,  
कुल-महिमा, गरिमा, सुकीर्ति निज सभी गंवाई ॥९॥  
तब भी पर सत् भारतीय महिमाके आकर,  
क्षत्र-वंश-अवतंश, वीर, गुण-गण पति नागर ।  
पीर वंश-मर्यादा-रक्षक थे ' प्रताप ' से,  
जो थे क्षत्रिय-निशा हेतु उद्दीप्त क्षपाकर ॥१०॥  
पीछेसे फिर देखा होगा पतन ही पतन,  
जलते तुम भी रहे न होगे क्या मन ही मन ।  
जब स्वातन्त्र्य-विचार हृदयमें जाता होगा,  
विगत हुआ जब होगा भारत-मा-जीवन धन ॥११॥  
भारतवासी दास बने होवेंगे हा ! फिर,  
सब स्वातन्त्र्य विचार गया होगा नीचा गिर ।  
तभी स्वावलम्बन, उत्साह गया सब होगा,  
नहीं हृदय यह क्यों जाता है हाथ । आज चिरा ॥१२॥  
फिर वीरावद ! श्रवण-सम्पुटमें अब प्रिय तेरे,

आख्यायन्ते । यद्यपि लवणविद्रुपादिप्रभृतिषु विभक्तजीवचिह्नानि न उपलभ्यन्ते तदपि विशिष्टमदिरापानादिभिर्मूर्छितानां नराणां श्वासो-  
श्वासादीनामव्यक्तजीवचिह्नानामपि च तत्र समानजात्यंकुरादीनामव्यक्तजीवचिह्नानां दर्श-  
नेन सम्यग्जीवज्ञानं भवति, तथा पृथिव्यादयः कदापि चेतना सहिताः संघातत्वात् । इत्यादीनि सूक्ष्मविचारपरिपूर्णानि नैकानि प्रमाणानि पृथिव्यादीनां सचेतनाय । विशेषावयवकादिग्रंथेषु महाप्रमाणकत्वमलंकुर्वीणेषु निर्दिष्टानि सन्ति, कृमिप्रभृतयो द्वीन्द्रियाः कथ्यन्ते, तेषां स्पर्श-  
जिह्वास्वरूपेन्द्रियद्वयमात्रात् । पिपीलिकादीनि स्पर्शजिह्वावाणसंज्ञकत्रीन्द्रियमात्रात्रीन्द्रियनाम, भ्रमरादयः चक्षुरिन्द्रियसहिताः चतुरिन्द्रियाः कथ्यन्ते । संपूर्णपंचेन्द्रियाणां पुन नरिकतिर्यम्-  
नुप्यदेवरूपाश्चत्वारो भेदा वर्णिताः । तत्र नार-  
काणां निवासो रत्नप्रभादिषु सतस्त्वयोऽधोभू-  
मिष्वस्ति । तिरश्चापि जलेषु चरमाणानां मकरा-  
दीनां जलचरेति नाम, स्थले विहरतां गोमहिषा-  
दीनां स्थलचरेति, आकाशभागे स्वेच्छापूर्वकं गमनागमनक्रियां कुर्वन्तं च खेचरेत्येते समाना-  
गतेर्नामभिराप्यायं भवति तृतीयभेदेनोच्यमाना मनुष्या जम्बु-धातकी-पुष्कराद्वस्वरूपाद्वैदिक-  
साम्ना जैनशास्त्रमुप्रसिद्धे पञ्चतत्वारिंशद्योजन-  
मात्रे क्षेत्रे उत्पत्तिमाप्नुयन्ति, देवाश्च पुनर्भुवन-  
पतिव्यन्तरज्योतिर्लोकैर्मानिद्वयभेदेन चतुर्विधा-  
स्तन्ति एतेषां सर्वेषामपि जीवानामायुस्त्वित्त-  
रीरादीनां संवर्णनमनेकेषु ग्रन्थेषु निरूपितमस्ति, श्रीमत्तादबोधपटुभिरसाहचरैः । तादस्यस्वरूप-  
स्य जीवस्य मूलस्वभावे निर्मलः सच्चिदानन्द-

मयश्च विद्यते, परन्तु कर्मरूपपौद्गलिकावरणे-  
तस्य मूलस्वरूपमाच्छादितमस्ति, यदा पौद्गलि-  
कावरणं सम्यग्ज्ञानादिना दूरं भवति तदा जीवो-  
मुक्तावस्थां प्राप्यानुपममक्षयमविनष्टमव्यात्राधं-  
सुखमभवति, कर्मणा सह जीवस्य मृत्तिका-  
सुवर्णवदनादिसम्बन्धोऽस्ति, अनादिकर्माणि-  
जीवेन सह संवधितानि भवन्ति, परं शुभाशुभ-  
कारणाधीनजीवप्रदेशेऽस्सार्धं । तेषां परिवर्तनं-  
भवति तानि कर्माणि जिनेर्ज्ञानावरणीयदर्शना-  
वरणीयवेदनीयमोहनीयासुर्नामगोत्रान्तरायभेदतो-  
ऽष्टविधानि मुख्यतया निर्दिष्टानि, तत्र चक्षुषः-  
वस्त्राद्यावः षण्वज्ज्ञानस्यावारकं यत्कर्म तज्ज्ञानाव-  
रणीयमिति कथ्यते, तस्य पंचभेदास्तस्मि-  
नतिश्रुतावधिमनःपर्यायकेवलारणभेदात्, यथा-  
यथावरणानि नष्टां यागन्ति तथा तथा तस्य-  
तस्य ज्ञानस्य संपत्तिः प्रादुर्भवति दर्शनस्यावारकं-  
कर्म दर्शनावरणीयमिति नाम्ना प्रसिद्धिमहति-  
तस्यापि चक्षुरचक्षुरधिकेवलनिर्द्रानिद्रानिद्राप्रच-  
लाप्रचलाप्रचलास्त्यानगृह्णित्वैव नवभेदा उक्ताः ।  
मदस्तेदवलम विनोदनार्थः स्वापो निद्रा, उपर्युप-  
रितदवृत्तिर्निद्रानिद्रा, प्रचलयथात्मानमिति-  
प्रचला, पीनः पुन्येन संघाहितवृत्तिः प्रचलाप्रचला,  
स्वप्ने यया वीर्यविशेषाविर्भावः सा स्त्यानगृह्णि-  
रुच्यते, यस्य कर्मण उदयेन जीवानां सुखा-  
दुःखस्य चोपलब्धिर्भवति तद्वेदनीयं कर्मेति-  
कथ्यते, तदसातासातारूपभेदतः द्विविधं-  
प्रज्ञप्तमस्ति, जीवं कृत्याश्रित्यविशेषरहितं-  
त्रियमाणं कर्म मोहनीयम् तस्य हास्यादिपटु-  
पुरुषत्वीनपुंसकस्वरूपादयो वेदा, अनन्तानुगम्य-  
दीनां प्रोपमानमापालोभरूपाः षोडशभेदा-

सम्यक्त्वमिद्व्यात्वतदुभयमोहनीयमिति सर्वे  
मिलित्वा विंशतिर्भेदा भवन्ति, यस्य कर्मण उद-  
येन जीवा पृथग्यतीनामनुभवं कुर्वन्ति तदायुःक-  
र्मस्यभिधीयते, तस्य देवमनुष्यतिर्यग्नरकायुरू-  
पाश्चत्वारो भेदा भवन्ति, जात्यादीनां पर्यायाणा-  
मनुभवं कुर्वाणस्य नामकर्मणः द्विचत्वारिंशदभेदा  
स्सन्ति, सप्तमस्य गोत्रकर्मणः नीचमुच्चमिति  
भेदद्वयं वर्तते, यस्योदयेन जीवानां नीचोच्चरू-  
पा संपत्तिः प्रादुर्भवति । अष्टममन्तरायकर्मम्,  
यस्य वलेन जीवानां दानादिकर्मणि क्रियमाणे-  
ऽन्तरायो भवति तदन्तरायकर्ममिति गीयते, तस्यापि  
दानलाभभोगोपभोगवैधिरूपा पंचभेदास्सन्ति ।  
एतेषां कर्मणां विस्तारयुक्तं संवर्णनं बहुषु शास्त्रेषु  
रुतमस्ति अत्र त्वन्तीवसक्षिप्ततया दिग्मात्रं दर्शित-  
मस्ति ।  
द्वितीयमजीवतत्त्वम् उक्तं जीवस्वरूपं तद्विपरी-  
तलक्षणोऽनीयो भवति, तस्य धर्मास्तिकायाधर्मा-  
स्तिकायाकाशास्तिकायपुद्गलास्तिकायकालाश्चेति  
पञ्चमकारास्सन्ति, अस्तिकायस्य प्रदेशसमुदा-  
यात्तत्वात् धर्माधर्माकाशपुद्गलानां च प्रदेश-  
समूहरूपत्वादस्तिकायैष्युक्तार्थैर्नामभिः ते व्यव-  
हियन्ते । तत्र धर्मास्तिकायो लोक्कव्यापी, स्वभावा-  
जित्योऽवस्थितः, रूपरहितं चैतद्रव्यमस्ति जीव-  
पुद्गलानां गतिकरणे साहाय्यको भवति, यथा मत्स्यः  
आत्मनि गमनशक्तिः सत्यपि जलसाहाय्यं विना  
गन्तुं न शक्नोति, तथैव जीवपुद्गलो गमनसा-  
ध्यविद्यमाने सत्यपि धर्मास्तिकायसाहाय्यरहितं  
पातुं नैव शक्नुतः, अधर्मास्तिकायस्यापि स्वरूपे  
धर्मास्तिकायसादृश्यमस्ति, विशेषेण पुनर्जीवादिनां  
स्थितिकरणे उपकारं कुरुते । आकाशः लोकलोक-

कव्यापी, नित्योऽवस्थितोऽरूपः पदार्थोऽस्ति,  
योऽवकाशदाने स्वकीयसामर्थ्यं प्रगटयति ।  
एतेषां त्रयाणां स्कन्धदेशप्रदेशा इति त्रयो विभा-  
गास्सन्ति, तत्र समूहरूपः एकपदार्थः स्कन्धः,  
समूहस्य लघुभागः देशः, पुनर्विभक्तुं नैव शक्यते  
यः स प्रदेशो विज्ञेयः । स्पर्शसगन्धवर्णवन्ती  
सर्वाणि वस्तूनि पुद्गलेति नाम्ना संकीर्त्यते,  
तेषु पुद्गलेष्वेव चान्योन्यं श्लेषसूक्ष्मतास्थू-  
लताकारशब्दान्धकारलायाछेदनभेदनादीनि च  
भवन्ति । ते पुद्गला परमाणुस्कन्धमे-  
दतः द्विप्रकाराः कथितास्सन्ति, 'अणवः  
स्कन्धा'श्चेति तत्त्वार्थसूत्राधिगमपञ्चमाध्यायस्य  
पञ्चविंशत्तमसूत्रानुसारात्, तत्रातिसूक्ष्मो, नित्यः  
स 'तोऽणुरेकैकरसवर्णगन्धवान्, निरवयवोऽ-  
न्योन्यं विसंयुतः पदार्थः परमाणुः, तथा  
सावयवः परमाणुसंघातस्सकन्ध उच्यते, चाल्त्व-  
युक्त्ववृद्धत्वाद्यवस्थानं, परिणामस्य कारणं,  
वर्तमानादिक्रियानामनुमादकं सार्धद्विकद्वीपसंवर्ती  
परमसूक्ष्मनिर्विभागः समथः कालोऽस्ति, जैन-  
शास्त्रेषु कालस्य मुख्यौ द्वौ विभागौ कृता स्तः  
प्रथमोत्तमर्षिण्यभिधानोऽस्ति यस्मिन् रूपरसादी-  
नामनुक्रमेण वृद्धिर्भवति, द्वितीयोऽवसर्पिण्यभिधः  
स पूर्वतो विपरीतोऽस्ति, अर्थाद्व्यादीनां तत्र  
प्रक्षीणता भवति एतादृश्योऽनेकोत्सर्पिण्यो  
व्यतिक्रान्ता आसन्, भविष्यन्ति च सर्वस्मिस्त-  
स्मिन् चतुर्विंशश्चतुर्विंशः पृथक्तीवाः स्वकी-  
यतातिशुभ्रकर्ममामर्थ्यवलेन तीर्थकरा भवन्ति ।  
तृतीयमाश्रयतत्त्वं—ज्ञानावरणीयादीनां पूर्व-  
प्रतिपादितानां कर्मणां सम्बन्धे कारणभूता  
मिथ्यात्वाधिरतिप्रमादकपाययोगा आश्रयतत्त्व-



मिति संज्ञां लभन्ते तत्र सत्येऽसत्यमतिरसत्ये  
सत्यमतिर्मिथ्यात्वेति, हिंसानृतस्तेयाव्रह्मपरि-  
श्रद्धेभ्योऽनिवृत्तिरविरत्याख्याता. विषयाणां सेव-  
नमिन्द्रियाणामदमनं सुरापानादिकरणं प्रमादः,  
क्रोधमात्रमायालोभाश्चेति चत्वारः कपाया उच्यन्ते  
तथा भनवचन-ज्ञायानां शुभाशुभव्यापारः योग-  
कथ्यते ।

चतुर्थसंवरतत्त्वम्—तद्भवति यत्तेषां पंचाना-  
मप्यास्तवाणां समयदर्शनेन विरतिना प्रमादाक-  
रणात् कपायरहितत्वाद्धर्मानुपेक्षादिना निवारणं  
कर्तव्यमर्थात् कर्मग्रहणहेतुभूतस्य परिणामस्याभावः  
संवरतत्त्वं जैनशासने प्रतिपादितमस्ति ।

पञ्चमं यन्तत्त्वम्—कर्मजीवानां क्षीरनीरबद-  
ग्निलोहपिण्डवद्वा योऽन्योन्यसम्बन्धस्तद्वद्वा-  
भिधानं तत्त्वं भाष्यते, तस्य प्रकृतिस्थित्यनुभा-  
गप्रदेशाश्चेति चत्वारः प्रकारास्तन्ति कर्मस्वभावः  
प्रकृतिः कर्मपरिणामकृतकालविभागः स्थितिः,  
तस्य रमोऽनुभागः कर्मवृत्तलसंचयः प्रदेश उक्तो  
भवति ।

षष्ठं निर्मरातत्त्वम्—अनश्ननावगोदयवृत्तिपरि-  
संख्यांरसपरित्यागविविक्तशम्यासनकायवलेक्षा-  
श्चेति षट्प्रकारे ब्रह्मतपोभिः, प्रायश्चित्तविनय  
वैराग्यस्वाध्याययजुस्सर्गध्यानमित्येवं षड्गुण-  
रैरभ्यस्यतपोभिः कृत्वा यः जीवसंबद्धानां कर्मणां  
क्षयः तद्धिनिगम्यं तत्त्वं निर्दिष्टमस्ति, सा निर्मरा  
द्विधा भवति, सकामाकाममेव, तत्र वास्यात्म्य-  
रसपरिमर्शं त्यक्त्वा निर्वाणभिलाषिणां जीवानां  
सकामनिर्मरा भवति, अन्यजीवानां च सोऽन्य-  
नेककृतकृत्यसहनेन नायमाना निर्मराऽकाम-  
निर्मरा ज्ञेया ।

सप्तमं मोक्षतत्त्वम्—शरीरिन्द्रियादुपुण्यपापवर्ग-  
गन्धरसस्पर्शरूपजन्मग्रहणवेदत्रिकारागद्वेषमोहावि-  
द्यादीनां समूलक्षयो मोक्षतत्त्वमित्युच्यते, अजरा  
मरस्थानममृतपदं, निर्वाणं, मुक्तिरपुनर्भवः,  
सिद्धिपदं इत्यादयः तस्यैव मोक्षपदस्य पर्यायास्त-  
न्ति, ऊर्ध्वगमनस्वभावस्य नीवस्य सकलकर्मम-  
लनाशाज्जलतुम्बिकान्यायैर्नोद्धा गतिर्भवति. स  
नीवः ऊर्ध्वं गच्छमानो लोकांतं यावद्याति; तत्रैव  
च तस्य स्थितिर्भवति, उच्चगमनशीलस्य तस्य  
जीवस्य ततोऽप्युच्चगमनं कथं न भवतीति चेद-  
जीवप्रकरणे निरूपितस्य धर्मास्तिकायस्य गतिस-  
हायकस्य लोकदयाशित्वात्, तत्र च लोकभावेन  
तस्याभावादिति । प्राप्य निर्वाणमपि जीवशब्देनैव  
व्यवह्रियते, तेषामिन्द्रियादिवाह्यप्राणाभावेऽप्य-  
नन्तज्ञानदर्शनदीर्घमुखरूपानां भावप्राणानां वि-  
द्यमानत्वात्, 'जीव प्राणधारणे' इति धातुना  
जीवति प्राणान धारयतीति नीवः, तस्यैवं व्युत्पत्तिः  
श्रित्ये, निर्वाणगतानां सुखं चाविनश्वरं केनचि-  
द्वस्तुनागुपमेयं संसारसुखाद्विलक्ष्णं परमानन्दमयं  
भवति, यस्य सुखस्यानन्तभागेऽपि सुरासुरनरे-  
न्द्राणां सर्वमपि सुखं भवितुं न प्रभवति ।

निरूपितं चेत् जैनदर्शनाभिमतानां सप्ताना-  
मपि तत्त्वानां संक्षिप्तं स्वरूपं विन्तारणाद-  
ज्ञानमिच्छादिभ्रमज्जनैः तेषु तेषु ग्रन्थेषु द्रष्टव्य-  
मिति प्राप्यते ।

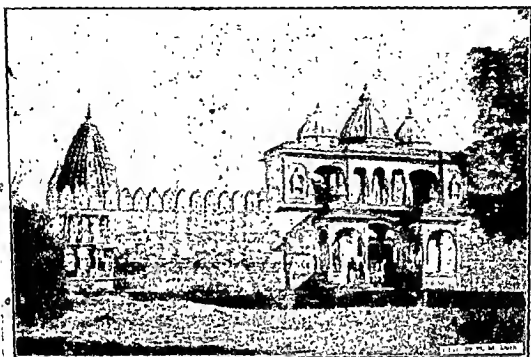
मिष्टान्तना अग्रे संघ

पंचाध्यायी

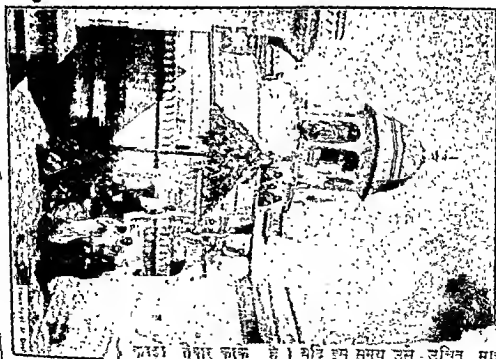
मूळ और भाषा टीका सहित

मुद्र पत्ती नीलः मू० १॥)

पता-दि० जैन पुस्तकालय-मुद्रत ।



श्री दिगम्बर जैन मन्दिर श्री अतिशयक्षेत्र रामदेवका दृश्य.



जहाँ तैयार करके है । यदि हम समय उत्त-उत्तिन मात्रा देका

## जातीय जीवनका ह्रास और हमारा कर्तव्य ।

(लेखक—मास्टर छोटेलाल, जैन, सुर्दा ।)

मनुष्य समाजके उस विभागकी जाति कहते हैं जो निवासस्थान, वंश परम्परा व धर्मके विचारसे किया जाता है जैसे आर्यजाति, पारसीजाति, मुगलजाति, जैनजाति आदि । इसी जातिके जीवित रहनेकी अवस्थाकी जातीय जीवन कहते हैं । प्रत्येक जातिके जीवनका ह्रास या विकास उस जातिके लोगोंकी संख्या व शिक्षाका क्रमशः उन्नत या अवन्न होना इन दो कारणोंसे जाना जाता है । मनुष्यका कर्तव्य है कि अपनी व जातिकी शारीरिक, मानसिक, व आध्यात्मिक शक्तियोंके विकास करनेका जो जानसे प्रयत्न करे ।

अब जब हम उपर्युक्त सिद्धान्तोंकी ओर दृष्टि दिखारपूर्वक, लक्ष्य देते हैं तो निश्चित होता है कि जो जाति लौकिक, व आध्यात्मिक अभ्युदयके ऊँचेसे ऊँचे विचारपर विराजमान थी; मनुष्यसंख्या, शिक्षामें सारे संसारकी आदर्श थी वही आज समाजकी सभी जातिगोत्रों गणना करानेके मुँहका सोम्य नहीं है । उनमें अपने जीवनकी अनेक उपयोगी बातोंका ऐसी सोचनीय अभाव है, जो कदाचित ही मनुष्य जाति कदाचित ही मान्य विषय मानना न होगा । जैन जाति की नहीं किन सारे भारतवर्षकी आर्यजाति विभिन्न विभागकी जैन जातिगोत्रोंकी पुराने जैन जीवन और पंथिकके द्वारा कदाचित ही नैवार करके

उनको उसके पहिना वतनाया था । वही आज अपना शरीर-द्वारेके लिये फटे पुराने चिपड़ोंके लिये लाचारित हो रही है । खेतकी जोतने, बखाने और अन्य होने काटनेवाले किसानों ही को अब घेतण्ड बरालेक गाँवमें कबलित होना पड़ता है । सारे व्यापार और उद्योगपणकी दारमदार गिन पर है वही इतने कणी हैं कि कदाचित ही उनको कई पीढ़ी तक उससे कुछका मिल सके । सारा भारतवर्ष मन्त्राग्निसे भक्षण किया जा रहा है । नागरिक नहीं किन्तु एक ग्रामीण यशिक सूर्योदयसे सायंकाल तक पीठ पर बैठा रख सूर्य गर्मीमें दो चार गाँव चक्कर लगाता है; परन्तु शोक ! इतने पर भी उनकी सन्तानोंको घर पेट अन्न नहीं मिलता है । नरकी भाँति कुटुम्बीगन भाँई भाँई, पिता, पुत्र आदिमें द्वेषता साम्राज्य स्थापित होता जाता है । जिससे कि परके घर नष्ट हो गये और होते जा रहे हैं । बाह्यविवाह चरम सीमा तक पहुँच चुका—नरजाति बाह्य-विवाहोंकी संख्या अधिकधिक बढ़ रही है—नित पर भी युवा पुरुषोंको दाम्पत्य, प्रेमसे बध्तिन रहना पड़ना है । सन्तान दुर्लभ, निस्तेज और निर्योगी हो रही है । उद्योग और साहस समाजसे निरुत्तु चुका । कुछ लोग धर्मता देता देकर उप पर अपना प्रभुत्व स्थापित रहे हैं ।

गुरुकाँक रोमने प्रणि मनुष्यकी गतिगति जैन जाति भी अब अत्यन्त कृष, अशक्त निरी हड्डियों र चोरा मजबूत रह है । स्वयं-नान्त सम-अन्ति-र है, उन्ने-रान्त, गर रही है । यदि हम समय उसे उचित मात्रा देकर

धर्म भी साधारणतया पालती रहनी है। कभी कभी एकाध व्याख्यान देकर भी बहुत बड़ा परोपकारका कार्य कर दिया करती है। जैसे घर भलाई करके रुपये भर दिखाना और निम्नपर मलाई की है उसपर अपना रौब जमाना, आज कलका फैशन हो रहा है, यह भी इस फैशनसे अलग नहीं है। संपान सुधारकी भी यह बहुत बड़ी बड़ी बातें किया करती है। जाति-भेद मिटा देना; एक धर्मके सब अनुयायियोंका रोटी भेरी व्यवहार करना; स्त्री शिक्षाका प्रचार करना; विधवाओंको दुःखसे निकालना आदि सुधारोंकी बहुत पक्षपातिनी है; परन्तु केवल जवानों पक्षपातिनी है, आचरणके लिए तो बस 'पापड़का नाम गोल गप्पे' ही है, और यही कारण है कि विमला अतक कुपारी है।

वह विमलाके लिए उसके मन माफिक सुंदर धनी व विद्वानप्रिय घर चाहती है, और साथ ही यह भी चाहती है कि वह अच्छा विद्वान भी हो।

इनकी जातिमें विद्याप्रचार जैसे ही बहुत कम है; शिक्षित और धनी गोड़े बहुत हैं, वे मत्तपनमें ही ग्राहे जा चुके हैं। शिक्षित और धनी ही क्यों इस समय कोई अशिक्षित या गरीब भी तो ऐसा नगर नहीं आता है कि मिलके साथ विमलाका स्वाह कर दिया जाय।

गुणचन्द्र एक सुन्दर सुख है। आयु बीस बार्द्धक्य वरमयी होगी। बी० ए० पास कर चुका है। धनी भी है और सुशील भी है। विमलाकी माता उसकी बहुत स्नेहली दृष्टिसे

देखती है। वह प्रायः विमलाके यहां आया जाता करता है। उसे भी गायनका बहुत शौक है। विमलाकी और उसकी तालमेल अच्छी जुड़ती है। घंटे घंटेपर प्रायः विमला उसे दिल-त्वा पर गायन सुनाती है; गुणचंद्र भी हार-मोनियमके साथ कोई चीज़ सुनाता है। विमलाकी माता इनके इस आनंदको देखकर प्रसन्न होती है और मन ही मन न जाने क्या क्या घाट घड़ा करती है।

एक दिन गुणचंद्र अपने घर वापिस जा रहा था। वह काटके पास पहुँचा होगा कि विमला चिल्लाई—“देखना, देखना तुम्हारी धोतीमें कोई जानवर गुप्त गया है।” गुणचंद्रने इधर उधर देखा परन्तु कोई जानवर नजर नहीं आया। उसने फिरकर विमलाकी ओर देखा—वह मुँह पर हाथ देकर हँस रही है; उसकी आँखोंसे एक दिव्य तेज निकल कर वासना उत्पन्न कर रहा है। उस समयकी उसकी मुखश्रीको देखकर गुणचंद्रका शरीर रोमांचित हो आया। यह पहिला ही समय था कि उसने विमलाकी इस प्रकारकी मुखश्रीको देखा। गुणचंद्र देड़ी निगाहसे देखता हुआ वहाँसे चला गया। विमला भी गुणचंद्रको दृष्टिपथसे अलुप होने तक देखती रही और फिर कुछ अतमनी होकर कमरेमें चली गई।

विमला बहुत दिनोंसे उदास रहती है। उसकी उदासीका मुख्य विषय है—गुणचंद्र। वह एक वर्षका माननेवाला होकर भी दूधपनी नातिता है। या, वह सब अच्छे हैं तो भी वह दूधपनी

तिका नहीं है। वह सोचती है दूसरी जाति-  
का होनेसे क्या हो गया ? है तो अपने ही  
धर्मका माननेवाला। दोनोंकी जोड़ी भी अच्छी  
है, दोनोंको परस्पर प्रेम भी है। तब व्यर्थ दूसरी  
जातिका विचारकर अपनी स्वर्णकी प्रतिमाको  
क्यों न उसे भक्तके हाथ सौंप दूं जो आशा  
परी दृष्टिसे उसकी और टकटकी लगाकर देखता  
रहता है, जो पूजा करनेके लिए बहुत उत्सुक  
है और जिसकी पूजा ग्रहण करनेके लिए मेरी  
प्रतिमा भी लाजायित हो रही है। कभी  
सोचती है—जाति—बंधन कैसे तोड़ें ? अपने  
बड़ोंकी रीतिको कैसे छोड़ें ? यदि मैं छोड़ना  
भी चाहूं तो जातिके लोग क्या राजी होंगे ?  
वे इस संबंधको कैसे पसंद करेंगे ?

मगर करेंगे क्यों नहीं ? इसमें हानि क्या है ?  
धर्म इसके लिए मना नहीं करता। वास्तवमें  
तो धर्मके साथ इसका कुछ विशेष संबंध भी  
रही है। भगवान् ऋषभदेवने जो कि धर्मके  
अथ संस्थारक और कर्मभूमिके आद्य रचयिता  
हैं—तो केवल क्षत्रिय वैश्य और शूद्र ऐसे  
तीन वर्ण ही स्थापन किये थे। फिर भरतचक्र-  
वर्तिने ब्राह्मणार्ण स्थापन किया था। आगे  
उच्चवर्णवाले नीचे वर्णकी लड़कियां लेते थे;  
ब्राह्मण, क्षत्रिय, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रकी;  
क्षत्रिय, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रकी; वैश्य वैश्य  
और शूद्रकी; और शूद्र शूद्रकी। क्या उस  
समय धर्म कोई दूसरा था ? नहीं। तब ?

इसी समय एक व्यक्तिने आकर मंगलासे  
नया नैवेद्य किया। उसकी विचार परम्परा टूट  
गई। आगन्तुकने इधर उधरकी बातें कर कहा:—

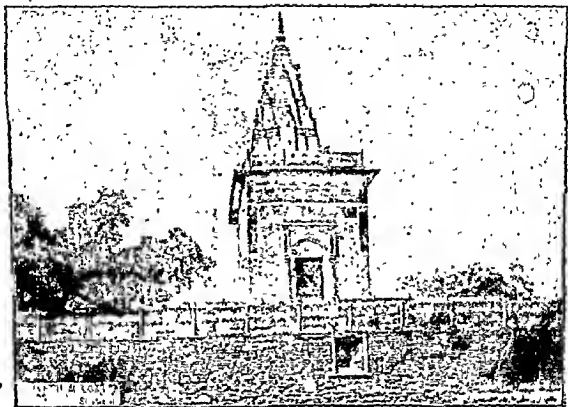
“मंगलाका ब्याह यदि आप मानचंद्रसे कर  
देंगी तो अच्छा है। यद्यपि वह दूजवर है  
तथापि उसकी आयु विशेष नहीं है। आदमी  
बड़ा परिश्रमी है। पुत्री भी पन्द्रह बीस हजार  
की है। रंगरूपका भी अच्छा है। लोग लड़-  
कीकी आयु बढ़ी हो जानेसे दुलखते हैं।  
जातिमें इस समय कोई लड़का खाली नहीं है  
अतः आपको और उसकी दोनोंकी भलाई  
सोचकर मैं आपको इस ममः चेताने आया हूं।  
मंगलाने इत बृहते ही कहा:—“ क्या मैं  
अपनी सोने जैसी लड़कीको उस मवालीके हाथ  
सौंप दूं ? सालामें अनाल तो कौड़ी भरकी  
रही है।

आगन्तुक मंगलाकी बातसे कुछ चमका।  
उसने मंगलाकी ओर जरा म्लान होकर देखा  
और कहा:—आप क्या कह रही हैं ? वह मवाली  
है तो फिर इसे कौनसे राजाके पुत्रको दोगी ?”  
मं.—क्यों ? जैनियोंमें क्या कोई घर नहीं है ?  
आ.—हाँ, अपनी जातिमें तो कोई नहीं है।  
मं.—मैं अन्य जातिमें करूंगी। जैनियोंमें  
बहुतसे अच्छे २ लड़के हैं।

आगन्तुक आश्चर्यान्विन होकर बोला:—“ तो  
क्या आप किसी गैर जातिके लड़केके साथ  
व्याह करोगी ?”

मं.—हाँ, इसमें क्या कोई हानि है ?  
आ.—हानि नहीं होती तो हमारे बापदादे ही  
क्यों नहीं आपसमें शादी व्याह करने लग जाते ?  
मं.—मगर उस कालमें और वर्तमान कालमें  
तो अन्तर है ?  
आ.—हाँ, इतना अन्तर है कि उस समय





चन्द्रपुरी (काशी) के श्री चन्द्रप्रमुका दि० जैन मन्दिर.



सिद्धपुरी (काशी) के श्री अयांसनायका दिगम्बर जैन मन्दिर.

हैं। मैंने बहुत प्रयत्न करके देखा। तुम्हारा और विमलाका व्याह होना किसी तरह स्थिर नहीं हो सका। इनमें प्रचान विघ्न जाति बाहिर होनेका मय है। धर्मके धूर्तारे मोले लोगोंको नमालूम क्यों, यह कहकह कर परस्पर जातिघोंको नहीं मिलने देते हैं कि यदि तुम आना रोटी बेटी व्यवहार एक कर लोगे तो धर्म हूब जायगा। मोले लोग धर्म हूबनेके मयसे अपना सर्व नाश होना नहीं देख सकते। मगर क्या किया जाय? जातिमें रहना होगा और मान नर्यादा बचाना होगा तो नातिके श्रुतमार्ग ही पड़ना पड़ेगा। अब तुम विमलासे इस तरह न मिला करो; क्योंकि यह अब कभी तुम्हारी नहीं हो सकेगी .....।

गर्भित गुणचंद्र विशेष कुछ न सुन सका। वह "कह न अच्छा" कह कर दृढ़ताके साथ चला गया।

विमला उस दिन—"प्रभु, ऐसे जीवनसे मैं अच्छी हूँ" यदि बातें बहुत देर तक बड़बड़ाती रही। एक दासीने सब सुनी और उसने मंगलाको अकर सुना दी। मंगलाको कुछ चिन्ता हुई; परन्तु जति बाहिर होनेके मयसे वह अपनी प्रतीके मुक्त दुःखी और न देन सकी।

कुछ दिन बीत गये। संव्या समय मंगला और विमला कमरमें बैठी हुई बातें कर रही थीं। इनने हीमें मंगलाकी बहिन शिवगोरी आगई। उसने कुछ देरके बाद विमलाके व्याहकी बात छेड़ी। विमला वहांसे उठकर चली गई।

शि०—बहिन आजकल लोग बहुत निंदा करते हैं; जो जो हो उसकी ओर अंगुली उठाता है

और कहता है—घोड़ा नैसी बेटी हो रही है तो भी अभी तक व्याह करना नहीं मूझता।

मं०—जीजी, मुझे भी चिन्ता है; परन्तु क्या करूँ? किसी कागजके पुतलेके साथ व्याह कर दूँ? कोई बर भी तो मिले।

शि०—क्यों मानचंद्र क्या अच्छा नहीं है?

मं०—जीजी, तुमसे छिपानेकी क्या बात है? पहिले तो वह मुझे ही पसंद नहीं, मैं जैसे जैसे पसंद भी करूँ तो विमला उसे बिल्कुल नहीं पसंद करती। एक दिन उसकी सहेली प्रमाने उससे पूछा तो उसने उत्तर दिया मैं उसके साथ कभी व्याह नहीं करूँगी और मां अगर जव-देस्ती करेंगी तो मैं जहर खाकर मर जाऊँगी।

शि०—अरी, बावली तू तो भोली हुई है। कोई मरा करता है क्या? सच्ची बात तो यह है, कि उपन्यास पढ़ पढ़ कर उसके भी नीमें उपन्यासकी नायका बननेकी धुन समाई है; मुझे माहस होगया है, कि यह गुणचन्द्रके साथ यह प्रेम करती है। बहिन, लड़का तो बड़ा अच्छा है; परन्तु क्या करें अपनी जातिका नहीं है। सोनेकी फटार पेटमें थोड़े ही खाई जाती है? तुम तो मानचंद्रके साथ व्याह ठीक कर लो। व्याह करके पतिके घरमें जाने ही मरना चरन सब भूल जायगी।

मंगला ने एक अन्तर-वेदना प्रकाशित निश्वास छोड़कर कहा:—"जीजी, तुम कहोगी वैसा ही करूँगी, परन्तु मुझे डर लगता है।"

विमलाने बाहिर खड़े होकर इनकी सब बातें सुन लीं।





नीचे आकर चिमलाने देखा कि बाँक्समें उसके नामका एक लिफाफा पड़ा हुआ है। उसने शीघ्रताके साथ उसे खोला, और पढ़ा, लिखा था:-

“ शुष्क हृदयको लहलहानेवाले अमृत तुम्हें बरम कर हृदयको हरा किया; हृदयवीणाके तार तुम्हें हृदयको बजनेवाला बनाया ।

मेरी हरी हुई, मगर कैसी ? जिसमें कभी फल नहीं आयगा, जो कभी पकना नहीं जानती, जो दाने देकर किसीकी भूख नहीं मिटाती। फूल खिले हैं, बड़े ही सुन्दर हैं ? परन्तु उनमें हृदयको गंधामोदित करनेवाली सुगंधी नहीं है। आखिरी सौन्दर्य देखकर प्रसन्न होती हैं; परन्तु सुगंधके बिना मन कैसे प्रसुदित हो सकता है ? पाँच पक्वान्तोंसे भरा हुआ थाल सामने होनेपर भी खाए बिना क्षुधा कैसे मिट सकती है ?

चिमला ! दुनिया सब आशा पर भीती है। मरणात्मक भी फिरसे जी उठनेकी आशा रहती है; परन्तु हमारे लिए अब कोई आशा अवशेष न रही। हमारे बीच माता पिताकी नातिच्युतिका अनन्त मनुष्य गर्जना कर रहा है; भोक्तृ-लक्षा लक्षों अनन्त विकट झाड़ू झाड़ू प्रति ईर्ष्या कीचमें पड़ी है। आशा विनष्ट मनुष्य के लिए दुनियामें क्या है ? कुछ भी नहीं। चैतन्य आशा में रहता है, परन्तु जहाँ आशा नहीं वहाँ चैतन्य कैसा ?

.....को मैं तुम्हारे यहाँ आया था। तुम कममें बैठी गी रही थीं। मायन बहुत हृदय नेदक था, साथ ही वामनोत्तादक भी

था; हृदय विह्वल हुआ, परन्तु तृप्ति नहीं हुई। वह नन्दवनकी सी सुगंध लाया था; परन्तु निराशाकी निश्वास उसे वापिस उड़ा ले गई।

थोड़ी देरमें मैंने सुना कि तुम्हारे हाथसे दिल्खु गिर पड़ा, और तुम बड़बड़ाने लगीं:- “ भगवान, जीनेसे तो मरना लाख दर्जे अच्छा है। ” मुझे बहुत दुःख हुआ। मैं तुम्हारे पास आना चाहता था; परन्तु उमी समय तुम्हारी माताने मुझे बुला लिया और कहा-तुम्हारा और चिमलाका व्याह होना असंभव है इस लिए अब तुम उससे न मिला करना, लोग निंदा करते हैं। प्राण, मैं उसी समय मन मारकर चला आया। बस अब फिर मिलेंगे जब परमात्मा मिलायगा। हृदय-दशा लिखना व्यर्थ है। न मान्दम ये जातिके बंधन हमारे जैसे कितनोंका रात दिन गला घोटते रहते होंगे।

तुम्हारा-गुंघाचंद्र”

पत्र पढ़कर चिमलाकी कैसी दशा हुई सो लिखना व्यर्थ है।

\* \* \*

गुणचंद्र को कुछ दिन बाद एक पत्र मिला। लिखा था:-

“ उपास्य देवता,

गन्ध गुदता है, इसीलिये निर्लेख होकर लिख रही हूँ। तुम्हारा पत्र मिल गया है। मां और मामीने मेरा व्याह मानचन्द्रके साथ करना ठीक किया है। रमणी पञ्चवारमें ही सब कुछ अपने देवताके चरणोंमें चढ़ा देती हूँ। मैंने सब कुछ तुम्हारे अर्पण कर दिया। अब मेरे पास क्या है निमको लेकर मैं दूसरोंके पास नाउंगी।

तुम ही मेरे इस जीवनके स्वामी हो । मरना जीना सब तुम्हें सौंप चुकी हूं । अस्तु । ता० .... को पांच बजे मैं चौपाटी अपनी मासीके यहां मिलने जाऊंगी । मुझे तुम मिलना । कई आवश्यक बातें करना है । अगर मेरा जीवन न चाहते हो तो मत आना ।

तुम्हारी विमला—

\* \* \*

नियत समयपर गुणचन्द्र, अपेक्षित स्थान पर जाकर मिला । विमलाकी विचित्र मूर्ति देखकर गुणचन्द्रको भय लगा । विमलाने कठोर स्वरमें कहा:—“बोलो मुझे चाहते हो, या अपनी काल्पनिक मान-मर्यादाको और जातिको?”

न मादम इन शब्दोंमें क्या बिनली थी ? सुनकर गुणचन्द्रका हृदय कांप उठा । आज तबके उसके सब विचार हवा हो गये । अब तक वह सोचता रहा था कि सब कुछ खो देने पर भी धर्मना मान सुरक्षित रखना चाहिए । ये विचार तत्काल ही उड़ गये । उसने टफ-टकी लगाकर विमलाके मुखकी ओर देखते हुए भर्राई हुई आवाजमें कहा:—“तुझे ।”

उसी तरहके स्वरमें विमलाने कहा “तो सुनो, एक काम करना होगा । आजके पन्द्रहवें दिन मेरा व्याह निश्चित हुआ है । तुम तेरे-हमें दिन यहांसे चलनेके लिए तैयार रहना ।”

विमलाकी बात सुनकर गुणचन्द्र चमका । उसने जरा घबराहटके साथ कहा “कहाँ ?”

वि०—क्यों, इतने घबरा क्यों गये ? क्या डरते हो ? हम लाहौर चलेंगे और वहीं जाकर व्याह कर लेंगे ।

गु०—वहाँ कैसे व्याह कर लेंगे ?

वि०—मैं माताके साथ दो-मास पहिले सांता-कुम आर्यासमानियोंके गुरुकुलके उत्सवमें गई थी । उसी दिन यह बात प्रकट की गई थी कि-एक ब्राह्मणके लड़केके साथ कोलीकी लड़कीका कल व्याह होनेवाला है । जातिथी सब गुण व कर्मसे होती हैं; जन्मसे नहीं होती । उनके व्याहमें कोई भी बाधा नहीं डाल सकेगा । जातिवालोंका इन्हें कुछ भी भय नहीं है । पांच करोड़ आर्यासमाजी भाई इनके साथ हैं । उसी समय मुझे भी अपना खयाल आया । मैंने सोचा हम भी आर्यासमानियोंमें जाकर व्याह कर लें तो कैसा अच्छा हो ? ”

जल्सा खतम हो गया । आर्यासमाजी एक बाई जो सामाजिक कार्योंमें बहुत भाग लेती है, विद्वान है, मेरी मातासे बहुत स्नेह रखती है; और मुझे भी पहिचानती है, वहां अकेली टहलने लग रही थी । मैं धड़कते सीनेसे अपनी हार्दिक इच्छा उनको सुनानेके लिए उनके मार्गमें जा खड़ी हुई । उन्होंने मुझे आवाज दी । मेरी हृदय और ज्यादा धड़कने लगा । मेरी आंखोंमें पानी भर आया । मैं कुछ उत्तर न दे सकी । अगर अगर उनके मुंहकी ओर देखने लगी । दयालु अन्तर्करण बाईने मेरी ऐसी दशा देखकर मुझे बगलमें दवा ली, और पूछा:—“क्यों बेटी, बताओ क्या बात है ? रोती क्यों हो ? ” मेरी आंखोंसे पानी गिरने लगा । व बार बार आंख पोंछती थी और पूछती थी । आखिर मैंने धीरे धीरे कहा—“अग्नि मासे न फटो तो कहूँ ।”

उन्होंने नहीं कहनेका विश्वास दिलाया । तब मैंने अपनी सब बातें उनको सुना दीं और पूछा:—“ क्या आप हमारा व्याह भी इसी तरहसे नहीं करवा देंगी ? ”

उन्होंने कुछ देर सोचनेके बाद कहा:—“ हां हो सकता है । मगर यहां नहीं । यहां तो तुम लोगोंके माता पिता तुम्हारा व्याह नहीं होने देंगे । और खास इसलिए कि तुम सरकारी नियमानुसार नाबालिग समझी जाती हो । तुम दोनों लाहोर चले जाओ । मैं वहां चिट्ठी लिख दूंगी । तुम्हारा सब प्रबंध हो जायगा । ” सुनकर मेरा हृदय खिल गया । उन्होंने मुझे फिर मिलनेको कहा । मैं भी उस समय दूरसे मांको आती देखकर उनके पास चली गई ।

कुछ दिन बाद उनसे मैं फिर मिली । उन्होंने लाहोरसे भी पत्र मंगवा लिया था । अब उन्होंने लाहोरवालोंके नामका एक खत मुझे दे दिया है । यह तुम अपने पास रखो । नियत समय पर तैयार हो रहना । धन न तो है । ज्यादा बात करनेका समय नहीं है....” ।

गुणचंद्रको पत्र देकर विमला तत्काल ही वहांसे चली गई । गुणचंद्र भंत्र-मुग्धकी तरह खड़ाफा रहा ही रह गया ।

विमलाके और गुणचंद्रके परेमें दाहाकार मच गया, बाठ रोनेसे दोनोंके परेमें चूल्हा नहीं जला । पारों ओर नान पहिचानवालोंने यहां तार दिये गये । मगर कहींने कुछ मतोचनद सनाकर नहीं जाने । रिना अपनी जानी

इकलौती लड़की थी और गुणचंद्र भी अपने घरका अकेला उजेला था । गुणचंद्रके पिताने और विमलाकी माताने तो आठ रोनेसे अब भी मुंहमें नहीं डाला है । दोनों चारपाइयों पर पड़े हुए अपने जीवनकी बड़ियां गिनते हुए सन्तान विधोगसे दुखी हो उत्सुकताके साथ यमरानको पुकार रहे हैं । शिव-गौरी मंगलासे कुछ खानेका आग्रह कर रही हैं और बीचबीचमें गुणचंद्रको भी गालियां देती जा रही हैं । इसी समयमें दासीने लाकर मंगलाको एक लिफाफा दिया । अशक्त पड़ी हुई मंगलाके शरीरमें लिफाफेके अक्षर देख कर विनली दौड़ गई । वह तत्काल ही उठ बैठी और लिफाफा खोलकर पढ़ने लगी । शिव-गौरी बड़े ध्यानसे सुनने लगी । लिखा था:—

“ जननी प्रणाम,

परसे मैं बिना कुछ कह सुने अचानक चली आई । इससे आपको अवश्य बहुत दुःख हुआ होगा; परन्तु इसके सिवा कोई दूसरा उपाय नहीं था । इसलिये विदग्ध होकर मुझे य मागे ग्रहण करना पड़ा । क्षमा करें ।

स्वतंत्रता मनुष्य मात्र का जन्म-सिद्ध हक है अपना जीवन किम तरह और कैसे संगति रहकर पिताना चाहिए । इसका फैसला करना भी मनुष्यके मनुष्यके स्वाधीन है और हां ही चाहिए, यह आप सदैव ही कहती रहती थी । आप यह भी कहती थी कि क्या रही और क्या पुराने दोनोंका यह प्रतिकेन्द्रक स्थिति है कि वे अपना जन्मभरका साथी अपनी इच्छानुसार चुनें । यथास्वी अपनी इच्छा

नुरुप पति पसंद करे और पति अपनी इच्छा-  
नुसार पतिन । इसमें हस्तक्षेप करनेका किसीको  
अधिकार नहीं है और जो करता है वह  
अन्यायी है, अत्याचारी है, पापी है ।

मगर माँ, मुझे आपने मेरा जन्मसिद्ध हक  
देना पसंद नहीं किया । जन्म-सिद्ध हक ही  
क्यों आपने मेरा प्राण लेना भी एक तरहसे  
निश्चित कर लिया । मैंने स्पष्ट यह कह दिया  
था कि मैं मानचंद्रके साथ मुझे व्याह करनेके  
लिए विवश करूंगी तो मैं प्राण दे दूंगी । यह  
आप भली प्रकारसे जानती थीं; तो भी आपने  
कुछ परवाह नहीं की और मनचंद्रके  
साथ ही मेरा व्याह स्थिर कर दिया । तब मैं  
क्या करती ?

एकबार मैंने प्राण देना ही निश्चित किया  
था । परन्तु आप कहा करती थीं कि आत्मह-  
त्या करनेवाले घोर नरकमें जाते हैं, इसीसे मैं  
'डर गई' । एक ओर मानचंद्रके साथ व्याह  
करके इसी जन्ममें नरकवास करना था और  
दूसरी ओर आत्महत्या करके परभवमें नरक  
भागना था । मुझे नहीं सूझता था कि मैं  
कौनसा नरक पसंद करूँ; परन्तु देवने मुझे दोनों  
नरकोंसे बचनेका मार्ग बताया । आप कईबार  
कहा करती थीं कि सौ जनी मिलकर परस्पर  
रोटी बेटी व्यवहार एक कर लें तो इसमें धर्म  
बाधक नहीं है । और इसीलिए आपने मेरा  
व्याह गुणचंद्रके साथ करा देनेके लिए प्रयत्न  
किया था; परन्तु आप उस प्रयत्नमें हत-सफल  
हुई । नातिच्छुतिके भयसे ही आप अधर्म-  
दत्त करनेको उतावले हुई; मेरा जन्मसिद्ध  
हक छीन लेनेसे तैयार हुई ।

मगर माता, धर्म जब बाधक नहीं, तब मैं  
क्यों जान बूझकर नरकमें पड़ती ? क्यों आपकी  
कल्पनिक, क्षणिक, जातिकी मान-सर्वादिके  
लिए अपना यह लोक और परलोक बिगाड़ती ?

एक बात और भी, है रमणी एकबार ही,  
हृदयसे अपना पति पसंद करती है और फिर  
उसीके चरणोंमें अपना तन, मन, मान-सर्वादा  
माता, पिता, भाई, कुटुंब कबीला आदि अर्पण  
कर देती है । मैंने भी अपना पति पसंद कर  
लिया था और उस पसंदगीमें अपना भी  
अपरोक्ष ही नहीं वरन प्रत्यक्ष हाथ था । मैंने  
जिसको अन्तरंगसे पति माना, जिसके चरणोंमें  
मैंने अपना सर्वस्व समर्पण किया उसको छोड़-  
कर आपकी कल्पनाके अनुसार क्या मैं दूसरेको  
पति बनाती ?

अब मैंने यहाँ गुणचंद्रके साथ व्याह कर  
लिया है । अब जिस देवताकी पूजा करनेके  
लिए मैं ललपित रहती थी उसीकी पूजाका  
मैंने पूरा अधिकार पा लिया है । अब संसारकी  
कोई भी शक्ति मुझे अपने देवताकी पूजा  
करनेसे नहीं रोक सकती ।

माँ, व्यर्थकी कल्पना करके मुझे दोषी मत  
बताना । संसार अपनी इच्छानुसार दूसरेको  
कार्य न करने देखकर उसे खराब बताती है;  
परन्तु वह दूसरेके सुख दुःखकी पर्याह नहीं  
करता । सुख दुःख क्यों दूसरेके जीवनको नष्ट  
करनेके और दूसरेका प्राण तक ले लेनेमें भी  
आगा पीछा नहीं करता । मगर दूसरे मिर  
झुका कर क्यों चुपचाप अत्याचार सहें ?  
जिस प्रकार समाजकी स्वतंत्रताके साथ विचार

करनेका हक है उसी प्रकार क्या प्रत्येक व्यक्तिको स्वतंत्रताके साथ विचार करनेका हक नहीं है?

माता, आपकी और आपके समाजकी कल्पनानुसार यदि मुझे नरकमें जाना पड़ेगा तो वह नरकवास भी—जो अपने जन्म—सिद्ध हककी रक्षा करनेके अपराधमें पाड़ेंगी—आपके अत्याचारी समाजके अंदर रहनेसे ज्यादा अच्छा लगेगा। अपने जन्म—सिद्ध हककी रक्षा न कर स्वर्गवास प्राप्तिकी लालसा करना, मैं नरकसे भी ज्यादा समझती हूँ। समझती क्यों हूँ? ऐसा है ही। समाजने स्त्रियोंके इम हकको छीन लिया इसी लिए समाजमें कैसी नारकीय लीला हो रही है? जिसका स्मरण करनेसे भी कलेजा कांप जाता है।

माता, अपनी पुत्रीके इम कृत्यको यदि अच्छा समझती हो तो उसे क्षमा करना। यदि नहीं समझती हो तो उसे मरी समझकर विस्मृतिके अनन्त सागरमें डुबो देना।

अन्तमें एक बात और कह देना चाहती हूँ। यहां आफर मुझे विदित हुआ है, कि सैकड़ों ही जैनी हमारी ही भांति समाजके अत्याचारोंसे पीड़ित होकर आर्यसमानी और ईसाई बन रहे हैं और समाजके हेतु 'जैनधर्म'को भी नमस्कार कर रहे हैं। जान पड़ता है धर्म और सारे जैनी समाजके अत्याचारोंसे पीड़ित होकर इन महात्मयुग्मोंमें ढूँढ जायेंगे और साथ ही जैनधर्मको भी डुबो जायेंगे। ५.स्तु।

आपकी पुत्री—

धिमला ..

मंगलाकी आंखें फटीकी फटी हो गईं। शिव-गौरी कठपुतली की तरह खड़ी रह गई और....।



(लेखक:- पण्डित लोकमणि, जैन गोटेंगांव. C. P.)  
मेत्री प्रमोदका रुण्यमाव्यस्थानि च सत्वगुणाधिक-  
क्रियमाना विनयेषु। 'तत्त्वार्थसूत्र'

सत्त्वेषु मेत्री गुणेषु प्रमोद  
द्विष्टेषु जीवेषु कृपापारसं।  
पाथस्थ भावं विपरीतगुणौ  
सदा ममात्मा विदशतु देव।

हे प्रभु ! मुझे इस भावनाका अविर्भाव तब दीजिए जिससे प्राणीमात्रमें मित्रता, गुणाधिकियोंमें प्रमोद, दुःखी जीवोंपर परम कृपा और विपरीत वृत्तिवालोंमें मेरे सदा मध्यस्थ भाव बने रहें।  
समस्त जीवोंके जीवात्मा सत्त्वेषु-मेत्री मेरे मित्र हैं, अ. ह. ह. इम दिव्य मंत्रका भी क्या कोई मूल्य कर सकता है क्या ? इस मंत्रके प्रभावसे भी भेद बुद्धि नष्ट नहीं हो सकती !!! 'सत्त्वेषु मेत्री' यह शब्द क्या ? आर्थिक शक्तियोंका भंडार है। इस शब्दके फलकुदरमें प्रवेश करते ही क्या ही अतृप्त आनन्दका स्रोत निकलना चाहता है। वित्त शान्त हो जाता है, विरहनेत्रोंके सामने आ जाता है। सूत्रमें भी गूढ़म जीवात्मा कितने बड़े और मुदावने दृढगत होने लगने हैं, इन्द्रियां कैसी दगापारहित हो जाती हैं, नेत्र कैसे स्वच्छ प्रभुको निनोचन करने लगते हैं।

हैं, मन कैसा आनन्दामृतमें 'पलडुब्बी' सा वारंवार गोते लगाने लगता है,—रोमावली कैसी एकदमसे खड़ी हो जाती है । अन्धकारका परदा केसा-एकएक आगेसे खिसक जाता है तथा एकदमसे इस शब्द-श्रवणसे, कैसी २ अपूर्व पुण्य भावनाओंके हृदयमें 'संचार' होने लगता है ।

प्राणी मात्रमें मैत्रीभावना-क्या ही उत्तम ज्ञान है । इस भावनाका आविर्भाव जिस प्राण्यत्माके हो गया भला वह व्यक्ति क्या प्राप्तपूजा नहीं है ? क्या, उसका परानय भी निज लोकमें किसीके द्वारा होना संभव है ? नहीं-नहीं कदापि नहीं । प्राणी मात्रमें मित्रत्वकी भावनाका जन्म साधारण शक्तियोंको लेकर नहीं होता उसका जन्म अनन्त, अश्रित शक्तियोंको साथमें लेकर होता है । इस भावनाके उदयसे प्राणी अपने क्षमिने ज्ञानित समुद्र देगता है—अतुलनीय आनन्दके अनेकों, प्रवाह अपने सारे शरीरमेंसे निकलते हुए देखता है । उस भला-भाग्यके चारों ओर शुभ भावनाएं तो चित्तरियों जैसी गान करती फिरती हैं ।

सत्वेपु मैत्रीकी भावनामें जाति आदि भेद नहीं है-कहीं-संकोच विचार नहीं है-इस भावनामें राजा रंक समान भासते हैं-सबको स्थान दान देनेमें हृदय जानाकानी नहीं करता । इस भावनाके साम्राज्यमें मूलोंकी अवज्ञा नहीं-नीचोंका सिम्कार नहीं-विजातियोंसे घृणा नहीं-विदेशियोंसे द्वेष नहीं-चाण्डालसे प्रमाभाव नहीं । क्या कहें इस भावनामें जिन अमणित सत्त्वोंका समावेश है-उनका मूल्य, उनकी सुन्दरता

वही जान सकता है-जो कभी अपने हृदय मंदिरमें इस पूज्य भावनाका स्वागत कर चुका है ।

भगवान् ! सत्वेपु मैत्री इस दिव्य भावनाका संचार मेरे हृदयमें कर दीजिए, जिससे मैं अपने हृदयमें सबका आह्वान कर सकूँ । मैं जाति-न्त, कुलगत, आदि मंत्रियोंको लांघता हुआ विश्वगत मैत्रीको मित्रता समझने लगूँ । जिस समय मुझे इस भावनाका उदय होगा उस समय चींटिसे ले हाथी, मगर मच्छादि पर्यन्त मेरी समदृष्टि रहेगी । मैं चींटोको तकलीफ न दे सकूंगा । हाथीका नथ न करूंगा-किसी पर कुदृष्टि न डालूंगा-इस समय जो हम नीचोंकी घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं-हम अपनेसे नीचे दखेवाले प्राणियोंमें वास्तवीय करना पाप समझते हैं-हम विजातियोंमें प्रेम नहीं करते-ये सब हमारी नीच वासनाएं फिर शीघ्र ही नष्ट हो जायेंगी । आजकल जितने अनर्थ हो रहे हैं या आगामी होंगे, उन सबका कारण एक प्रेमाभाव ही है-सच्चे प्रेमके न होनेसे ही संसारमें नाना अनर्थ हुआ करते हैं । यदि हमारा सबसे प्रेम हो जाये-हम सबको अपना मित्र समझने लगे तो फिर संसारमें अनर्थोंका नाश एकदम हो जाय । विश्वगत मैत्री ही सच्ची मित्रता कहला सकती है । यों तो सब ही प्रेमके उपासक हैं । थोड़ा बहुत प्रेम थोड़े बहुत प्राणियों पर सब ही किया करते हैं पर प्रेमका ध्येय विश्वगत प्रेम ही होना चाहिए ।

प्रेमीका हृदय एक सुन्दर सरोवर है जिसमें सद्गुण रूपी बहुतसे कमलोंका विकास हो रहा है ।

प्रेमीका चित्त शांतिनिकेतन ही समझिए। प्रेमीका ध्यान एक विचित्र समाधि है जो सबको सुखी देख लग जाया करती है। और दुःखित देख खुल जाती है। प्रेमीकी समाधिमें विश्वके सब ही प्राणी शान्त दिखाई देते हैं। प्रेमीका वैरी दुनियामें कोई हो ही नहीं सकता। प्रेमीका हृदय एक सुन्दर कानन गहापर छोटे छोटे अनेक प्रेमके स्रोत बहा करते हैं—जहां पर प्रेमामृतकी छोटी २ अनेक नदियां बहा करती हैं—जहां पर प्रेमामृतके पिपासी चातक अपनी तृष्णाको शान्त किया करते हैं, जिस काननमें प्रेमामृतसे वृक्ष सींचे जाने हैं। जिस वृक्षोंमें प्रेमगयी ही पत्ते हिलने हैं और जिनमें प्रेममयी ही फल फलते हैं। और जिन फलोंको प्रेमी ही खाया करते हैं उस वनकी शोभा क्या ही विचित्र शोभा है। जिस प्रेमवनमें प्रेमके ही शब्द पशु, पक्षी बोला करते हैं जहां पर शेर बकरीसे प्रेम करता है—गायका बच्चा मिहनीका और मिहनीका बच्चा गायका दुग्धामृत पान करना है—जिस वनमें प्रेमामृतकी मुंगंधित सुरभित समीरवृक्षांस अट्टहेलियां करती रहती हैं। कभी वृक्षोंको हिलाती, कभी उनका नीचे गिर झुका देती और कभी २ उनके प्रगुण्डोंका गम लेकर जंगलमें भाग जाती है कभी कभी नव मुरे पत्तोंमें नव बट समीर प्रेमका सबक मुनने बैठ जाती है। तब वे पत्ते—गगनका फर हंग पड़ने हैं—ऊई वृक्ष पर तो मां हंसीके वृक्षोंमें नीचे कूद कूद कर लमना देनले लगने हैं। तब यह—सुन्दर समीर तलमें झींझा डगने

लगती है। प्रेममयी लहरें पवनका स्वागत करतीं और विलीन होती जाती हैं। अ—ह—ह केसा पुनीत प्रेमीका हृदय है जहां पर यह सब पुण्यमयी लीला होती रहती है। कहिए ऐसे परम पवित्र प्रेमीके प्रेमवनमें निवास करनेको किस सहृदयका मन उल्लसित न होता होगा ?

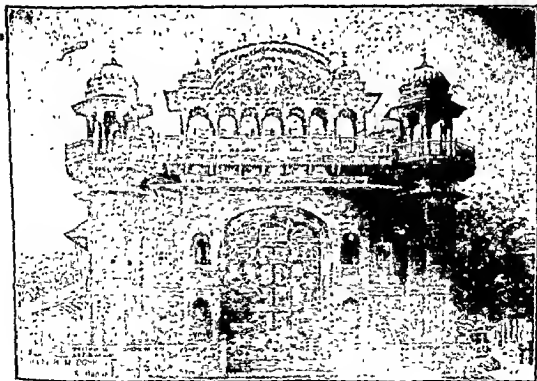
तब आइए प्रेमीगण, हम सब मिलकर सत्वेपु मैत्रीको लक्ष्य बनाकर एक प्रेम मंदिरकी स्थापना करें। उसमें हम प्रेमकी ही मूर्ति स्थापित करें, और हम सब मिलकर प्रेमदेवकी पूजा करें। प्रेमगुनारी वनों और प्रेमामृतका पान करें।

ॐ गुणिपु—प्रमोद भगवन ! आप हमें गुणवादी बना दीजिए। गुणवानोंको देख हम परम हर्षित हों—यही हमारी भावना है।

जिस जाति या देशमें गुणवानोंका सम्मान नहीं है—उन्हें देख लोग प्रमोदित नहीं होना उत देश और उस जातिको प्रलय अवश्यम्भावी है। जिस तरह सुषुप्तमें लोहको सींचनेकी शक्ति है उसी तरह—मोदमें—आनन्दमें—हर्षमें भी हमारेके गुण आकर्षण करनेकी शक्ति भी अवश्य है—योगेश्वर परमात्मा का नाम बड़े मोदसे लेते हैं उनके स्वागत बड़े आमोदसे करते हैं—उसके गुणोंका आदर करते हैं इमीच्छा योगी परमात्म रूप ही हो जाते हैं—परमात्माय समस्त गुणोंका ये आकर्षण कर लेते हैं—गन्ध है तो जिसमें मयी लगन रचना है—वह उसे प्राप्त कर ही लेता है। गुणवानोंको देख हर्षित होना, उद्यामन देना, सेवा मुश्रुना करना यह सब उनके गुणोंको आकर्षण करनेका एक दिव्य मंत्र है।



अजमेरके सुप्रसिद्ध श्री दिगम्बर जैन मन्दिरका दृश्य.



अजमेरके दिगम्बर जैन मन्दिर (नशियां) के समवशरणका दृश्य.



जिन्हें उच्च बननेकी अभिरूपा है—जिन्हें गुणी बननेकी भावना बड़े जोर शोरसे उठ रही है— जिन्हें लोकोत्तम बनना सुहावना लगता है—जिनको सरस्वतीके पदपंकजोंमें अमर बनकर गुंजागार करना है वे सब ही सज्जन इस भावनाको हृदयगत करें । गुणियोंमें प्रमोद करनेसे अवश्य ही सफलताकी संभावना है अभ्यया नहीं ।

**क्रिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वं**—संसारके प्राणी दो भागोंमें विभक्त किए जा सकते हैं । १ दयालु, २ दयापात्र । ऐसा कोई भी दयालु नहीं है जो दया करनेमें अनुसार हो । प्रत्येक सहृदयका कर्तव्य यही होना चाहिए कि दयाभाजों पर दया करे । आज इस भूमण्डलमें—देशमें इतने दुखारी प्राणी हैं कि निनकी गगना नहीं हो सकती । यदि अनाज कम हो और खानेवाड़े अधिक हों तो उनमें ही प्राणी जीवित रह सकते हैं कि नितनौके लिये खद्य बस्तु है । इसी तरह संसारमें दयापत्र किष्ट जीव अधिक हैं और दयालु थोड़े हैं । इसलिए उनमें ही किष्ट जीव-दुखी प्राणी जीवित रह सकते हैं जिनको रक्षणमें दयालु लगे हुए हैं । इसलिए यह दुःख संसार अवलम्ब चाहता है ।

परमात्मन् मम हृदयमें अवतरण कर मुझे इस भावनाका अभिर्भाव कर दीजिए—जिससे कि मैं दुःखी प्राणियों पर करुणा बरूँ—सेवामें दत्तचित्त रहूँ । ये निर्मलचेद देखिए कैसे पीड़ित हैं, घरमें पन नहीं है, शरीरमें चउ नहीं है, सदा रोगी रहा करते हैं । उन्हें देख दया चाहता है—इनका दुःख विमोचन करूँ—इन्को औषधि दूँ—इनकी संशयों नित न मोड़ूँ । वे थलद्वया पात्र भवन्त्येको ही नहीं मनसु पर पशु पक्षियोंके भी दयादानमें इसी न करूँ; वन प्रभु यही मम भावना है ।

**माध्यम्य भावं—विपरीतवृत्तौ**—जो दिन रात हमारी खगवी चाहते हैं—जो हमें पद पद पर मतादे—प्राणिय करनेमें, दत्तचित्त रहा करते हैं, जो हमसे सदा छुट रहकर हमको पददलित करना चाहते हैं, जो हमारे उत्कर्षको सहन नहीं कर सकते—ऐसे प्राणियों पर भी क्षमा करनेकी वीरोंने उपदेश दिया है । यों तो साधारण अपराधीको तो प्रत्येक व्यक्ति क्षमा कर दिया करते हैं, पर जो हमारे नाश करनेपर भी उतारू हैं—उनपर क्षमा करना वीर पुरुषोंका लक्षण है—क्षमा वीरस्य मूयणं—यह नीति भी है ।

**विपरीतवृत्ति**—बाड़े प्राणियोंसे मैं द्वेष न करूँ, उनका अपभे मैं न चाहूँ, साथ २ उनसे मैं अत्यन्त मित्रता भी न जोड़ूँ । कारण कि ऐसे प्राणियोंसे न वैर मत्ता न हेन ही अच्छा—कहा भी है—  
हित ह भलो न नीचको नाहित भलो अद्वैत ।  
घाट अपावन वन करे काट स्थान दुःख देत ॥  
इस लिए ऐसे प्राणियों पर माध्यम्य ही रखना उत्तम है, नस प्रमो यही मैं चाहता हूँ ।

यदि इन समस्त भावनाओंका आदर हमारे देशवासियोंमें हो जाय, यदि हमारा अहमंमंडल इन शुभ भावनाओंको हृदयमें स्थान देनेमें अपनी मज्जई सज्जे, तो यही भारत स्वर्गपूरीसे भी बड़का हो जावे—किर हमें मुकुट, आदिसे विभूषित सर्वगुण सम्पन्न भारतपिताके सुखद दर्शन प्राप्त हो इसमें सन्देह नहीं ।

परमात्मन्, इन भावनाओंका उदय प्रत्येक सहृदय प्राणीके हृदयमें हो—मनही परस्पर प्रेम-प्रसीद-दया और क्षमासे सुसज्जित हो यही मन भवना है । **शुभंभूयात्—**

## जातीयता कैसे उत्पन्न होगी ?

(नेत्रक-जुगमन्दिरलाल जेवरिया, सूरन।)

आज समाजके सामने उक्त प्रश्न उपस्थित हो रहा है, क्योंकि इस समय जैन समाजमें जातीयता नहीं, प्रेम नहीं उसके खंड २ हो रहे हैं, कोई किरपर लुप्त रहा है कोई विधवा । कुछ लोग तो जैन शास्त्रोंको खंडन करके जैन धर्मको एक नया नामा पहिनाकर जातीयताके उत्पन्न होनेका स्वप्न देख रहे हैं, कोई समाजमें विषका विशाह आदि जैसे मुधारोंको करके जातीयता उत्पन्न करना चाहते हैं—तथा इन्होंने लगे गौने कार्यमिद्धिके लिये समाजके नवयुवकोंको एक नवीन-ममान बनानेका उद्देश भी दे डाला है, परन्तु हम कहते हैं कि उनके इन कार्योंमें जैन ममानकी उन्नति कदापि न होगी उरते वह अवनति—नास्तिकता भ्रष्टाचारके गर्तमें गिर जायगी ।

जिस समाजमें अपनी उन्नति की है अपने-अपनी शिक्षाचरित ही की है। जिस प्रकारकी शिक्षा समाजमें प्रचार किया जाता वह जाति भी वैसी ही बन जाती है । परन्तु हम देखते हैं कि समाज मुधारका दम मग्नेवालोंका ध्यान इस ओर निकृष्ट नहीं है । वर्तमान समयमें पूर्वकी अपेक्षा समाजमें शिक्षाका प्रचार अधिक है । किन्तु जिस शिक्षाका प्रचार जिस प्रकार समाजमें होना चाहिये वैसा नहीं होना । समाजको इन समय पोगीरा और पाश्चात्य दोनों ही शिक्षाओंके विद्वानोंकी आवश्यकता है निम्नी वर्तमान शिक्षा प्रणालीसे पूर्ति नहीं होती । मरुता विश्व उद्योगोंमें इनकी सामाज्यवस्था है कि उनमें अपेक्षा शिक्षाका

गौणतासे उत्तम प्रवर्तन हो । उक्त विद्यालयके छात्रोंको इन बातकी आवश्यकता नहीं कि वे अंग्रेजीके भूगोल, इतिहास, गणित आदिकी भी शिक्षा प्राप्त करें, बल्कि आचार्य तथा तीर्थ-कक्षा प्राप्त करनेवाले छात्रको अंग्रेजीके साहित्यका इनका ज्ञान होना कि वह वर्तमान जगतकी पत्रोंकी मया मलीगहार समझ सके ।

अब हम उपेक्षित के विषयमें कहेंगे जिसको प्राप्त करना बालक तथा उनके माता पिता आवश्यक समझते हैं । वह है अंग्रेजी स्कूलों और कालिजोंकी शिक्षा । समाजमें निम्ने छात्र इस शिक्षाको प्राप्त करनेवाले होंगे उतने संस्कृतके न होंगे इस कारण समाजका ध्यान हम इस विषय आकर्षित करने हैं । हम देखते हैं कि प्रायः कालिजोंमें मिले हुए छात्र अपने धर्ममें अज्ञान और श्रद्धाविहीन होते हैं । इसी कारण हिन्दू नायवकोंका धर्मका प्रचार, समाजका उत्थान आदि कामा कर्त्तव्य भावही आज ऐसा कार्य कर रहे हैं । जिसमें धर्म और समाजके उत्थान होनेकी आशा नहीं । यदि इसका कारण देना जाय तो यही कहना होगा कि समाज इन नवयुवकोंको धर्मिक शिक्षा देनेवाले कोई स्वल्प नहीं करती । वे विचारों जिनका क्रांतिकर्तृ शिक्षा प्राप्त करते हैं, जैसे आदर्श उनके सामने रखे जाते हैं उसीसे वे समाजमें भी प्रचार करना चाहते हैं ।

साथ एक अच्छा ज्ञानालय हो । इसमें पढ़नेवाले छात्रोंको नियमसे धार्मिक शिक्षा दी जाय । १२॥ छात्र जैनियोंमें—भनेक बरोहृतिवों—लसाधिपतियोंके मौजूद होते हुए—एक कालिनका होना कोई मुश्किल बात नहीं । केवल आवश्यकता है कर्मवीरोंकी और सार्वभौमियोंकी । जिस दिन वे इनका भीड़ा उठा ले उमीके जमात बाद जैन कालिन भी स्थापित हो जाय ।

जैनकालिनके स्थापित होनानेका निम्न प्रकार एंग्लो दयानंद कालिन, यियोसोफिकल कालिन और सनातनधर्म कालिनसे मिले हुए प्रेरणायोंमें अपने धर्म पर दृढ़ आस्था होती है, देशसेवा और सनातनसेवाकी लगन होती है, उसी प्रकार जैन कालिनसे भी बैसे ही प्रेरणायें मिलेंगी निम्नका धर्मप्रचार समानसेवा, देशसेवा करना मूल मंत्र होय और उसी समय जैनसमानमें जातीयता उत्पन्न होगी ।

### वर्तमान अकाल ।

(लेखक—मास्टर छोटेलाज जैन, पुरंदर)

मैं दिशि अति भारी आरंभ है दिखाती । प्रभुवर । सहसा जो धैर्यको भी रुझती ॥१॥ अह ! प्रथम हमारे पास पैसा नहीं है । तिसपर दुजराई काठ भी तो यहीं है ॥२॥ हत समय हमारा आज दुर्भाग्यसे है । प्रियवर अरुहोको “कोईमें खान” ये है ॥३॥ अतिश्रम करते हैं जीविकाके लिये ही । पर बहुत जन सोते पेट भूख लिये ही ॥४॥ निशिदिन करते जो देशका काम मरी । अति नग उभारी दीनवाजे विचारी ॥५॥ येन कृपक विचारीकी दशा देखते ही ।

जल निकल पड़ेगा हाथ पापागसे भी ॥६॥ वह नव शिशु जो है सर्वथा भ्रष्टारी । विरल विरल रोगा भूख ही की व्यथामें ॥७॥ यह लख उसको भा प्रेमसे गोद लाती । पर विश्व निराशा वारि वारा बहाती ॥८॥ यदि कुछ दिनमें ही दुःखका अन्त होता । तब फिर मन ऐसा धैर्य क्यों आनखोता ॥९॥ हर समय हमें तो व्यथ होना चढ़ा है । यह तन रखनेका हेतु क्या आपदा है ॥१०॥ प्रिय कृपक हमारे देशके रोजगारी । अब सब जनको है पेटका प्रश्न भारी ॥११॥ पद पद पर कटि हा ! बिछे देखते हैं । प्रति पल हम पूरा वर्ष सा लेखते हैं ॥१२॥ नर तन यह पाक सौख्य थोड़ा न पाता । अतिशय दुःखमें ही काठ सारा गमाया ॥१३॥ मनुज हम हुए क्यों हा ! यही खेद होता । जनम समयमें ही ठीक प्रागान्त होता ॥१४॥ फिर यह दुजराई ठोकरों तो न खाते । हत दिना हमारे देखनेमें न आते ॥१५॥ अति पतित कहाती भूमिकी धूलि सारी । पर यह चढ़ती है शत्रुक दीप्त न्यारी ॥१६॥ लज्जुर उनसे भी नीचता है हमारी । सब गति मति प्यारी भीरु में विचारी ॥१७॥ घन अभित कहां—वे विशङ्कणी कटाएं ! अब हम सब तो हैं देखते आपदाएं ॥१८॥ इन समय हमें जो पूर्वकी याद आती । यह चक्कर ज्वाला है बलेना जलती ॥१९॥ तन सब जलके हा ! रोप हड्डी रही है । अहह ! दुक विचोतो मांस भी तो नहीं है ॥२०॥ अब विनग हमारी है प्रभो । दो सहारा । वर फिर बह जावे देशमें दानि पारा ॥२१॥

## GOALS.

(The following is a lecture given to the Buddhist Society of Great Britain and Ireland in October, 1918, in London).

The last time I had the pleasure of being here, when I spoke about the Jain view of dharma—of duty, something in the subsequent discussion led your secretary, Mr Ballis, to remark that although Buddhism did not teach that there is such a thing as soul, yet Buddhism taught the doctrine of illumination. I did not at the time make any further reference to this idea, but on the way home thoughts about it occurred to me, and I eventually took the liberty of writing your Secretary a letter expressing my reflection on the subject. He acknowledged the letter, and asked me if I would give a lecture on "The Goal of Illumination". I consented, but of course in doing so it is the Jain doctrine that I shall chiefly be dealing with; and although the phrase is a Buddhist one, still it is sufficiently similar to the Jain idea as far as I understand it, to enable me to use it.

When a lecturer gives a lecture it is natural for the audience to expect him to lecture on something he knows about, but the nature of this subject is such that to have a knowledge of it is for the ordinary person impossible. We can not speak about the goal of illumination with knowledge unless we have ourselves reached that goal. So in asking me to speak on the subject, what is it that is expected? What shall I be

expected to say? Probably what is expected is a description of the goal as far as I am acquainted with it from hearing about it or reading about it; and this is what I will try to give you. I will try to tell you what I know about the Jain idea of the goal of life as far as I have heard and read about it.

There is, however, another way of dealing with the subject. We certainly can not describe the goal of life from experience, but it may perhaps be reasonably expected of any one that he has in mind a goal of some sort or other which he is trying to reach; and as far as this goal is concerned any man is in a position to speak about it with knowledge, in so far as a man knows what he is aiming at, to that extent he is able to tell you. If he knows what he wants, he can tell you, and he will be speaking about what he knows. If we know what we want we can describe it to other people. Do we know what we want? And if knowing what we want, but not knowing how to get it, we come across somebody else who has got it, by his own efforts, definitely, we can ask him to tell us how he did it, and if he is a kind-hearted person he may perhaps be willing to tell us.

But supposing we are not satisfied with our present condition, and yet do not know what we want, or what is most worth having, we can enquire of others and find out if there is anybody who can tell us what is most worth having.

The Jain goal is emancipation. It is acknowledged, and knowledge is its essential nature. Knowledge

illuminates, and full illumination would be the same as omniscience. It is simply different language for the same thing, and omniscience or illumination implies or proves the existence of an omniscient or illuminated being, in other words a soul.

Now as both faiths, Buddhism and Jainism, put forward practically the same idea as the goal, the question is, is it worth having? It must be worth having, because, granting that there is something worth having, then if we are omniscient we shall know what that something is, and we shall know how to get it.

Now as regards description of the goal. Illumination or enlightenment means, of course, spiritual enlightenment. What does a spiritually enlightened person do? This introduces ethics, and in dealing with ethics we are apt to become preachy, which I wish to avoid. But obviously a spiritually enlightened person would do no harm, and he would do good to his fellow beings. But what the nature of the good that he would do when he has obtained his goal would be, is difficult to conceive. Granting that the illumined ones who have been and gone are still in existence in the universe somewhere, what is the nature of the good that they are now doing? One answer would be to say that their teaching is still doing good to mankind; but that is not what they themselves are now doing. It seems to me, however, that it is impossible to conceive what is the nature of the life that is led when once we have attained our ideal condition. And yet we must have some

idea of the goal, for we could not strive for something of which we have no idea. As far as I have heard about the Buddhist goal, its description is chiefly negative; it is a condition of no pain, no misery, no disease, old age, or death, no grief, no quarrels, etc. And yet there seems to be the one positive condition of illumination. Illumination means enlightenment, and enlightenment means knowing. But as far as I know this is the only positive condition that is mentioned. In the Jain teachings there are one or two other positive conditions mentioned besides knowing. As well as being omniscient or fully enlightened, there is the positive condition of blissfulness; and there is also infinite capacity of activity. But what the nature of the activity is I do not quite know, I do not quite understand this point myself; I do not understand how there can be any activity when there is nothing to accomplish. But even with regard to this point there may be some possibility of getting an idea about it from the fact that time is always the future to come, no matter what condition we are in, and the activity may be whatever activity is necessary to cause the future when it comes, to be satisfactory and right. But this is only my own idea, and I have no authority from any books for making the statement. At any rate there are those three positive conditions mentioned which are descriptive of the goal, infinite capacity of activity, which is not quite the same as omnipotence; there is blissfulness, and there is omniscience. Then further is continued existence, there is no ceasing to be; it is

life everlasting and the condition in that life is always ideal. And another positive fact about it is that there is individuality, there is no losing of one's individuality by any merging into a universal ocean of life. But of course one is not the only one, there is an infinity of others, of other individuals in a like condition who have reached it by their own deliberate efforts. And then the description of the goal is positive with regard to another point, namely, belief; there is right belief, all the time. This is a positive condition. And another one, namely right action. Whatever the activity, it is always right and never wrong. But I understand that all worldly activity is stopped in the ideal condition. There is no movement of body, no walking, running, jumping, no eating or drinking, no sleeping, no money-making, no wars, no pleasure seeking, no ship-building, no building of houses, or temples, no making of parks or gardens, no digging of mines, no buying or selling, no speech, no murders, lying, or stealing, no law-courts, prisons, asylums, schools, hospitals, no fishing or hunting, or picnics, no boating parties, no theatres or dancing, or concerts. All these things are stopped. But of course although there is no participation in such things, still

plenty of entertainment. And there is another interesting point here, namely, in view of the fact of omniscience, it would mean that the future as well as the past and the present, we know. But although the future is known, when it becomes present knowledge instead of future, there is a difference in the quality of the knowledge. Yesterday I knew I was going to be here; that was knowledge of the future. Now I am here and I know it, the present knowledge is different in quality. So that although the future is known in advance, still when it arrives it is not stale. And another point too comes in here, namely the question of predestination. If the future is knowable, we might at first sight think that it is already all predestined and that there is no freedom. But this is not the case directly we remember that our own choice is part-cause of the events that take place. For instance, the omniscient beings knew a thousand years ago that I was going to give a lecture here to night; but then I give the lecture of my own free choice, and the fact that they knew that I should make the choice and that therefore the lecture would take place does not in any way deny the freedom of my action. My own choice, although fore-known by others, was part-cause of

from all combination with other substance than its own. When we speak of water, we generally mean water in its pure condition. But at present we are not souls in the sense of being pure souls. A quantity of soap-water, another quantity of seawater, a quantity of milky water could all be called water, but they are not pure water, or water in its natural condition; and in the same sense the living beings around us are souls, but they are not pure souls in their natural condition, and just as the natural condition of water is what we know it to be so the final goal is the soul in its pure natural condition. That is another way of describing the goal of life. And it is perfectly real and concrete, and not in any way imaginary or fanciful. In knowing anything we know at least four things about it, namely, the substance that it is, the place where it is, at the time, and the condition it is in. We know these four things, place, time, and condition; and if we know a pure soul we should know these four things about it; we should know the substance of it, we should know where it was at the time, and the condition it was in. The Jain teaching is that there is one part of the universe and only one where those who have reached their final goal exist; they are of a real living substance, and their condition is as I have already described, omniscient, etc.

to be omniscient in order to be omniscient.

Well, so much for the goal of illumination or omniscience as the Jains call it, as far as a description of it is concerned, both negative and positive, what it is and what it is not. Also the theory upon which the possibility of omniscience is based, namely, that there is such a thing as a soul and that its nature is to know and to have full knowledge or omniscience. The next question is how to reach the goal, or how to be in this condition, for we know that at present we are neither omniscient nor blissful. And yet it is only from one point of view that this is true namely, from the same point of view that soap-water is not water. From another point of view we are now truly omniscient and blissful, in the same sense that soap-water is water, that is to say all the qualities of water are there in the soap-water, but they are obscured by the presence of soap. And so with us souls, all the qualities of the soul, omniscience, etc., are in us, but they are obscured by the presence of what is called 'Karma', and the way to reach the goal of life is by removing this Karma, just as the way to get the water in the soap-water to its natural condition is by removing the soap. Or a better example would be to take seawater, because in this case we start with something (seawater) which has never been in the pure water in its natural condition: seawater has always been salt, but this is no reason why it should always remain so. And in the same way the soul in embodied living beings

has always been in an impure unnatural condition, combined with karma; but that is no reason why it should always continue to be so.

So the why to get into the desired condition, that is to say reach the goal of life, is by removing the causes of the present embodied condition in which we find ourselves. We must remove the causes one by one. There are four chief causes, namely, delusion, carelessness, passions, and other activities of mind, speech, and body technically called *tyoga*. The goal of illumination is not generally attained in a minute, although theoretically it might be if only we could remove all the karmas in a minute. But partial illumination is possible, and we may get this here and now in this life by suppressing gross anger, pride, deceitfulness, and greed, which passions disturb the mind and prevent us from relishing the truth when we hear it, or prevent it from rising in us spontaneously. One of the greatest delusions is the notion that we are our body. "He who says 'let me say this', he is the self, the tongue is but the instrument of saying". This is I believe quoted from the Upanishads. The knower is the self; the body does not know, it is the self that knows. Delusion is much the same as wrong belief, especially when it is put in to action. We get right belief by keeping the worst degree of anger etc. from rising when it is felt to be rising.

Life is something like a journey, we are travelling. There is a tale about an ordinary plain man who once when travelling met another traveller, and

the plain man enquired of the traveller "Where are you going to?" The traveller replied; "Well, now I come to think of it, I do not know". The plain man was annoyed and expostulated etc. etc. Now, if we think of eternity, I may safely say that most of us do not know where we are going; we are simply travelling, but, we do not really know where we are going in any precise manner. Most of the faiths of world offer some sort of a goal or destination, and it is for each of us to choose, if we are so inclined, after examination, from among the various ones that are offered; and see what we think of them, and whether they are worth trying for. As far as the future is concerned, of course, we want to be safe; we want to be safe in the future and we want to be in a condition of enjoyment. But although religions generally deal with the future, and especially the future beyond the grave, they also deal with the present. Not only do we want to be safe in the future, but we want a fairly decent life here and now, and the rules of life as given by Jainism will, if followed, as I believe, cause us to enjoy the present; will make our present lives at least more tolerable and more enjoyable. We all want peace and happiness, and peace and happiness are in ourselves, and according to the Jain teaching the more we lead a life of doing good to and not injuring other living beings the more will our life be peaceful, happy and enjoyable here and now.

H. warren





(શ્રી દેશવજ્ઞાલ ચુનીલાલ શાહ.)

શારીરિક અને માનસિક ઉન્નતિ એજ સર્વ ઉત્તરિયું મૂળ છે. આપા પ્રધાનથી ઉન્નતિ મેળવવા "અદ્વયર્થ" ની અવશ્ય જરૂર છે. પણ અદ્વયર્થ એટલે શું એ પણ યોગ્ય લોકો સમજે છે, અને જેઓ સમજે છે તેઓ પણ અદ્વયર્થતા પાલનના સર્વ નિયમોથી અને તેના બાંધ કરનારાં વર્તનોથી સારી રીતે અવગતિ હોય એમ જણાવું નથી.

વિષયનું જ્ઞાન જોઈ શાસ્ત્ર અદ્વયર્થ છે, અને વીર્યનો મિથ્યા ઉપયોગ કરવાથી અદ્વયર્થનો બાંધ થાય છે. પણ કેનાં કેનાં જ્ઞાનપાત્રો, આચરણો, વિગતો અને અવરોધો વીર્યનો શય કરે છે. અને વીર્યના રક્ષણ માટે આપણે શું શું સંમતિયું અને કરવું જોઈએ તે આપણે જાણવું જોઈએ.

આ જગતમાં સર્વ મનુષ્યો મુખ્યત્વે અનિલાયા રાખે છે પણ ખરું મુખ ક્યારે પ્રાપ્ત થાય છે તે તેઓને વિદિત હોતું નથી. હાલમાં હિંદુસ્તાનમાં શરીરે અશ્વમસ જેવા કેટલા યુવાનો નજરે પડે છે ? શું આપા એમંડે પાંચ મળી શકો ? આનું કારણ શું ? કે તેઓના આધારભૂત નાનપણથી કામાં દોષ છે અને ફરીથી કાંઈ વયમાં કાંઈ બંધારણ બાંધે છે, પણ ચાર રાજો કે જેઓ આપા યુવાનો જોવાને તૃપ્તી રસા છે તેઓએ "Do unto others as you would be done by." એ અંગ્રેજી કિત્તમ વાક્યને અનુસરનાં હાનવું જોઈએ, આ વાક્યનો અર્થ એવો થાય છે કે જો તમે તરેથી તમારા પ્રત્યે જેવા વર્તનની તમે ઇચ્છા રાખો, તેવીજ વર્તણૂક

તમે તેમના પ્રત્યે રાખો, અથવા જેવા યુવાનો તેમ શોધો છે તેવાજ યુવાનો. બનવાને તમે પોતેજ પ્રયત્ન કરો. આપણા પ્રાચિન વિદ્વાનો પણ આવો ઉપદેશ કરતા આવ્યા છે, આના પુરવો મેળવવા અદ્વયર્થનો મહામંત્ર અવશ્ય જણાયો જોઈએ. કામ્ય કે અદ્વયર્થનો બાંધ કરવાથી શારીરિક સ્થિતિને મોટો ધોર પહોંચે છે. અને માનસિક સ્થિતિનો આધાર શારીરિક સ્થિતિ ઉપર છે, અને જેની માનસિક સ્થિતિ નહ થઈ છે તે માનસ આ કુટિયામાં કાંઈ પણ કરી શકતોજ નથી. અહા ! અદ્વયર્થનો આવો પ્રભાવ છે તો તેના મહામંત્રનો અર્થ કેમ ન જાણવો જોઈએ.

આપણા ભારત વર્ષમાં છઠ્ઠીતા ચાર ભાગ ઠરવામાં આવ્યા છે. અને તેમાં પહેલો ભાગ વિદ્યાભ્યાસ માટે મધ્યસ્થોમાં આવ્યો છે અને તે પચીસ વર્ષમાં વિદ્યાર્થીઓને અદ્વયર્થ તર પાળવાનું હોય છે. કારણ કે અદ્વયર્થની માનસિક શક્તિઓ પ્રથમ હોય છે અને તે શક્તિઓનો આધાર શારીરિક સ્થિતિ ઉપર છે અને શારીરિક સ્થિતિનો આધાર અદ્વયર્થ ઉપર છે, અને તેથીજ તેને પ્રધાન પદ આપેલું છે.

પ્રાચિન કાળમાં આઠ વર્ષની વયે વિદ્યાનો આરંભ કરવામાં આવતો હતો. આઠમે વર્ષે બાળકોને કિર્તીનનો સંસ્કાર કરાવી તેમને શુદ્ધ ધેર મોકલવામાં આવતા હતા. અને પચીસમે વર્ષ પોતાનો વિદ્યાભ્યાસ પુરો થયે ધેર આવતા. અને ત્યાર પછીથી સંસારનો શુદ્ધ દેશવજ્ઞાન હતા. જ્યારે હાલમાં સંસાર વરદ કંટી નાખીશું તો આઠ દશ વર્ષની વયમાંજ જગત આંત્રીકોને દીગ્ગજા દીગ્ગજીની મારફત સંસારમાં ધુસ ફેલાવ્યાં આવે છે.

પણ આપા કયાલ દરે ધારે ધર્મે દરે થવા આવ્યા છે. પચીસ વર્ષના પુરવે સોળ વર્ષની સુધી પ્રભ ઉત્પન્ન કરવાનો યત્ન કરવો જોઈએ. આવેજ નિયમ પ્રાચિન આપા લોકોનો હતો. તેઓ વધારમાં વધારે ૪૮ વય સુધી અદ્વયર્થ પાળતા અને સ્ત્રીઓ ૧૬થી ૨૪ વર્ષ સુધી પાળતી. જ્યારે હાલમાં ૨૪ વર્ષમાંજ આયુષ્ય દર

યામ છે. હવે મુદરથ અક્ષયર્થન એટલે શું ? આત્મી સ્તિતે યોગ્ય ઉત્તરના પુરો પોગ્ય ઉત્તરની. પોતાની વિનાશીત્ત્વ સ્તિતિ મતી થયા પછી સ્તુત્ત્વનં જ્ય પડ્યા પછીના દિવ પ્રાંમાં તેને સ્તુત્ત્વનં કેવું, તે સામાન્ય અક્ષયર્થ મત. કહેવાય. ગમીધાન કરવાના હેતુથી પોતાની પરજીવો સ્તિતો મતીનામાં એટલ વાર અને તે પણ સ્તુત્ત્વની થયા પછીના એક અનુક્રમ દિવસે સમારમ કરનારા પુરો સામાન્ય અક્ષયારી ગણાય છે.

ત્યારે અક્ષયારી કાણ ? જેઓ પરસ્તી સેવન કરે તેઓજ કહત વ્યભિચારી કહેવાના લાયક છે ? શું જેઓ પોતાની સ્તિ સાથે અતિ નિકાર કરે તે વ્યભિચારી નહિ ? કેમ નહિ જેઓ અક્ષયર્થના નિયમથી ઉલટી રીતે અતિ ચે ગયા વર્ષે તે પશુ વ્યભિચારી કહી શકાય.

ભારત વર્ષની પાચમાશીર્વ દારણ અથવા જૈન નાતિની એક દશકામાં એક લાખ કરતાં પણ વધારે વસ્તી મરી ગઇ છે તેવું દારણ આ એક પ્રકારનું વ્યભિચારપણું છે, અને હજુ પણ જાગૃત્ત્વ રૂપી યુગમાંથી પાચનાને પ્રયત્ન નહીં કરે તો જીવ દશકામાં જૈનોની વસ્તી કેટલી ઘટેશે તે કહી શકાય નહિ.

જે આપો સરાસરી સો વર્ષનું આયુષ્ય ભોગવના હતા, તેમની આયુષ્યની પ્રજના આયુષ્ય તી સરાસરીને આઠો ત્રીસમી ત્રાસતાયક સંજ્ઞાની ઉપર આડીને ઉભો છે ! છતાં પ્રાચીન આર્યોના પગાવા આ અક્ષયર્થના નિયમો પુનઃપિ રચાવન થાય અને એ નિયમાનુસાર વિદ્યા પ્રાપ્ત થાય તો પુનઃપિ આપણે અને આપણો ભવિષ્ય ત્રી પ્રજા કેમે કેમે શારીરિક અને અર્થિક દિગ્ધિ પ્રાપ્ત કરવાને શક્તિમાન થઈ શકે; અને તેને માટે આપણે પ્રયત્ન કરવો નિમિત્ત.

તે અક્ષયર્થ એટલે શું ? અક્ષયર્થ એ વર્ષે રક્ષણને માટે પાળવાનો પતિત દામરો છે, જે દામરો કુદરત પાળે છે અને કુદરતન કરનારાઓને દિક્ષા કરે છે. અક્ષયર્થમાં જાત ધર્મિક કે સામાજિક નિયમો નહિ પણ

શારીરિક નીવિધાનના અગત્યના અંગના સમાવેશ થાય છે; અક્ષયર્થ એ શારીરિક અને માનસિક ઉન્નતિનું પહેલું પગથીયું છે; ઇન્દ્રિયોને નિયમમાં રાખવી એટલોજ અક્ષયર્થનો તત્વાર્થ છે. જો તેને ધર્મ કહેવું કહેવા તો તે ભરતપાંડના આર્યોનું નહિ પણ પૃથ્વીયર વસનારા પ્રત્યેક માણસનું, પુરુષ તેમજ સ્ત્રીનું, એક પવિત્ર કર્તવ્ય છે. પ્રત્યેક મનુષ્યે અક્ષયર્થ પાળી અક્ષયર્થનું વન ધારણ કરવાની વરદ છે.

શરીરમાં ધાતુઓની જલ્દિ ૧૬ થી ૨૫ વર્ષની વય સુધીમાં થાય છે. ૨૫ વર્ષે યૌવન પ્રાપ્ત થાય છે અને ૨૫ થી ૪૦ વર્ષની વય સુધીમાં યૌવનનું પોષણ થઈ સર્વ ધાતુઓ પુષ્ટ થાય છે. ચાલીસ વર્ષે સર્વ ધાતુઓ સંપૂર્ણતાને પામ્યા પછી તે ધાતુઓ સ્વપ્ન, પ્રસેદ, આદિ દારોથી નીકળવા માટે છે અને એજ સમય વિચાડને માટે ઉત્તમ છે અને તેથીજ ધણા જાયાઓએ ૪૦ વર્ષે લગ કરવાની ભલામણ કરી છે. પણ આપણા દેશમાં તો ચાલીસ વર્ષે જલ્દીસરથાની કસ્યતીઓ પડવા માટે છે, અને વગર સન્યાસે જી સેવનના ત્યાગની અવસ્થામાં આવી પડાય છે. આ-સ્થિપમાં આ પછા દેશોની રથીતિ 'ધણીજ શૌકનંતક થઇ પડી છે અને તેનાં અનેક કારણોમાં અક્ષયર્થનો અભાવ અને જાળ લગત રૂપી વિનાશકારક રહી એ જે મુખ્ય કારણોને હું મોખરે મુકું છું. સ્ત્રી પુરુષના લગ્ન ધર્મના નિયમોથી કેવળ અગ્રાંત એવો ૧૨ વર્ષની કાચી વયનો છાંદસ "પિતા" અને "જા.પા" ની પદવીને પ્રાપ્ત થાય છે ! તથા માતા તરફે પતિવ્રતા પતિવ્ર અને અત્યંત મદત્તની તથા જોખમદારો કરમ જાળવવાનું કામ ૧૨-૧૩ વર્ષની જાગડી (એક કાચી રૂપી જેવી કન્યા) ના હાથમાં આવી પડે છે ! આસેસ ! મરો વખત આસેસ ! માણસ નાંતની અધમ અસ્થિયાનું આધી વિરેષ અધમ, વિરેષ નિર્જન અને વિરેષ નામીથી બેરહુ ખીનું ચિત્ત હું તમેને આપી શકતો નથી.

આનો નાનો જાગડો સંસાર માટે, એ શું.

જોઈએ જાતની અપમ અવસ્થાની નિશાની નથી ? શું તેઓને આવી નાની વયમાં યોગનારથા પ્રાપ્ત થાય છે ? હું કહું છું કે તેમાંનું કશું નથી.

અર્ધનિક વિવાહેરીના ઉપાસકો પણ હવે આ બલામાંથી મુક્ત થઈ રહ્યા નથી. પ્રાચીન કાળના આર્યોએ લગ્નના હેતુમાં “મારી પ્રજા ઉત્પન્ન કરેલી” એજ મુખ્ય મતેનું હતું પણ હાલની સ્થિતિ તો પાપા પિનાના ધર જેવી થઈ રહી છે.

અલ્પવર્ષનો સારો અર્થ “વીર્ય રક્ષણ” એવો થાય છે, વીર્ય એજ શરીરનો રાજા-આરમ્ભ છે. શરીરના આ પ્રાણ તથા આત્માનું રક્ષણ કરવું એ કેના મોટા મહત્વની વાત છે, એ કહેવાની કાંઈ જરૂર નથી. નાની વયમાં જીવતા હોવા નિકારો અને વિપત્તી હજી વડેલી અકાષે પ્રાપ્ત થાય છે. અને જેથી રીતે ઉત્પન્ન થયેલા પુરુષોના પુત્ર કેના થાય તે સંતોષ જણાય તેમ છે.

ત્યારે અલ્પવર્ષે કયાં સુધી પાળવું ? અને માટે પુરુષને માટે ઓછામાં ઓછી પચીસ વર્ષની વય અને વધારેમાં વધારે ૪૮ વર્ષની વય નિર્માણ કરવામાં આવી હતી તેજ પ્રમાણે ઓછાને માટે ૧૬ થી ૨૫ વર્ષની વય નિર્માણ થઈ હતી. પણ હાલમાં જ્યાં આઠ આઠ વર્ષની વયનાં દીગલા દીગલી જેવડાં અસાન આલોકોની પાસે અગ્નિ દેવની સાક્ષીઓ પતિ પત્નીના પવિત્ર પૂર્વની પ્રવિશાઓનું કારણ જન્મવયમાં આવે ત્યાં અલ્પવર્ષનો પ્રસ્તુત કર્યો રહ્યો ?

તેમ છતાં ગામડાંના શોકો રહેલી લોકો કરતાં વધારે આરોગ્ય અને વધારે મજાનુત હોવાથી નિરંતર ઉલ્લાસમાં લાગેલા હોવાથી, અને તેમની આમણાસ નિકારોને ઉત્પન્ન કરે એવી લાલચો થોડી હોવાથી તેઓમાં જીવતાની મોટી વય આવે છે, તેઓ વધારે આરોગ્ય અને તંદુરસ્ત રહી શકે છે અને દીર્ઘ આયુષ્યભોગની શકે છે.

ખરે જોતાં, વીર્ય રક્ષણનો મોટો આધાર માનવેની સમજણ ઉપર આવીને રહેલો છે. પણ

અસોસની વાત એ છે કે, માણસો ખોટા ધર્મ અને ખોટી રીતોએ આધીન થયાં છે. વધારે ક્રમઘટક સિદ્ધિ સુધી યત્ન કરી છે, કે, એક તરફથી આપણે આપણાં ધર્મશાસ્ત્રમાં શ્રદ્ધા રાખવાના આસ્તિકપણાને ઉપજાવે અને દાવો કરીએ છીએ, ત્યારે બીજી તરફથી એજ આપણાં સાત્ત્વ ધર્મશાસ્ત્રની આજ્ઞાઓની આપણે અસાન બીએ અથવા ખરે ખોટું બાજુનાં ભેદરહિત થયેલા છીએ. શું, પવિત્ર શાસ્ત્રો આઠ આઠ વર્ષના આજ્ઞા દેના વિવાદ કરવાનું કરમાવે છે ? શું આજ્ઞા લગ્નના પક્ષમાં રહે છે ? નહીં પણ તેઓ તો મોખ્ય ઉમરે સંસારમાં પડનારાં કષ્ટા બનાવે છે.

ખરી રીતે કયાએ જન્મની થયાં પછી નજીક વર્ષ સુધી પોતાથી અધીક શુચિતામાં વરની વાટ જોરી, તેટલામાં તેઓ વર ન મળે તો પછી પોતાના જોડ શુચિતામાં વરને પરમું. બીજાં પિતામહે મહાસાગર સુધિધરને પણ એવોજ આનિપ્રાય આપેલો છે

પછી જો અલ્પવર્ષના કાયદાનું ઉલ્લંઘન કરે અથવા “સોળ વર્ષ પુરાં ન થયાં હોય એવી (નહાની વયની) સ્ત્રીમાં પચીસ વર્ષ પુરાં થયાં વિનાનો પુરુષ જો મર્માધાન કરે તો તે મર્મ માતાની કુષમાંજ નાશ પામે; અને કહી જાણે તો છવે નહિ, ને કહી છવે તો દુર્બળ રહે; વાસ્તે અતિ આજ્ઞા વયની સ્ત્રીમાં મર્માધાન કરવું નહિ.”

આ બધી ખરાબીઓના અટકાવ થવા માટે અલ્પવર્ષ પાળવાની એટલે વીર્ય રક્ષણ કરવાના જરૂર છે અને તેજ આરતવર્ષમાં વીર્ય રત્નો પેદા થશે.

પણ એક એમ માને છે કે શ્રદ્ધિયો એક વાર તૃપ્ત કર્યા પછી તે વરસુની કે વિચારની અનિચ્છા રહેતી નથી પણ આ અનિચ્છા ભરેલો છે, છત્રિયોના વિપત્તી તૃપ્તી નથી જ થતી. વિપત્તી જેમ જેમ વધારે પ્રવૃત્તિ તેમ તેમ વધારે ને વધારે કંઈક થાય છે. વિપત્તિભોગવત્યા વિપત્તી કહી શકિત થતી નથી, પણ અગ્નિમાં ધી નાખ

વાથી જેમ અગ્નિની વૃદ્ધિ થાય છે, તેમ કામની પણ વૃદ્ધિ થાય છે.

આની રીતે વિવિધની ઇચ્છા સહેજ થઇ ગયા છે પણ તેને કામમાં રાખવી જાણ મુશ્કેલીની વાત છે. અહીં એક આને માટે સરમ દર્શાવે આપું છું.

એકીન નામના એક અગ્રેજ કાકટર પાસે એક દરદીએ પોતાના વિષે બોલતાં એવું જણાવ્યું કે, “એકીન સાહેબ હું તમારી પાસે જે વાત કરવાનો છું તે સાંભળી તમને આશ્ચર્ય થશે કે પરંપરા પહેલાં મેં સખત બદલચર્ચાનું પાળ્યું હતું, કાલેજમાં હું વિદ્યાર્થી હતો ત્યારે મને વખતે વખત કામ વિહાર ઉત્પન્ન થતો હતો, તે વખતે તે એટલો બધો ચતો હતો કે, તેને સાંત ન પાડી શકાય; પણ આશ્ચર્યને હું વચ રાખી શક્યો એ વાતનું મને સ્મરણ થાય છે ત્યારે મને પરમ આશ્ચર્ય થાય છે. તેને વચ કરવામાં મને જાણ પડેનવ પડી હતી હું સંપૂર્ણ જીવાતીની આગ વામાં હતો અને જ્યારે “કામ” મને વ્યક્ત થતો ત્યારે હું તરત બહાર નીકળી પડતો. આમ રવાની હું કામને વચ કરી શકતો. મેં કદી પણ પશિચાર કર્યો નહિ. તમે જુઓ છો કે હું કેવો મનસ્વિત છું. કમરવંચીન હું બની શક્યો છું.” કાકટરે આ દરદીની હકીકત આગતાં જણાવે છે કે તે મહાસુ એવી રીતે બદલચર્ચા કરત પાળીને તથા વિચાર્યામને અને ઉત્તમ પદી પ્રાપ્ત કરી પોતાના ધર્માની સારી ચર્યા પદવીએ પહોંચ્યો છે.

આર અથવા વિધ્યાંધપણુ એનાં નામો આપી શકાય.

હવે આપણે પરંપરા પછી આ સંબંધમાં શું શું ખાતરી જ્ઞાનમાં રાખવી તથા કયા કયા નિયમો પાળવા તેનો ઘોડો વિચાર કરીએ. આને માટે આપણે નીચે પ્રમાણે બે વિભાગ પાડીએ. (૧) આહાર સંબંધી નિયમો. (૨) વિહાર સંબંધી નિયમો.

આહાર સંબંધી નિયમો—સાદું ગુણુકારી નિર્ધારી ભોજન વિવિધ વિહારને શાંત રાખે છે. અને ભક્તિદાર ભોજન અને ખાનપાન એ વિહારને ઉત્તેજન આપે છે. મટે ખાવામાં પીવામાં, પહેરવામાં અને રહેવામાં દરેક વર્તનમાં સાદાર્થ રાખવાથી બદલચર્ચાનો હેતુ પાર પડે છે.

વિહાર સંબંધી નિયમો—વિહારમાં અત્રે સ્ત્રી પુરુષના ખાનગી વ્યવહારો સુખ્ય કરીને સમાવેશ થાય છે. વિદ્યાર્થી બેસી પણ ધ્યાની બાળતો છે. પણ અને એજ વિવિધતા સંબંધ છે, માટે એ વિષે કંઈ ચીરંતરથી વીચેચન કરીને સ્ત્રી વિહારમાં નાંચે લંબી પાળોનો વિચાર કરવાની જરૂર છે—

(૧) વચનો વિચાર. (૨) કુચનો વિચાર (૩) કાળ વિચાર (૪) શારીરિક રિયનિ (૫) માનસિક રિયનિ, (૬) પવિત્રતા (૭) એક પક્ષી વત્ત.

વચનો વિચાર—

સમગ્ર પુત્રીના કામર પત્રિ કરતાં કમમાં કમ પાંચ વર્ષ નાની અને વધુમાં વધુ દસ વર્ષ નાની હોવી જોઈએ. વિચારાંત આખાં સોદથી સોજ વધેથી નાની પુત્રીને સાસરે ભોજનની બેઠકએ નહિ.

જાગ્યે તરખ અગ્નિ દાનીકારક છે. સરકારે પુત્રી માટે જાર રખે અને પુત્ર માટે ૧૧ વર્ષ રાખ્યાં છે તે વધારેને જનકને સોંપને પત્રીસ વર્ષ સુધી લઈ જતાં જોઈએ.

રૂપ ગુણુ વિચાર—૧૧, ૧૫ વયનાં મુળની ગોચર અને સમનવર્તને વિહાર કર્યા વિના જા

આપો એટલાં લાકડે માકડાં વળખાડે છે, તેમાંથી કાઢતે કાંઈ પ્રકારે શારીરિક પર્યાપ્તિ હાનિ થાય છે. અને બ્રહ્મચર્યનો ભંગ એટલે વ્યભિચાર એ તેનું પરિણામ છે.

**કાળ વિચાર**—જ્ઞોત્સનામુખેવાત “ઋતુ કાળમાં ભાગ્યા પાસે નવડું.” અર્થાત્ સ્વસ્ત્યકા સ્ત્રીને ઋતુઆવ બંધ થયા પછી અગીયાર રાત્રી સુષીના સમયેજ સંયોગ કરવાનો કાળ અનુકૂળ ગણ્યો છે. વરંવાર નહિ. પહેલા પાંચ દિવસ અને પંજીના અગીયાર દિવસ એટલે સોળ દિવસ પછીથી જેમ કમળ સંયોગાદ્ય બંધ પડે છે તેમ સ્ત્રીનું ગર્ભાધાનના હેતુથી સંયોગ કરવો એ નિર્થક છે, કેમકે બીજાં નિષ્ફળ જાય છે.

જેઓ મનને કાષ્ઠમાં ન રાખે અને સ્વસ્ત્યકા સ્ત્રી પાસે જાય તેને દટ્ટિ, આયુષ્ય, તથા તેજની દાનિ થાય છે, અને અધર્મની પ્રાપ્તિ થાય છે. બળી પહેલાં એ દિવસમાં જે ગર્ભ રહે તે આત્મા-પુષ્પવાળો તથા નિકૃત અંગરજો કુશચારી થાય છે.

ગર્ભાંતરી સ્ત્રીના પુરૂષે કદિ પણ સંબંધ કરવો નહિ; કેમકે ગર્ભાંતરકાળમાં જેથી ચેષ્ટા કે વિષ વ્યાપાર કરવામાં આવે છે તેવીજ ચેષ્ટા કે શુભચર્ચા બાળક અવતરે છે ને મોટપણે તે બાળક વિપત્તિ અને વ્યભિચારી થાય છે.

**શારીરિક સ્થિતિ**—સારીરે કાંઈ પણ વ્યાધિ, કમર, કે બેઝેની હોય, તેવા સમયમાં વિહારનો ત્યાગ કરવો. સ્ત્રીના મદ્દસામાં પુરૂષે અને પુરૂષના મદ્દસામાં સ્ત્રીએ મનને વશ રાખી બ્રહ્મચર્ય પાળવું. કારણ કે જો આત્મા સમયમાં ગર્ભ રહી જાય તો બન્નેનો જીવ જોષ્મમાં આવી પડે. બહુએક રોગમાં વિપત્તિ મુઠ્ઠા ઉઘટી વધે છે ત્યાંત વરીકે ક્ષય રોગીને વરંવાર નિકાત્રી હજી થાય છે. આ હજી સ્વાભાવિક નથી પણ રોગ એ મુઠ્ઠાને જન્મ આપે છે માટે ક્ષયરોગીએ ભાવગેતી રાખવી.

**માનસિક સ્થિતિ**—હજી વિના અજાણકાથી યોગેશ્વર કાર્મ સંતેપ આપતું નથી અને આસંતેપ એ પણ સ્ત્રીરિક તેમજ માનસિક વિહારનું કારણ

થાય છે. હજી ચમરનો વિહાર નિષ્ફળ જાય છે અને સારીર ઉઘટું જાય છે. આ વાત બન્ને પક્ષે સમજવા જેવી છે. સ્ત્રીની હજી વિના સ્ત્રી મંમન કરવું તેમાં અને કાષ્ઠનીતી વીર્ષપાત કરવો તેમાં બીજાં ક્ષય વધાવન નથી, અને આથી કાષ્ઠ ગર્ભ બંધાય છે.

**પવિત્રતા**—વિહારના વિષયમાં યોગ્યતા શારીરિક શુદ્ધિ એ ઘણી મોટી અને અગત્યની વાત છે. સ્ત્રી પુરૂષોના શુભ અગોના સ્થાનિક વ્યાધિ એટે બાળે અપવિત્રતા અને મંદિનતામાંથી જન્મ પામે છે, પવિત્રતા એ શારીરિક ઉન્નતિનો એક માર્ગ છે.

**એક પત્નીવૃત્ત-પતિવૃત્ત-ધણ્યો**—જેમ પોતાની પત્નીને પતિવૃત્તપણીના ઉપદેશ આપી નીચમ લેવાયે છે તેમ પોતે એક પત્નીવૃત્તનો નિયમ ભાગ્યેજ લેતા હશે. આ જગ્યાએ સ્વાર્થ છે કે કેમ તે સમાજશે. અને જ્યારે પોતે એક પત્નીવૃત્ત નથી લેતા ત્યારે તેમનો વિશુદ્ધ પ્રેમ કોના તરફ કેટલા પ્રમાણમાં હોઈ શકે તે વાંચક વિચાર કરી લેશે.

વરંવ પરણેલાં જોડા ક્ષણિક સુખ વિલાસનો વિશેષ લાભ લેવાને લક્ષ્યાય છે; પણ તેઓ બળ્યતા નથી કે તેઓ એ કુટુંબી પોતાના બલિયના સુખને જોષ્મમાં નાંખે છે.

**વિલાસ વિચાર**—ઋતુઆવ બંધ થાય તે દિવસથીજ સ્ત્રીને પુરૂષની હજી પ્રાપ્ત થાય છે અને એ વખતે જન્મ્યું-ઉપજ કરનાર તત્ત્વ પરિપૂર્ણ થયેલું હોય છે. જો આ સમયમાં સ્ત્રી પુરૂષ બાળક ઉત્પન્ન કરવાના પવિત્ર હેતુથી ભેગાં થાય તો ગર્ભ રહી જાય છે. ગર્ભ રહેવા પછી તે રસી સ્ત્રીને ઋતુપાતિ થાય ત્યાં સુધી બ્રહ્મચર્ય પાળવું નેહ્યું. બાળક અવતર્યા પછી જ્યારે તે બાળક ધાવળું હોય છે ને ખોરાક ખાવાની સરચાત કરે છે, ત્યારે પાકો ઋતુઆવ શરૂ થાય છે. ગર્ભ રહે તે દિવસથી લગભગ અઠાર માસે કે તેથી પણ વધારે મુદ્દે ફરી ઋતુઆવ થાય છે, માટે એટલી લાંબી સુન્ન સુધી સ્ત્રીએ અક્ષય

રહેવું નોંધ્યે અને જોનુંજ નામ ખરું “અક્ષ-  
ર્ય” છે.

કેટલાક વિદ્વાન ડોક્ટરોનો અભિપ્રાય આથી  
પણ વધારે લાંબી મુદતનો છે. સ્ત્રીએ જાગરને ધન-  
રાવનાથી નજાળી થયેલી હોવાથી સશક્ત અને  
વંદુસ્ત થતા મુઠ્ઠી અક્ષર્ય પાળવું નોંધ્યે  
જોતે લગભગ પોણા ત્રણ વર્ષ મુઠ્ઠી પાળવું  
નોંધ્યે.

“માટે અક્ષર્ય ટવધારી તેજ કહેવાય કે  
જેનામાં જાગક ઉત્પન્ન કરવાની શક્તિ હોય તથા  
જે જીવ જીંદગી જીવતરજા માટે અને દંડ મન  
સંકલ્પની ખાતર થોડાં કામે અને જાગક ઉત્પન્ન  
કરવાના પચિત્ત હેતુથીજ સંગ કરે.”

ધણીએને ઉપરનો અભિપ્રાય પ્રસંદ નહિ પડે  
પણ તે અક્ષરે સત્યજ છે.

જેઓએ સદા આખી જીંદગી અક્ષર્ય પાળવું  
છે તેવા સમગ્ર રણનીર લીધે પિતૃમહત્વ  
દ્રષ્ટાંત મિત્રાની જીવે.

મિથ્યા વિહાર—લોકો વ્યભીચારનો અર્થ  
જે પરસ્પરી ગમતજા કરે છે પણ તેની અંદર  
વિયોગ અને મિથ્યાયોગ તથા હસ્ત દોષનો  
પણ સમાવેશ થાય છે.

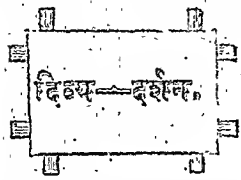
અતિયોગ—અસ્તોસ! વિપવના અતિયોગથી  
કેટલાં બંધા પરજીવા નેડાની જીંદગી નેજામાં  
આવી પડે છે. તેઓ આ મું કરે છે તેનો સંદેહ  
પણ વિચારે ક્યાં સિવાય કામરૂપી યોગાનો લગામ  
તદન ફરી મૂકી દે છે. પણ શાણા પુરોએ તથા  
શાણી સ્ત્રીઓનો સાથ મહેવું નોંધ્યે. અતિ  
વિહારથી હારીતના સાંધા નરમ પડી જાય છે  
દીવણ રડી જાય છે શક્તિ ઓછી થાય છે.  
મુઠ્ઠી ગંદતથા લયરતી થતી ગાસે છે, મગજ ખરાબ  
થાય છે રમતનું શક્તિ ઓછી થાય છે આંખની  
કાંઈ ખંદ પડે છે અને એથી અનેક વ્યવસ્થાને  
આવવું સંદેહ થઈ પડે છે.

શુભ અનાચાર—આ દુરાચારી જે  
ખરાબી થાય છે તેવું વર્જન કરવાને મારી પાસે

પુરતા સુધે નથી. મિત્રારો ગરોબ અજ્ઞાન તરણ  
જેનાં પર આ પાપી વિનાશકારક ફૂલ પડે છે તે  
પાપમાત્ર થાય છે. આના અનાચારથી નોંધાન  
છેઃકરંઓને બચાવવા એ માળાપોની મુખ્ય ફરજ  
છે તરણ જાગકોનું એ એક સુખ દુઃખારણ છે.  
માળાપો આનો જાગતો ભાગ્યેજ ભણે છે. અંતે  
છોકરંઓ અશક્તિપણની ફરીયાદ ઉકારો પાસે  
કરે છે.

આવી રીતે અક્ષર્યનો ભંગ કરનાંથી પેશા-  
જનું હાર રૂત વર્જનું થાય છે. સકળ ઉશરેણી  
થતથી વીરનો પાન ઘટ જાય છે અથવા પાંચ  
સરણ વીર્ય કરવા માટે છે; વીર્યપાનની સચે  
સજ્જા ઉત્પન્ન થાય છે. ધંતુચારનો ભંગ  
વ્યાધી ઉત્પન્ન થાય છે. આવી કુદરથી તરણ  
સ્ત્રી પુરો પોતાના સંસીની પાપપાત્રી કરે  
છે. એનાં પુગરોને ને સંવતો થાય છે નો  
વીર્યદીન, સુદ્ધિદીન, અને વિલક્ષણ સ્વચારના  
ગાંડા જેવા તીવર છે. માળાપોએ પણ પોતાના  
કામી વપના છોકરંઓ ઉપર પાપી દેખરેખ રાખવી  
નોંધ્યે, કે જેથી તેજ નાદાનીને લીધે અક્ષર્યનો,  
આવી દુઃખદાયક રીતે ભંગ કરવાનો લવભાં  
ન પડે.

“અક્ષર્યનો આ મહાભંગ દરેક ધ્યાનમાં  
રાખવા જેવો છે. તેના અભાવથી હિંદુસ્તાનની  
કેવી દુરદશા આવી ગઈ છે તેનો તાત્પર્ય દાખવે.  
આપ ત્રાયકો અમરાજ આવી ઉભો છે, માટે હજી  
પણ ચેતો, ઉપમાથી આગત મરડી ઉભા થાય  
અને આ મહાભંગના જળ જળો અને નોજા  
હિંદુસ્તાન-દેશ વિર રતોળી શોમાયમાન થશે.  
કામ વિજ્ઞાન મનમાંથી ઉત્પન્ન થાય છે માટે  
મનને કમળમાં રાખો. મન કામળમાં રાખવા માટે  
તેનો વિચાર કરો પણ અયોગ્ય કાલે નહિ  
કરો; તેજ તમે ફાવી શકશો. દરેકી શાગેવના  
વિપાકો એવીને આજ્ઞા અને આ મહાભંગ જાણા  
જગતમાં પ્રસારો.



(સખનાર:-સ્નેહધોગી ધુસીઆ આનદેશ.)

સંધ્યા સમયે આ સ્નેહ યુક્ત પ્રધાન આપાર-  
 કળા-કુશળતામય-વાર્ણિય-શુભાસદન વગરન્ય-  
 સ્વાર્થ-પરાયણતામાંજ હુબ્બ નાગરિકોથી ઉત્પન્નતા  
 નગરથી હતાશ બની, કુદરતી રીતે સ્વાભાવિક  
 પ્રસરેલી અરુણ્યની સુખમય શાન્તિનો આસ્વાદ  
 સેવાયે મનનો પ્રેસાયો, શરીરથી ધસાયો. પયે  
 સાક્ષતા અનેકાનેક ચિત્ર વિચિત્ર સેનાના દર્શન  
 થવા સાગમાં, કોષ હર્પાનદમાં, તો પ્રેક્ષક શુભ-  
 ત્વાઓ શોધાસિના-ગદાસાગરમાં ઉચે-નીચે હુંબ-  
 હોઆધરતા હતા. ક્યાંક પ્રેમ મુદ્રેલાથી ઉદ્ભવતાં  
 સુખપ્રદ પ્રત્યંગો આનંદ અર્પતા હતા, તો ક્યાંક  
 દર્પાદેહીનાં ત્રિપમય ઝડલો પહેલાડાન્યાથો વિનિષ  
 હુઓપેક રિચિતિનાં દર્શન થતાં હતાં. સંસાર  
 મરનાનાં આવા અનેકાનેક વિચિત્ર રિચો વિદોષકો  
 વિદોષકો અને તે અદૃશ્ય થતાં તેઓનાથી ઉદ્ભવતાં  
 વિચારોથી હૃદયમાં અવેશ, દયા, મમતા, ક્રોધ, શા-  
 ન્તવાદિ સદાગુણો. અલુભવતા અલુભવતા હું  
 ગંગાનદિના કિનારે કિનારે ધણે દૂર આવી પહોંચ્યો.

આ વેળાએ સૂર્ય બગવાન કોવચી રૂંકાવણું  
 ધાણું કરી રહેલા હતા. ચાલવાના અગેઢરીને,  
 તેમજ શરીરના વગરને ઢરીને આ પામ જગાતગો  
 પણ ઉપડનાં ના પાડતાં લાગ્યા તેથી એક કુદરતી  
 લીલા ધામનાં મિણવેલી લોલા રંગી નગમ ઉપર  
 આ બર રૂપી ચત્રેર અનંદગીએ પડ્યું. સમય  
 પરવરે અને સરિતાનો કિનારો હોવાથી પવનની  
 દોડે લહેરો તેમજ નિર્ગમ્ય જગા કુદરતી રીતેજ  
 અદ્વાદક સાગરું, હળું. સરિતાનો પ્રવાહ અરુણ-  
 ચિત્ર રીતે ખગખગ શબ્દ કરતો વહેતો હતો.

નગરથી દૂર હોવાને લીધે જન-સંગામનો અવાજ  
 તત્તન કમી હોવાથી, સરિતાનું જળ નિર્મળ, સ્વ-  
 ચ્છ, શિતમ અને પવિત્ર હતું. અને તેમાંથી  
 પારસ્પરિક વસ્તુની માફક સરિતાના તળીયુગ્મપરના  
 ઝીણા મોટા અનેક વિવિધ રંગ યુક્ત રેવીના  
 રંગો સ્પષ્ટ દેખાઈ આવતા હતા, સરિતાનો પ્રવાહ  
 પોતાના કંદરમાં અનેક તરેરની ચીજોને તાણી  
 બતો હતો. જુદી જુદી રંગ બે રંગો પુષ્પમાળાઓ  
 પણ તે સરિતાના જળ પ્રવાહ ઉપર તણુવતી  
 વસુતી આવતી હતી, અને તે પુષ્પમાળાઓ સ-  
 રિતા દેવીના શદ્દાગુપ્તો મકંતોએ કરેલી સેવા-પૂજનની  
 શાશ્વત પુરી આપતી હતી. વળી સરિતાના નિર્મળ  
 નીરમાં વિવિધ રંગના ગચ્છ ત્રયા બીજા અસંખ્ય  
 જળ પ્રાણીઓ સ્વેચ્છાથી વિદાર કરી રહ્યાં હતાં;  
 જળચર પ્રાણીઓને આવા પ્રકારનો સ્વેચ્છાએ  
 થતો સ્વતંત્ર વિદાર જોવાથી મૂલે મૂલો રિચિતિનું  
 કંઈક ભાન થઈ આવતાં અંતઃકરણમાં ગ્લાની  
 પેદા થતી હતી. આ અદ્વાદજનક દેખાવ પરથી  
 નયનને ખસેડવાની યત્નિચિંત માત્રી મરજી થતી  
 નહોતી, પરંતુ પશ્ચિમોના કલરવોમાં પ્રજ્વળતા  
 હુપા મગોએ અંતઃકરણને આકર્ષ્યું અને મનનાં  
 રાગજો નયનને ઉચે નિંદાગવાની આજ્ઞા કરી.  
 ગદન, ઘટ રિચાણ. ડાંગીયો તંથા પત્રોથી  
 આગ્ગદિત વટપક્ષ ઉપર સંખ્યાગ્રાંથ. પશ્ચિમો,  
 રિચથી રાતિ મેળવવા પોત પોતાનાં સ્થન  
 ચોષા સહોદર સયે એકજ સવાની પ્રવૃત્તિમાં  
 ધોધાર મયવતા હતાં અને સુષ્ટિમાં જ્યાં જોમુએ  
 ત્યાં દિવકના અમથી વિખાન્તિ મેળવવા અનેક  
 શયે ઉત્કુષ્ઠ થઈ રહ્યા હતા. અદ્ય સમયમાં  
 સૂર્ય બગવાન ક્ષિતિજમાં અરત થયા; અને  
 સૂર્ય દેવતા અરત થવાની સાથેજ પશ્ચિમો જળો  
 ધાડો સમયક ધરાવતાં હોય તેવી રીતે તેઓ પણ  
 એકાંકી યાત્રન થઈ ગયા અને ક્ષિતિજ મેળવવામાં  
 ઉદ્ભવેલો મોઘાટ એક પ્રગરની અવનની શાન્તિમાં  
 ધાન થયો.

ચોડીવારમાં સરિતાના વહનથી થતા અનાજ  
 સિવાય કોઈપણ અન્ય અનાજ અવશે અધિકતો

નક્કો. દક્ષ વચ્ચે વચ્ચે જુલ અંતરે શીયાળી-  
 યાંતો બાળકોને બપ ઊપવ કરનારો કંઈશ અચળ  
 સંભળાતો હતો, સાયંકાળને બદલે રત્નવિતો સંચાર  
 થયો, અને નિર્મળ આકાશમાં ચક્ર ચક્રિત તારાઓ  
 એક પછી એક ડોકયાં કરી દેખાવા લાગ્યા, અને  
 તેમની મંડમાં અનેક નાચીકાનો એક સૂર્યનાર  
 ચંદ્ર પોતાનું શીતળ, ધવળ પ્રકાશ પ્રસરાવવા  
 લાગ્યો. સરિતાના બળપટ પર રૂપેરી રમતું વસ્ત્ર  
 પ્રસરી રહ્યું અને તેનું પ્રતિબિંબ બળમાં એક  
 પ્રકારનું ઉલ્લસન સ્વેત ગુહ અગાધી રહ્યું. અનેક  
 વ્યક્તિઓ અંદ્ર મુખ હોય, ફૂલ-ફળમાં ઢિંચુમ  
 વરનારો અચારે મારા પડુને પળ શાન્તિદારક  
 થયો. કુદરતનું સૌન્દર્ય નિહાળવામાં હું રિશ્વતું  
 અન્યમાન બૂલી ગયો, અને જે રંગસી પ્રતિધી  
 દંટણી શાન્તિ શોધવા એકાન્ત અરણ્યમાં જાવી  
 ચઢ્યો હતો. તે સ્વાત્તિક શાન્તિનો આસ્વાદ હું  
 અનુભવવા લાગ્યો. અને તેથી, અને જેના પ્રવાયે  
 સનીર ન દોળાયું, લંબાયું દૃષ્ટિ મંદમાં સ્થિત  
 થઈ અને આખો મીઠાઈ શરીરની અવરજા  
 પલટાઈ અચળાચી નિદ્રમાં ? અને નિદ્રામાંથી  
 મુદ્દમ સનીર અચળ થઈ સ્વપ્ન અવસ્થાને

(તે વેળાએ) “હથે છે” એમ [વોઈસ] કહે છે.  
 પ્રશ્નોપનિષત.

અહીં આ દેવ સ્વપ્નમાં મદિમાને અનુભવે છે.  
 જે જોયું હોય તે જુવે છે સાંભળ્યું હોય તે  
 સાંભળે છે, અને દેશાન્તરને દિશાન્તર વડે વારંવારે  
 અનુભવેલાને પુનઃપુનઃ અનુભવે છે, દૃષ્ટ તથા  
 અદૃષ્ટ, સાંભળેલાને ને નહિ સાંભળેલાને અનુભવ  
 કરેલાને ને અનુભવ ન કરેલાને. તથા સત્તા ને  
 અસત્તાને સર્વને દેખે છે, સર્વ દેખે છે.



વળી પવન રાજોમાંથી અસંખ્ય પવિત્ર, નિર્મળ, સ્વચ્છ ઝરણા નીકળતાં હતાં જે મહાન સુશોભિત સરોવરો તથા નદાની મહત્ત્વ વેગવાન સરિતાઓમાં એકતા હતી. આ સરિતાઓ અને આ સરોવરોનો દેખાવ ઘૂંગા ઉપરથી અતિ આકર્ષક લાગતો હતો. આ સરોવરમાં અનેક રંગી કમલો આવી રહેલાં હતાં. કેટલાક સાત પાંખડીવાળાં હતાં. કેટલાક શત પાંખડીવાળાં હતાં. અને કેટલાંક સદૃશ પાંખડીવાળાં શોભતાં હતાં; અને તેમના ઉપર મધ્યે શોભી જમરો મહુર ઝુંબારવ ફરી રહ્યા હતાં. અને જળ ઉપર જળનાં પશ્ચિમો પેત તથા રંગીત પાંખોથી શોભી રહ્યાં હતાં. આદ્યુખાદ્ય કિનારા ઉપર વૃક્ષની ઘરાઓ આવી રહેલી હતી; અને ઘૂંગા ઉપર મધુર કોકીલ, પોપટ, મેના, લુલુપુલ, દુસ, ચાંદક, ચંડા, ખેરિયા અને અન્ય અસંખ્ય વિવિધ રંગ યુક્ત પક્ષિઓ કહોલ કરી રહ્યાં હતાં. વળી આ વનમાં વનરાજ, મફટ, બ્યાદ, રિંછ આદિ માપદ અને મોટા મગરાજ, હંમ, ડાઘાદિ બીજાં પશુઓ પણ સ્વચ્છ વિદાર કરતાં હતાં. વળી અસંખ્ય સર્પ, પતંગ, આદિ પણ જળાતાં હતાં, અને નિર્દેશસ્થાનમાં સર્પ પ્રાણીમાં જેમ પ્રખરેશો જળાનો હતો તેથી તેઓ અતિ વેર-વિસરી અન્યોન્ય સ્વચ્છે વિકસતા હતા.

ઉપરોક્ત આકૃષ્ટિક દિશાને જોઈ હું ચકિત થઈ ગયો. મહેં જાણ્યું કે શું હું આ તે સ્વર્ગમાં આગ્યો છું કે કોઈ આપણા પૌરાણિક, ગંધર્વ, કિનારે, યજ્ઞ કે અપસરાઓના પ્રદેશમાં આવ્યો છું? વળી વિચાર આવ્યો કે ગમે તે લોકોનો આ કેદેશ હોય પરંતુ જ્યારે પ્રારબ્ધ યોગે હું અહિં આગ્યો છું ત્યારે તેનો પૂર્વ લાભ કેમ ન લઉં? આજ વિચારથી આ દેશમાં હું નિરખતાથી ચલતે રહ્યા લાગ્યો, પરંતુ થોડે અગાડી ગયો ત્યાં વળી એક અતિ ગમંકારક દેખાવ નજરે પડ્યો. આકાશ માર્ગેથી એક વિમાન આ પ્રદેશની એક દિશા તરફ જઈ હતું અને આ વિગ્નનમાં એક દેવી એડેલી હતી. હું પણ આ વિમાન જઈ

હતું તે દિશા તરફ જઈ્યો અને ત્યાં પહોંચતાં એક દિવ્ય વિપવન દક્ષિણે તર ધુન્ન. મારા ત્યાં પહોંચતાપોતા આ વિપવનમાં અનેક અપ્સરાઓ કોઈ વિમાનદારા આકાશમાર્ગે, કોઈ નોખાદારા સમુદ્રમાર્ગે અને કોઈ વળી અગિરથદારા જમીન માર્ગે અને એવાં વિવિધ માધનોથી વિવિધમાર્ગે આવી પહોંચી હતી. અને પોત પોતાના નિયત (કાયમ) કરેલા સ્થાનકે એસી વાતાલાપ કરવા લાગી હતી, આ સર્વ અપ્સરાઓના સ્થાનની મધ્યમાં એક ઉચ્ચ અગ્નિગણું સ્થાન હતું ત્યાં એક અતિ સુંદર દિવ્ય આસન મુકવામાં આવ્યું હતું.

આ ઉપવન શશ્યમારવામાં કુદરતે પોતાની પૂર્ણ શક્તિ ખર્ચી હોય એમ જણાઈ હતું, અને તેમાં સર્વ પ્રકારનું સાન્દર્ભ પુસ્તકમાં આવ્યું હતું સ્થિતિ ઉપસ્થિતિ હાલના સમય સુધીમાં મનુષ્યે ભગીરથ પ્રયત્નથી કુદરતની જે મહાન અગ્નિ, વિદ્યુત, ચુંબક વાયુ જલાદિ શક્તિઓના નિયમે જાણી તેમને પોતાના સુખ માટે અનેક નાના પ્રકારના ઉપયોગમાં લઈ પોતાનું સુખ વધાર્યું છે, તે સર્વ મનુષ્ય પ્રયત્નો અરૂપ લાગે, અને મનુષ્ય ની શક્તિજન્ય ન્યુન જાણ્યાં એવી સામગ્રીથી આ ઉપવન અલંકૃત કરવામાં આવ્યું હતું.

આ અપ્સરાઓમાં કેટલીક મુખપવનની હતી; ત્યારે કેટલીક હલ્લુ મુચાનીના મલશકામાં હતી, કેટલીક મરમાં મરતે ઘેરેલી તથા અગિમાનના પાસમાં પડેલી હતી અને કેટલીક દુર્ગમનાં બારે ઘા અનેક સમયથી અનુભવેલા લોવાથી સકનથીત સાન્ત અને પ્રત્ન જણાતી હતી, કેટલીક રહા-મરહામિ મટાશથી જોતી હતી; ત્યારે કેટલીક અન્યની પ્રત્યે આશા ભરી દૃષ્ટિથી નિહાળી રહી હતી. યોગ્ય સમયમાં ત્યાં એક દિવ્ય અવર્ણ નીચ પુરવતું આગમન થયું, અને તેમજો નિર્ણયત થયેલું આસન લીધું. એક આકૃષ્ટિક શાન્તિ પ્રસતી રહી અને વરણ્ય મન્દ્ર, અગ્નિ, સૂર્ય-ચંદ્ર આદિ દેવો આપના પધારવાથી પોત પોતાના કર્તવ્યમાં આરંભ થયા. આ પુરવતું પ્રભામય સ્વરૂપ જોઈ સ્તબ્ધ થઈ ગયો અને ત્યાંથી જાણે ખાંડબ

નદિ એવી હજી થઇ. એક ક્ષણમાં કણમાં મધુર અવાજે અમૃત પેટે - રેડાવા લાગ્યો. અને દેવીયો (અપ્સરાઓ) પેલા દિવ્ય પુરુષની સ્તુતિનું ગાન કરવા લાગી. તરતજ : એક દિવ્ય શાન્તિ પ્રસરી અને યોડી ક્ષણ પછી તે મહાન પુરુષ સુધારણ વચનોથી ત્રીજે પ્રવાણે એક અપ્સરા પ્રત્યે કહેવા લાગ્યા:—

“હે આવે ! તું કશાનો છે ? તારાં જાતકાં આનંદમાં તો છે ? તેમની પ્રવૃત્તિ બાણવાની મ્હારી હજી છે.”

પિતાનાં આંચં રનેહયુક્ત વચનો સામ્રાજી તે અપ્સરાએ પ્રત્યુત્તર આપ્યો.

“હે મહાન પિતા ! હું આપની કૃપાને પાત્ર છું એ જાણી મને આનંદ થાય છે. મારા સંતાનો આપના આશિર્વાદથી ‘નિરંતર નિશ્ચિંત રહે છે અને પોતાની પ્રજાના પૂર્વપરતા થયેલા મહાન પુરુષોનાં સ્મરણ પૂજન અને શુભાશુભના દીર્ઘનિઘાસને પોતામાં મહત્તાની બાવના પેરે છે, અને વર્ધિત કરે છે. અને નવી પ્રજા પણ આ બાવનાથી પોષાય છે. પરંતુ હે પિતા ! આપના તરફથી આપની કૃપાથી સીંચાયેલી એક પુરાણ મહાન પ્રજાને કૃત્ય સ્થિતિએ લાવવાનું મહાન કાર્ય તેઓને સોંપવામાં આવ્યું છે. તેમાં તેઓ કેવી રીતે શક્તિમાન થાય છે, તે જોવાનું છે. મને બધ રહે છે કે, રખે ! તેઓ તે કાર્ય માટે ચોક્કસ ન જમ્યાય.”

ઉપરોક્ત સંજો પુત્ર થયા એટલે તે પિતાએ પોતાનું વચન અન્ય બાજુ તરફ ફેરવ્યું. એટલે બીજી પુત્રીએ કબા થઇ વિનય પૂરક બોલવામાં આંધું:—

“હે પિતા ! કમ્પાન્ય દેહ ! મ્હારો આર્ષ સંતાનોએ, અનાર્ષ સંતાનોને વિનાશ કરી દેશો છે, અને તેઓ હવે તેમને નિર્મળ કરી રહ્યા છે. આનન્દ ભોગ્યે છે. તેઓનામાં સમસ્તિ. જનિ કૃત્ય પ્રકારની છે, અને મને અને તેઓ દ્વારા મારા કારતવની સ્થિતિએ પોતાની સંમારિક વિશ્વવિ નેજાવવાના સાધન તરીકે લેવા મને વાપરે છે. પરંતુ આની પાછળ તેઓ એટલાં જ્યાં મંડપો

રહે છે કે બીજું બધું તેઓ વિસ્મરી જાય છે. અને મને બધ લાગે છે, કે તેમની આ પ્રવૃત્તિ તેમનો વિનાશ આણવાનું સાધન થઇ પડે.”

આ પછી તે પિતાએ ત્રીજી દેવી પ્રત્યે બોલ્યું, એટલે તેણે પણ તેમ પ્રમાણે કહેવા માંડ્યું:—“હે પિતા ! તારા અનુગ્રહથી મ્હારા કેટલાક પુત્રોએ યોદ્ધા સમય પહેલાં એક જુદાજ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ પ્રવર્તાયો; અને આથી મ્હારા સંતાનોમાં મહત્તાની બાવના જન્મ પામી, અને તેથી એક એવો મહાન પુત્ર ઉત્પન્ન થયો કે જેણે પોતાના પરાક્રમથી પોતાનું તથા મ્હાર નામ સૃષ્ટિમાં અમર કરી દીધું; પરંતુ આ કોમ વૃત્તિના પરિણામથી એટલે બધો ભોગ આપવો પડ્યો કે હાલ મ્હારા સંતાનો પોતાની પ્રતિરુપિ પ્રજાઓ સાથે પોતાની મહત્તા બોધે મેડાં છે. હે મહાન પિતા ! પાછી જગારે તારી કૃપા થશે—અનુકંપા છુટશે ત્યારે મ્હારાં સંતાનો તેમની પૂર્વની મહત્તા પ્રાપ્ત કરી શકશે.”

આ પછી એક બીજી દેવી ઉભી થઇ કહેવા લાગી:—“હે મહાન પિતા ! મ્હારાં સંતાનોએ દમચાંજ યોદ્ધા સમયથી મહત્તા પ્રાપ્ત કરી છે; અને તે મહત્તા જાગવવા તથા તેને વધારવાના પ્રયત્નમાં તેઓ મંડપા રહે છે; તેથી આપ તેમને વારસે નિશ્ચિત રહેા.”

આ સંજો પૂર્વ થતાં તે મહાન પુરુષે પોતાની નયીન યુવાનીમાં આવતી પુત્રી તરફ દૃષ્ટિ ફેરવી અને પૂછ્યું:—“હે જાતિકે ! તારા સ્થિતિ, દેવી છે ? તારાં જાતકાં શી બાવનાઓમાં મરતાન રહે છે ?”

આનન્દથી ઉત્તરાતી તથા દિગ્વિના સિખરે વિગળરતે હજી આ તવપોદના, વિગત સર્વવિ ગિદ્ધન મુગટમાં ધારણ કરેલું છે એવી આનન્દથી પ્રજામ કરી કહેવા લાગી:—“હે પિતા ! મ્હારા વિષર ત્વમોર અનુભવ સદા દેહ ! ત્વમારી કૃપાથી અગ્રણ પુત્રો દમચાંજ મહાન વિજય પામ્યાં છે; અને તેથી મ્હારા સંતાનોમાં મહત્તાકાંક્ષા જન્મ પામી છે. તેમની પ્રવૃત્તિ આ મહાનવર નિશ્ચિત કરી તેને પ્રદિન કરાય તરફ વળી છે; અને મને

જાણુપ છે કે ત્હમોરી દષ્ટિ તેમના ઉપર પડનાથી તેઓ પ્રાપ્ત કરેલી મહત્તા વધારી શકશે. પરંતુ આ પ્રવૃત્તિ લોભ વૃત્તિનું રૂપ ધારણ કરતી બેઠે કોષ્ટક વખતે મહેને રહેના બચિષ્ઠ સંજયે ભય ઉપજે છે. ”

આ સમ્પદો પુરા થયા એટલે તે તેઓમય પુરૂષે પોતાનું વદન પોતાની શ્રેષ્ઠ જ્યોષ્ઠ પુત્રી તરફ ફેરવ્યું, અને કહેવા માંડ્યું:—

“ હે પુત્રી ! ત્હારી સુખ સુદા કેમ નિસ્તેજ જાણાય છે ! નિરાશ અને અશ્રદ્ધાથી ત્હારું વદન છવાઈ રહેલું છે, ત્હારું શરીર શોષાશિથી કૃશ થઈ ગયું છે. અને ત્હારું મન પણ નિરસ્પાદ તથા ઉદ્વેગથી પૂર્ણ જાણાય છે. ”

પિતાનાં એવાં પ્રેમ યુક્ત વચનો સાંભળી આ સંન્યાસિનીના જેવી વેદવ્યયુક્ત દેવી ઉભી થઈ, અને તેણે તે મહાન પિતાને સાધ્યાંમ કંડવત પ્રણામ કર્યાં, અને ગદ્ગદિત કહેવા લાગી:—

“ હે મહાન કલ્યાણકારી પિતા ! હે જગતના નિયામક ! હે જગતની ઉત્પત્તિ, સ્થિતિ અને લયના કારણ ભૂત ! હે સમસ્ત દેવતાઓથી સ્તુતિ કરવા યોગ્ય ! હે સમસ્ત પ્રજાઓના નેતા ! ત્હને હનરવાર પ્રણામ હો ! ત્હને હનરવાર પ્રણામ હો ! હે પિતા ! ત્હારાથી કશું અજાણ્યું નથી ત્હારી ધૃતિ વગર એક તરણું પણ હાલી શકતું નથી તું ત્રણે કાળોને અને ત્રણે અવસ્થાનો તાતા છે ? તું ત્રણે સ્થિતિમાં સ્વયં પ્રકાશ છે ? ત્હારાથી શું અજાણ છે, કે હશે કે હું ત્હને કહું ? તું જાણે છે કે સંજિના ઉદય અને અસ્ત એવા બે કાળ છે, અને કાષ્ઠપણ પ્રજાને કે, કાષ્ઠપણ બચિતને ત્હારા પ્રસાદ વિના કાષ્ઠપણ પ્રકારે ઉત્પન્ન થતો નથી. ‘ હે પિતા ! જ્યારે ત્હારો અનુગ્રહ હંતો ત્યારે મ્હારાં સંતાનો આખા વિશ્વમાં શ્રેષ્ઠ હતાં. તેઓ કમીયારી હતાં, ત્યારે સમગ્ર વિશ્વની પ્રજાઓ તેમના ચરણમાં નમતી હતી. કોણખે તેઓ પોતાના મહાન ઋણિ મુનિ, આચાર્યોના પયથી મજા. હે પિતા ! ત્હારા પોતાના

ઉપદેશથી પણ તેઓ અભ્યાસ તેઓ પોતાના પય પર ચાલ્યા નહીં; વિચાર અને આચાર એક સરખી રીતે રાખી શક્યા નહિ અને તેથી પંડ્યા અને પડતાં પડતાં પોતાની અધમમાં અધમ દાસત્વની અવનવિએ પડ્યાં. સર્વ વસ્તુઓમાં તેઓએ દાસત્વ સ્વીકાર્યું, આત્મ શ્રદ્ધા અને સ્વાશ્રયનો તેમણે ત્યાગ કર્યો, પોતાના પૂર્વજોની મહાન ભાવના તેમણે છોડી દીધી અને, પરાઇ મહત્તામાં તેમને ઉત્તમતા જણાઈ અને તે પ્રત્યે અંજનાના નીર પેડે વળ્યાં. પોતાના પૂર્વજોની મહત્તાની ભાવનાથીજ પ્રગળ્યા મહત્તા મેળવે છે, અને નતંગરી શકે છે. તે ભાવના તેમણે ખોઈ અને તેથી હે પિતા ! ત્હમની આ અવસ્થાથી તેમના પૂર્વજો જેવી તેમનામાં માત્ર વતસલતા ન રહેવાથી તેમનાં કર્મોથી હું દુઃખિત થઈ, અને અત્યરે નેમની હરેક પ્રકારની સ્થિતિ એવી પરિચિત થઈ ગઈ છે કે કોષ્ટ કાષ્ટ પુરતો તેમનાં મહત્તાની ભાવનાઓ સહવન કરવા મળે છે, પણ તેમાં તેઓ શવતા નથી. મ્હારાં સંતાનો પાંસે તેમના પૂર્વના મહાન ઋણિ સુનિયોના જ્ઞાનના અંપૂર્ણ બંધાર પડ્યા છે, પણ અત્યારે આ બંધારમાંથી ઉપયોગી તત્ત્વો તારવી કાઢી તે પ્રમાણે પોતાનો બચિષ્ઠનો માર્ગ જાંધી તે પ્રમાણે કર્તવ્ય પરાયણ થવાની સમિત ત્હમનામાં ક્યાં રહી છે ? જ્ઞાન, કલિત કર્મ સર્વમાર્ગના દ્રષ્ટા તેમનામાં થયા છે, પણ હાલ તેમને શોધવા કાણ પ્રયાસ કરે છે ? તેમનું સર્વ પ્રકારનું ધ્યન વિચિત્ર થઈ ગયું છે, અને તેથી મ્હારા બચિષ્ઠ માટે મ્હને તેમનામાં શ્રદ્ધા રહી નથી. આથી હું નિરાશાના ઉદ્વેગમાં હુમ્મી ગઈ છું. પણ આ સ્થિતિ આજુત્રામાં કારણ ભૂત હે પિતા ! કૌરવ પાંડવનું યુદ્ધ તથા યોદ્ધા સ્વર્ગી કરાવનાર તું જ છે, તેથી આમાં સંકેત હશે એવું હું જોઉં છું. ”

આટલું બોલી તે ગદ્ગદિત થઈ જવા લાગી



વધારે બોલો થકી નહિ, અને તે કૃપાણુ ચિન્તાક પ્રસ્રવ્ય વદનથી કહેલા શાગ્યા:—

હે કલ્યાણિ શાન્ત યા, કાર્પણ્ય દૂર કર, બીજતા મૂઢી દે; અને સાવધ યા. ત્હારા ઉપર મ્હારો પ્રેમ અસ્પષ્ટિત છે, અને ત્હારાં સંતાન એ મ્હારાં પરમ ભક્ત છે. જે મ્હારી કૃપા ત્હારા ઉપર ન હોત તો બીજા અન્ય પ્રાણીન પ્રત્યક્ષો પેઠે ત્હારાં સંતાનો પણ આ ઝટ્ટિમાંથી ક્યારનાંએ નિર્મલ થઈ ગયા હોત; પરંતુ હે ભારતિ ! હું ત્હારે ત્યાં સ્વયં આવી ત્હારી પ્રગતે ઉત્તર દશમાં મુકે છું માટે તું નિશાન્તક તથા નિશ્ચિન્ત યા. ત્હારાં સંતાનો પણ તું ધારે છે એવા કપૂર નથી. હંમેશનામાં મ્હારા વાસ્તે તેમજ ત્હારા માટે અપ્રતિમ લાગણી-સ્નેહથી, અને કીધી તે પૂર્ણ નેસથી પ્રકટી છે. દક્ષ મ્હાગથી નિર્ધુલિત પ્રભામાં તેમની શ્રદ્ધા હલી, તે શ્રદ્ધામાં તેઓ ભૂલ્યા અને મૂળથીજ સાત્વિક આનંદ કમ્પતા હોવાથી રાજસ મૂઢી તેઓ વામસમા શ્રદ્ધાથી કમ્પા આ શ્રદ્ધાને પ્રતિબિંબિત ન મળવાથી તે હવે બોલી ચૂકી ન્યય છે; અને આ સ્વે દેવીશ્વરના કંતાનોનાં કલ્યાણ માટે આવશ્યક છે; તેથી મ્હારા અનુગ્રહથી ત્હારાં સંતાનો યોગ સમયમા તેમની પૂર્વના મહત્તા પ્રાપ્ત કરશે. આ હર્ત્ય મ્હે કેટલાક મ્હારા વીર ભક્તોને ત્હારે ત્યાં મોકલ્યા છે, જેઓ ત્હારા કલ્યાણ માટે ત્હારાં સંતાનોને ઉત્તમ માર્ગે દોરી ત્હારાં આંત્રુ છુલ્લાને સ્વાંધુ કરી અનેક દુઃસહ દુઃખો ભોગવવા તૈયાર થયાં છે; અને આ પ્રયાસમાં તેઓ નિર્ભય નજારી તો હું સ્વયં આવી ત્હારી પૂર્વના સિધિએ ત્હારા સંતાનોને લાગી મૂઢીય માટે હે કલ્યાણિ ! યોગિણી તું મ્હારા ધ્યાનમાં રહી શ્રદ્ધાથી ત્હારાં સંતાનોનું ઉત્તમ રીતે પાલન કર ! ! !

ઉપરોક્ત સ્નેહ પૂના થતાં મ્હારી આંખો ઉપરી ગઈ, અને જેકે છું તો પશિએ કસોથ

\* “પ્રદગણિય માત” — મ. ગી. ૨ અ.

વસા યા દિ પર્વત મ્હાનિર્મરજિ માત ।

મનુષ્યવત્ત પર્વત દશાગ્નિ મહાદેવ મ્હા

વિશ્વાનાથ વાપુની, વિશ્વાનાથ વાપુનામ્ ।

હવે કંઈપણનાં સમજાવિ કુળે કુળે મા. નં.

કરી રહ્યાં છે, અને પ્રભાતના મહુર પ્રજ્ઞ મંત્રોના મંત્રોનું માન મ્હારા કષ્ટમાં રેડા રહેલાં હતાં. આખી રાત્રી આવાં દિવ્ય દર્શનમાં વ્યતીત થયેલી નેષ, આનંદ પામતો તેમથી મુલન ઉપરેલી મુલ્ય કરતો, બલિષ્ઠની મહત્તામાં શ્રદ્ધા ધરતો અને પેતાના કર્તવ્યના વિચાર કરતો હું પાછો વિશ્વને રાગી બન્યો—સાધુ બન્યો—અમર આત્મા ને સંશોધક અભુલાયી બન્યો. જે કહે તે બન્યો. ૩૦ જ્ઞાન્તિ ! જ્ઞાન્તિ ! ! જ્ઞાન્તિ ! ! ! \*

સ્નેહયોગી સદા  
પુત્રીઆ-પ્રાનદેશ. } સ્નેહયોગી.

## ઉત્તમ બાધ

(ગઝલ)

ગગતના બુલમી લોકો, શું સંતાને સંતાને છે. અંધર્માને નચાવીને, શું ધર્મને પ્રસાવે છે. કરો છો કર્મ છમ્મલના, મક્કા જનને ખમાવે છે. નીતિનું બાન બૂલાવી, હલક પંચે ચલાવે છે. વધારી દેપ છાંને, વધારી સ્વાર્થ ધાનકતા. બૂલાવી સત્યને નીતિ, કરો છો દર પાતકદા. પીડાતા સેંકડો દરદા, દુઃખી જનને વિસારે છે. હૃદયને અસ્તનો નિમગ, કરે એવું શું ધારે છે. પરાયાં દાગળાં બાળી, સફળ ફેરો અફળ કરવા. હૃદયને નિપમય કરતા, પ્રજ્ઞનો દર નથી ધરવા. પુરવનાં સદ્ કર્મોથી, મનુષ્યનો યોગ પામ્યા છે. પ્રજ્ઞ આગ વિસારીને, શું દેખીને વિસમ્યા છે.

લલા જનને ન સંતાવો, આનંદને વછ દોને. મુનોતિ પંચ પકડીને, પ્રજ્ઞમાં ગિય મરી દોને. પ્રજ્ઞના સત્ માગેને, હૃદયમાં ધારી રાખેને. પદાવને રૂબ આપીને, સદા ફળ સારાં માગેને. તમારું શુભ ઇન્કેદો નો, પરાયું શુભ વહેને. ક્યું તેવું ભોગવું એ, પ્રજ્ઞના મંત્ર સ્વાકારોને. ખોસેલાં પુષ્પની આરક, જે આવડું તે વગડું છે. ક્યું દર્શન તે મમે, બીજું સો અર્ધ રહેવું છે. સામુજનની રિત પાળી, સદા ફરમંદી ધારેને. પ્રજ્ઞ સ્મરણ મત કરીને, વખારો અવ સુધારેને.

\* અંગાગીના આધારે

## JAINISM AND IDOLATRY.

It would undoubtedly be a great surprise to many of our non-Jaina friends to be told that Jainism is not an idolatrous creed and is betterly opposed to idol-worship as the most iconoclastic religion in the world, yet the fact is as stated. The attitude of Jainism towards idolatry is evident from the following quotation from the *Ratna Karanda Sravakachara*, a work of paramount authority, composed by Sri Samantabhadra-acharya, who flourished about the commencement of the second century A. D.

" Bathing in [the so called sacred] rivers and oceans, setting up heaps of sand and stones [as objects of worship], immolating one-self by falling from a precipice or by being burnt up in fire [as in sati]-are some of the common *murkhata*s (follies). The worshipping, with desire, to obtain favour of deities whose minds are full of personal likes and dislikes is called the folly of devotion to false divinity. Know that to be *guru murkhata* which consists in the worshipping of false precepts revolving in the wheel of *samsara* (births and deaths, i. e., transmigration), who have neither renounced worldly goods, nor occupations, nor *himsa* (causing injury to others)."

This is sufficient authority for the view that Jainism strongly condemns fetish worship—rivers, stones and the like as well as devotion to human or super-human beings who have not eradicated their lower nature, that is to say who are liable to be swayed by passion, or by personal likes and

dislikes. What, then, is the significance of the image-worship which takes place daily in our temples, and which is, undoubtedly, the cause of the false impression that has been formed by the non-Jainas concerning our faith?

To explain the nature of the worship that is performed in our temples, it is necessary first of all to summarise the Jaina creed, which fully accounts for it. The Jainas believe that every soul is godly by nature and endowed with all those attributes of perfection which are associated with our truest and best conceptions of divinity. These divine attributes, omniscience, bliss and the like— are, however, not actually, manifest in the case of the soul that is involved in transmigration, but will become so when it attains to *nirvana*.

Nirvana implies complete freedom from all those impurities of sin which limit and curtail the natural attributes and properties of the soul. Accordingly, the Jainas aspire to become Gods by crossing the sea of *samsara* (births and deaths), and the creed they follow to obtain that devoutly-wished-for consummation is the method which was followed by those who have already reached the goal in view—*nirvana*. It is this method which is known as Jainism, and the images that are installed in our temples are the statues or 'photos' of the greatest amongst those who have al-



ready reached nirvana and taught others the way to get there. They are called *Tirthankaras*, literally, the makers or founders of a *tirtha*, a formidable channel or passago (across the ocean of births and deaths).

How did they cross the sea of *samsara* themselves? By curbing their fleshly lusts and by purifying and perfecting their souls. We, too, have got to tread the path they trod, if we would attain to the heights they have attained. In a word, the *Tirthankaras* are as models of perfection for our souls to copy and to walk in the footsteps of. Their images are kept in the temples to constantly remind us of our high ideal, and to inspire us with faith and confidence in our own souls. As for their worship, they have no desire to be worshipped by us; their perfection is immeasurably greater than we can praise; they are full and perfect in their *wholeness*. We offer them the devotion of our hearts, because in the initial stages of the 'journey' it is the most potent if not the only means of making steady progress.

It is not mere hero-worship, though worship of a hero is transcendent admiration. As Carlyle put it, it is something more; we admire what we ourselves aspire

this of admirtion for one higher than himself dwells in the breast of man. It is to this hour, and at all hour, and at all hour, *the vi-viying influence in man's life*. ... Hero-worship endures for ever while man endures. Boswell venerates his Johnson, right truly even in the Eighteenth century. The unbelieving French believe in their Voltaire; and burst out round him into very curious Hero-worship, in that last act of his life when they stifle him under *rom* ..... At Paris his carriage is the nucleus of a comet, whose train fills whole streets. The ladies pluck a hair, or two from his sur, to keep it as a sacred relic. There was nothing highest, beautiful-st, noblest in all France, that did not feel this man to be higher, beautifuler, nobler. ... It will ever be so. We all love great men; love, venerate and bow downa submissive before great men: may can we honestly bow down to anything else? Ah, does not every true man feel that he is himself made higher by doing reverence to what is really above him? No nobler or more blessed feeling dwells in man's heart. And to me it is very cheering to consider that no sceptical logic, or general univarsity, in-in-curily and aridity of any. Time and its influence can not destroy this noble inborn loyalty and worship that is in men ..... It is an eternal corner-stone, from which they can begin to build themselves up. .... That man in some sense of other, worshipping heroes; that we all of us reverence and must ever re-verence Great Men; this is, to me, the living rock amid all ruins—slings-down what never."

they illuminate the whole neighbourhood; they place garlands of flowers on the object of their adoration. Is it idolatry they practise? Are they idolators? No, no, such a thing is simply impossible; no one can accuse the English of idolatry! It is not worshipping the block of stone; they ask nothing from it; they offer it no food, nor do they pray to it. If you look more closely into their 'statue-worship', you will find it to be the adoration of a something which the figure is a symbol of. It is not statue of Nelson they assemble to worship, but the spirit of the brave man, the fearless sailor, who made England what she is today—the acknowledged Queen of the Seas. The English are a nation of sailors; take away their sea-power, and they are gone. But for the glorious achievements of the British navy, England would have been overrun by Germany today. The English know it, and pour forth, spontaneously, almost unconsciously, the warmest devotion of their free hearts on the one being who saved them from utter ruin in the past. But if Nelson himself was able to save England from destruction only once, his inspiration has been her salvation not once, nor twice, but

repeatedly. The great sailor is now dead; he may no longer command the fleet of England in the hour of danger; he may win no more laurels for himself or victories for his country; but his spirit and influence survive. For there is not a sailor lad in the whole of the United Kingdom who does not brighten up at the mention of Nelson's name, who does not reverently recognise him as a model of greatness for himself, who does not draw powerful inspiration from his life. The nation that placed the statue of this great man in a conspicuous part of the capital of their country knew that they were not merely erecting a statue to the memory of a dead man, but *laying the foundation stone of their own greatness* for generations to come.

Such is the true significance of 'Nelson-worship' which takes place on the Trafalgar Day annually. It is not idolatry that we can charge against the English, but *idealatry*, which, if a fault, is one that has been the source of unparalleled greatness to the culprit!

The Jaina form of worship is, similarly, an instance of *idealatry*, for devotion to God in Jainism only means devotion to the attributes of divinity which the devotee

wishes to develope in his own soul, and consists in the blending of the fullest measure of love and respect for those Great Ones who have evolved out those very attributes to perfection in their own case. The Jains ask for nothing from their Tirthankaras; no prayers are ever offered to them, nor are they supposed to be granting boons to their devotees. They are not worshipped because worship is pleasing to them, but because it is the source of the greatest good—the attainment of godly perfection—to our own souls. As said in the "Key of Knowledge", the causal connection between the ideal of the soul and the worshipping of those who have already realized it is to be found in the fact that the realization of an ideal demands one's whole-hearted attention, and is only possible by following in the footsteps of those who have actually reached the goal. How well does the poet chant :-

"Lives of great men all remind us.

We can make our lives sublime,

And, departing, leave behind us

Footprints on the sands of time;

Footprints that perhaps another,

Stirling o'er life's solemn morn—

A forlorn and shipwrecked brother,

Seeing, shall take heart again."

Sri Jain Dharma Ki Jai.

C. Rai Jain.

## सदाचरण ।

१. अपना आयुष्य सदाचरणमें व्यतीत करना यह मनुष्यका मुख्य धर्म है ।

२. जो मनुष्य प्रामाणिक है, वह सर्वलोकमें मान प्राप्त करता है ।

३. तुम अपने साथ अन्य मनुष्यका जिस प्रकार व्यवहार चाहते हो, उसी प्रकार तुम उसके साथ करो ।

४. दुराचरणी मनुष्यका कमी भी भला होनेवाला नहीं ।

५. दुष्ट कर्म करनेवाले मनुष्योंका बहुप्पन बहुत दिन तक नहीं रहता ।

६. दुराचरणसे पृथक् रहना, यह बुद्धिमान मनुष्यका धर्म है ।

७. बुरे कामोंसे अनेक प्रकारका नुकसान होता है ।

८. पूर्व-पहिलेकी चाल-व्यवहार छोड़ना नहीं, लेकिन पीछेकी सराव चाल-व्यवहार अवश्य छोड़ना ।

९. जलमें क्षीर मग्न होता है, परन्तु सद्बुद्धिके बिना आत्मा पवित्र नहीं होती ।

१०. जिसको सराव कर्म एकान्तमें नहीं लगाने वह मनुष्य मंडली-समादिमें बहुत लजित होगा ।

११. दुश्मनकी अपेक्षा अपना थोड़ा पाप होना भी पाप करनेका संतोष कदापि मानना नहीं ।

१२. जैसा क्षीरके ऊपर फोड़ा हो तब तक निगेमिता नहीं वैसा, तब तक अपनेमें दुश्मन हो तब तक गुनी नहीं ।

सतीशचन्द्र गुप्त ।





( लेखक:-बापू सुरजभातु बकौल, देवपदर । )

पेट भरनेके लिये रोटी बनाना एक बहुत ही जरूरी काम है, परन्तु यदि कोई आटा दाल मोल लाकर, कुण्डसे पानी भरकर, चूल्हेमें आग जलाकर और धुणमें बैठकर खूब जी लगाकर रोटी बनावे और ३६ प्रकारके भोजन तय्यार करें परन्तु भोजन तय्यार करना ही काफी समझ बैठे और खावे नहीं तो वह गरूर भूखा ही रहेगा और भोजन बनानेके लिये उसका दो पहर तक मिहनत करना कुछ भी कार्यकारी न होगा । इस ही प्रकार विद्या प्राप्तिके वास्ते छः घंटे स्कूलमें जाकर बैठना जरूरी है परन्तु यदि कोई स्कूलमें जाकर बैठ जाना ही काफी समझे और एक भी अधर न पड़े तो चाहे वह सारी उमर पाठशालामें जाता रहे परन्तु वह ज्ञानपट्र ही रहेगा और उसका नित्य स्कूल जाना बिल्कुल ही निरर्थक बल्कि उलटा समयको बर्बाद करना ही होगा । इस ही प्रकार बनियेके पेटके रुपया कमनेके लिये दूकानमें दूकान सोलकर बैठना जरूरी है; परन्तु यदि कोई दूकान सोलकर तो बैठ जाय और दूकानमें सौदा एक पैसेका भी न रखे वा सौदा चाहे लाखों रुपयका दूकानमें भर ले पर बेंचे नहीं तो उसको इस दूकानके खोलनेसे एक कौड़ीका भी नफा न होगा बल्कि कुछ नुकसान ही रहेगा ।

इस ही प्रकार अपनी आत्माकी उन्नति और धर्मका लाभ प्राप्त करनेके वास्ते देव गुरु शास्त्रकी भक्ति करना बड़ा जरूरी है क्योंकि इनसे ही हमको अपने कल्याणका सच्चा मार्ग मालूम होगा और उस मार्ग पर चलकर हम अपने पापोंका नाश और पुण्यकी प्राप्ति कर सकेंगे, परन्तु यदि हम केवल भक्ति ही भक्ति करते रहें और उस मार्गकी तलाश न करें जिसपर हमको चलना चाहिये अर्थात् अपने आचरणोंको ठीक करने और अपने परिणामोंको दुरुस्त बनानेकी कुछ भी कोशिश न करें तो हमारी यह भक्ति बिल्कुल व्यर्थ और निरर्थक ही रहेगी, यदि हम अहमारी वा संदूकोंमें बन्द जैन शास्त्रोंको दूरसेही नमस्कार कर लिया करें वा सुंदर वेष्टनमें बांधकर और सोने चांदीकी ऊंची वेदीपर रखकर नित्य अष्ट द्रव्यसे उनकी पूजा कर लिया करें परन्तु उनको रोलकर पढ़ने और समझनेका कष्ट उठाना पसन्द न करें वा यदि पढ़ें भी तो उनका अर्थ समझे बिना ही प्राकृत वा संस्कृतके श्लोक वा सूत्र कंठ याद कर लिया करें वा यदि स्वयम् पढ़े हुए न हों तो दूसरोंसे पढ़वाकर सुन लिया करें जैसा कि आजकल बहुत जगहोंमें स्त्रियां नित्य सुबहको श्रीमंदिरजीमें दसाध्याय सूत्र वा भक्तामर आदि स्तोत्रका पाठ सुननेको बैठ जाया करती हैं, तो इस प्रकारकी शास्त्रभक्तिसे तो हमारी आत्माका कुछभी भाल न होगा, हमारी आत्मा तो ज्योंकी त्यो वैसी ही बनी रहेगी जैसी कि पहले थी ।

इस ही प्रकार यदि हम श्रीगुरु अर्थात् श्री दिगम्बर मुनि वा ऐहिक ब्रह्मचारी व्रती

सम्यक्ती वा पांडे भट्टारक आदिकी अनेक प्रकार की सेवा ठहल किया करें और रात दिन उनके पैर दयाया करें परन्तु उनके उत्तम आचरणों-वा देखकर अपने आचरणोंको ठीक करने और पाप क्रियाओं छोड़कर शुभ परिणाम बना नेकी तरफ नुरा भी ध्यान न दें वलिक यह ही श्रद्धा रखें कि गुरु महाराजकी सेवा करनेसे ही हम अनेक पाप करते हुए भी पार उतर जावेंगे, तो हमारी यह श्रद्धा भ्रम मात्र ही होगी और उनकी सेवासे हमारा कुछभी कार्य सिद्ध न होगा । इस ही प्रकार यदि हम नित्य श्रीतीर्थंकर भगवानकी पूजा उत्तम २ पदार्थोंसे किया करें उनके लिये नित्य ताजे २ घेवर और लाडू बनाया करें, मंदि २ सेव नारंगी केला अमरूद तोड़कर लाया करें, दुरतके खिले लाल चमेडीके सुगंधित फूल चढ़ाया करें और इस अपने चंदावेकी सौ २ गुनो तारीफ गाया करें परन्तु यदि हम इस पूजासे श्री भगवानके कुछ भी गुण अपनेमें पैदा करनेकी कोशिश नहीं करते हैं वलिक केवल उनकी पूजासे ही पार हो जाना चाहते हैं तो हमारी बिल्कुल ही भूल और गलती है, ऐसी श्रद्धासे सिवाय नुकसानके और कुछ भी नहीं होता है क्योंकि ऐसी दशामें हम पूजन करके ही संतुष्ट हो जाते हैं और अपने आचरणोंको सुधारनेके लिये बिल्कुल बेफिकर हो जाते हैं ।

ऐन धर्ममें नमस्कार मंत्रका पढ़ा माहात्म्य जाना गया है और जाना ही जाना चाहिये क्योंकि इस मंत्रमें अरिहंत, सिद्ध, व्याचार्य, उपाध्याय और माधु इन पांच परमेष्टीको नम-

स्कार किया गया है जो आत्माकी उस उन्नत अवस्थाके सच्चे उदाहरण हैं जिसको कि धर्मात्मा पुरुष प्राप्त करना चाहते हैं अर्थात् जीवके कल्याणके वास्ते यही ही पांचो परमेष्टी सर्वोत्कृष्ट आदर्श हैं और यह ही पांचो आत्मीक अति उत्तम गुणोंके भण्डार हैं; इस कारण अपनी आत्माके असली गुण प्राप्त करनेकी इच्छा रखनेवालोंको परमावश्यक है कि वह इन पांचो प्रकारके महान आत्माओंका चिन्तन और प्रतिष्ठा सदा अपने हृदयमें बनाये रखें और उनके गुणोंको याद कर करके स्वयम् भी वैसे ही गुण प्राप्त करनेकी प्रेरणा अपने आपको करते रहें जैसा कि तत्त्वार्थ सूत्रकी आदिमें ग्रन्थकर्ताने श्री भगवानको नमस्कार करते हुए कहा है :

मोक्षमार्गेत्य नेताराम् भेत्ताराम् कर्मभूतान् ।

अन्ताराम् विश्वतत्त्वानाम् बन्धे तद्गुणलब्धये ॥

अर्थात् मोक्षमार्गके बतानेवाले, कर्मोंके भारी पहाड़को तोड़नेवाले और संसार भरके पदार्थोंको जाननेवाले श्री भगवानकी बन्धनामें उन गुणोंकी प्राप्तिके वास्ते करता हूँ । यदि हम पंच नमस्कार मंत्रका जाप करते समय इस बातका कुछ भी खयाल न रखें कि इन पांचो महान आत्माओंके क्या गुण हैं और न उन गुणोंको स्वयम् प्राप्त करनेकी कुछ कोशिश करें, केवल उनको नमस्कार ही कर लिया करें अर्थात् नमस्कार मंत्रकी मात्रा ही नप लिया करें तो हमको कुछ भी फायदा न होगा, जैसा कि यदि एक विद्यार्थी प्रतिदिन अपने अध्यापकोंके घर ना जाकर सुन्दर शाम उनकी मन्त्राग पर आया कर और

अपने घर बैठा २ भी उनका नाम रटता रहा करे और उनके नामकी पूजा भी किया करे और दुनिया भरमें उनकी बड़ाई भी गाता फिरा करे परन्तु स्वयम् एक अक्षर भी पढ़नेकी कोशिश न करे बल्कि अपने अध्यापकोंको प्रणाम करने, उनका नाम जपने, उनकी पूजा प्रतिष्ठा करने और उनकी बड़ाई गाते फिरनेको ही विद्या प्राप्ति का कारण जानकर यह समझता रहे कि मैं तो विद्या प्राप्तिमें बहुत कुछ कोशिश कर रहा हूँ और बहुत कुछ कर चुका हूँ तो उसका ऐसा समझना उसको कुछ भी फायदा नहीं पहुंचावेगा, इस ही प्रकार यदि कोई विद्यार्थी सारे दिन बड़ी २ पुस्तकें बगलमें दबाये फिरा करे परन्तु उनको खोल कर कभी एक अक्षर भी न पढ़े तो उसको कुछ भी पढ़ना न आवेगा, वह तो व्यर्थ ही पुस्तकोंका बोझा उठाये फिरता है ।

भक्तिके इस प्रश्नकी यदि हम अन्य मतियोंके सिद्धांतके अनुसार भी जांचे जो ईश्वरको जगत्का पैदा करनेवाला, प्रबन्ध कर्ता और शासक मानते हैं तो भी यह ही परिणाम निकलता है क्योंकि यदि कोई ब्रह्माश आदमी जो चोरी डाका व्यभिचार आदि सब ही अपराध करता हो और नित्य प्रजाको दुख ही देता हो और इस प्रकार मनुष्य जातिकी शांति भंग करता हो यह यदि अपने सुनैके हाकिमके पास जाने लगे और नाना प्रकारकी बहु मूल्य डाली और तुहफे देकर और सब प्रकारकी खुशामद और स्तुति द्वारा उस हाकिमको प्रसन्न करनेकी कोशिश करने लगे और सुबह शाम उस हाकिमकी हाजरी देकर और सब प्रकारकी उसकी दहलू सेवा करके

यह आज्ञा रखने लगे कि मेरे इन कृत्योंसे हाकिमकी आंखोंपर चर्बी फिर जावेगी और वह मेरी तरफसे बिल्कुल ही अंधा होकर मेरे दोषों और मेरे किये हुए महान उपद्रवोंकी तरफ कुछ भी ध्यान न देगा बल्कि अति प्रसन्न होकर मुझसे बहुत ही ज्यादा प्यार करने लगेगा और अपने मातहत छोटे हाकिमों अर्थात् तहसील्दारों और थानेदारोंको भी यह आज्ञा लिख भेजेगा कि यह पुरुष हमारा पसमन्न प्यार है इस कारण यह चाहे कैसा भी महान अपराध करे चाहे जैसा भी उपद्रव मचावे और अशान्ति फैलावे तो भी इसको बिल्कुल नहीं टोकना चाहिये और सब कुछ अपराध करने देना चाहिये बल्कि यदि वह इन छोटे कामोंमें तुमसे सहायता चाहे तो यथासम्भव उसको सहायता भी देते रहना चाहिये इत्यादिक अन्य भी अनेक प्रकारकी आज्ञा यदि वह दोषी पुरुष अपने सुनैके हाकिमकी तरफसे अपने मनमें बांध ले तो क्या उसकी यह सब आज्ञायें झूठी नहीं हैं ? क्या वह इस प्रकारकी अपनी व्यथेकी आज्ञाओंके धोखेमें आकर और निश्चिन्तताके साथ दोषोंमें लगकर शीघ्र ही नहीं फकड़ा जावेगा और बहुत कड़ा बंद नहीं उठावेगा ? अवश्य उठावेगा और यदि हाकिमको यह भी मालूम हो जावेगा कि हमसे अपनी सेवा भक्तिका नाता जोड़कर और हम पर निश्चिन्त होकर ही इसने यह सब अपराध निर्गम्य होकर किये हैं तब तो उसको सर्व साधारणसे भी अधिक बंद दिया जावेगा और वह जेलखानेमें ही पड़ा २ सड़कर मर जावेगा ।

इस उपरोक्त दृष्टान्तमें यदि कोई हाकिम ऐसा हो जो अपनी सेवा भक्ती करनेवाले चोर वदमाशका पक्ष करने लगे अर्थात् उसको दंड न दिया करे तो क्या वह हाकिम महाअन्यायी और महान् उपद्रव और अशान्ति फैलानेवाला और प्रजाको महान् दुखोंमें डालनेवाला नहीं है? अवश्य वह ऐसा ही है और अति आवश्यक और जरूरी है कि प्रजाउसके विरुद्ध उठे और उसके उच्चाधिकारी बड़े अफसरसे उसकी शिकायत करके उसको हाकिमीसे अलग करादे और यदि वह हाकिम कोई स्वतन्त्र राजा हो तो उसको अपना राजा न मान कर किसी दूसरेको ही अपना राजा बनानेकी कोशिश करे, ऐसे हाकिम व ऐसे अन्यायी राजाके वास्ते प्रजाने सदा ऐसा ही किया है और प्रजाको लाचार होकर ऐसा ही करना पड़ता है ।

अब असली बातका विचार कीजिये कि यदि हम इस ही प्रकार अपने आचरणोंके सुधारनेकी कोशिश न करें बल्कि परम पिता परमेश्वरको सबे शक्तिमान मानकर उसकी ही गुशाबद्ध और गुणगानमें लगे रहें और बड़ी भक्तिके साथ उसको फूल पत्ते वा मल चढ़ते रहें वा उसके नाम पर किसी प्रकारकी वज्रि देते रहें वा उसको गुप्त बढ़िया २ नैवेद्यका भोग कराते रहें अर्थात् ताजा २ मिष्ठान्न चढ़ाते रहें और सोते नागने उठने बैठने आठ पहर बीसठ पड़ी उम ही वा नाम रटते रहें तो क्या वह परमेश्वर हममें हजार अवगुण होते हुए भी केवल हमारी भक्ति ही से हम पर प्रसन्न हो जायगा और हमको अपना

प्यारा मानकर हमारे सब अपराध क्षमा कर देगा और अग्नि वायु जल पृथ्वी और सूरज चांद आदि सब ही देवताओंके नाम आज्ञा कर देगा कि यह पुरुष हमारा परमभक्त है इस कारण यह चाहे कुछ भी दोष करे, हमारी आज्ञाओंको मंग करके संसारमें चाहे कितना भी उपद्रव मचावे जैसी चाहे अशान्ति फैलावे और संसारके जीवोंको चाहे कितना भी कष्ट पहुंचावे परन्तु इस हमारे प्यारेको कोई भी कष्ट न होना चाहिये अर्थात् इसके सब अवगुणोंको गुण ही समझना चाहिये और इसके सब कार्य सफल ही होते रहने चाहिये ।

हमारी समझमें तो दुनिया भरमें कोई भी ऐसा मत वा धर्म वा सम्प्रदाय वा आम्नाय नहीं है जो अपने परमेश्वरका ऐसा स्वरूप मानती हो अर्थात् जो ऐसे परमेश्वरको मानते हों जो सेवा भक्ति पूजा पाठ और गुशानन्द आदिसे खुश होकर अपराधीको दंड न देता हो और उसको स्वतन्त्रताके साथ अपराध करने देता हो और अपराध करते हुए भी केवल उसकी सेवा भक्तिके कारण ही उसकी सहायता करता हो । हाकिमके दृष्टान्तमें तो यह सम्भव भी है कि कोई अयोग्य पुरुष हाकिम बन जावे और वह अपनी सेवा भक्ति वा गुशानन्दके कारण किसी वदमाशकी रक्षायत करने लगे परन्तु परमेश्वरके विषयमें तो यह

कमी करें उसके शुभ कर्मों और अच्छे चारित्र्योंको भी तुच्छ गढ़कर उससे अप्रसन्न ही रहे, ऐसा मानना तो परमेश्वरमें दोष लगाना है और महान अपराध करना ही है, उस परमेश्वरको तो सब ही लोग पूरा पूरा न्यायकारी और और सदाचारी मानते हैं, उसमें तो कोई भी किसी प्रकारका दोष नहीं लगाता है ।

इससे स्पष्ट सिद्ध है कि परमेश्वरको संसारका प्रबन्धकर्ता माननेकी दृष्टिमें भी लोगोंको अपने आचरणोंका ठीक रखना ही जरूरी है अर्थात् सदाचारी बनकर ही परमेश्वरकी प्रसन्नता प्राप्त करनेकी कोशिश करनी चाहिये और बहकावे फुसलावे वा खुशामदमें आकर सेवा भक्ति करनेवालोंकी तरफदारी करने जैसे महान दोषोंको उस परम पवित्र परमात्माके मध्ये न शोषकर बल्कि उसको सर्वोत्तम गुणोंका धारी ही मानकर और उसके ऐसे ही गुणोंका गीत गाकर स्वयम् भी वह ही गुण प्राप्त करनेकी अर्थात् शुद्धाचरणी और गुणवान बनने और अयगुणोंको छोड़नेकी ही कोशिश करते रहना चाहिये ।

परन्तु इस समय देखनेमें यह आ रहा है कि रागद्वेषसे रहित परम वीतरागी परमात्माको माननेवाले जैनी और दुनियाको बनाने और उसके प्रबन्धमें लगा रहनेवाले कर्ता परमेश्वरको माननेवाले अन्यमती भी अर्थात् सारी दुनिया ही और विशेष कर हिन्दुस्तानके लोग तो अवश्यही अपने आचरणोंको सुधारने और योग्य बनानेकी तरफ कुछ भी ध्यान नहीं देते हैं बल्कि अपने इष्ट देवकी भक्ति करने अर्थात्

चढ़ावे और खुशामदसे ही उसको राजी करके अपने कार्योंकी सिद्धि की कोशिश करते रहते हैं और " मम भूमेरे औगुण मत न चितारो गुझे अपना जानकर तारो " इत्यादिक भावना भाते रहते हैं । फल इस प्रकारकी भावनाओंका यह हो रहा है कि चारों तरफ पाप ही पाप फैल रहा है, और दो सगे भाइयोंमें भी आपसमें एक दूसरेका विश्वास नहीं किया जाता है और सबको हरवक्त सबही मनुष्योंसे अपनी सबही चीजोंकी रखवाली करनी पड़ रही है और सबहीसे पापकी शंका बनी रहती है । भावाये-संसारमें घोर अंधकार फैला हुआ है और अनेक धर्म प्रचलित होते हुये भी और सबही मनुष्योंका अपने २ धर्मको अधिक कल्याणकारी बताते हुए भी और अपने २ धर्मपर पूरी २ श्रद्धा रखते हुए भी और कुछ धर्म सेवा और पूजा भक्ति होते हुए भी, सबही धर्मोंके लोग आचरणके विषयमें एक ही प्रकारके दिखाई देते हैं और सबही अविद्वत्तासे योग्य बने हुए हैं । किसीभी कल्याणकारी धर्मके लोग ऐसे नहीं हैं जो अपने आचरणोंमें अन्य धर्मवालोंकी अपेक्षा अच्छे माने जाते हों और संसारमें विश्वासके पात्र बन गये हों, बल्कि छल कपट धोका फरेव आदि सबही प्रकारके पाप कार्य सर्वही मतेकि लोगोंमें देखनेमें आ रहे हैं और सबहीमें पाप कार्योंका प्रचार हो रहा है । कारण इसका सिवाय इसके और कुछ भी नहीं है कि सबही मतेकि लोगोंमें अपने २ परमेश्वर वा परमात्माका भेद वा खुशामद आदिस उस ही प्रकार प्रसन्न हो नाना मान लिया है जिस प्रकार कि ज्ञान

कलके मामूली आदमी प्रसन्न हो जाता है और उस परमेश्वरके द्वारा ही सर्व कार्योंकी सिद्धि समझकर एक मात्र भेंट देने चढ़ावा चढ़ाने और स्तुति गाने अर्थात् सुखामद करने पर ही भरोसा कर बैठे हैं और अपने आचरणोंका ठीक करना बिल्कुलही छोड़ दिया है। अन्य मतोंकी वास्तव तो हम विशेष नहीं कह सकते परन्तु जैनधर्म तो स्पष्ट शब्दोंमें साफ २ यह ही कहता है और यह ही इस धर्मका मूल और महत्व है कि परम परमात्मा अर्थात् श्री अरिहंत सिद्ध तो रागद्वेषसे रहित परम वैरागी, हैं उनको तो न किसीकी बुराईसे मतलब है न भलाईसे, वह तो कृतकृत्य हो गये हैं अर्थात् उनको तो अब कुछ भी करना बाकी नहीं है, वह तो अब न किसीका बिगाड़ करते हैं और न सुधार, इस कारण उनकी सेवा भक्ति और पूजा पाठ तो उनको प्रमत्त करने और उनसे किसी कार्यके सिद्ध करानेके वास्ते नहीं है बल्कि अपने परिणामोंको सुधारने और अपने आचरणोंको ठीक करनेके वास्ते ही है अर्थात् मुख्य कर्तव्य तो हमारा अपने आपको ठीक करना है और परमात्माकी भक्तिभी अपने आपको ठीक करनेका एक कारण है। इस वास्ते हमको भक्ति ऐसी ही विधिसे करनी चाहिये जिससे हमारा आपा सुधरे अर्थात् हम सदाचरणी बनें। इस ही कारण जप तप पूजा पाठ और सेवा भक्ति करनेसे बिकारा हमारा आरा सुधरता जाना हो अर्थात् हम सदाचरणी बनने जानें हैं उतना ही अपने जप तप पूजा पाठ और सेवा भक्तिको ठीक रीतिमें होना समझने रहना

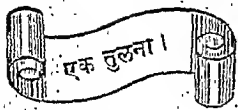
चाहिये और जिस रीतिसे जप तप पूजा पाठ आदि करनेमें अपने आचरण कुछ भी ठीक न होते हों बल्कि ज्योंके त्यों बने रहते हों भक्ति की उस रीतिको व्यर्थ बल्कि धर्मके विरुद्ध निरादोंग ही समझना चाहिये।

सच तो यह है कि जब तक हमारा भक्ति मार्ग ठीक नहीं होगा अर्थात् जब तक सब लोग भक्तिके असली अभिप्राय और भक्तिके द्वारा उस अभिप्रायके प्राप्त करनेकी विधिको नहीं समझेंगे और उस हीके अनुसार चलनेकी कोशिश नहीं करने लगेंगे तब तक तो मानो सच्चा धर्म ही संसारमें फैला हुआ नहीं है बल्कि धर्मका आभास है जिसके शीर्षमें आकर लोग हानि उठा रहे हैं और लोगोंका आचरण पतित हो रहा है, इस कारण विद्वानों परोपकारियों और सच्चे धर्मात्माओंको उचित है कि यह भक्तिमार्गके अभिप्राय और उसकी विधिको सर्व साधारण पर प्रकट कर देने और उनको अच्छी तरह समझाकर उस सच्चे और असली मार्ग पर लक्ष्य देनेकी पूरी २ कोशिश करें जिससे संसारमें सदाचार और सद्गुण फैलकर इस जगत्तम भी सुख, शांतिकी वृद्धि हो और आगेको भी लोगोंका कल्याण हो।

### नमोस्तु केशर

मन्यार छे. फल जने नमूना मफल मोक-  
ल्यामां आवे छे. असल कन्पुरी, गुमा  
गमीरा, शुद्ध शिलाभीत, अंगुरीदिया, शाह-  
मीरा, मुनपित धूप देशी करनीग, लोह,  
पट्टे इ० विज्ञापन मोकल्यामां आवे छे.

कराओर मुंभ, नं. १८ श्रीनगर.



महात्मा गांधी और लोकमान्य तिलक

( लेखक जुगमल दरलाल जैन, सुगत )

अकबर और औरंगजेब दोनोंकी परस्पर तुलनाके निबंध लिखवाना प्रारम्भिक शालाओंमें साधारण बात है । मरणके पश्चात् यताद्वियां बीत जाने पर भय, स्वार्थ, पक्षपात, राग और द्वेष दूर हो जाते हैं । भूतकालके महान् पुरुषोंकी सत्य तुलना करना निष्पक्ष, निःस्वार्थ और निभेद्यता कालान्तरमें प्राप्त होनेसे सरल हो जाता है; परन्तु इसके विपरीत समकालीन महापुरुषोंकी सत्य तुलना करना कठिन है । उनकी अतिशय समीपता होनेसे उनके कार्यका समदर्शन तथा पूर्ण दर्शन जैसा होना चाहिये नहीं होता । अंतरिक्ष परीक्षा ( एनेडोगी ) तो यथायोग्य भूतपूर्वोंकी ही हो सकती है । तुलना भी अंतरगात्र परीक्षाके सदृश ही होती है । इस कारण लोकमान्य तिलक और महात्मा गांधीकी तुलना करना एक प्रकारसे दुःसाहस ही है । चाहे जो हो ऐसा करनेका कारण यही है कि उन्होंने अपने तक जो पराक्रम प्रगट किया है वह वर्तमानकालसे सम्बन्ध रखते हुए भी उस पर भूतकालका भी स्वामित्व है और उससे ही उनका सुंदर जीवन चरित्र और उनसे पुष्कल एवं प्रचंड कार्य हो सके हैं । वे भारतखंडकी रंगभूमिमें इतने विस्तृत कालमें परिचित हैं कि

अब उनके गुण एवं दोषोंपर किसी प्रकारका आवरण नहीं है । जीवनके कसौट्य तो वे कभीसे कर रहे हैं । वानप्रस्थके योग्य, वानप्रस्थ होनेके लिये एवं उसके पूर्व जो कार्य करना चाहिये थे उससे भी अधिक वह कभीके कर चुके हैं । उनके ऊपर अब देशका कोई ऋण नहीं है । गांधीजी कालकी अपेक्षा अभी युवा हैं परन्तु अन्तिम २० वर्षोंसे उन्होंने शतायुवालेके सदृश कार्य किया है, उनके वर्तमान जीवनने एक नवीन रंग एवं नवीन रूपही प्राप्त कर लिया है । दोनों जो कार्य कर रहे हैं वह मात्र मुनाफेका है, देशको पुरस्कार रूप है और भूतकालका अनुसन्धान है । तात्पर्य यह है कि उनके जीवनमें कार्य करनेकी इतनी भरमार रही है जिससे उनके तुलनात्मक गुण दोषोंका विचार करनेके लिये पूर्ण सामग्री मिल चुकी है इस विषयमें तो कोई सन्देह ही नहीं ।

दोनों भारतखंडके अनमोल हीरो हैं, एक गुजराटकी खानिसे दूसरा महाराष्ट्रकी खानिसे निकला है । यह कोई अत्युक्ति नहीं है कि भारतवर्षके नेताओंमें उनके आगे शिर झुकाने और चरणस्पर्श करनेवाले विद्वान् एवं अविद्वानोंकी जितनी संख्या है उतनी किसी अन्य नेताके अनुयायियोंकी नहीं है । यही क्यों यदि आवश्यकता पड़े तो उनके पीछे प्राणतक देनेवाले तैयार हैं । तथा आत्मभोग देनेवाले उत्साहको शरीरमें फूटनेवाली शक्ति पर भी इन्हींका आधिपत्य है । इन दोनों महापुरुषोंसे अधिक प्रखर विद्वान्, प्रभावशाली वक्ता बड़े २ फुट एकत्र करनेवाले, दान देनेवाले,

दान देनेवाले, सुंदर लेख एवं पुस्तक लिखने वाले एकसे एक होंगे; परन्तु वास्तविक नेता होनेकी कसौटी यही है कि प्रजा उनके विचारोंको माने या न माने परन्तु उनकी सूचना-आज्ञारूप मानकर जहां-पहाड़ या घाटी जैसे दुर्गम स्थानको वे जानेको कहें, जिस दिशामें वे अंगुली मात्र उठा दें उस दिशामें उत्साह पूर्वक जानेको तैयार हो जाय । यह शक्ति दोनोंमेंही है । उतनी या उससे आधी भी भारतके किसी दूसरे नेतामें कहना अशक्य है । यह शक्ति उनमें जन्मके साथ ही आई है । वह आगकी नहीं है । उन दोनोंमें परस्पर विलक्षणता होते हुए भी उनका प्रजापर किस कारणसे अद्भुत प्रभाव पड़ता है इसीकी खोज करना है—उनमें कौनसी विलक्षणता है यही देखना है ।

प्रथम इन दोनों महापुरुषोंमें कितने गुण समान हैं और पुनः कितने भिन्न एवं विरोधी हैं उसीका हम अन्वेषण करेंगे ।

देशके प्रति दोनोंमें समान भाव है । देशके लिये तो महात्मा गांधीने सर्वस्व ही अर्पण कर दिया है । परन्तु लो० तिलकनेभी कुछ कम नहीं किया । उनकी आयका माधन 'केसरी' पत्र है जिसमें अच्छी आय होती है, परन्तु वह सर्व साधारणकी अपेक्षा ही अधिक है । उसमें लोकमान्य तिलकका आर्थिक व्यवहार मर्यादित होने लगा है परन्तु श्रीमंत बनना उनकी स्वप्नमें भी अच्छा नहीं मान्य होता ।

दोनों ही विप्लवनायकों धारण करनेके समय तक उनके सम्बन्धित करनेवाले हैं—विप्लवनामे प्रारम्भ कर मानव शक्तिके अंत तक विप्लव प्राप्त

करते हैं, अपने उद्देश्यको पूर्ण करने पर ही विश्राम और निद्रा लेते हैं । यह दोनोंमें समान लक्षण है ।

दोनोंमें ही एक दूसरा लक्षण सादेपनसे रहनेका है । वास्तवमें म० गांधी व्यवहारिक रीतिमें सत्यासी होनेसे चढ़ जाते हैं । उसमें भी शारीरिक कष्ट सहनेकी शक्ति मान्यवर तिलककी अपेक्षा अधिक है । विशेष कर म० गांधीके शरीरमें मांसकी अधिकता न होनेसे, हल्का और लम्बा शरीर एवं आयु उनकी युवा प्रगट करनेमें सहायता देती है । तृतीय अवस्थाका हाड़ मांस-तिलक महाराजका स्थूल और मूत्र रोगसे पीड़ित शरीर शारीरिक कष्ट शायद ही सहन कर सके । यात्रा करनेमें वे प्रधानावस्थाके समान ही हैं । भोजन वस्त्रकी आवश्यकता दोनोंको ही कम है । यदि म० गांधीको तौला जाय तो लो० तिलक ही क्या मग ही उनसे बननेमें अधिक निकलेंगे । सादेपन और आवश्यकताओंकी कमीने म० गांधीको एक प्रधान प्रधान, एक कल्या, एक अस्त्र विग्रहका एक दास्य ही बना दिया है । लो० तिलकने मात्र सुभीता एवं कदाचन राजनीतिक एक अंगके समान समझ कर उसको ग्रहण किया है । दोनों ही अपने-अपने देशकी वस्त्र पहनते हैं और विदेशी वस्त्रकी तो बात ही क्या विदेशी खाद खादका स्पर्श भी उसमें नहीं होने देते हैं ।

निर्ममदेह शिवा मधुसूधी प्रहरणमें लो० तिलक महज्जीमें महात्मा गांधीमे बढ़ जाते हैं । म० गांधी तो बिना नियम और श्रम-धिके ज्योत्स्ना हैं और सर्व धर्मोंके मिश्रण



समान पर विचारपूर्वक निरीक्षण किये हैं। परन्तु लो० तिलकको संस्कृत साहित्यका विशेष कर आर्यधर्मका ज्ञान अधिक है। इसका 'गीता भाष्य' स्मारक है, 'ओरायन' आदि अंग्रेजी पुस्तकें इसकी उदाहरण स्वरूप हैं। गांधीजी विद्वान नहीं हैं यह बात नहीं, उनकी गुजराती भाषाकी परिमार्जिता अच्छे २ विद्वानोंके हृदयको शीतल कर देती है। म० गांधीमें अभ्यासके शुभक पांडित्यकी अपेक्षा विचार और मनन विशेष है। यही गुण उन को अन्य विद्वानोंसे पृथक् करता है।

दोनों ही देशोन्नतिके समान और पूर्ण भक्त हैं-परन्तु देशोन्नतिकी पद्धतिमें दोनोंके बीच बहुत अन्तर है। शायद उस विरोधका नामनिर्देश किया जा सके। इन दोनों सुख और चन्द्रकी विलक्षणताका यहाँ पृथ्वीपर अवतारण होता है। म० गांधी जगतकी उन्नतिके एक भागकी तरह भारतकी उन्नतिके इच्छुक हैं उन्नतिमें दूसरेका भाग आना उन्हें त्याग्य है। यही उनके सिद्धान्तका मूल है। केवल राज्योन्नति पर लो० तिलककी अपेक्षा उनकी पटांश भी भ्रष्टा नहीं है-राज्योन्नतिको वे आत्मोन्नतिसे गौण मानते हैं और आत्मके विकासमें वे राजनैतिक स्वतंत्रताको एक साधन समझते हैं। राज्य, साध्य और प्राप्ति के पात्र वे मन और आत्माकी उन्नति एवं आत्म-पवित्रताको ही मानते हैं। राजनैतिक उन्नतिको वे संपूर्ण मुक्तके अनेक भागस्वरूप समझते हैं। अन्य प्रकारकी उन्नतिमें उनकी केवल जशब्दा ही है ऐसा नहीं, किन्तु वे उनको गौण मानते हैं। और उस प्रकारकी उन्नतियोंके लिये शीघ्रता

करनेकी आवश्यकता नहीं है-उनकी तात्कालिक आवश्यकता नहीं है और जो अन्य प्रकारकी उन्नति कम मात्सर्य होती है वे राजनैतिक उन्नति प्राप्त किये बिना कदापि नहीं मिल सकती और राजनैतिक उन्नति ही उसकी प्राप्तिमें सरल साधन और कारण हो पड़ेगी ऐसा उनका मानना है। इन बातोंसे प्रकट होता है कि महात्मा गांधीके विचार व्यापक और सार्वदेशिक हैं। इसके विपरीत लो० तिलकके विचार एक प्रकारके और एक दिशागामी हैं। इसीसे उनकी कार्यपद्धतिमें भेद प्रकट होता है। म० गांधी जिस समय कोई राजनैतिक प्रश्न उठाते हैं तो उसे धर्मका जाना पहिना देते हैं, लो० तिलक जब किसी धार्मिक विषय पर विवेचन करते हैं तब उसको यत्किंचित् राजनैतिक रंगमें रंग देते हैं। म० गांधी राज्यको नीतिका एक अंग गिनते हैं, लो० तिलक धर्मको राज्यके किसी अंशमें समाविष्ट करते हैं। इसीसे लो० तिलककी जो राजनीति है वही म० गांधीकी शुद्ध धर्मनीति है। लो० तिलक केवल साध्य पर एकचित्तसे लक्ष्य रखते हैं और आवश्यकतानुसार छोटे-बड़े सभी साधनोंका उपयोग करते हैं। म० गांधी साधन भी देवपूजाकी सामग्रीके सामन साध्य जैसा ही शुद्ध होना चाहिए और अमुक्त गुणवाला एवं दोषरहित होना चाहिये यह खोज कर ही उसमें हाथ लगाते हैं। साध्य उत्तम हो तो उसको प्राप्त कमानेवाले शस्त्रों-साधनोंकी शुद्धिके विषयमें बहुत खींचतानी करना लो० तिलक आवश्यक नहीं समझते हैं।

इस दृष्टिसे लोकमान्य तिलक जो करते हैं वह उचित ठहराया जा सकता है परन्तु जिस प्रकार होम करनेवालेको यज्ञमें हल्की गीली, सड़ी लकड़ी होम करनेसे जो खराब धुआं एवं दुर्गन्ध दूसरोंपर पड़ती है उसकी खबर न हो उसी प्रकार लोकमान्य तिलकको उसके प्रकाश करनेमें उसका क्या प्रभाव होगा इसका ख्याल नहीं और न वे इसे महत्व ही देते हैं। इनकी पद्धतिका जो कोई विरोधी हो केवल उसकी ही नहीं विरोधीके पक्षपातीकी भी खबर नहीं। रानाडे और गोखले जैसे महापुरुषोंने लो० तिलककी कार्य पद्धतिको नहीं स्वीकार किया। म० गांधीको उत्तम पुरुषोंको तो क्या दुर्जन मनुष्यको भी बुरा कहना आता नहीं। अहमम्यतासे म० गांधी मुक्त हैं। इसके विपरीत वह लोकमान्य तिलककी रा रागमें मौजूद हैं। इसीसे म० गांधीका कोई विरोधी नहीं है जबकि लोकमान्य तिलकके विरोधियोंकी संख्या अधिक है।

कीर्ति, पूज्यभाव, तथा आदरके बिना प्रभाव प्रभाव नहीं पड़ेगा और प्रभाव नहीं पड़े तो हम राजनैतिकोंमें अग्रगण्य न गिने जायेंगे और राजनैतिक उन्नति नहीं कर सकेंगे ऐसी कुछ लो० तिलककी तर्क दृढ़ता है। इसी कारणसे वे प्रजाजनकी ओरसे प्राप्त अनाकारण मानको सदा स्वीकार कर लेते हैं। न्याय करनेकी दृष्टिसे हमकी कान्ना पड़ेना कि अहंभावसे नहीं किन्तु मां मायात्मक प्रभाव और मर्यादा पर आप डालनेके बिना प्रजा-संरक्षण के हम मानको स्वीकार करते हैं। उनकी गाड़ीके घोड़ोंको अलग करके लोग अपने हाथोंसे उसे

खींचे इसमें लोकमान्य तिलकको कोई आप्रह नहीं—इसके विरुद्ध; कोई ऐसा करेगा तो हम गाड़ीसे कूद पड़ेंगे ऐसी म० गांधी धमकी देते हैं। तात्पर्य यह है कि लो० तिलकने जब अहंभावको एक राजनैतिक आवश्यकता मानकर उसे स्वीकार किया है। तब म० गांधीने राजसी वस्तु क्षणभरके लिये भी सार्विक नहीं मानी जा सकती इस न्यायसे उसको अस्वीकार किया है। लो० तिलक कृष्ण, चाणक्य और डिमरायलीके शिष्यकी अपेक्षा अधिक हैं और म० गांधी विदुर, युधिष्ठिर, और मेडनी या ग्लेडस्टनके शिष्यकी अपेक्षा अधिक हैं। इनमें चढ़ता कौन और उतरता कौन इसका निर्णय करना इस लेखका विषय नहीं—चायद उसको देखते तो हैं। हमको मात्र तुलना करके भेद ही दर्शानेका संक्षिप्त कार्य करना है नितो हमने यथाशक्ति किया है।

( गुजराती विषयगत लेखक द्वारा )



पड़ेगा मान ।

१. अपने माता पिताका मान रखने रहना ही मानो ईश्वरका आशीर्वाद है ।
२. माता पिता, गुरु और मानिक जो काम करें वह शीघ्र करना चायदा करना नहीं ।
३. माता पिता जो कहें कि तोपानी बाक कोको भीयतमें फिरना नहीं यह माननेमें अपना कल्याण है ।
४. पिता पढ़ानेवाला, अन्न देनेवाला और भद्रसे पचानेवाला ये नानों मानापिनके समान गिने गते हैं क्योंकि ये अपना भद्र कल्याण से हैं ।
५. यदि हम पढ़ाई मर्वाश रखेंगे तो अपने भद्रक अपनी मर्वाश रखेंगे ।

નૂતન વર્ષના દે વાલુ

ઘાલી વ્હેનો ! અને સુજ વંધુઓ ? ગત વર્ષની આસરમાં ફળપુરના નામના નવોન તાલે લોકોને હેરાન હેરાન કરી નાંખ્યા છે. એ રોગ યમદૂત રૂપે આ ભીને કેટલાનાં પ્રાણ હરણ કર્યા છે, કેટલાકને વંચાવેલો બનાવી દીધા છે અને કેટલાકને માંડા બનાવી દીધા છે. એ સિવય કેટલેક ઠેકાણે કોરેરા વિગેરેથી પણ લોકોનો સંહાર થયો છે, કેટલાક પોત પોતાના દેશના વચાવ સ્વર્ત પ્રવંહ યુદ્ધમાં હાપલાવીને સદાને માટે આ અસર સંસાર છોડીને ચાલ્યા ગયા છે. અને કેટલાકે મોઘશરીને લીધે અન્ન ન મળવાથી પોતાના અમૂલ્ય પ્રાણનો ત્યાગ કરી છે. અને કેટલાક કુચાથી તરફડે છે.

ઉપર જણાવ્યા પ્રમાણે અનેક વિતોને ઝોઝો ગીને આપણે આવાદ રહ્યા છીએ પણ એક આપણું અહોભાગ્ય સમનું જોઈએ. અને એ પુણ્ય ચીર-કાઝ ટકી રહે તેને માટે આ નૂતન વર્ષમાં આં પરીવર્તનનાં કામો કરવાં જોઈએ કે જેથી વિચારાં રોકડાં નિર્ધન, રોગી અને નિરાશ્રિતોને આપણા તનથી, મનથી, વંચનથી, અને ધનથી સહાયતા મળે.

ઘાલી વ્હેનો ? અને સુજ વંધુઓ ? જો તમે સત્યાગ્રહી કર્મચીર ગાંધીનીના વચનને માન આપતા હો અને દેશને ઉન્નત કરવાને ઇચ્છતા હોય, દેશની દીનતા દૂર કરવા માંગતા હોય, દેશના પેસા દેશમાં જ રહે એવી શુભ ઇચ્છા તમારા હૃદયમાં હોય, ઉપર ઉપરથી જ ફક્ત બ્યાલ્યાન કરીને તમો યાદ ! યાદ ! ફરેવડાવા

નહિ માંગતા હોય, પરંતુ સરી અંતરની દાસ્યથી દેશનું મ્હલ કરવાને ઇચ્છતાં હોય તો તમે વર્તમાનમાં દિનપર દિન વૃદ્ધિ પામતી ફેશનની ફીસીયારીને ઝોઝી કરો. એક રૂપિયાના કપડા પર પાંચ રૂપિયાની સીલાઈ અરે ! એથી પણ વધારે લોકો દરજીને સીલાઈ આપે છે તેનો અટકાવ કરાવો. મુંકે ફાટી જાય, તથા શીલને દૂષણ લગાડે આવાં વારીક કપડાં નહિ પહેરવાનો નિયમ કરો, દેશી મઝ્યા પોતના અને ટકાઉ કપડાં પહેરવાનો ટઢ નિયમ લો, આમ કરવાથી, જરૂર દેશની આવાદી થશે.

સીવળ ભરતના વલાસો જ્યાં ત્યાં ચાલે છે પરંતુ એનો ક્રમ ડહોડો જોવામાં આવે છે. સીવળ ભરતના વલાસ એમ બોલાય છે ભરત સીવળ કોઈ ચોલતું નથી. સીવળ શબ્દ પહેલો લેવામાં એક મહત્ત્વ રહેલું છે એટલે કે પહેલા સીવળ શીલવધું તે એટલે સુધી કે તે પોતે પોતાના, વાઝ બચ્ચાંનાં તથા પતિના કપડાં જેવાં કે પોલકા, ચોઝીઓ, જમણાં ફરાક, ટોપીઓ, લેંધીઓ, કોટ, બદન વંદી ફરાક જાકીટ વિગેરે સફાઈથી સીવી શકે અને સીવતાં આવડે. ત્યાર બાદ પોતે વેતરી પણ શકે. આટલું થયા બાદ રેશમનું ભરત, કાંસ-વનું ભરત, ડનનું ભરત તથા તથા દોરાના કુમાલ ગુંથવા, મોતીના તોરણ બનાવવાં વિગેરે શીલવધું જોઈએ. પણ આજ તો જેને એક લુગડું ફાટેલું હોય તેનો શડકો ભરતાં, ન આવડતું હોય તેઓ પણ હાથમાં સોયો લઈને ગુંથવાનું કામ કરીને પોતાને હોશીયાર માને છે. આથી કોઈ ધરના પેસા વચ્ચતા નથી પણ ડહોડો સર્વ વધે છે માટે પેસા સમજ પ્રમાણે સીવળ ભરતનો સારો અર્થ

સમગ્રી જેમ શબ્દનો ક્રમ છે તેમજ શીક્ષણનો હોવો જોઈએ અને જો દરેક ટેકાણે આવો સુલટો ક્રમ ચાલુ થાય અને પૈસાની કરકસર થાય તો પછી ક્ષત્ર દેશ ઉન્નત અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરે એમાં જરા પણ વાંધો લાગતો નથી. વઝી અલંકારોની વાવતમાં પણ વારંવાર એક ચીજ કરાવવી અને તે કાંઈ પણ તૂટી ન હોય તો પણ વીજાંની કાંઈ નવી ચીજ જોઈ કે તરતજ પોતે કરાવેલી ચીજને ભંગાવી તોડાવીને વીજી નવી ચીજો કરાવવામાં આવે છે. આથી વારંવાર સોનું સોનીના હાથમાં જવાથી રેવળ વિગેરેનું મિશ્રણ થવાથી રાસી થઈ જાય છે. અને સોના સાઠ ઉપજે એટલી કિંમત રહે છે એ સિવાય મજુરીના પૈસા વારંવાર ચરચવાથી એક દાખીનો વીજો થાય એટલું અને કોઈ કોઈ વચ્ચેથી પણ વધારે નુકસાન થાય છે. માટે મારી વહેનોને તથા વંધુઓને મારી મલામણ છે કે તમે જે વાંઈ અલંકાર કરાવો તે મનવૃત્ત કરાવો અને કોઈની નવી ચીજ જોઈને ક્ષત તેમ કરાવતાં બટકો ।

વહેનો ! અને વંધુઓ ! વિચાર કરો કે પહેલાનાં લોકો પાસે પૈસા ઘણા હતા અને જ્ઞાન આગ કરતાં ઓછું હતું, કમાણી પણ અગમ્ય અને માન મન્ય કરતાં તેઓ ઓછી કરતા હતાં પણ તેઓ મુશી હતા તેનું કારણ શું !

મારા મારવા પ્રમાણે તેનું કારણ એનું કે તેઓ દરેક વાતમાં સાદા હતા. તેઓ કપડાં સાદાં અને ટકાડ પહેરતાં હતાં, અલંકાર પણ તરતેદી નહીં પહેરતા, પરંતુ મનવૃત્ત અને માનસાડ વાવતા હતા, મટાં વીજી એ વાતને કાગમી

માફક દરેક વાતમાં પરાધીનતાને તેઓ પ્રમુખ નહીં કરતા હતા પણ જાત મહેનતે જેટલું બને જેટલું કરી લેતાં હતાં, બનતા સુધી પોતાના કપડાં પોતાના હાથેજ વણતા, ઘર કામ પણ વાસણ માંજવાં, ધાળો ભરકું ઢલકું વિગેરે હાથેજ કરતા હતા. પોતાને ત્યાં કામ બહોલું હોય તો નોકર પણ રાખતા પરંતુ સાથે પોતે આઠસુ નહીં બનતાં. આથી તેઓનાં શરીરને કસરત મઠ્ઠી હતી અને તેઓ શરીરે રુદ્ધ પુદ્ધ રહેતા હતા અને તેથી પ્રના પણ તેવી રુદ્ધ પુદ્ધ ઉત્પન્ન થતી હતી. તેઓનો અહાર પણ સાદો હલકો અને પુષ્ટિ કારક હતો આજની માફક દિવસમાં પાંચ પાંચ સાત સાત વચ્ચે વા પીને જઠરાગ્નિને મંદ કરી નાંચવાનો કદંગો રિવાજ ત્યારે નહોતો. આથી તેઓ દરેક વાતમાં સુસ્તી હતા. સોઢાબોટર, લોમલેટ, ચાકલેટ, અને વીસ્કુટને તો કોઈ ઓઠાલતા પણ નહોતા, પણ એને વડલે ધરતી બનાવેલી ચીજો જેવી કે પુરી મગીઆં મગજ વિગેરે પવિત્ર વસ્તુઓનો વ્યવહાર ચાલતો હતો, આજ તો મડમને જોઈને તેની નફલ કરાઃ વટ મોમાં પહેરી હાથમાં છત્રી લઈ રોક મારવો, અને એમાં જાણે વધો મુશારો આવો ગયો હોય તેમ મનાય છે પણ આ મુશારો નથી પણ કુશારો છે. આથી દેવની ઉન્નતિ થતી નથી પણ અવનતિ થાય છે. હા કેટલીક પુરાણી વાવતમાં પણ ફેરફાર કરવા જોયો છે તે કરવો જોઈએ જેમકે કપડાં ક્ષત્ર રાખવાં, મકાનો દવા નહીં એવે ભવાં હોય તો તેનો ફેરફાર કરાવી દવાદાર બનાવતાં.

फेशनने ओछी करीने सादाई अंगीकार करवाधी दरेक नण अनेक तरेहना देशहितना कामो करी शके, धनवान सादाईधी चाली कुमाणें जता पैसाने अटकावी शके, देश बंधु-ओना अज्ञानने दूर करवाने बोर्डिंगो, हाईस्कूलो पाठशाळाओ, वाचनालय खोलावी शके, अज्ञान अंधकारमां पडेली व्हेनोने प्रकाशमां लाववाने आश्रमो, कन्या महाविद्यालय विगेरे ज्ञानना खातांओ खोली शके, देशने पैसे टके सुखी करवां माटे विविध प्रकारनी हुजरशाळाओ, खोलावीने गरीबोना आशिर्वाद लई शके, रोगीओनां दुःख दूर करवाने दवाखाना खोलावी शके, क्षुधातुरनी क्षुधाने दूर करवाने सदाग्रत आपी शके, तथा भयाभित्त निराधारोने भयथी मुक्त करावी निर्भय अवस्थाने प्राप्त करावी शके, अने पूर्वतुं कमावेलु पुण्य अत्रे खलास नई करतां परभवमां पण पुण्यना पोटां बांधी जवाय. तेमन लक्ष्मी नाशवंत छे-तेथी कदाच अवस्थांमां फेरफार थाय तो तेवे समये पण आचरु सचवाइ रहे विगेरे अनेक फायदा धन-वाननी सादाइमां समायेलं छे.

तेमन मध्यम स्थितिना मनुष्य सादाइधी चालीने गृहस्थाश्रम मुखे निर्वाह करी शके, अने पोताना सारां माठां खर्च पण सुखेथी करीने आचरुमेर दिवसो निर्गमन करी शके, त्यारे फेशनना प्रवाहमां तणाता-लोको देवादार बनी पोतानी आचरुने साचवी शक्ता नथी अने ज्यां त्यां तिरस्कारने पात्र नचनेना अने तेओना हाल बेहाल यह उत्तक है, इकर आलो-

तेओनुं दुःख ते पोते नाणे के सर्वज्ञ नाणे, मारामां वर्णन करवानी शक्ती नथी.

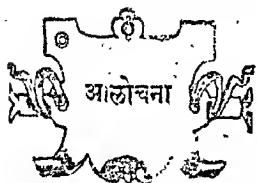
बली सादाइथी रहेवामां गरीबोने आपणे कांड नही आपीए छतां दीर्घदृष्टिथी जोतां गुहारीते लाभ थाय छे; फेशन जेम जेम ओछी थाय तेम ते देशना पैसा देशमां रहे अने मोंघवारी ओछी थाय तेथी विचारां गरीब रांकडाने अनाज प्राणी ओछे भावे मळे अने तेनां गुप्त आशिर्वादथी आपणुं कल्याण थाय. अने पैसे, टके दुनियां सुखी होय तो तेओना परिणाम सारां रहे अने शुभगतिने प्राप्त करे, प्रभुभजन, प्रभुपूजन शास्त्र स्वाध्याय आदिमां मन लागे विगेरे अनेक फायदाओ सादाइमां रहेला छे के जे हुं मारा नान-कडा लेखमां वर्णवी शक्ति नथी.

अंतमां मारु एज कहेहुं छे के आपणे अनेक विनोथी बचीने जीवित रह्यां छिए ते एक पूर्वकृत पुण्यनो उदयन समनवो जोइए. ए पुण्य बीज रुप रहे तेने माटे देशानु हित करनार सादाइ छे तेनुं अवलंबन करवुं, फेशनने देशवटो देवो, देशीमाल चापरवां, व्याख्यान दाता-ओए फक्त व्याख्यान रुपे बोलीने बेसी रहेवुं नही पण जे बोले ते वर्तनमां म्रियामां सुकवुं. जाय धरो तो हुं धारंहुं के देशनो जलदी उद्धार दरो. अने पूर्व स्थितिने प्राप्त कररो.

ललितान्धन मुलचंद

आधिकाश्रम मुंवाई.

चूलेवे  
लाभ?  
भन्ना वा  
काम? अ



(लेखक-श्रीपुत जैन कवि ला० ज्योतिप्रसादजी  
सम्पादक जैन प्रदीप, प्रेममवन देवपन्द)

नित्य प्रति किये हुये कार्योंपर विचार करके उनके बुरा होनेकी हालतमें उनकी निन्दा करना और पश्चात्ताप करना और अच्छा होनेकी हालतमें अनुमोदना करना और हर्ष मनाना इसका नाम "आलोचना" है। छोटे कामोंसे बचने और अच्छे कामोंमें लगनेका मार्ग यदि कोई है तो वह आलोचना ही है। इस ही कारणको लेकर जनाचार्योंने आलोचना करनेकी सभ्यति संसारके प्रत्येक प्राणीको दी है। यदि साधुओंसे भी किसी समय देवयोगसे किसी कृपायके वश कोई ऐसी क्रिया बन जाय कि जिससे किसी आत्माको दुःख पहुंच जाय तो वे भी उसकी आलोचना करते हैं और निन्दा करते हुये स्वयं पश्चात्ताप करते हैं जिससे आगामीको ऐसे कार्योंकर करनेमें छुटकारा मिल जाता है। जैसे एक मनुष्यने लोभके वशीभूत होकर किसी भोजे आदमीकी गांठ कतर ली जिसमें उसको बड़ा दुःख हुआ। उसके दासको

दिया। मैं आगामी ऐसा नहीं करूंगा। इस ही भांति एक पुरुषने क्रोधके वश होकर किसी अन्य पुरुषके सरमें लट्ट मार दिया जिसकी चौटसे मार खानेवाला अचेत होकर गिर गया। अब मारनेवाला दुःख मान रहा है और कह रहा है कि बुरा हो इस क्रोधका कि जिसने मुझे ऐसा अन्यायना दिया कि मैंने उस दीनके सर में लट्ट मार दिया, फिर कभी भूल कर भी ऐसा न करूंगा। अतएव इस ही प्रकारसे प्रत्येक बुरे कर्मकी आलोचना की जाती है जिससे परणाम कोमल होते हैं और आगामीको बुरे कामोंसे छुट्टी मिल जाती है ऐसे ही आलोचना अच्छे कामोंकी भी होती है उससे आत्माको शांति और आनन्द मिलता है और आगामी अच्छे कामोंके करनेको प्रेरणा होती है। अतः आलोचना सांसारिक जीवोंको अच्छे मार्गपर लगानेका एक बहुत ही उत्तम साधन है।

संसारी जीव क्रोध, मान माया और लोभ इन चारों कृपाय और पांचो इन्द्रियोंके विषयोंमें ऐसे लिप्त हैं कि प्रतिदिन नयेर पापोंकी सृष्टि रची हैं और विविध प्रकारके बुरे कर्म किये जाते हैं जिससे अपनी आत्माका पात होकर दूसरोंकी आत्माओंको घटेय पहुंचता है और अशुभ कर्मोंका वंशन होता है। अशुभ कर्मोंका वंशन होना दीन्य करने और आगामीको उसमें और गांठ न लगनेके लिये ही आलोचना की जाती

यह प्रज स्वयं ही करना पड़ता है कि जो हुआ सो हुआ परन्तु फिर ऐसा कार्य कदापि न करेगा । यदि कोई चोरी करनेवाला मनुष्य कारागारके अन्दर बैठकर कुछ देर यह विचार करे कि तुझे जो यहां आकर एक नियत समय तक रहना पड़ रहा है और भांति २ की सुसीधें भोगनी पड़ रही हैं यह सब चोरी करनेका ही फल है, यदि तू चोरी न करता तो यह दिन काटिको देखने पड़ते खैर, जो हुआ सो हुआ अब इन दुखोंके दिनोंको काटकर और वहांसे बाहर निकलकर फिर कभी भी चोरी न करेगा-बल्कि परिश्रम करके द्रव्य कमाड़ेगा और खाड़ेगा तो कहना पड़ेगा कि यह आदमी आलोचना जैसे उच्च साधनसे लाभ उठाता है और आगामीके लिये अपने जीवनको ठीक करता है । अतएव सब बात तो यह है कि आलोचना परणामोंको क्रान्तिल करने शान्ति और आनन्द उपाने, अशुभ कर्मोंके बंधनको ढीला करने और आगामीको बुरे कामोंसे बचनेके लिये रामबाण औषधीके समान है—इस ही वास्तं जैन धर्ममें आत्मीक कल्याणके लिये इसका आसन बहुत ही ऊंचा रखता गया है और यह गृहस्थी या साधु सबके ही लिये है और इस ही अभिप्रायको लेकर जैनियोंमें हमका प्रचार भी पाया जाता है, यह दूसरी बात है कि जैनियोंमें आलोचना—आलोचनाभी भांति न की जाय परन्तु फिर भी आलोचना “आलोचना पाठ” के द्वारा कर ही ली जाती है। आलोचना पाठ एक हिन्दी कविताकी छोटीसी पुस्तक है, आलोचना करनेवाले उस ही को पढ़कर आलो-

चना कर लेते हैं और अपने कर्तव्यको पूरा कर देते हैं । परन्तु यह ठीक नहीं है; क्योंकि संसारो जीवोंके कर्म सदैव एकते नहीं होते । प्रतिदिन कुछ न कुछ परिवर्तन होता ही रहता है । यदि आज रामलालने क्रोधके बश होकर रामकुमारके साथ मारपीट की है तो फल मान कपायके बशीभूत होकर श्यामचन्द्रको नीचा दिखलानेकी चेष्टामें लगा हुआ है और यदि आज चन्द्रमानने मायाचारी करके मुनि देवको धोखा दिया है तो फल लोभ कपायके कारण कर्मचन्द्रकी गांठ काटी है। इस प्रकार नित्य प्रति नये नये कर्म किये जाते हैं अतएव इन कर्मोंकी नयीर आलोचना भी होनी चाहिये । जो कर्म किया जाय उसकी ही आलोचना की जाय । आज मैंने झूठ बोलकर फालीचरणको कट्ट कपों पहंचाया या मैंने ऐसी हंसीसे काम कपों लिया कि जिससे धनकुमारके चित्तको चोट पहुंची, मेरी गलासी चेईमानीसे शिवग्याल किसानका सर्व नाश हो गया । मेरे अत्याचारके कारण दौलत धीवर गांव छोड़कर चला गया ।

अतः इन बातोंको सन्मुख रखकर इन सब पर जुदा २ आलोचना की जाय तब लाभदायक और हितकारी हो सकती है और आवश्यकता भी यही है कि जो काम किया जाय उस पर ही पश्चाताप किया जाय । यदि चोरी करते हुए चढ़ीके चलानेकी या छल छिद्र करते हुए चूल्हेके जलानेकी आलोचना की जाय तो इससे लाभ ? यह तो केवल एक रूढ़िकी पूर्ति हो गई भला आलोचना जैसे महान कार्यमें इसका क्या काम ? आलोचना करना कोई लोग दिखलावेका



नुमाइशी ठाठ थोड़ा ही है। इसका करना तो अपनी आत्मासे सम्बन्ध रखता है इससे तो नीच आत्मा ऊंच बनती है और बुरे कर्मोंसे दूर होकर अच्छे और भले कर्मोंमें लगती है। जो कोई मनुष्य आलोचना जैसे महान धार्मिक कार्यको भी लोग दिखावेके लिये करता है तो कहना पड़ेगा कि उसको तो इस आलोचनाकी भी आलोचना करनी चाहिये अन्यथा उसका कदापि भी कल्याण नहीं होगा। जरा सोचनेकी बात है कि एक दूकानदार अपनी दूकानपर बैठा हुआ ठगी करता है तो उससे कुछ अधिक हानि पहुंचनेकी सम्भावना नहीं हो सकती क्योंकि ब्राह्मण भी जानता है कि दूकानदार बहुधा फरके ऐसा किया ही करते हैं परन्तु एक दूसरा मनुष्य देवमंदिरमें या किसी दूसरे धर्मस्थानमें बैठा हुआ पूजा पाठ कर रहा है और बड़ी ऊंची आवाजसे "सुनिये जिन अर्ज हमारी, हम दीप किये अति भारी, तिनकी अम निर्गुप्ति काजे तुम शरण लई महाराजे" आदिके स्तोत्र पढ़ते हुये चरकी, चूल्हा, ओखल, मूसल, आग पानी, हवा, मिट्टी आदिके नाम ले ले कर दुहाई मचा रहा है और दूसरे मनुष्यों पर प्रकट कर रहा है कि फटो क्या गुप्त जैसा धर्मात्मा भी कोई और होगा परन्तु ऐसा करते हुये साम्प्रतिक कर्मोंमें उस ही संकल्पी हिसासे काम लेता है कि जिसको उसके सब भाई कष्ट करने हैं परन्तु इसका न फट्टी नाम है और न प्रशंसा। अतः प्य कहना पड़ेगा कि उमदा पूजा पाठ करना और आलोचनापाठ पढ़ना सब मायाचारीको लिये हुये हैं अतः उसको तो इस पूजा पाठ

और आलोचनापाठकी भी आलोचना करनी चाहिये अथवा उसकी आत्मामें यह मायाचारी अपना ऐसा घर बनायेगी कि जो न मालूम कब पुराना होगा और कब गिरेगा।

भाई आलोचना करनेवालो, आलोचनाके वारते किसी पाठके पढ़ने या नियत लेखको दुहरानेकी आवश्यकता नहीं है और न इसके लिये शोर मचानेकी और दूसरोंको सुनानेकी आवश्यकता है यह तो उन कर्मोंके लिये करनी चाहिये कि जो प्रतिदिन किये जाते हैं जो बुरा या भला काम जिस दिन किया जाय उसकी उस ही दिन आलोचना की जाय और आलोचना एकान्तमें बैठ कर अपने विचारोंद्वारा की जाय उसके लिये खुले मंदिरमंदिरमें बैठ कर शोर मचाने या किसी राग गानेकी आवश्यकता नहीं है और न उससे कोई लाभ ही होता है जो कोई ऐसा करता है वह केवल रियानको पूरा करता है और वह भी लोग दिखावेके वास्ते।

जैन धर्म जो कि जीवको स्वात्मनका पाठ पढ़ाता है और प्रत्येकको अपने पंरोंके बल रक्षा होनेका उपदेष्टा देता है और स्पष्टतया करता है कि जैसा बुरा या भला काम तुम फरोगे उसका ऐसा ही फल भी भोगोगे। कोई ईश्वर परमात्मा-बुद्ध-या गौड तुम्हारे किये हुये कर्मोंमें फलती बढ़ती नहीं कर मरेगा और न उन कर्मोंके परिणाममें कुछ उन्नत फल पर सहेगा इसलिये अपने परमात्मासे कोमल बनाकर बुरे कर्मोंमें कितारा करो और अच्छे कर्मोंको करने लुये प्रत्येक बंध पंको निममें तुम्हारा नाना हो और समाधि



मुतां जे, पाओ जे । यदि तुम बुरेमे बुरे  
 कर्म करो तुम भी जन्म ईश्वर-भगवान्-  
 खुश ना मिले। जैनी प्रार्थना करो कि  
 हे ईश्वर, मेरी मुझ पर दृष्टि मत डालना-मैं  
 चाहे लाख बुरा ईश्वरन्तु फिर भी तेरा हूँ-मुझे  
 तू अपना समझ कर सुख ही सुख देन ।  
 क्योंकि मुझमें दुःखोंको सहारनेकी शक्ति नहीं  
 है यद्यपि मैं हजारों बुराइयां प्रतिदिन करता हूँ  
 पर क्या करूँ, करना ही पड़ती हैं । परन्तु मैं  
 उनको तेरे ही भरोसे पर करता हूँ । तू मेरा  
 है, मैं तेरा हूँ, अपनीही रक्षा सब किया ही  
 करते हैं। जब मैंने तेरी भक्ति धारण कर ली है  
 तो फिर कहना सुनना ही क्या है । वस मैं  
 करनेवाला और तू करनेवाला इत्यादि। तो ऐसी  
 प्रार्थना करनेसे कोई लाभ नहीं है । यहां लोक  
 व्यवहारमें देखा जाता है कि कुआचरणी घेरेको  
 बाप भी घरसे निकाल देता है । कुकर्म आद-  
 मीको अपने शहरका न्यायाधीश भी कड़ीसे  
 कड़ी सजा (दण्ड) दे डालता है । जब बाप  
 और न्यायाधीश भी बुरे आदमीको क्षमा नहीं  
 करते तो ईश्वरको क्यों इतना सलूक करना  
 है ? क्या ईश्वर कोई खुशामदी टूटू है जो  
 इन निज्जी चुपड़ी बातोंमें आकर तुम्हारे  
 कुकर्मोंको क्षमा कर देगा ? यदि वह ऐसा ही  
 खुशामद पसन्द है तो उसको ईश्वर कहना भी  
 एक प्रकारका पाप है । ऐसे कर्म तो न्यायसे  
 भग्न रखनेवाला मनुष्य भी नहीं कर सक्ता  
 और यदि कोई करता है तो वह भी उसका  
 फल भोगता है । अभी गत वर्ष पंजाब  
 देशमें कितने ही घुस खानेवाले मनुष्योंको

दण्ड मिल चुका है । फिर ईश्वरके वि-  
 पयमें पैसा ख्याल करना कि वह हमारे  
 बुरे कर्मोंपर दृष्टि नहीं डालेगा और वह  
 भी कुछ खुशामदी बातोंको सुनकर, तो यह  
 कितना बड़ा दोष है कि जो ईश्वरके मत्वे मड़ा  
 जाता है । क्या इस दोषके लिये भी कोई  
 आलोचना है । हम देखते हैं आलोचना  
 पाठोंमें भी ईश्वरसे ही प्रार्थना की गई ।  
 है कि हे भगवान्, हमारी अज्ञ सुनो, हमने बड़े  
 भारी दोष किये हैं, अब उनको दूर करनेके  
 वास्ते तुम्हारी शरणमें आये हैं इत्यादि ।

हम नहीं समझते कि हमारे जैनी भाईयोंमें  
 जो यह खुशामदीपनेका विचार कहाँसे आगया  
 जब कि जैन धर्म हमतो यद सिलख रहा है  
 कि किसी दूसरी शक्तिका सहारा मत लो  
 तुम्हारे बुरे भले कर्मोंमें दूसरी कोई भी शक्ति  
 कुछ भी नहीं कर सकती । जो कुछ भी सुख  
 दुःख या हानिलाग होता है वह तुम्हारे ही  
 किये हुये कर्मोंका फल है । तुम्हारे किये हुये  
 कर्मोंमें किसी दूसरी शक्तिका दखल नहीं है ।  
 अपने किये हुये कर्मोंको भोगनेके तुम स्वयं ही  
 भागी हो । फिर नहीं मालूम कि क्यों इस प्रकार  
 प्रार्थनायें करके गिड़गिड़ाया जाता है ।

भाई जैनी लोगो या संसारके अन्य धर्मात्मा  
 लोगो, यदि तुम अपनी आत्माका कल्याण  
 चाहते हो तो किसी दूसरी शक्तिका सहारा  
 छोड़कर अपने पैरोंके बल खड़े हो जाओ,  
 अपनी अपार शक्तिके कामलो, अपने कर्मोंकी  
 गतिपर विचार करो, बुरे कर्मोंपर पश्चात्ताप  
 और भले कर्मोंपर उत्साह मनाओ,

घुरे कर्मोंकी निन्दा और भले कर्मोंकी प्रशंसा करो घुरे कर्मोंको छोड़ो और अच्छे कर्मोंको ग्रहण करो अर्थात् ऐसा करने परही तुम्हारी आलोचना एक सच्ची आलोचना कही जायगी और इससे बहुत ही लाभ होगा तुम्हारी वर्तमान आलोचनाका दंग ठीक है या नहीं इस पर स्वयं ही विचार करलो अर्थात् इसकी भी आलोचना करलो हमतो इतना ही कहेंगे कि आलोचनाको आलोचनके दंगपर करो आलोचना करनेमें लोग दिखावा या रियानकी पूर्ति करना ठीक नहीं है ।



### मनकी तरंग ।

( १ )

जो भीमसे प्रभुगजकी प्रभुता प्रगट दुर्लभिके ।  
लगकर मदाधीनित हुये भन्पाय पुणे अशक्तिके ॥  
होकर द्रवित कदना तथा औदार्यपूर्वक प्रेमाने ।  
देने रहे हे स्नेह जल जो हेतु जीवन प्रेमाने ॥१॥

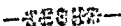
( २ )

जिनके मनुर अतिषोष युत गम्भीर भाषनका सर ।  
पटता असर मुक्तल गगन पाताहमे भी गर्वरा ॥  
जो यक्षमे शिखी जनोंदित दशदूत लगाम हो ।  
हे गन्त क्या मेघ भाभी तब दयाका काम हो ॥२॥

( ३ )

ते पुत्र " अर्जुन " जैन वाराणसी पक्षे गये ।  
हा ! हा !! बिना कारण क्यों तो गर्वने लगे गये ॥  
सोचो विचारो तो समित क्या जैनिकोंकी पद दजा ।  
निम्न स्त्रीकी तब दिगंबर देखो भी कर्त्तव्य ॥३॥

दयाराम जैन,  
दिशनी जैन महाविद्यालय-इन्दौर ।



समय समयका राग  
वा  
आवश्यकानुसार कार्य ।

( लेखक-बाबू सरजगत् बकित, देवदर )

गति स्थिति अर्थात् हिलना चलना और  
ठहरना आदि कार्य जिस प्रकार चेतना शक्ति-  
धारी मनुष्यों और पशु पक्षियोंमें हैं उस ही  
प्रकार चेतना शक्ति रहित पुद्गलमें भी हैं, इस  
ही कारण जिस प्रकार कि मनुष्य और पशु  
पक्षी संसारके अनेक कार्य बनाते और बिगाड़ते  
हैं इस ही प्रकार पुद्गल पदार्थ भी बहुत कुछ  
कर दिखाते हैं-यहिक सच पूछो तो जो महात्मा  
कार्य इस संसारमें निर्जीव पुद्गलपदार्थों द्वारा हो रहे  
हैं उनका पासंगे भी मनुष्यों और पशु पक्षियों  
द्वारा नहीं होता है, जैसा कि समुद्र और पृथ्वी  
पर सूरजकी धूपके पड़नेसे पानीका भाप बनता  
और उस भापका वायुसे हल्का होनेके कारण  
अपने ऊर्ध्व गमन स्वभावके द्वारा ऊपरको जाना  
और जाते जाते हवा लगकर कुछ गर्मी कम  
हो जानेसे उस भापका बादल रूप बन जाना  
और फिर उस बादलका हवाके वेगसे आकाशमें  
दूर-दूर पड़ने फिरना और पड़ने २ और  
भी ज्यादा हवा लगने और गरमी कम हो  
जानेसे उस बादलका पानी रूप होकर परतना  
और पृथ्वी पर पड़कर अनन्तानन्त कार्य  
बनाना बिगाड़ना और नीचानीच सब ही  
वस्तुओंमें अनेकानेक परिवर्तन कर देना और  
पक्षियोंकी कन्दाओंमें घुमकर फिर साहजिक

तक आहिस्ता २ उनमेंसे निकलते रहना और छोटी बड़ी नदियोंके रूपमें बहकर संसारके अनेकानेक कार्य साधना, यह सब कार्य निर्वाच और अज्ञानी पुद्गलके ही हैं जिनको वह अपने स्वभावानुसार बराबर करता ही रहता है ज्ञानवान मनुष्यों और पशु पक्षियोंको तो ऐसे महान कार्य न कभी हुवे और न हो सकते हैं ।

परन्तु ज्ञान न होनेके कारण पुद्गलके जो भी कार्य हैं वह सब कार्य हानि लाभ-नफा नुकसान और जरूरत बेजरूरतका विचार किये बिदून पिष्टकुल अटकल पंचू और अभाधुंय ही होते हैं यह ही कारण है कि धूपकी गरमी समुद्रके पानीसे भी भाप बनाती है और उन खेतों और वृक्षोंको सुखाकर भी भाप बनाती है जिन्हें स्वयम् ही पानीकी बहुत जरूरत है, इस ही प्रकार जब पानी बरसता है तब वह समुद्र पर भी उस ही प्रकार बरसता है जिस प्रकार कि खेतों और वृक्षोंपर और जब यह पानी पर्वतोंसे निकटकर नदीके रूपमें बहता है तब भी इस बातका विचार नहीं करता है कि जहां २ पानीकी जरूरत है वहां वहां पहुंचूं और जहां पानीसे हानि हो रही है वहां न जाऊं, बल्कि उसको तो जिधर ढाल मिलता है उधरको ही वह निकटता है और जिधर २ को ढाल मिलता चला जाता है उधर उधरको ही बहता चला जाता है ।

परन्तु चेतनाशक्तिधारी मनुष्य और पशु पक्षियोंके कार्य ऐसे अभाधुंय नहीं हैं, उनमें जितना २ अधिक ज्ञान होता है उतना २ ही उन्नत कार्य विचार पूर्वक और आवश्यकतानुसार

ही होता है । दृष्टान्त रूप यदि एक मनुष्य दौड़ा जा रहा है और सामनेसे कोई गाड़ी वा हाथी घोड़ा आदि पशु वा मनुष्योंका समूह आ रहा हो तो वह मनुष्य तुरन्त अपना दौड़ना बन्द करके वहां ही ठहर जावेगा और उनसे बचकर निकल जाने पर ही फिर दौड़ना शुरू करेगा, परन्तु यदि एक रेलगाड़ी अपने वेगमें भागी जा रही हो और सामनेसे दूसरी रेलगाड़ी भी आ रही हो और ऐंजिनइराइवर (रेल चलानेवाले) इन दोनों गाड़ियोंके सोये पड़े हों तो यह रेलगाड़ियां स्वयम् इस बातका विचार न करेंगी कि यहीं ठहर जाना चाहिये वा पीछे हट जाना चाहिये नहीं तो आपसमें लड़ कर हमारा भोर हो जावेगा बल्कि वह रेलगाड़ियां तो बिना किसी भी प्रकारका विचार किये दौड़ी ही चली जावेंगी और आपसमें लड़कर अपना और अपने मुसाफिरोंका चक्काचूर करके ही रहेंगी ।

इस ही प्रकार गाना जाननेवाला मनुष्य हर्षके समय हर्षके और सोगके समय सोगके ही गीत गावेगा, हर्षके समय सोगके और सोगके समय हर्षके गीत वह कभी नहीं गावेगा, यहांतक कि यदि उसको सोगका एक भी गीत याद न हो और हर्षके ऐसे बढ़िया २ गीत याद हों जिनसे सुनकर मनुष्य लड्डू हो जाते हों और जिनके ऊपर उसको सब जगह बहुत २ हनाम मिलता रहा हो तो भी वह सोगके समय हर्षके गीत नहीं गावेगा बल्कि झुप रहना ही ठीक समझेगा, परन्तु फोनोग्राफका प्लेट वा रिकार्ड इस बातका कुछ भी विचार न करेगा कि मेरा राग समयके अनुकूल है वा नहीं बल्कि चाहे वन

जान बालक भी उसको फोनोग्राफ पर चड़ा दे तो वह रिकार्ड अपना वह ही राग गाना शुरू कर देगा जो उसमें भरा हुआ है, चाहे वह राग हर्षका हो और सुननेवालोंको महासोग हो रहा हो और चाहे वह राग सोगका हो और सुननेवालोंको उस समय महाहर्ष हो रहा हो फोनोग्राफका वह रिकार्ड तो इन बातोंका कुछ भी ख्याल न करेगा और सब जगह अपनी एक ही टेर लगाता चला जावेगा।

गरुज जीव हो वा निर्जीव क्रिया तो इन दोनोंमें ही है परन्तु जीवकी क्रिया समय और आवश्यकताओंको विचारकर होनी है और निर्जीवकी बिना विचारे जीवोंमें भी मनुष्य ही सबसे अधिक विचारवान है इस वास्ते इसकी क्रिया तो अवश्य ही विचारपूर्वक और समयानुकूल होना चाहिये, मनुष्यका मनुष्यपन बड़े २ कार्योंके करनेसे नहीं है बल्कि विचार पूर्वक और समयानुकूल कार्य करनेसे ही है। जो मनुष्य बिना विचारे कार्य करता है वह चाहे कितना ही बड़ा कार्य कर डाले तो भी वह मनुष्य नहीं है बल्कि निर्जीव पुद्गल है और पुद्गलोंमें भी बहुत बटिया पुद्गल क्योंकि पुद्गलोंके कार्य तो ऐसे २ महान होते हैं जो मनुष्यसे किसी प्रकार हो ही नहीं सकते हैं।

जो मनुष्य समयकी आवश्यकताओंका विचार किये बिना ही कार्य करते हैं उनमें बहुधा हानिकी ही सम्भावना होती है और य.द. ऐश्व. विचारशून्य पुल कोई बड़ा काम कर बैठे हैं तब तो उनका वह कार्य ऐसा ही भयानक हो जाता है जैसा कि यशोव्रजमें नदीका महा

प्रवाह वा गरमीकी मौसममें आंधीका महा वेग वा जंगलकी दावानल अग्नि। इस कारण समयके अनुकूल न चलनेवाले विचारहीन पुरुषों और उनके कार्योंसे इसही प्रकार बचने और दूर रहनेकी जरूरत है जिस प्रकार कि हवा पानी वा अग्नि आदि पुद्गल पदार्थोंके वेगसे बचनेकी जरूरत है ऐसे पुरुषोंकी दया, कृपा और परलपकार भी अन्ये मनुष्योंके प्यारके धूमके ही समान है जो जाल नाक पर पड़कर वा कोल आदि गर्मस्थानमें ठगकर महान कष्टका ही देनेवाला हो जाता है।

समयके अनुकूल न चलनेवाला विचारहीन मनुष्य केवल दूसरोंके वास्तेही भयंकर नहीं होता है बल्कि वह अपना भी सत्यागारा कर डालता है क्योंकि संसार परिवर्तनशील है तथा एक अवस्थामें रह नहीं। कदा इस कारण यहां कभी ज्वार है और कभी भाटा अर्थात् कभी उत्तराय है और कभी चंद्राय, कभी जाड़ा है और कभी गरमी, कभी वसंत है और कभी शुद्धापा, कभी जन्म है और कभी मरण, परन्तु यदि कोई मनुष्य गरमी की मौसममें भी पड़

गुलान केवड़ेका शरबन घोल घोल कर पीता रहे तो वह अवश्य ही ठिठर कर मर जावेगा, इस ही प्रकार यदि कोई व्यापारी इस रेल और तारबर्किक जमानेमें भी अपना माल बेलगाड़ी उंट, गधे और खच्चरोंपर लाद कर ही एक देशसे दूसरे देशको ले जावे तो वह अवश्य ही नुकसान उठावेगा महामूर्ख सपना जावेगा और अपनी सारी जमा पूंजी खोकर दिवाला ही निकालेगा । गरज जो समयानुकूल नहीं चलेगा और विचारसे काम नहीं लेगा वह अश्व ही हानि उठावेगा और नाशको ही प्राप्त हो जावेगा ।

मनुष्योंके समूह ही का नाम जाति वा समाज है, इस कारण वह जाति वा समाज भी अवश्य नीचे ही को गिरेगी और दिनाशको ही प्राप्त होगी जिसके मनुष्य विचारशून्य और समयकी हवाको न परखनेवाले और न उसके अनुसार चलनेवाले होंगे और हानि हो वा लाभ, आगे गढ़ा हो वा साईं आंख मीचकर अधाधुव उस ही मार्गपर चलते रहेंगे जिसपर कि चलते आ रहे हैं । जातिको उन्नति और अवनति विशेषकर उसके पिढानों, लीडरों, मुखियाओं और धनाढ्यों पर ही अवलम्बित होती है, यदि यह लोग विचारवान और समयके अनुकूल चलनेवाले हूवे तो जाति जीवित रहती है और उन्नति कर जाती है और यदि यह लोग जड़बुद्धि अर्थात् पट्टल पदार्थोंकी तरह समय और अवसरका कुछ भी त्याग न करके सदा एक ही प्रकारका कार्य करनेवाले हों तो वह लोग स्वयं भी क्षय और नाशको

भी अपने साथ डुबा ले जावेंगे, इस कारण इन लोगोंका विचारशील होना और समयकी आवश्यकताओंको जानना बहुत ही ज्यादा जरूरी और आवश्यक है और यह तब ही हो सक्ता है जब कि जातिके साधारण लोग भी अपनी आंख खुली रखें और उस ही को अपना लीडर और पथ प्रदर्शक समझें जिसमें समया-नुकूल कार्य करनेका साहस और जातिके हानि लाभको समझनेकी बुद्धि हो ।

जैन जातिके स्त्री पुरुषों, तुम्हारी और तुम्हारे मुखियाओंकी विचारशून्यताके कारण तुम्हारा बहुत ही ज्यादा पतन हो चुका है और बड़ी शीघ्रताके साथ पतन होता चला जा रहा है, इस वास्ते जल्दी करो और अपने आपको संभालो नहीं तो कुछ दिनोंमें इस जातिका पता भी न पाओगे । प्यारे भाइयो, तुम और कुछ नहीं तो इतनी मोटीसी बात तो जांच लो कि पृथ्वीके अन्य मनुष्योंके मुकाबिलेमें तुम्हारी क्या गिनती है और वह तुम्हारी गिनती बढ़ती जा रही है या घट रही है और यदि घट रही है तो क्यों ? इस एक ही बात पर विचार करनेसे तुमको मादम हो जावेगा कि जिस पृथ्वी पर इस समय १५ करोड़ बौद्ध, ३२ करोड़ ईसाई, २५ करोड़ हिन्दू और १६ करोड़ मुसलमान हैं वहां जैनोंकेवल १२ लाख ही रह गये हैं और वह १२ लाख भी तब ही हैं जब कि सब श्वेताम्बर, दिगम्बर और स्थावकश्रामिणोंको एक समझकर इकट्ठा गिन लिया जावे, परन्तु वर्तमान अवस्थाके अनुसार इन धीनोंको एक तरह गिनकर अपनेको १२

लाख बताना तो वास्तवमें झूठमूठकी बात बनाना ही है क्योंकि जैसी पृथक्ता और अलह-दगीका व्यवहार इस समय इन तीनों सम्प्रदायोंके बीचमें हो रहा है और जो लड़ाई शगड़े इनमें चल रहे हैं उनके कारण तो यह तीनों किसी प्रकार भी एक नहीं माने जा सकते हैं, परन्तु यदि इन तीनोंको एक ही मान लें तो अन्य लोगोंकी करोड़ोंकी गिनतीके सामने क्या तुम्हारी १२ लाखकी गिनती कुछ गिनतीमें आनेके योग्य हो सकती है ।

प्यारे भाइयो, इस विषयमें सबसे ज्यादा रोना तो यह हो रहा है कि यह १२ लाखकी गिनती भी तो कायम रहने वाली नहीं है बल्कि दिन दिन घटती ही चली जा रही है, क्योंकि जमी थोड़े ही दिन हुये कि तुम्हारी गिनती १५ लाख थी, फिर १२ लाख और अन्तको अब १२ लाख ही रह गई है जिससे स्पष्ट सिद्ध है कि तुम बड़े बेगके साथ कम होते चले जा रहे हो परन्तु इसके विपरीत हिन्दुस्तानकी अन्य जातियां बहुत ज्यादा बढ़ती चली जा रही हैं; क्योंकि जब तुम १५ लाख थे तो उस समय हिन्दुस्तानके सब लोग केवल २८ करोड़ ही थे परन्तु तुम घटते गये और बढ़ बढ़ने रहे अर्थात् यह २८ करोड़से ३० करोड़ हुए फिर ३२ करोड़ हुए और अब ३५ करोड़ हैं । इस कारण जो तुम केवल तुम्हारी ही जातिको गना हुआ है और सुपके ही सुपके तुमको कमनी कर रहा है क्या उम्मीदें दृढ़ निश्चयना और उसकी दृष्टि देनेकी कोशिश करना तुम्हारे बल्ले जरूरी नहीं है

यदि नहीं है तो मानो तुम जैनजातिका अस्तित्व भी जरूरी नहीं समझते हो, परन्तु बुद्धिमानोंके यह भी सिद्धान्त है कि धर्मवालोके विना धर्म भी नहीं रह सकता है अर्थात् जैनियोंके विद्वत् जैनधर्म भी नहीं रह सकता है । भावार्थ-जैनजातिके समाप्त होजानेसे जैनधर्म भी जरूर समाप्त हो जाता है इस कारण क्या तुम जैनधर्मका भी इस पृथिवीपर कायम रहना जरूर नहीं समझते हो, यदि समझते हो अर्थात् यदि जैनधर्मका तुमको कुछ भी प्यार है तो उठो और आँहि खोलकर अपने पतनका कारण ढूँढो और अपने चालको बदल कर अपनी जातिके जीवित रहनेका उपाय करो, ऐसे महान संकटकी अवस्थामें भी यदि तुम अपनी चाल नहीं बदल सके हो और अपनी रीति नीति आवश्यकताके अनुसार नहीं बना सकते हो तो फिर तुम आपको चेतनाशक्तिधारी जीव भी मत समझो और सुख दुःख भी मत मानो बल्कि निर्जीव पुद्गलके समान ही चुपचाप गल सड़कर पर्यायान्तरको प्राप्त होनाओ ।

प्यारे पाठको, अब सोने और गफलतमें बड़े रहनेका समय नहीं है बल्कि उठने और कमर धमक कर हिम्मत बांधकर कुछ पुरुषार्थ दिखाने और अपनी जातिकी किस्तीको दृबनेमें बचा देनेका समय है । देखो तुम्हारे समानार पत्रोंमें आज-कल ऐसे समाचार जा रहे हैं और इन ही बातोंकी दाय २ मचाई जा रही है कि आज

जैन मंदिरमें घुस गये, परसों कलकत्ता जैन मंदिर लुट गया, अतरसों अमुक राज्यमें जैनियोंका रथ नहीं निकलने दिया, वहां यह अत्याचार हुआ और यहां यह दुष्टटना होगई; परन्तु मेरे प्यारे भाइयो, जबतक तुम धर्मके नाम पर आपसमें लड़ झगड़ कर और तीर्थोंकी रक्षाके नाम पर मुकदमे बानीमें लाखों रुपया लुटाकर अपनी संघ-शक्तिको तोड़ फोड़ कर उसको टुकड़े २ कर डालनेमें ही अपनी पूरी बहादुरी और तीर्थकी महंगा दिखाते रहोगे तब तक तो अवश्य-मेव तुम्हारी पेसी ही बेइज्जती होती रहेगी और तुम किसी भी गिनतीमें नहीं गिने जाओगे। तुम्हें ज्ञान आनी चाहिये इस बात पर कि मुट्ठी भर तो तुम आदमी अर्थात् हिन्दुस्तानकी ३५ करोड़की आबादीमें केवल १२ लाख तो तुम्हारे गिनती इस पर भी तुम आपसमें लड़ो और द्वेषकी अधिको ही हर वक्त प्रज्वलित रखो और फिर भी इस बातकी आशा करो कि लोग तुम्हें कुछ समझें और तुम्हारी परवाह करें। भाइयो, निर्मावमत बनो, आँखें खोलो और अपनी चालको बदलो अर्थात् सब लड़ाई झगड़े दूरकरके और अपनी २ मूँछें नीचे उतारकर आपसमें गले मिलो, अपने भाइयोंसे क्षमा माँगे और १२ लाखकी एक जाति बनाकर आगेको बढ़ो अर्थात् जैन धर्मकी सच्ची प्रभावना दिखाकर दूसरोंसे जैनी बनाओ और अपनी गिनती बढ़ाओ तब ही तुम्हारा अस्तित्व रह सकता है और तुम्हारी कदर हो सकती है नहीं तो कोई नकोड़े और घास पात तो परोके तले कुचले ही जाया करते हैं।

अब जैन धर्मकी प्रभावना सोने चान्दीका बहुमूल्य रथ निकालने और मंदिरकी दीवारोंको सोने चांदीसे लीपने और एक एक गलीमें चार चार मंदिर बनाने और बार बार प्रतिष्ठा कराकर एक एक मंदिरमें पचासों प्रतिमाओंका समूह इकट्ठा कर देने और पूजा प्रतिष्ठाओंमें लाखों रुपया लगानेसे नहीं होगी। अब जमाना बहुत कुछ बदल गया है, लोगोंकी दृष्टिमें अब इन बातोंकी कुछ भी कदर नहीं रही है। अब तुम्हारे इन आडम्बरोंको देखकर लोगोंपर जैनियोंका और जैन धर्मका महत्त्व नहीं पड़ता है बल्कि उलटी अभभावना होती है, इन बातोंमें रुपया लुटाते देखकर अब लोग तुमको जड़बुद्धि समझते हैं और अपसोस करते हैं कि अब तो गरीबसे गरीब छोटी छोटी जातियों भी अपने अपने कालिज बना लिये हैं परन्तु धर्मके नामपर इतना धन लुटानेवाले जैनियोंका तो एक भी कालिज दिखाई नहीं देता है जिससे वह लोग यह ही समझते हैं कि जैनधर्ममें ज्ञानशून्य रह कर मिथ्या द्वाकोत्पत्तियोंको मानते रहना ही जल्दारी समझा जाता होगा, इस प्रकार समयकी गति बदलनेसे आनकल जैनियोंके प्रभावनाके कार्योंसे उलटी अभभावना होने लगी है। इस कारण प्यारे भाइयो, अब आप भी समयानुकूल अपनी गतिको बदल कर और सबके कालिजोंसे बढ़िया कालिज बनाकर, मिले २ में हाईस्कूल खोल कर और ग्राम २ में बालक बालिकाओंकी पाठशाला जारी करके अपना पठनक्रम बनाकर और उसके अनुसार पुस्तकें तैयार कराकर दुनियाके लोगोंको दिता दो कि जैनी ही सबसे ज्यादा विद्याकी कदर

करनेवाले और ज्ञान परही भरोसा रखने वाले हैं । अब तो प्यारे माइयो, ऐसाही कर दित्तोनेमे तुम्हारी प्रभावना हो सकी है और तुम किसी गिनतीमें आने लायक हो सके हो । बाद रखो कि जिस प्रकार पिछले समयमें तुमने लाखों और करोड़ों रुपयेकी लागतके बड़े-२ विशाल मंदिर बना कर और बड़े-२ भारी धर्म उत्सव करा कर जगतके लोगोंको भीत लिया था और चक्रबोध करके उनके दिलोंपर अपना भारी सिक्का जमा दिया था, इस ही प्रकार आजकल जबतक तुम लाखों और करोड़ोंकी लागतके विशाल कालिज बनाकर और घर-२ विद्याका प्रचार करके न दिखा दोगे तब तक तुम्हारी प्रभावना कदाचित भी न हो सकेगी और न तुम किसी गिनतीमें आन कोगे ।

इसही प्रकार अब जैनधर्मका प्रचार भी अनेक प्रकारकी भाषा और अनेक प्रमाणकी विद्याओंके ज्ञानकर और समयकी आवश्यकताओंको मानने वाले पण्डित तय्यार करके उनके द्वारा बहुत ही सरल भाषामें सर्व साधारणरो जैन सिद्धान्तोंको बताने और जैन तत्त्वोंका महत्त्व समझाने और आजकलकी जेलन प्रणालीके अनुसार अनेक प्रभावशाली पुस्तकोंके तय्यार किये जाने और उनको सर्व माधुर्य तक पहुंचाने और योग्य विद्वानोंद्वारा दैनिक और साप्ताहिक पत्रोंके निबन्धनोंमें ही होगा ।

विशालकर बीच बाजार गंदी गालियां मझी हने फिरानेको बहुत ही बड़ा नीच काम समझते हैं, इस ही प्रकार आज कलके लोग दस दस बारह बारह बरसके बालक बालिकाओंका विवाह करदेना भी महा मूर्खता ही बताते हैं और जिंदे माता पिताकी कुछ भी सेवा न करके मरने पर उनके नुकतेमें हजारों रुपया लगाकर सारे नगरको तर माल खिलानेको भी आजकलके लोग शान्दश्रुतता और बुद्धिहीनताका ही कार्य मानते हैं और नुकसान करनेवालोंको घटिया मनुष्योंमें ही गिनते हैं, इस ही प्रकार आजकलके लोग वेदा वेदोंके विवाहमें बड़ी भारी धूम मचाने और हजारों रुपया खर्च कर डालनेको भी अच्छा नहीं जानते हैं बल्कि यह सब रुपया वेदा वेदोंके नामसे व्यापारमें लगाकर उनकी जीवन यात्रा आमान बना देनेको ही ज्यादा जरूरी समझते हैं और घरकी स्त्रियोंको सोने चांदीके जेवरने लदकर उनका अद्भुत म्मान बनानेकी जगह अब इस रुपयेके द्वारा मृद कमकर उन मृदके द्वारा उनके स्वास्थ्य और ज्ञानकी वृद्धि करते रहनेको ही उनकी सही सनावट मानने हैं निम्नो असल रकार भी बनी रहे और यह स्त्रियां भी ज्ञानदान और वरदान संतान उत्पन्न करनेके योग्य हो जायें ।



और लाभदायक रहे हों परन्तु यदि वह आज कलके समयमें हानिकारक हैं तो उनको छोड़ देनेमें और जो चाल और जो व्यवहार आज कलके समयके अनुकूल हों उनको ग्रहण करनेमें तुमको जरा भी विलम्ब नहीं करना चाहिये क्योंकि श्री जिनवाणी भी तुमको देशकालके ही अनुसार प्रवर्तनकी आज्ञा देती है और तुम्हारा मनुष्यपना और जीवधारी होना भी तुमको यह ही बताता है, और यदि तुम अपनी चाल नहीं बदलने हो तो यह भी समझ लो कि तुम श्री तीर्थंकर भगवानकी आज्ञाको लोप करते हो। श्री जिनदेवके बताये हुये उपदेशसे पुराई मुख होते हो और ज्ञानधारी जीवकी श्रेणी-से नीचे गिरकर ज्ञानशून्य निर्जीव पुद्गलकी श्रेणीमें आते हो, क्योंकि अनेक प्रकारकी अशुभ २ क्रिया जीव भी करता है और शुभल भी, परन्तु जीवकी क्रिया समयानुकूल और विचारपूर्वक होती हैं और निर्जीव पुद्गलकी अशुभ और संघर्ष ही-कालमें एक समान ।

विशेष नया लिखा जावे, आप ही अपने हानि लाभ और भजे, बुरेका विचार कर लें और जो लाभदायक हो उस ही चालको ग्रहण कर लें ।

नई फसल ताजा माल

आ गया ।

पवित्र काश्मीरी केशर

मूल्य १॥ १॥ तोला

पता—मैनेजर दि. जैन पुस्तकालय मुरत

जैन धर्मके विषयमें अजेन

विद्वानोंकी सम्मतियां १

( संप्रहर्ता-पं० विहारीलालजी बी० ए० जे०, सी० टी०, अमरोहा । )

( १ )

श्रीयुत वरदाकान्त मुख्योपाध्याय एम० ए० के बंगला लेखके श्रीयुत नाथूरामजी प्रेसी द्वारा अनुवादित हिन्दी लेखसे उद्धृत कुछ वाक्य ।—

( १ ) हमारे देशमें जैन धर्मकी आदि, उत्पत्ति, शिक्षा, नेता और उद्देश्य सम्बन्धी कितने ही भ्रान्तमत प्रचलित हैं इसलिए हम लोग जैनियोंसे घृणा करने रहते हैं....। इसलिए मैं इस लेखमें भ्रमसमूह दूर करनेकी चेष्टा करूँगा ।

( २ ) जैन निरामिषभोजी ( मांसत्यागी ) क्षत्रियोंका धर्म है । “ अहिंसा परमो धर्मः ” इसकी सार शिक्षा और जड़ है । इस मतमें “ जीव हिंसा नहीं करना, किसी जीवको कष्ट नहीं देना ” यही श्रेष्ठ धर्म है ।

( ३ ) शंकराचार्य महाराज स्वयं स्वीकार करते हैं कि जैनधर्म अति प्राचीन कालसे है । ये वाद-

१ नोट—इस विषयका पूर्व भाग इसी मासिक पत्र, ' दिगम्बर जैन, ' वर्ष ९, वीर सं० २४४२ के खाम अंकमें प्रकाशित हो चुका है ।

\* यह लेख मुजगती भाषाके प्रथम वर्षके “ जैन ” नामक समाचार पत्रके अंक ३९, ४०में सन् १९१० मुजगती भाषामें प्रकाशित हो चुका है ।

रायण व्यासके वेदान्त सूत्रके भाष्यमें कहते हैं कि दूसरे अध्यायके द्वितीय पादके सूत्र ३३-३६ जैनधर्म ही के सम्बन्धमें हैं। शारीरिक नीमांसाके भाष्यकार रामानुजनीका भी यही मत है।

(४) योगवाशिष्ठ रामायण वैराग्य प्रकरण, अध्याय १५ श्लोक ८में श्री रामचन्द्रनी जिन-द्रके सदृश शान्त प्रकृति होनेकी इच्छा प्रकाश करते हैं, यथा:—

नाहं रामो न मे वाञ्छा भावेषु च न मे मनः ।

यान्त्रिमावितुमिच्छामि स्वात्मर्षाय जिनो यथा ॥

(५) रामायण, बालकांड, सर्ग १४, श्लोक २२में राजा दशरथने श्रमणगणों (अर्थात् दिगम्बर जैनमुनियों)का अतिथिसत्कार किया, ... लिखा है:—

तापसा भुञ्जते चापि श्रमणा भुञ्जते तथा ।

भूषण टीकामें श्रमण शब्दका अर्थ दिगम्बर (अर्थात् सर्व वस्त्रादि रहित जैनमुनि) किया है यथा:—

श्रमणा दिगम्बराः श्रमणा यातवमना इति निघण्टुः ।

(६) शाकटायनके उणादि सूत्रमें जिन शब्द व्यवहृत हुआ है:—

इन्द्रगिज्ञ त्रितीरुपविभ्योनकु, सूत्र २५५, पाद ३

सिद्धान्त कौमुदीके कर्त्ताने इस सूत्रकी व्याख्यामें "जिनोऽर्हेन्द्र" कहा है।

भेदनीक्षेपमें भी 'जिन' शब्दका अर्थ 'अर्हेन्द्र' जैन धर्मके आदि प्रचारक है।

वृत्तिकारणप भी 'जिन'के अर्थमें अर्हेन्द्र कहते हैं, यथा उणादि सूत्र, सिद्धान्त कौमुदी।

शाकटायनने किस समय उणादि सूत्रकी रचना की थी! चाणक्यकी निरुक्तमें शाकटायनके नामका

उल्लेख है। और पाणिनिके बहुत समय पहिले निरुक्त बना है इसे सभी स्वीकार करते हैं। और महामाष्य प्रणेता पतञ्जलिके कई सौ वर्ष पहिले पाणिनिने जन्म ग्रहण किया था। अतएव अब निश्चय है कि शाकटायनका उणादि सूत्र अत्यन्त प्राचीन ग्रन्थ है।

(७) बौद्ध शास्त्रमें जैनधर्मको निर्ग्रन्थोंका धर्म बतलाया है। और यही निर्ग्रन्थ धर्म बौद्धधर्मके बहुत पहिले प्रचलित था।

(८) डाक्टर राजेन्द्रलाल मित्र योग सूत्रकी प्रस्तावनामें कहते हैं कि सामवेदमें एक बलिदानविरोधी यति (जैनमुनि)का उल्लेख है। उसका समस्त ऐश्वर्य भृगुको दान कर दिया गया था, क्योंकि पेतैरय ब्राह्मणके मतमें बलिदानविरोधी यतिको श्रगालके सन्मुख प्रक्षिप्त करना चाहिये। मगध चाक्रीकटमें यज्ञ-दानादिका विरोधी एक सम्प्रदाय था, (देखो ऋग्वेद अष्टक ३, अध्याय ३, वर्ग २१ ऋचा १४। तथा ऋग्वेद, म० ८, अ० १०, सूक्त ८९, ऋचा ३, ४। तथा ऋग्वेद, म० २, अ० २, सू० १२, ऋचा ९। ऋग्वेद अष्टक ६, अध्याय ४, वर्ग ३२, ऋचा १०, इत्यादि)।

(९) मांडूय दशम सूत्र ६- "अविशेषश्रो-  
नयोः" अर्थात् दुःख और संशय दूर करनेवाले उदयमान और वैदिक उपायोंमें कोई भेद नहीं है। क्योंकि वैदिक बलिदान एक निन्द्य प्रथा मान्य है। यज्ञमें पशु हनन करनेमें कर्त्तव्य होता है, पशुहत्या तत्कल्प काय कुछ नहीं होता ॥

“ना हिंसादासर्वभूतानि ।

“अग्निपोनीयं पशुमालभेत् ।

“दृष्टिवादानुश्रविकासह्यविशुद्धक्षयातिशययुक्तः”

सांख्यकारिका ॥

गौड़पाद सांख्यकारिकाके भाष्यमें निम्न लिखित श्लोक उद्धृत करके कपिल ऋषिके मतका समर्थन करते हैं—

ताते तद्बहुशोभ्यस्तं जन्मजन्मान्तरेष्वपि ।

त्रयी धर्ममधमादयं न सम्यक्प्रतिभाते मे ॥

अर्थात्—हे पिता ! वर्तमान और गत जन्ममें मैंने वैदिक धर्मका अभ्यास किया है; परन्तु मैं इस धर्मका परंपराती नहीं हूँ क्योंकि यह अधर्म-पूर्ण है ।

(१०) कपिल सूत्रका भाष्यकार विज्ञान मिश्र “भाकण्डेय पुराणसे” निम्नलिखित श्लोक उद्धृत करके कपिलमतका समर्थन करता है—

तस्मादास्यान्यदं तावद्द्वेयं दुःखवन्निधिम् ।

अथी धर्ममधमादयं किंपाकफलसन्निभम् ॥

अर्थात्—“हे तात ! वैदिक धर्मको सब प्रकार अधर्म और निष्ठुरता पूर्ण देखकर मैं किस प्रकार इसका अनुकरण करूँ ? वैदिक धर्म किंपाक फलके समान बाह्यमें सौन्दर्य किन्तु भीतर हलाहल (विष) पूर्ण है” ।

(११) “महाभारत” का मत इस विषयमें जाननेके लिये अधमेध पर्व, अनुगीत ४६, अध्याय ३, श्लोक १२ की नीलकण्ठ वृत्त टीका पढ़िये ।

(१२) प्राचीन कालमें दिगंबर ऋषि ऋषभदेव “अहिंसा परमो धर्मः” यह शिक्षा देते थे । उनकी शिक्षाने देव मनुष्य और इतर प्राणियों अनेक उपकार साधन किये हैं ।

उस समयमें ३६३ पुरुष पाण्ड धर्मप्रचारक भी थे । चार्वाकके नेता “बृहस्पति” उन्हींमेंसे एक थे । मेक्समूलर आदि युरोपीय पण्डितोंकी भी यही धारणा है जो उनके सन १८९० के लेखसे प्रकट है जिसे ७६ वर्षकी उमरमें उन्होंने लिखा है ।

(१३) अतएव प्राचीन भारतमें नाना धर्म और नाना दर्शन प्रचलित थे इसमें कोई संदेह नहीं है ।

(१४) जैनधर्म हिन्दूधर्मसे सर्वथा दूरतंत्र है । उसकी शाखा वा रूपान्तर नहीं है । विशेषतः प्राचीन भारतमें किसी धर्मान्तरसे कुछ ग्रहण करके एक नूतन धर्म प्रचार करनेकी प्रथा ही नहीं थी । मेक्समूलर का भी यही मत है ।

(१५) लोगोंका यह भ्रमपूर्ण विश्वास है कि पार्श्वनाथ जैनधर्मके स्थापक थे । किन्तु इसका प्रथम प्रचार ऋषभदेवोंने किया था इसकी पुष्टिके प्रमाणोंका अभाव नहीं है ।

(१) बौद्ध लोग महावीरको निर्ग्रन्थों अर्थात् जैनियोंका नायक मात्र कहते हैं स्थापक नहीं कहते ।

(२) जर्मन डाक्टर जैकोबी भी इसी मतके समर्थक हैं ।

१ इनके निर्वाणको वागसे २१९३ वर्ष हो चुके । यह जैनियोंके तैत्तिरीय तीर्थंकर थे जो चौबीसवें अंतिम तीर्थंकर महावीर स्वामीसे २५० वर्ष पूर्व हुए ।

२ यह प्रथम तीर्थंकर अर्थात् संसार समुद्रसे तिर-नेका मार्ग यत्नानेवाले थे जो अन्तिम तीर्थंकर महावीर स्वामीसे ४२ सदस्र वर्ष कम दश नील सागर वर्ष पूर्व हुए । इनका समय इनके सम्प्रदाय से प्रसिद्ध है ।

३ हिन्दूशास्त्रों और जैनशास्त्रोंका भी इस विषयमें एक मत है । भागवतके पाँचवें स्कन्धके अध्याय २-९ में ऋषभदेवका कथन है । जिसका भावार्थ यह है:-

चौदह मनुओंमेंसे पहले मनु स्वयंभूके प्रपौत्र नाभिका पुत्र ऋषभदेव हुआ जो दिगम्बर जैन सम्प्रदायका आदिप्रचारक था । इनके जन्मकालमें जगतकी चाल्यअवस्था थी इत्यादि ।

भागवतके अध्याय ६ श्लोक ९-११में लिखा है कि "कौंक, बेंक और कुटकराना अर्हत्, ऋषभके चरित्र श्रवण करके कल्युगमें ब्राह्मण-विरोधी एक नवीन धर्मके प्रचारका मानस करेगा" किंतु हमने अन्य किसी भी ग्रन्थमें ऐसे किसी रानाका नाम नहीं पाया । अर्हत्को अन्य कोई भी ग्रन्थकार कौंक, बेंक और कुटकराना नहीं कहता ।

अर्हत्का अर्थ (अर्ह भानुसे) प्रशंसाई तथा पूज्य है । शिवपुराणमें अर्हत् शब्दका व्यवहार हुआ है किंतु अर्हत् नामसे कोई रानाका नाम नहीं है । ऋषभ ही को अर्हत् कहते हैं । अर्हत् राना कल्युगमें जैन-धर्मका प्रचारक होता तो वाचस्पत्य (कोषकार)ने ऋषभको जिनदेव वा शब्दार्थ चित्तामणिने उन्हें आदि जिनदेव कभी नहीं कहा होता । किसी किसी उपनिषद्में भी ऋषभको अर्हत् कहा है ।

भागवतके रचियताने क्यों यह बात कही तो कहा नहीं जा सकता ।

४. महाभारतके मुष्णिग्यात टीकाकार शान्ति-पते, मोक्षपते, अन्वय १६१ श्लोक २० की टीकामें कहते हैं:-

अर्हत् अर्थात् जैन ऋषभके चरित्रमें सुप्रसिद्ध हो गये थे-यथा:-

“ऋषभादीनां महायोगितामाचार  
दृष्टव अर्हताद्यो मोहिताः”

इस प्रकार जाना जाता है कि हिन्दू शास्त्रोंके मतसे भी ऋषभ ही जैन धर्मके प्रथम प्रचारक थे ।

५ डा० फुहरर ( Dr. Führer ) ने जो मथुराके शिलालेखोंसे सगस्त इति वृत्तका रोज किया है उसके पढ़नेसे जाना जाता है कि पूर्वकालमें जैनी ऋषभदेवकी मूर्तियाँ बनाते थे । इस विषयका एपिग्राफिया इंडिका (Epigraphia Indica Vols. I & II) नामक ग्रन्थ अनुवाद सहित मुद्रित हुआ है । यह शिलालेख दो हजार वर्ष पूर्व कनिष्क, हुवन्क, वासुदेवादि राजाओंके राजत्वकालमें लोपे गये हैं ।

(देखो उपरोक्त ग्रन्थका भाग १, पृष्ठ ३८९, नं० ८१४ और भाग दो पृष्ठ १०६, २०७, नं० १८ इत्यादि) । अतएव देखा जाता है कि दो हजार वर्ष पूर्व ऋषभदेव प्रथम जैन तीर्थंकर बहकर स्वीकार किये गए हैं । महाभारतका मोक्षकाल ईसवी सन्में ६२६ वर्ष पहिले और पार्थनायक ७७६ वर्ष पहिले निर्दिष्ट है । यदि ये जैनधर्मके प्रथम प्रचारक होंगे तो दो हजार वर्ष पहिले के योग ऋषभ देवकी मूर्तिकी पूर्णा नहीं करी ।

(१९) जैनधर्मकी सार शिक्षा यह है:-

१. इस जगत्का सुख, शान्ति, और ऐश्वर्य मनुष्यके चरम उद्देश्य नहीं है । संसारमें निरुपमा वन सके निर्मित रहना चाहिये ।

२. आत्माकी मंगल कामना करो ।

(२)

३. तुम जब कभी किसी सत्तायके करनेमें तत्पर होओ तब तुम कौन हो और क्या हो यह बात स्मरण रहो ।

४. यह धर्म परलोक मोक्ष विश्वास नहीं योगियोंका है ।

५. सांसारिक भोगविलासकी इच्छाओं जैन-धर्मकी विरोधी हैं ।

६. अभिमानत्याग, स्वाध्याय और विद्या-शुश्रूषा इन धर्मकी भित्तियाँ हैं ।

(१७) जैनधर्म मलिन आचरणकी समष्टि है, यह बात सत्य नहीं है । दिगम्बर और श्वेता-म्बर दोनों श्रेष्ठियोंके जैन शुद्धाचरणी हैं ।

(१८) जैनधर्म ध्यान और भावको लिये हुए है और मोक्ष भी इसी पर निर्भर है ।

(१९) जैन मुनियोंकी गन्तावस्था और गन्त-मूर्ति पूजा इनका प्राचीनत्व सप्रमाण सिद्ध करती है, क्योंकि मनुष्य आदि अवस्थामें नम थे ।

(२०) ईसाइयोंके आदि पिता "आदिम" और आदिमाता 'इम' (होआ) निष्पाप अवस्थामें नम ही थे ।

(२१) हिन्दू धार्मिक भी शिव दिगम्बर (वज्रादि त्यागी, ) दत्तात्रय दिगम्बर और

अवधूत दिगम्बर सम्प्रदाय वर्णित हैं इत्यादि । \*

नोट— यह पूर्ण लेख बहुत बड़ा है । जिसे मद्रासवासी इत्यादि इस पुस्तकके जैनधर्मकी सं-विषयक भाषाओं, समस्त दत्तात्रय-विषयक भाषाओं नामक पुस्तक के माध्यम से निजका मुल्य है और जिसमें इस लेख सहित आठ लेख प्रकाशित हुये हैं ।

१० रा० बालदेव गोविन्द आपटे  
की० ए० इन्दौर निवासीके

व्याख्यानका सारांश \*

जिसमें ये सबसे पहले एक सुप्रसिद्ध जैनान्तर्य श्री मद्रासकलंक देवके निम्नलिखित श्लोकको पढ़कर और उसका अर्थ समझकर उसके महत्व और निष्पक्षतापूर्ण भावको दर्शाते हैं:—

(१) ये शिखे चरिषे जगज्जलनिषे महिःपारदथाः ।  
पौर्णमासिकं वचनमनुमते जिष्णुकलंकं यदीयम् ॥

तं च तानुमन्थं समस्तगुणनिधिं ध्वस्तदोषद्विपन्तम् ।  
बुद्धं वा इन्द्रमन्तं शतरत्ननिधयं केचन वा तान् वा ॥

अर्थात् जानने योग्य ऐसे सम्पूर्ण विश्वको जिसने गाना, संसाररूपी महासागरकी तरंगे दूसरी तरफ तक जिसने देखीं, जिसने वचन परस्पर अविरुद्ध, अनुपम और निर्दोष हैं, जो सम्पूर्ण गुणोंका निधि, साधुओं करके भी वन्दनीय है जिसने राग द्वेषादि बन्धन रहित शत्रुओंको नष्ट कर दिये हैं और जिसकी शरणमें सबहुँ लोग आते हैं, ऐसा जो कोई पुरुष विशेष है उसको मेरा नमस्कार हो; फिर चाहे वह शिव हो, ब्रह्मा हो, विष्णु हो, बुद्ध हो अथवा वह ज्ञान (महावीर) हो । पूर्वोक्त श्लोकमें श्रीमद्रासकलंक देवने ऐसी स्तुति की है ।

\* यह व्याख्यान उपरोक्त महाभाषणे बम्बईके हिन्दू मुनियन-कर्मसे दिगम्बर १९०३ ई० में दिया था ।

१. १० श्लोक—  
क्षुद्रिषासाजगत्कलन्तकभयस्त्वयः ।  
न रागद्वेषमोदध मत्वातः स प्रवीर्यते ॥  
अर्थ—भूख, प्यास, बुढ़ापा, रोग, जन्म,

(२) हिमालयसे लेकर कन्याकुमारी तक किंव-  
हुना उससे भी आगे सीलोन द्वीप तक व  
करांचीसे लेकर कलकत्ता तक अथवा उससे भी  
आगे श्याम ब्रह्मदेश, जावा आदि देशमें जैन-  
धर्मी लोग फैले हुए मिलते हैं।

(३) हिन्दुस्तानके सम्पूर्ण व्यापारका एक  
तिहाई भाग जैनियोंके हाथमें है।

(४) बड़े २ जैन कार्यालय, भव्य जैनमंदिर,  
अनेक लोकोपयोगी संस्थाएँ हिन्दुस्तानके बहुतसे  
बड़े २ नगरोंमें हैं।

(५) प्राचीनकालसे जैनियोंका नाम इतिहास  
प्रसिद्ध है और जैनधर्मके अनेक राजा हो  
गए हैं।

(६) स्वतः अशोक ही बौद्धधर्म स्वीकार कर-  
नेसे पहले जैनधर्मानुयायी था।

(७) कर्नेल टाड साहबके राजस्थानीय इति-  
हासमें उदयपुरके घरानेके विषयमें ऐसा लिखा  
है कि "कोई भी जैनयति उक्त स्थानमें जब  
शुभागमन करता है तो रानी साहिब उसे आदर  
पूर्वक लाकर योग्य सत्कारका प्रबन्ध करती हैं।  
इस विनय प्रबन्धकी प्रथा यहां अब तक  
जारी है।

(८) प्राचीन कालमें जैनियोंने उत्कट पराक्रम  
वा राज्यकार्यभारका परिचायन किया है आज

कलके समयमें इनकी राजकीय अवनति मात्र  
दृष्टिगोचर होती है।

(९) प्राचीन जैन बाह्मय संस्कृत बाह्मयके  
प्रायः चराचर था। धर्माभ्युदय महाकाव्य, हर्षोद्दि-  
काव्य, पार्श्वभ्युदय काव्य, यशस्तिलक चम्पू  
आदि काव्य ग्रन्थ, जैनेन्द्र व्याकरण, -  
काशिका वृत्ति व पंजिका, रम्भामंजरी नाटिका  
प्रमेयकमलमार्तंड सरीखे न्याय शास्त्र  
विषयक ग्रन्थ, हेमचन्द्र सरीखे कोष, वः इनके  
सिवाय जैन पुराण, धर्मग्रन्थ, इतिहास ग्रन्थ  
आदि असंख्य शास्त्र थे। इनमेंसे बहुत थोड़े  
प्रकाशित हुए हैं और सैकड़ों ग्रन्थ अभी अज्ञात  
हो रहे हैं ॥

(१०) इन संस्कृत ग्रन्थोंके अतिरिक्त अन्य  
प्रकारसे भी जैनियोंने बाह्मयकी बड़ी भारी  
सेवा की है।

(११) दक्षिणमें तामिल व कन्नड़ी (कर्ना

काण्डेश) आदि क्षेत्रों कुल्लोराव वदेर राज्यधिया  
हुए जिसकी साक्षी अनेक जैन इतिहास ग्रन्थों  
तथा किसी २ अनेक शास्त्रों व इतिहास ग्रन्थों  
में मिलती है।

÷ शास्त्राचरण व्याकरण विज्ञान मत कई शास्त्रों  
पाणिनीय व्याकरणने भी ग्रहण किया है और अन्य  
ग्रन्थों में है। तथा और भी अनेक जैन ग्रन्थों  
में है।

दकी) इन दोनों भाषाओंके जो व्याकरण प्रथम प्रस्तुत हुए हैं वे जैनियोंने ही किये थे १ ।

(१२) प्राचीन कालके भारतवर्षीय इतिहासमें जैनियोंने अपना नाम अजर अमर रखा है २ ।

(१३) वर्तमान शांतिके समय व्यापार वृद्धिके कार्योंमें अग्रेसर होकर इन्होंने (जैनियोंने) अपना प्रताप पूर्ण रीतिसे स्थापित किया है ।

(१४) हमारे जैन बांधवोंके पूर्वज प्राचीन-कालमें ऐसे २ स्मरणीय कृत्य कर चुके हैं तो ही जैनी कौन हैं, उनके धर्मके मुख्यतत्त्व कौन २ से हैं इसका परिचय बहुत ही कम लोगोंको होना बड़े आश्चर्यकी बात है ।

(१५) "न गच्छेज्जैनमंदिरम्" अर्थात् जैन-मंदिरमें प्रवेश करने मात्रमें भी महापाप है; ऐसा निषेध उस समय कठोरताके साथ पाले जानेमें जैन मंदिरकी भीतकी आड़में क्या है इसकी खोज करे कौन ? ऐसी स्थिति होनेसे ही जैन धर्मके विषयमें झूठे गपोंड़े उड़ने लगे । कोई कहता है जैन धर्म नास्तिक है, कोई कहता है बौद्ध धर्मका अनुकरण है, कोई

कहता है जब शंकराचार्यने बौद्धोंका परभाव किया तब बहुतसे बौद्ध पुनः ब्राह्मण धर्ममें आ गये परन्तु उस समय जो थोड़े बहुत बौद्धधर्मको ही पकड़े रहे उन्होंने वंशज यह जैन हैं, कोई कहता है कि जैन धर्म बौद्ध धर्मका शेष भाग तो नहीं किन्तु हिन्दू धर्मका ही एक पंथ है । और कोई कहते हैं कि नग्न देवको पूजनेवाले जैनी लोग ये मूलमें आर्य ही नहीं हैं किन्तु अना-र्योंमेंसे कोई हैं । अपने हिन्दुस्तानमें ही आज चौबीस सौ वर्ष पूर्वसे पड़ोसमें रहनेवाले धर्मके विषयमें जब इतनी अज्ञानता है तब हजारों कोससे परिचय पानेवाले व उससे मनोऽनुकूल अनुमान गढ़नेवाले पाश्चिमात्योंकी अज्ञानता पर तो हंसना ही क्या है ।

(१६) ऋषभदेव जैन धर्मके संस्थापक थे यह सिद्धांत अपनी भागवतसे भी सिद्ध होता है । पार्श्वनाथ जैन धर्मके संस्थापक थे ऐसी कथा जो प्रसिद्ध है वह सर्वथा भ्रूल है । ऐसे ही बर्द्ध-मान अर्थात् महावीर भी जैनधर्मके संस्थापक नहीं हैं । वे २४ तीर्थोंमेंसे एक प्रचारक थे ।

(१७) जैनधर्ममें अहिंसा तत्त्व अत्यन्त श्रेष्ठ माना गया है । बौद्ध धर्म व अपने ब्राह्मण धर्ममें भी यह तत्त्व है तथापि जैनियोंने इसे जित सीमा तक पहुंचा दिया है वहां तक जरापि कोई नहीं गया है ।

(१८) अपने धर्ममें जिस प्रकार १६ संस्कारोंका वर्णन है उसी प्रकार जैनियोंमें ६३ क्रिया हैं, उनमें बालकके केशवाय अर्थात् शिखा रखना, पांचवें वर्षमें उपाध्यायके पास विद्यारंभ

(१) कर्पाटिक भाषाका बहुत बड़ा व्याकरण श्रीमद्भास्करदेव रचित है साढ़बने छत्रा भी दिया है । परन्तु यह सब विलायतके विद्याविद्याधि-पोंने मंगा लिया है । इस देशमें मिलना अब दुर्लभ है ।

(२) इसी देवदेवे न० १ में महामहोपाध्याय का० यतीशचन्द्र एम० ए० पी० एच० डी० एफ० आ० आर्दे० एम० विद्याभूषणकी सम्मति देते ।

(३) न पेटेषावनी भाषा प्राणः कथ्यतेऽपि ।  
रक्षितानीह भानोपि न गच्छेज्जैनमंदिरम् ॥

करना, आठवें वर्ष गलेमें यज्ञोपवीत ( जनेऊ ) पहिरना, ब्रह्मचर्य पूर्वक विद्याभ्यास करते रहना इत्यादि विषय जैसे अपने धर्मशास्त्रमें हैं वैसे ही जैन शास्त्रोंमें भी हैं<sup>१</sup>। परन्तु हम लोगोंमें जैसे सम्पूर्ण संस्कार नहीं किये जाते हैं वैसे ही जैनियोंको भी दशा है, संकड़ों जेनी तो यज्ञोपवीत संस्कार तक नहीं करते।

(१८) जैन शास्त्रोंमें जो यति धर्म कहा गया है वह अत्यन्त उत्कृष्ट है इसमें कुछ भी शंका नहीं।

(१९) जैनियोंमें स्त्रियोंको भी यति वीर्या लेकर परोपकारी कृत्योंमें जन्म व्यतीत करनेकी आज्ञा है। यह सर्वोत्कृष्ट है। हिंदू समाजमें इस विषयमें जैनियोंका अनुकरण अवश्य करना चाहिये।

वह ईश्वरका अस्तित्व नहीं मानते ऐसा नहीं है। किंतु ईश्वरकी छति सम्बन्धि विषयमें उनकी और हमारी समझमें कुछ भेद है। इस कारण जेनी नास्तिक हैं ऐसा निर्दिष्ट व्यर्थ अथवा उन विचारों पर लगाया गया है।

अतः यदि उन्हें नास्तिक कहेंगे तो;

न कर्तव्यं न कर्माणि लोकेऽस्य सृजति प्रभुः।

न कर्मफलसंयोगेण स्वाभावित्तु प्रयतोते ॥

नास्तिकस्तत्तत्तत्त्वां न करणं गृह्णन् विभुः

श्रज्जानो नाशुते जानं तेन मुक्तान्ति जन्तवः ॥\*

ऐसा कहनेवाले श्री कृष्णजीको भी नास्तिकोंमें गणना करना पड़ेगी।



(२२) सृष्टिका कर्ता कोई ईश्वर है कि नहीं, यह विषय प्रथमसे ही वादग्रस्त है। शास्त्रज्ञोंका इस विषयमें आज तक एक मत नहीं हुआ।

(२३) मूर्त्तिका-पूजन श्रावक अर्थात् गृहस्थाश्रमी करते हैं मुनि नहीं करते। श्रावकोंकी पूजनविधि प्रायः हम ही लोगों सरीखी है।

(२४) हमारे हाथसे जीव हिंसा न होने पावे इसके लिये जैनी जितने दखते हैं इतने बौद्ध नहीं दखते। बौद्धधर्मी देशोंमें मांसाहार अधिकताके साथ बारी है। आप स्वतः हिंसा न करके दूसरेके द्वारा मारे हुए, बंदरे आदिका मांस खानेमें कुछ हर्ज नहीं ऐसे सुमीतेका अहिंसा तत्व जो बौद्धोंने निकाला था वह जैनियोंको सर्वथा स्वीकार नहीं।

(२५) बौद्धधर्मके सम्बन्धमें अनेक ग्रन्थ उपलब्ध हुए हैं। इस धर्मका परिचय सबको हो गया है। परन्तु जैन धर्मके विषयमें वैसा अभी तक कुछ भी नहीं हुआ है। बौद्धधर्म चीन, तिब्बत, जापानादि देशोंमें प्रचलित होनेसे और विशेष कर उन देशोंमें उसे राज्याश्रय मिलनेसे उस धर्मके शास्त्रोंका प्रचार अति शीघ्र हुआ, परन्तु जैन धर्म जिन लोगोंमें है वे प्रायः व्यापार व्यवहारमें लगे रहनेसे धर्म ग्रन्थ नकाशन संशील कृत्यकी ताक लक्ष देनेके लिये अवकाश नहीं पते इस कारण अगणित जैन ग्रन्थ अप्रकाशित पड़े हुए हैं ॥

(२६) यूरोपियन ग्रन्थकारोंका लक्ष भी अद्यापि इस धर्मकी ओर इतना खिंचा हुआ नहीं दिगई बना यह भी इस धर्मके विषयमें हम लोगोंका कर्तव्य एक कारण है।

(२७) जैन धर्मके काल निर्णय सम्बन्धमें दूसरी ओरके प्रमाण भी आने लगे हैं, कोल द्रुक साहिब सरीखे पंडितोंने भी जैन धर्मका प्राचीनत्व स्वीकार किया है। इतना ही नहीं किन्तु बौद्धधर्म जैनधर्मसे निकला हुआ होना चाहिये ऐसा विधान किया है। मिस्टर एडवर्ड थॉमसका भी ऐसा ही मत है। उपरोक्त पंडितने Jainism or early faith of Asoka (जैनधर्म या “अशोक” की पूर्व श्रद्धा) नामक ग्रंथमें इस विषयके जितने प्रमाण दिये हैं वे सब यदि यहाँपर दिये जाय तो बहुत विस्तार हो जायगा।

(२८) चंद्रगुप्त (अशोक जिसका पोता था) स्वतः जैन था इस बातको वंशावलीका इहो आधार है। राजा चंद्रगुप्त श्रमण अर्थात् जैन गुरुसे उपदेश लेता था ऐसी मेगस्थनीज Megasthenes ग्रीक इतिहासकारकी भी साक्षी है।

अबुलफजल नामक फारसी ग्रन्थकारने “अशोकने काश्मीरमें जैनधर्मका प्रचार किया” ऐसा कहा है।

रामचरणिणी नामक काश्मीरके संस्कृत इतिहासका भी इस विधानको आधार है।

(२९) उपरोक्त विवेचनसे ऐसा मालूम पड़ता है कि इस धर्ममें सुज्ञोंको आदरणीय जंचने योग्य अनेक बातें हैं। सामान्य लोगोंको भी जैनियोंसे अधिक शिक्षा लेना योग्य है। जैनी लोगोंका भाविकपन, श्रद्धा, व. औदार्य प्रशंसनीय है।

१ देखो दधी द्वेष्टके नं० १ में पुरुषशिरोमणि पं० चालरंगाधर तिलक आदि महाशयोंकी सम्मति।

(३०) जैनियोंकी एक समय हिन्दुस्थानमें मैं दीन अति मतिहीन पृजूं हरन अथ संतापके । बहुत उल्लासस्था थी । धर्मनीति, राजकार्य कीजे मनोरथ पूर्ण स्वामी यांचता तुमसे यही, धुरन्वरता दाढ़मय (शास्त्रज्ञान व शास्त्रमंडार) बलबुद्धि विद्या विभव संस्रुत हो सदा भारत महीं ॥२॥ समाजोन्नति आदि बातोंमें उनका समाज इतर स्थिर रहे सुखशांतिमय नृपनार्जका शासन यहां, अनोसे बहुत आगे था । कपटी कृचाली क्रूर नृपका फिर न हो आसन यहां ।

संसारमें अब क्या हो रहा है इस ओर हमारे खरचे सदा सत्कार्यमें धनवान धन हिय खोलके, भेनबन्धु रक्ष देकर चलेगो तो वह महत्पद पुनः हों कार्य करता कार्यतत्परसम्मिलित जिय खोलका॥३॥ प्राप्त कर लेनेमें उन्हें अधिक श्रम नहीं पड़ेगा। संस्था अनेकों हैं खुली आगे खुलेंगी जो तथा,

(३१) जै व अमेरिकन लोगोंसे संघटन कर आनेके लिये बम्बईके प्रतिद्व जै गृहन्वपारलोक-वासी मि० बी० चन्द्र गांधी अमेरिकाको गये थे। वहां उन्होंने जैन धर्म विप्रेका परिचय करानेका काम भी स्थित किया था।

असीसामें 'गांधी फिलॉसोफिकल सोसायटी'  
(Gandhi Philosophical Society.)  
अर्थात् जैन तत्त्वज्ञान का अध्ययन व प्रसार करने के  
लिये जो समान स्थापित हुई वह उन्हींके परि-  
श्रमका फल है। इन्होंने मि० श्रीचन्द्र गांधीका  
अज्ञात मृत्यु होनेसे उक्त आरंभ किया हुआ  
कार्य अगुर्ग रह गया है इत्यादि।



(लेखक पं० उमठारविहारी न्यायतीर्थ  
दिगम्बर जैन महाविद्यालय मथुरा।)

प्रिय अनुभवी बन्धुओ ! जब आप इतिहास-सादि द्वारा अनेक देशोंके अनेक कालीन परस्पर विरुद्ध सामाजिक व धार्मिक परिस्थितियोंके कारणों पर गहरी दृष्टिसे विचार करोगे, अर्थात् जब आप यह जाननेकी कोशिश करोगे कि किसी विवक्षित देशमें किसी जमानेमें कोई धर्म व कुछ रीति-रिवाज और दूसरे जमानेमें कोई अन्य धर्म व दूसरे ही रीति-रिवाज क्यों हो गये ? कि धर्मसे और निज रीति-रिवाजोंसे किसी देशवाले किसी समय अत्यन्त घृणा करते थे उसी देशवाले दूसरे जमानेमें उसी धर्मकी उपासना क्यों करने लगे तथा उन्होंने रिवाजोंको पसन्द क्यों करने लगे ? क्या उनकी पहली धार्मिक व सामाजिक स्थिति उनकी आत्मिक मानसिक व शारीरिक उन्नतिके लिये वास्तवमें बाधक थी ? जिससे कि उनको अपने धर्म व सामाजिक संगठनमें परिवर्तन करना पड़ा, अथवा पहले समयमें दोनों बातें उपयोगी मालूम देती थीं पश्चात् अनुभवयोगी मालूम देने लगीं जिससे कि उन्हें उन बातोंको बदलना पड़ा, अथवा दोनों बातोंके उपयोगी रहते भी किसी दूसरे देशवालोंने उनको ऐसा करनेके

लिये बाध्य किया जिससे कि उन्होंने ऐसा किया ? तो आपको मालूम हो जायगा कि किसी देशमें किसी समय परिवर्तनके ये तीनों ही कारण आ उपस्थित होते हैं, कभी इसमेंसे कोई दो कारण और कभी केवल एक कारणसे परिवर्तन हो जाया करता है। जब कभी किसी देश पर किसी दूसरे देशकी केवल धार्मिक आक्रमण होना है तब आक्रान्त देशमें पहले वा दूसरे कारणसे परिवर्तन होता है, जैसे कि भारतीय बौद्धोंके धार्मिक आक्रमणके कारण चीन व जापान देशका धर्म बदल गया। इन दोनों देशों पर बौद्धोंको सैनिक आक्रमण नहीं करना पड़ा था किन्तु बौद्ध धर्मके बहुसंख्यक उद्भट विद्वानोंने इन देशोंमें जाकर धार्मिक हलचल मचाई थी और उक्त देशवासियोंके हृदय पर अपना धार्मिक सिद्धांत जमाया था, जिसके कारण उक्त देशवासी बिना किसी प्रकारकी ज्यादतीके स्वयं ही अपनी धार्मिक स्थितिको हेप और बौद्ध धार्मिक स्थितिको उगदेय मानने लगे थे और तैकड़ों वर्षोंसे अभी तक नकार मानते चले आ रहे हैं। यदि बौद्ध लोग इस उपायको काममें न लेकर और रंगने व आदि सुसज्जमान वादशाहोंकी तरह उन उपायोंसे काम लेते तो कदापि इस प्रकारकी व्यापक व स्थायी सफलता प्राप्त न कर सकते। किसी विविध देशसे अधिकसे अधिक जितना लाभ उठाया जा सकता है उतना लाभ प्राप्त करने के चीन व जापान देश अच्छे उदाहरण हैं। इस प्रकारकी सर्वोत्तम सफलता प्राप्त करानेकी यदि किसीमें ताकत है तो वह केवल शांति व दृढ़ता पूर्वक किये हुए धार्मिक आक्रमणमें ही है।

सैनिक आक्रमणसे प्रथम तो सफलताके मंदिरमें निवास करनेकी इच्छा करनेवाली व्यक्तिवां ही प्रायः नष्ट हो जाती हैं, यदि कुछ बची भी रहती हैं तो वे विजित देशके सम्पत्तियों पर अपना सिका नहीं जमा सकतीं, और जो कुछ सिका जमता भी है वह स्थायी नहीं रहता, समय पाते ही विजित लोग विजेताओंको मार मगाते हैं और उनके आदर्शकी अपने ऊपर चढ़ी हुई चादरको शीघ्रही उतार कर फेंक देते हैं तथा विजेताओंसे जातीय विरोध मानने लगते हैं। यही कारण है कि बहुत कुछ मेल जोड़ व सहवास होने पर भी औरंगजेबी अत्याचारको भारतीय हिन्दू अभी तक नहीं भूले। सामाजिक त्योहारों व मेलोंके अवसर पर पूर्व वासनाओंका उदय अभीतक होता रहता है। इसी प्रकार नव कभी किसी देशपर किसी अविचारी व क्रूरकर्मी नरेशका केवल सैनिक आक्रमण होता है तब प्रायः तीसरे कारणसे परिवर्तन होता है जैसे कि कुछ मुसलमान बादशाहोंके जमानेमें बहुतसे भारतीय हिन्दूओंको जबरन अपना धर्म बदलना पड़ा था। धार्मिक व सैनिक आक्रमणकी तरह एक व्यापारी आक्रमण भी होता है जिसके कारण आक्रान्त देशकी व्यवहारिक वस्तुओंमें परिवर्तन हो जाया करता है, इस आक्रमणमें राक्षसता भी गुप्त रीतिसे प्रायः सहायक रहती है, सैनिक आक्रमणसे भी यद्यपि आक्रान्त देशकी सम्पत्ति आक्रामक देशमें जाती है तथापि व्यापारी आक्रमणसे आक्रान्त देशकी सम्पत्तिका निम्नता प्राप्त होता है उनका और किसी प्राप्तिमें नहीं होता। इत्यादि अनेक

प्रकारसे बलवानों द्वारा निर्बलोंपर आक्रमण करनेकी चिरंतन पद्धतिको ध्यानमें रखते हुए जब हम भारतवर्षकी वर्तमान दशा पर ध्यान देते हैं तो हमको मालूम होता है कि यह हमारा भारतवर्ष वर्तमानमें सभी प्रकारके आक्रमणों से सर्वोशमें आक्रान्त है।

अब हम पाठकोंको यह बतलाना चाहते हैं कि इन अनेक आक्रमणोंके होनेसे भारतमें जो परिवर्तन हुआ है अर्थात् भारतने अपनी प्राचीन परिस्थितिका त्याग करके जो नूतन विदेशी पोशाक पहनी है इससे भारतका कुछ हित हुआ है या अहित। तथा भारतकी प्राचीन परिस्थिति वास्तवमें भारतके लिये अहितकर थी जिससे कि भारतने उत्तका परित्याग किया अथवा प्राचीन परिस्थिति समय बदलनेसे अहितकर हो गई थी अथवा अहितकर न होते भी प्राचीनताको त्यागनेके लिये किसीने भारतको बाध्य किया है। इन तीनों बातोंपर विवेचन करतेसे मालूम होता है कि भारतकी प्राचीन परिस्थिति न पहले ही अहितकर थी और न समय बदलनेसे ही अहितकर हो गई थी किन्तु विदेशी सभ्यतासे आक्रान्त होकर भारतने अपनी प्राचीन परिस्थितिको जबरन अहितकर मान लिया था जिसके कारण भारतने अपने धर्म, अपनी भाषा, अपनी औषधियों, अपने वस्त्रों, अपने रीतिरिवाजों, अपने व्यापारिकों के आदर्शोंको गिराकर भी गुप्त नहीं पाया। धार्मिक आदर्शोंको गिराकर भारत बहुत अंशमें निम्न प्रकार गड़बड़ी बन गया, उसी तरह निम्न भाषाके गौरवको गिराकर अपने उन्नतिपर

श्रीक साहित्यसे हाथ धो बैठे और अपने रत्नोंसे  
 जवनर हो दूसरोंके काच खण्डमें सुख देखनका  
 शौकीन बन गया। तत्काल असुरकारक अल्प मू-  
 ल्यवाली पवित्र औषधियोंका परि त्याग कर जैसे  
 भाग्यको बहुमूल्यवाली अविव्र विदेशी  
 औषधियां अच्छी मालूम दें लगीं, उसी तरह  
 मजबूत देशी कपड़ोंके स्थानमें विदेशी बहुमूल्य  
 चट्टानिले वस्त्र उत्तम जेवन लगे। सीधे सादे कुश्ती  
 कबड्डी आदिक देशी खेलोंके स्थानमें भी  
 द्रव्य लुटवाळ किरकेट, फुटवाळ आदिक विदेशी  
 खेल ही मन माने लगे। नरोंको बाघरु नै होने  
 वाली देशी तेजगी रोशनीके मुझाविले मालरू-  
 पमेंही चशमा चढ़वाळ तीसी व खर्चीली गैम  
 वगैरह की रोशनी अच्छी लगने लगी। इत्यादि  
 बातोंके ऊपर विचार करनेसे जान पड़ता है कि  
 जिस भारतवाय सभ्यताका निर्माण आत्मिक  
 मानसिक व शारीरिक उन्नतिको पूर्णतया ध्यान  
 में रखकर किया गया था उसका जितने अंशोंमें  
 भारतने परित्याग किया है उतने अंशोंमें भार-  
 तको केवल संताप ही भोगना पड़ा है। वर्तमान  
 महासमयमें इस बातका अच्छी प्रकार परिज्ञान  
 क्रेता दिया है कि जिस पाश्चात्य सभ्यताके लिये  
 नई रोशनीके भारतवासी तृफान मचा रहे थे  
 उसमें कुछ भी सार नहीं है। वह केवल बारा  
 गनाकी तरह टंकरी इच्छुक है। अपने उद्देशकी  
 सिद्धिके लिये स्वयंके नार जैसे सम्राट्ठा बंधखेद  
 का देना भी उसके लिये बायें हाथका खेठ है।  
 दुनियापर अनुचित आधिपत्य प्राप्त करना ही  
 एक मात्र उसका लक्ष्य है। आत्मोन्नतिके  
 स्थानमें तो आत्म-तत्त्वके विश्वासका ही इसके

द्वारा सहाया होता जा रहा है। डारविन जैसे  
 महाश्रुतोंके दृष्टान्तोंके कारण भारत जैसे  
 धर्म प्रधान देशके निवासी भी सर्गोन्नतिके  
 आवारभूत आत्मतत्त्वके विश्वाससे पराङ्मुख  
 होते जा रहे हैं। मानसिक और शारीरिक वृत्ति-  
 गोंके द्राम और प्रेम व सदाहमृति तत्त्वकी इतिथी-  
 का सच्चा चित्र खींचनेके लिये एक स्वतन्त्र  
 लेखकी आवश्यकता है। इस गिरी अवस्थासे मुक्त  
 होनेका भारतके पास कोई उपाय है या नहीं ?  
 इस बातपर विवेचन करनेसे हमारी समझमें यही  
 आता है कि जितने अंशमें भारत फिर अपने  
 प्राचीन आदर्शमें महत्त्व देता जायगा, उतना  
 ही इसका पुनरुत्थान होता जायगा, अपनी मापा,  
 अपने धर्म, अपनी औषधियों, अपने व्यायाम  
 व अपनी वस्तुओंके व्यवहार किये बिना भारतके  
 पास उत्थानके लिये और कोई उपाय नहीं है।  
 विदेशी मापानोंका परिज्ञान भी भारतके लिये  
 इतने अंशमें बहुत अधिक हितकरा है कि दूसरे  
 देशोंमें जाकर उसके द्वारा भारतके अमृतोपम  
 धर्म रसका आस्वादन करा सके, और उनके  
 हृदयसे जड़वादको निकाल कर भगवान कुंदकुंद  
 सरीखे भारतीय महर्षियोंके अद्वितीय आत्मतत्त्व  
 विषयक विवेचनका अंकुर जमा सके, जिससे  
 उनकी महासमरादि कारणोंसे संतप्त आत्माओंको  
 अनुपम शान्ति मिले, संसारका हित हो और  
 भारतका यश फैले। ऐसा करनेको हम धार्मिक  
 आक्रमण कह सकते हैं और इसके द्वारा, बौद्धों  
 द्वारा चीन व जापानमें प्राप्त की हुई सफलता  
 सीखी, आशा कर सकते हैं।



वीर धनराज

पट्टनकी लड़ाईकी हत्थाभयनाके परिणामसे दुःखित हो महारान विजयसिंहने अजमेराव्यस धनराजको अजमेर शत्रुओंके हस्तगत कर देनेका परवाना निकाला था। उसी आज्ञा पत्रको लिए महारान विजयसिंहका दूत उनके समक्ष उपस्थित है। रानाकी इस कायरताकी चिन्त आज्ञा इस वीर हृदयसे कब मानी जाती। परन्तु: इधर वे चुपचाप कायर बन अजमेरको शत्रुके आधीन नहीं करना चाहते थे और उधर महारानकी आज्ञाको पंग कर दोषी भी नहीं बनना चाहते थे। ऐसे ही विचारोंकी तरंगोंसे उनका हृदय-सागर तरंगित हो उठा। वे अपमंगलमें पड़ गए। वीर हृदय इस घृणित संघिपर राजी न होता था। पश्चात् दिल ऊन गया—दोनों कायोंसे मुक्त होनेके लिए वीरात्माने अपनी आत्म बलि करनेकी ठानी। हाथकी शंगुली पर दृष्ट पड़ते ही हीरागदित मुद्रिका उतार ली और उस प्रणवातक निर्दय हीरको चूर्ण कर गलेमें रख जतार लिया। वही हीरा जो किसी संकटके समय आपदासे बचाता और मनुष्य तयाज निपके प्रातिके लिए दैवान कृती है उस हीरने इस वीरमासी हृदयकी गतिको रोका उनकी ओगहनकी भीषणता सहाय कर दी। वीरात्मा इस संसारसे विदा होना हुआ रुद्ध कर दूतसे बोला:—

“ऐ दूत! जा, और राना से कह कि मैं राजाज्ञा इस तरह अग्ने प्राणोंकी आहुति देकर कर सका हूं और अब मेरे इस मृत देहपर हीसे कोई मरहटा अजमेरमें प्रवेश कर सकत है”।

धन्य है वीर सेनापति! तेरी वीरता और प्रभु आज्ञा—कारिवाकी—तेरा नाम सदैव राजस्थानके इतिहासमें स्मार्णशिरोंमें लिखा रहेगा।

“Lives of great men all remind us  
We can make our lives sublime,  
And departing leave behind us  
Foot prints on the sands of time.”  
—Long fellow

पादको! आप सद्गति प्राप्त वीरात्माके विषयमें विशेष, ज्ञाता होनेको उत्कण्ठित होंगे। लीजिए ज्ञान प्राप्त करिए और अपनी आत्माको भी इस वीरमात्माके चरित्रसे मरपूर कर वीर और साहसी कीजिये। कारण कि उदार प्रतिष्ठित आत्माओंके ही मार्गका अवलम्बन सर्व साधारण करते हैं। मरहटा वीर सिन्धियाको टोंग (नयपुर निकटस्थ) में परानय कर मारवाड़ सेनापति मीरान सिन्धी अजमेरकी ओर खाना हुए। और तन् १७८७ में अजमेरको उन्होंने मरहटाओंके सुवेदार अन्वर बेगसे छीन लिया। यह नया प्रांत धनराज सिन्धीकी अध्यक्षतामें सुवर्द्ध किया गया। मरहटोंने अपनी शक्तिको पूर्ण कर लिया था और तत्पर हो बार्ष पञ्चान्ति फिर उन्होंने मारवाड़ पर आक्रमण कर दिया। मैरा और पट्टन इन दो स्थानोंमें युद्ध हुआ परन्तु अब मारवाड़ियोंसे विजय दृष्टी दृष्ट हो गई थी। थोड़े ही काळमें

मराठा सेनापति डी बोइनी (Do Boigno) क्षत्रियत्वको प्राप्त कर भारतमाताके भक्त हो  
ने अन्तर पर आक्रमण किया और घेरा डाल उसके सुपुत्रों वनेगे। एवम् भवतु।

वहीं पढ़ रहा। धनराज-अन्तर्माध्यक्षने वीर-  
तासे शत्रुका सामना किया और धीरता,  
साहससे शत्रुको बाहर ही रोके रखा। इस  
ही समय पर महाराज विजयसिंहकी उक्त  
श्रीपणा धनराजको प्राप्त हुई थी। और

फिर जो कुछ हुआ वह पाठक पढ़ चुके हैं।  
इसमें कोई शंका नहीं है कि धनराज ओसवाल  
जैन वंशज थे। क्योंकि सिंधवी जो पहिले  
नन्दवन वोहरा ब्राह्मण थे पश्चात् वि० सं०  
१४६१ सिरोहीमें शुनि सुन्दरसूरि द्वारा  
जैनवर्माश्रयायी हुए थे। जोधपुरमें उनके  
स्थित होनेका समय वि० सं० १९३३ अथवा  
सन् १४७६ ई० से है। राजपूतानेके ओसवाल,  
भण्डारी, बच्छावत, आदि वंशोमें राज-  
नीतिज्ञ और योद्धा अवतरे हैं। इन्हीं भामराह  
रत्नसिंह आदिने और दक्षिणके चाण्डालाय  
आदि वीरात्माओंने जैनियोंका गौरव बनाए  
रखा है। परन्तु यदि तो यह है कि हमने  
इन वीरात्माओंके उपकार अथवा उनके जीवन  
चरित्रोंको विस्मर दिया है। उन्हींका परिणाम  
है कि हममें कोई देशभक्त राजनीतिज्ञ अथवा  
लाट साहबकी कौंसिल आदिका मेम्बर नहीं है  
और लाभ हमको 'सड़ी चिड़िया' बहनेसे भी  
नहीं हिचकते। जो वास्तविक ही है कारण कि  
अपने निषेधोंका रहना इस दुगमें दुःसाध्य  
ही नहीं दुर्लभ है। आशा है पाठकगण  
अपने पूर्वजोंके कृत्योंका स्मरण कर फिरसे अपने

समान हितेषी—के० पी० जैन  
अलीगंज (एटा)  
नोट—इस लेखकी सोमश्री Mr. Tank's  
S. D. Jains से ली गई है एवम् हम उनके  
आभारी हैं। लेखक—

ल।

जुवां खुर्दों कलासे अब सदा रंही बहम-निकले।  
फते सरकारकी होवे दुआये दम पदम निकले ॥  
मिटे झगड़ा लड़ाई सब, आराम हरम हो।  
उदका खार दिलमेसे, इलाही एकदम निकले ॥१॥  
रहे नामोनिशां कुछ भी नहीं, आलममें जमेनका।  
तभी इगलैंडो हिन्दुस्तान का रोज अलग निकले ॥३॥  
यंदे इक्बाल साहंसाह पेजुम जाबका ऐसा।  
कि जिसका ता क़यामत भी नहीं सानी निकले ॥४॥  
इलाही जोग दे सरकारकी तलवारमें इतना—  
जिधर बढ़ जाय लाओका कलम संरपे कलम निकले ॥५॥  
यत्न कर अर इसे 'गना' बढ़ानेमें नतीजा क्या।  
मईगा मजल तेरी जो उसी दम धो सेहस निकले ॥६॥

पन्नालाल जैन,—

फुलेरा—(राजपूताना)

शुभ कामना।

हेपानल पर स्नेह—सल्लिह—कण-वर्षण होवे।  
पतनदशा गत हो विस्मृति-पट-तलमें सोवे ॥  
चीन फूटका कहीं न कोई भी जन बोवे।  
डाह मनोमालिन्य, कष्ट सब भात खोवे ॥  
मधुर भेन वीणामयी मधुरवकी झकार हो।  
विश्वयास भात मधुर बाध-तनु टकार हो ॥

कन्हैयालाल जैन

(कस्तुरी—)

## —निद्रात्याग—

जातिवीरो ! नींद छोड़ो शीघ्र ही उठ जाइए,  
 देखो सवेरा हो गया है नैचमल, धो डालिए ।  
 बालंबिकी है अरण्यमय चित्तमोहक यह छाटा,  
 औजस्यको निस्तारती है तिमिरमलकी जो हटा ॥ १ ॥

प्राची दिशाकी वांछितो-विद्रुमको लज्जित करे ।  
 आरोग्यरूपी अमृतकी आकाश सद्रुपा करे ।  
 मंद शीतल सुरभिवाली परेन कैसी चल रही,  
 प्राप्त करनेसे जिसे आनन्द लहरी आ रही ॥ २ ॥

रात्रिके मुकुलित सभी ही कमल खिल रहे,  
 भ्रमर उन पर उड़ रहे हैं सुरभि उनकी ले रहे ।  
 पक्षिगण सब नींद तनकर मधुर स्व हैं बोलते,  
 उद्योतस्वागत हेतु मानों श्रेष्ठ शब्द स्टोलते ॥ ३ ॥

चक्षुषी विरहिणी मित्र रही है प्रेमकर निज नाथसे,  
 मंदिरोंमें बना रहे घंटा पुजारी हाथसे ।  
 लघ्वजन काने लगे हैं निद्र्य कर्मोंको सभी,  
 ऐसे मनोहर समयको या हो रहे प्रगुदित सभी ॥ ४ ॥

कर जोड़ वशके स्पेण्ट प्रभुसे विनय सारे कर रहे,  
 भक्तिभाव लगा लगा कर हर्ष उरमें भर रहे ।  
 माँग भाँसे कुछ कहेवा रहै बालक गा रहे,  
 देखो कौन ले पुनर्जीवी जाना जा रहे, ॥ ५ ॥

लेकर गुहारी हाथमें मन नाक गैलोंको लगे ।  
 कुड़े कजोटेकी धाँमें सभी जन बाहर करे,  
 स्नान तागे नीरसे करने लगे हैं जन सभी,  
 निद्रा तुम्हारी आँगसे लेनी निशई नहि अभी ॥ ६ ॥

पात्र चुन्दोंमें पकड़ कर दुग्ध गौसे कुंठ रहे,  
 गोपाल गो महिषादि ले लगे चराने जा रहे ।  
 रोगिगण भी इस समय कुछ सुदित होने हैं सभी -  
 कार्य अपना कर रहे हैं प्रवृत्तिमें प्रणी सभी ॥ ७ ॥

जागो उठो अब तो मचेको कार्य अपना कर दो,  
 लेकर गुहा ही कबूटे आराममें न मड़ा करो ।  
 इतनी आँखें माँझ दीं जो बंद भी हो न सके,  
 आराम्यता पर नैन विनिव भी तुम्हारे नहि रूपा ॥ ८ ॥



# दिगंबर जैन

## THE DIGAMBAR JAIN.

माना कलाभिविधिष्वेव तच्चैः यत्प्रोपदेशैरुपगम्यमाणैः ।

संबोधयत्प्रामिद प्रवर्तताम्, दैगम्बरं जैन समाज-भाषम् ॥

वर्ष १२ वॉ.

वीर संवत् २४४५. भाष. विक्रम सं० १९७५.

अंक ४.



हम बड़े दूषोंसे देख रहे हैं कि भारतवर्षीय दि० जैन महासभा अपने महासभाको - स्थानसे पीछे ही हटती सफलता कैसे चली जा रही है, जबकि मिलेगी ? देशकी अन्य सामाजिक सभाएं वर्षोंमें नहीं निवृत्त दिनपर दिन उन्नतिके मार्गपर पद बजा रही हैं। भारतवर्षीय महासभाकी अवस्था ही जैन समाजकी अवस्था कही जाय तो कुछ असंगत न होगा, क्योंकि सभाओं और उनके सदस्योंका अत्योन्याश्रय सम्बन्ध है, जैसे बिना सभाओंके इस संगम कोई समाज उन्नति नहीं कर सकती वैसी ही बिना उत्साही सदस्योंके सभाकी भी उन्नति नहीं हो सकती है। परन्तु सभाओंका कार्य उनके बटे पदाधिकारियोंपर विशेष निर्भर रहता है। जिस सभाके सभापति, उपसभापति, मंत्री उपाध्यक्ष उत्सारी और उद्योगी होते हैं वे अन्य सदस्योंमें उत्साह फ़ूटकर सभामें आनेके लिये बाध्य करते हैं। इसका नया उदा-

हरण दिल्लीकी कांग्रेस है। कांग्रेस होनेके कुछ दिन पहिले अनेक पत्रोंमें चर्चा होती थी दिल्ली कांग्रेसमें सफलता न प्राप्त होगी। प्रतिनिधि एवं दर्शक बहुत थोड़े आएंगे क्योंकि थोड़े ही दिन पहिले बम्बईमें विशेष कांग्रेस हो चुकी है। परन्तु ऐसी सफलता इस बार कांग्रेसमें मिली वैसी किसी वर्ष सफलता नहीं मिली थी। इस सफलतामें कांग्रेसके समापति माननीय मालवीयजीके उत्साह और उद्योगका बहुत भाग है। वे ही एक जनरल किसानोंको कांग्रेसमें लाये थे जिससे कांग्रेस यथार्थमें राष्ट्रीय सभा इस वर्ष कहलाई। ऐसी प्रकार कांग्रेसके अन्य कार्यकर्त्ताओंका भी उत्साह कम न था। यहां पर प्रश्न हो सकता है कि अब उसमें सभासद ही नहीं या समाज भाग ही नहीं लेती-सहायता नहीं देती तो कार्यकर्त्ता क्या करें ? परन्तु जरा विचारने पर इस प्रश्नका उत्तर उन्हें स्वयं आ जायगा। बहुतसी सभाएं ऐसी भी हैं जिनके प्रारंभ कालमें केवल उनमें दो चार ही आदमी थे परन्तु उन्होंने ही ऐसी उन्नति की है आज उनमें हजारों आदमी दिखाई पड़ते हैं। इसका कारण कार्यकर्त्ताओंका उत्साह, उद्योग और कार्य करके दिवाना ही है।

यद्यपि इस समय महासभामें समस्त दि० जनमहाज शामिल नहीं है और न सहानुभूति ही



भी विचारपूर्वक नहीं की गई है। व्याख्यान न देना अर्थात् बोलनेका सर्वथा निषेध कर देना कभी भी योग्य नहीं कहा जा सकता। यदि सरकारको सेठजी से भय था तो इतनी ही शर्त करवाती कि तुम राज्यनैतिक व्याख्यान न देना। ऐसी आज्ञासे धार्मिक व्याख्यान देनेमें भी बाधा उत्पन्न कर दी गई है जो एक प्रकारसे धर्ममें हस्ताक्षेप करना ही है जिसे कोई भी मनुष्य न स्वीकार करेगा। हम नहीं समझते कि सरकारने ऐसी शर्त काकर क्या अपना लाभ सोचा है। सेठजीने जो कुछ धार्मिक ज्ञान संपादन किया है उसको दूसरोंपर न प्रगट कर सकनेसे उनको कितना दुःख होगा और जैनसमाज भी जब किसी समाके अवसर पर उनका सरकार द्वारा इस प्रकार मुंह बन्द देखेगी तब उसके हृदयमें सरकारके प्रति जो भाव उत्पन्न होंगे उनको हम नहीं कहना चाहते। धार्मिक व्याख्यान भी न देने देना सरकार अपनी कानूनका उलंघन करती है और एक मनुष्यके जन्म-सिद्ध हकों पर पानी फेरती है। तीसरी शर्त भी सेठजी जैसे विद्वान, अध्ययन-अध्यापन करनेवाले पुरुषके साथ करना विनम्र अविचार शीलताकी परिनायक है। जो मनुष्य प्रारम्भ ही से लड़कोंके पढ़ानेका कार्य कर रहा है और उसी पर मिसत्री भीषण निर्भर है उसको यह कहना कि तुम लड़कोंको न पढ़ा सकोगे कभी भी ठीक नहीं हो सकता। सरकार सेठजीको यह आता देनेके साथ कोई बन्म कामका भी निर्देशक देती तो बहुत अच्छा होता। फिर हम ही अनुमान लगाते हैं। सेठजी कोई

घनवान नहीं हैं, उनके घरमें दस बीस हजार रुपया भी न होगा जिससे घर पर बैठे २ खाँय। अपने और कुटुम्बके भोगपोषणके लिये उनको कोई उद्यम अवश्य करना पड़ेगा। मनुष्य जो कार्य प्रारम्भसे करता आता है उसीको वह बड़ी प्रकार कर सकता है। सेठजीका कार्य अध्ययन और अध्यापनका था उसे सरकार बन्द कर देगी। अब प्रश्न है सेठजी क्या करेंगे? यदि उनके पास अधिक धन होता तो कोठी खोल कर कोई अच्छा व्यापार कर सकते थे परन्तु उनके पास इतना धन नहीं है। वर्तमानमें यदि वे व्यापार करना चाहें तो सिवाय हरदी मिरच या आटा दालकी जैसी दुकानके वे अन्य व्यापार नहीं कर सकते जिसे सेठजी कभी स्वीकार न करेंगे। यदि यह कहा जाय कि वे किसी रईसके यहां रह कर कार्य करें, यह भी न हो सकेगा क्योंकि सेठजी सरकारके कोपमानन वन गये हैं, वे राजनैतिक कैदी हैं इस कारण सरकारके भयसे कोई भी रईस उनको अपने यहां न रखेगा। इसके सिवाय यदि वे कोई गसमेंट सर्विस करना चाहें वह भी न होगा क्योंकि सरकार भी ऐसे मनुष्योंको अपने आवासोंमें स्थान न देगी। तब आप ही विचारिये सरकारने उनके पीछे ऐसी शर्त लगा कर उनको किस बर्थके योग्य रखा! हमने सुना है कि सेठजी इन शर्तोंसे स्वीकार नहीं करना चाहेंगे। स्वीकार भी कैसे करें! किसी विद्वान मनुष्यको इस प्रकारकी शर्तोंमें छोड़ना न छोड़ना नागर है। उसके सामने जैसा बेखोरा काशप्रद बैसा आने रहनेका

गृह। यह तो है नहीं कि विद्वान् केवल इस बात पर मरता हो कि जेलमें पड़े रहनेमें शहरके आलीशान मकान, मोटरगाड़ी, वागवगीचे नहीं देतनेको मिलते हैं इससे क्लो जेलसे छूट जायगे यही नियामत है उसको तो अपनी शिक्षाका उपयोग करना है, दूसरोंका परोपकार करना है अपनी आत्माका प्रत्याण करना है, तब उसके पीछे ऐसी शर्तें लगाकर छोड़ना कभी भी ब्रह्म पसंद न करेगा।

अब हमारा सरकारसे यही निवेदन है कि उनको यदि छोड़ना ही है तो जो तीन शर्तें ऊपर बताई गई हैं उनको न लगाये। ऐसी शर्तें लगाकर छोड़ना न छोड़ना बराबर ही है। बिना कोई अपराध लगाये पांच वर्ष तक जेलमें रतना यही बहुत हो गया।

हमें यह लिखते हुए खेद होता है सर सेठ हुकमचन्दजीने अपनी ४९

सर सेठ वर्षकी अवस्थामें एक स्त्री हुकमचन्दजीका और कई पुत्र पुत्रियोंके अननुचित विवाह रोते हुए चौथा विवाह एक और उचित, १२ वर्षकी बालिकाके दान। साथ मित्री मात्र बड़ी ८

को कर लिया। सुना गया है कि पेटीवालेको ४००००) दिये गये हैं। यदि कोई साधारण मनुष्यने ऐसा किया होता तो उसके लिये हमें कुछ विशेष कहनेकी आवश्यकता नहीं थी परन्तु एक ऐसे पुरुष जो जैन समाजके स्वयं समझे जाते हैं और भारत-वर्षीय दि० जैन महासभा एवं अन्य धार्मिक

संस्थाओंके सभापति एवं और संस्थापक हैं उनके द्वारा ऐसी अवस्थामें विवाह कर लेना कभी प्रशंनीय नहीं कहा जा सकता। सेठजीकी अवस्था कन्यासे चौगुनी है इसके सिवाय सेठजीकी एक सुशीला धर्मपत्नी मौजूद है इनका-स्त्रीका स्वास्थ्य भी अब अच्छा है फिर न गालूम सेठजीने ऐसा विवाह करके क्या लाभ सोचा है ? सेठजीने स्वयं ऐसे विवाहोंकी निंदा की है फिर स्वयं सेठजीने सम्य समाजमें घृणात्मक समझे जानेवाले विवाहके फैर-नेका साहम किन प्रकार किया ? हम यह अवश्य कहेंगे कि सेठजीने ऐसा विवाह करके समाजके साथ अन्याय किया है और अपनेको नैतिक बलमें निर्भेद सिद्ध किया है। आज सेठजीने ऐसा विवाह किया है कल कोई और दखपती मनुष्य ऐसा ही विवाह कर लेगा ऐसा होनेसे समाजमें एक और कुरीतिका प्रवेश होगा जिससे समाज और नर्भरित होगी। हमें मालूम होता है कि सेठजीने ऐसा विवाह करके जहां एक अनुचित कार्य किया है वहीं विवाहके अवसर पर ढाई लाखका दान करके समाजसे बाहवाही लूटनेका कार्य भी कर दिखाया है। अर्थात् सेठजीने बड़नगरके शुद्ध औपधालयको एक मुश्त १५००००) डेढ़ लाख रुपये प्रदान दिये हैं और इसके सिवाय हमने यह भी सुना है कि सेठजीने जैन विधवाओं, वेशार आदिमियों, और अनाथोंके लिये एक लाख रुपये और निकाले हैं। हम यह स्वीकार करेंगे कि सेठजीने यह उपयोगी और उचित दान किया है परन्तु



यह भी बिना कहे न रहेंगे कि सेठजीने अपना जो अशुचित विवाह किया है उसीको टाकनेके लिये ही यह उचित दान किया है ।

\* \* \*

इस परिषद्का प्रथम वार्षिक अधिवेशन परत-वाड़ा (इल्लिचपुर) में गत शास्त्रीय परिषद् । ता० ११-१२ जनवरीको हो गया । सभा-

पतिका आसन श्रीयुग पंडित वंशीधरजी न्यायतीर्थने ग्रहण किया था । अधिवेशनमें पं० धनंजयलालजी काशीवाला, पं० खूबचंदजी पं० माणिक्येन्द्रजी न्यायाचार्य, पं० मन्मथलालजी न्यायालंकार, पं० देवकीभंदनजी पं० गौरीलालजी, पं० उदयलालजी पं० राम-प्रसादजी, पं० बालदेवशास्त्री आदि उपस्थित थे । सभापतिने अपना व्याख्यान नवनी ही दिया था । अन्य विद्वानोंके भी व्याख्यानोकी खूब धूम रही । उसमें कुछ प्रस्ताव जैसे हिन्दीकी पाठ्य पुस्तके व धर्मकी पुस्तके बनाना, जैन आर्य ग्रन्थोंपर होनेवाले आक्षेपोंका उत्तर देना, अंग्रेजी इतिहासकी भूलें निरखवाना, पेटेलविलका विरोध, पुस्तके जो प्रकाशित हों उनकी नाँच करना इत्यादि उपयोगी बातें हुए हैं । पं० उदयलालजीने परिषद्को १०० प्रदान किये थे । परिषद्के लिये करीब ७२०) का बंदा हो गया ।

परिषद्के कार्यवाहीसे विदित होता है इसके द्वारा अब कोई उत्तम कार्य होंगे ।

\* \* \*

इस सभाका भी अधिवेशन परतवाड़ामें सफलताके साथ हो गया ।

खंडेलवाल दि० सभापतिका आसन अनु-जैन प्रा० सभा । मनी विद्वान श्रीयुग पं० धनंजयलालजी काशीवा-

लने ग्रहण किया था । आपने अपना मुद्रित व्याख्यान पढ़ा जो कि कुछ विशेष महत्वाशाली नहीं था । इस सभाने अपनी जातिमें बहुतसी कुरी-तियां बंद कर दी हैं । इस वर्ष भी कुछ रीति रिवाज ठीक की गई । आगामी वर्ष इसका अधिवेशन सिवनीमें होगा ।

यहां दो आम सभाएं भी हुई । सभापति अजैन विद्वान वकील बनाए गये थे । शास्त्रीय परिषद्के विद्वानोंके व्याख्यानोसे अजैनो पर जैनधर्मकी अच्छी छाप पड़ी ।

## खंडेलवाल जैन ।

( नासिक )

खंडेलवाल जातिका यह सुप्रसिद्ध नासिक पत्र नई सनघनके साथ उपयोगी लेखों और कविताओंसे अलंकृत होकर पुनः जनवरीसे निकलना प्रारंभ हुआ है ।

खंडेलवाल जातिकी हीन देश सुधारना और उसमें नवनीयनका संचार करना इसका मुख्य ध्येय है । साथ ही सामाजिक विषयकी भी यह गंभीर पूर्ण चर्चा करता रहेगा ।

यदि आप जैन खंडेलवाल हैं तो इसके स्वयं साहक बनिए, और अपने भाईयोको साहक बनाकर इसका प्रचार करिये । वार्षिक मूल्य १। रु. मात्र ।

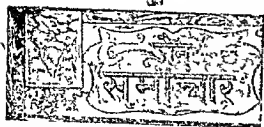
विशेष ।

स० ज० के अधिपति साहक धनिक और व्यापारी प्रा० हैं अतः विज्ञान दाताओंको विशेष लाभ होगा ।

मेनेर " खंडेलवाल जैन "

प० गौतमपू। ( मालवा )

नोट—अनुमते जाति भाईयोको यह पत्र बनवी इच्छाद्वारा वन मूल्यसे दिया जायगा ।



**हिंसा बंद—**सत्यमार्गी जीवदया प्रचारिणी सभा गुनांक उपदेशक पं० गौजीचालजी पत्तार १५ दिन मैहर स्टेटमें ठहरे। यहां शारदादेवीके आगे घोर हिंसा होती है उसके रोनेका प्रयत्न किया। धामपार्श्वीसे वादविवाद हुआ उसमें सत्यकी जय हुई और राजगुरु महा-राजनं लिख दिया कि देवी देवताओंके आगे जो पशुबलि काते हैं वे भूल करते हैं। इसलिये मैं अपने शास्त्रनुसार आज्ञा देता हूं प्रत्येक सनातनधर्मी चाहे जो वर्ण हो देवी देवताओंके नामसे व्यर्थ हिंसा न करे और आ मेवा पिछान चढ़ाना व ब्राह्मणको भोजन देना स्वीकार करे।

**वृद्धविवाह—**गुना है कि देहलीके सेठ मोहनरावजी (हीराचाल शिवनारायण फर्मके मालिक) संस्थापक हीराचाल जैन विशालय अपना विवाह कराना चाहते हैं। आपकी अवस्था ६० वर्षसे अधिक है। इतनी अवस्थामें विवाह करना सर्वथा अनुचित है।

**दक्षिण महाराष्ट्र दि० जैन सभाका** वार्षिक अधिवेशन स्तम्भविशेष पर ता० १०, ११ जनवरी और १ फरवरी तक हुआ। सभापति का असन श्रीमंत पं० पण्याराव बल्लालराव देसाई अमीनभावांने ग्रहण किया। विशेष हाल फिर प्रष्ट करेंगे।

**स्वर्गवास—**देहलीके लाला मेहरचन्द्रजीका ७० वर्षकी अवस्थामें मिति पूष सु० १५ को स्वर्गवास हो गया। आपनं १॥ लाल रूपया खर्च करके एक मंदिर देहलीमें बनवाया था जिसकी प्रतिष्ठा सं० १८३५में हुई थी मंदिरका नाम मेहरमंदिर है जिसे देवानेके लिये लोग बरासे अते हैं।

**बिना शर्त छोड़ो—**देहलीमें तारीख २७ जनवरीको होमबल लीग और मुसलिम लीगका जस्ता हुआ उसमें यह प्रस्ताव पास हुआ कि सेठो अर्जुनलालजी बिना शर्त छोड़े गंग।

**आगरामें सभा—**गन ४ जनवरीको यहां एक सभा लाला गंगीमलजी रईस दिहलीके सभाप-तिद्वारा हुई। पं० विल्लु विरोध किया गया और बाइसगायत्री तार भेजा गया। यहांकी जैन बौद्धिजी इमारत ठीक करनेके लिये ८५० का बन्दा हुआ।

**आदर्श स्वार्थ त्याग—**लखनऊनिवासी श्रीयुक्त वू अजितप्रसादजी एम. ए. एल. एल. वी० यकीलने अपने बकायत, छोड़कर समाज सेवा करनेका व्रत लिया है। गत ९ जनवरीको लखनऊजी जैन समाजने आपका 'हार गोटेसे' सम्मान किया था। हम भी बाबूजीको इस स्वार्थ त्यागके लिये धन्यवाद देते हैं और भवना करते हैं आप अपने उद्देश्यमें सफल हों।

**दिठानका धियोग—**करहल निवासी पं० गुलनारीलालजी जो कलकत्तेमें रहते थे, उनका ६६ वर्षकी अवस्थामें पोष कृष्णा ११ को करहलमें स्वर्गवास हो गया। आपनेही कलकत्तेके मंदिरकी प्रतिमा संवित हो जानेके बाद



शान्त्यर्थ सवा लाख नाप और हवन किया था । पं० देवकीनन्दनजी आदि १२-१३ और

रायसाहब हुए—गोरखपुरनिवासी बाबू अभिनन्दनप्रसादजी मुस्तार नये वर्षकी खुशीमें राय साहबके पदसे सम्मानित किये गये हैं ।

सेवाकाफल—गत १ जनवरीको कलकत्तेके विशुद्धानन्द सरस्वती विद्यालयमें स्व० बाबू धन्वलालजी अथवाल जैन अठनीका तैलचित्र हाईकोर्टके माननीय जस्टिस सर अयुधोप चौधरीके द्वारा खोला गया ।

गंगाजलोक्ता मुक्तदमा—ज्यावाके जैनियों पर वैष्णवोंके द्वारा यह मुक्तदमा चलाया गया था कि जैनी रथयात्रा निकालते समय विमानमें गंगानली नहीं रखते जैसा कि हवाप इनका पहिले फैसला हो गया था इससे हम लोगोंका दिल दुःखता है । परन्तु अदालतने इन मुक्तदमोंको वैष्णवोंकी ओरसे उक्त शर्तकी दस्तावेज न पेश कर सवनेके कारण रारित कर दिया ।

बुद्धेलखंडमें दौरा—सेठ मणिकचन्द्र हीराचन्द्र जै० पी० टूट फंडके उपदेशक पं० पीताम्बरदासजी इन बार बुद्धेलखंडका दौरा करनेवाले हैं ।

वार्षिकोत्सव—दि० जैन सिद्धान्त विद्यालय मुनेनाथ भट्टावां वार्षिक अविदेशन ता० ५, ६ जनवरीको देहलीके रईस लाजा जगदीशजीके सभासदित्वमें हो गया । बड़े उपयोनी प्रस्ताव पास हुए ।

संज्ञन पे ।

डेप्टेडशतको निम्नलिखित स्थानोंसे इस प्रकार सहायता प्राप्त हुईः—

१९०४) परतवाड़ा, ११०१) मुलतानपुर  
११०१) इलिनपुर १३९३) अन्नगांवसुर्जी  
३८८९) कारंजा ११११) अमरावती  
१७७८) नागपुर । कुल जोड़ ११८३७

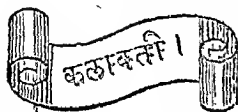
### धर्मात्माओंकी भावनापूर्ति ।

जिस प्रकार आरोग्यताके लिये शुद्ध भोजन और पवित्र जलकी आवश्यकता है उसी प्रकार मस्तिष्कके आनन्दोत्पत्तिके लिये सात्विक आहार और पवित्र प्रभावपूर्ण स्थानकी आवश्यकता है तथा उसी प्रकार धार्मिक दृष्टिसे धर्मात्माओंकी भावनापूर्तिके लिये जिनालय—देवमन्दिर है । ऐसे पवित्र स्थानोंमें व्यवहार करने योग्य वस्तुएं भी परम पवित्र ही होना चाहिये और तब ही पाबुओंकी पक्का तृप्त होती है इसीसे कहते हैं कि—

द्रव्योंकी पवित्रतासे भावोंकी पवित्रता होती है ।

पवित्र वस्तुएं यही हमारा नुब्रालेख है ।

दहीग धूप दवा ३) २), अण्डरचोर १), (विना कीचरी, यमखोर २) रातग १) रसी ११), १११) शुद्ध धारणी नदी केसर १११) १११), विद्यावती अलखि लख छत्र २) वरग २) १) ११) शुद्ध शिल जीत ११) तैम, पांच लोहा २) मंतीका पुरमा, सीधो ११) ।



(लेखक—श्री हनुमन्तेश्वर जैन, विजयगढ़)

१

जैन महिलारत्न सती कलावती देवशाल नामक नगरके सुप्रसिद्ध राजा विजयसेनकी पुत्री थी। वय क्रम १६ वर्ष अनुमान होगा। वह असामान्या सुन्दरी युवती थी। जो कोई उसे देखता मोहित हो जाता था; सब तो यह है कि जिन लोगोंके तृपित नेत्र युवती रमणीका रूप लावण्य देखनेको लालायित रहते हैं कलावती उन लोगोंकी आराध्य देवी थी। उसके सुकुमार शरीरकी अतुलनीय माधुरी देख घोर पुरुषोंका मन भी चलायमान होजाता था, उमरते हुए नवीन यौवनकी छटा उसके अङ्ग-रसे पट्टी पड़ती थी। निदान जैसी वह सुन्दरी थी वैसे ही कला कौशल्यने उसकी अनुपम रूप कलाको देख निरन्तर उसीमें वास किया था।

जिस प्रकार किसी सुचतुर चित्रकारकी लिखी तस्वीरके समान कलावतीका रूप लावण्य था उसी प्रकार वह चित्रकलामें अति निपुण थी। देवशालमें जिसने मन्दिर थे सनमें ही उसके अंकित चित्र तथा मूर्तियाँ थीं।

माता पिता चाहते थे जैसी सुशिक्षिता कलावती रूप लावण्य तथा गुणमें अद्वितीय है वैसा ही वर लाभ हो; परन्तु बहुत दृढ़ स्वाम करनेपर भी किसी राजकुमारको न पा सके।

एक दिन माने दुःखितचित्त कलावतीसे कहा—“जैसी तू परम सुन्दरी है वैसा वर प्रकृतिने कदाचित् नहीं उत्पन्न किया।”

कलावती मुस्कराई—“गातानी, सौन्दर्यके दो प्रकरण हैं, एक आन्तरिक दूसरा बाह्यिक अर्थात् किसीका वक्षस्थल सुन्दर क्रान्तिमय है तो किसीका हृदय पवित्र, और किसीकी बुद्धि प्रखर है तो किसीकी सुठाम देह यच्छति। अस्तु। पहिले आप यह बताएं किसकी खोजमें हैं।”

दीर्घ निश्वास त्याग माताने कहा—“जामाता सर्वांग सुन्दर, मर्मवेत्ता जैननिष्ठ हो एक मात्र यही आकांक्षा है।”

कलावती कहने लगी—“अङ्ग सौन्दर्य तो क्षणभंगुर है, हृदयकी पवित्रता वास्तवमें सुस्थिर है—एक बुद्धिमान होना ही श्रेयस्कर है; क्योंकि जिनमें बुद्धि है वे अपने शरीरको भी सुन्दर बना सकते हैं। श्री उनके चरणोंमें है, धीरशक्ति शाली हैं। और बुद्धवान नहीं है तो सर्वांग सुन्दर होनेपर भी उसका प्रभाव अवश्यमेव शरीरपर पड़ेगा, अमक्त दरिद्रताका प्रादुर्भाव होगा वरन् सांसारिक दुःखागारमें निबुद्धि-मूर्खता ही प्रधान है। ‘रूपयौवनसेपक्षा विनालकुलसंभवाः। विद्याहीना न शोभन्ते निर्गन्धा इव किंशुकाः॥’ अस्तु मेरी सम्पत्तिसे बाह्य सौन्दर्य पर सुग्ध होना गितान्त भूल है।

यद्यपि माता शिक्षिता थी परन्तु कलावतीका उत्तर सुनकर उसे अनुत्पा हुआ। उसने सोचा कलावतीने सुवावस्थामें पद्मापेण किया है अतएव चाहती है, जैसे हो शीघ्र विवाह होजावे।



वात क्या थी क्या समझी गई । वास्तवमें संसारमें ऐसे विरले ही हैं जो दूसरोंके मनोभावको पूर्णतया समझनेमें समर्थ हैं वरन् प्रायः ऋषि मुनियोंके मोनावलम्बनका यही कारण विदित होता है ।

मांको विपन्न देख कलावती कहने लगी—  
“माताजी, आप किस विचारमें निगमन हैं ? जिसने मुझे मृता उसने मेरे योग्य वर भी अवश्य उत्पन्न किया होगा । प्रकृति पुरुषकी सम्पत्ति है और सम्पत्ति बिना स्वामी रह नहीं सकती । प्राथमिक ही फलकी बांछा करना मारी भूल है; सब पद्यतज्यताके आधीन है “यदमावि न तद्भावि भाविचेत्त तदन्यथा । इति चिन्ताविपन्नोऽयमगदः किं न पीयते ॥” (कुछ सोचकर) माताजी, यह ध्यान रखना—मेरे चार प्रश्न हैं जो फोड़ें उनका उचित उत्तर दे सके उसीके साथ मेरा विवाह हो अन्यथा....।

२

कलावतीका एक सहोदर भाई नयसेन था जिसकी अमाधारण तेजस्विता बुद्धिमत्ता और दयालुतामें पराकाष्ठा देख प्रशंसा द्विजे बिना नहीं रहा जा सकता, बदिनके साथ उत्तम असीम स्नेह था ।

“एक दिन वह बड़े मन्दिरमें द्योत कर रहा था कि सहसा एक भावुक पथिकने मन्दिरमें प्रवेश किया ।

पथिक मन्दिरकी कल्पेय मूर्ति जो कलावतीके दृष्टोन्म हाथोंकी गड़ी हुई थी, बड़े ध्यानमें देखने लगा ।

शिल्पकारी तथा कला कौशलमें जैनी अधिक प्रवीण हैं । उनके स्वरचित मन्दिर देखने मात्रसे यह भलीभांति सिद्ध होजाता है कि उनके आविष्कारोंमें क्या विशेषत्व है । यद्यपि बौद्धोंके स्तूप भी शिक्षा ग्रहण करने योग्य हैं परन्तु उनमें प्राचीन शिल्पनेपुण्य गुरुतर न मिलेगा । वरन् आधुनिक जैन मन्दिरोंमें जितना व्यय होता है अन्य जातियां कहीं बहुत पीछे हैं । काल दोष तथा अन्य कई कारणों वश जो भगनावशेष मन्दिर देखनेमें आते हैं वे सब प्रायः जैनियोंके शिल्पचातुर्य—कला कौशल्यके एक मात्र आधार हैं । आवृ पर्वतका मन्दिर भारतवर्षमें ही नहीं वरन् संसार भरमें अपनी शैलीका आदर्श है । बहुतोंका मत है है भारतमें जो कुछ भी प्राचीन मन्दिर और उद्यान हैं वे सब जैनी और बौद्धोंके ही स्मारक हैं ।

नयसेनने उस पथिकको मूर्ति देखनेमें अतिव्यस्त देखकर पूछा—“तुम इतने ध्यानके साथ क्या देख रहे हो ?”

नयसेन पथिकने दीर्घ निश्वास त्याग कर कहा—“इन मूर्तियोंके देखनेसे बोध होता है कि किसी बुद्धिमान शिल्पकार द्वारा निर्माण हुई हैं नो मानसिक और कान्धनिक शक्तिमें अछिनीय है, वास्तवमें उसकी विषेचना मनोज्ञ है ।”

अभी पथिक अपना मनोभाव प्रकट नहीं कर सका था कि अनायास मन्दिरमेंसे निकलकर द्वितीया विपन्न—नयने नयसेनके पांवमें दण्ड दिया ।



विष अति तीव्र था । काटने ही जयसेन डगमगाकर धराशायी हो गया । शरीर मिथल हो गया, आसक्ति मन्द पड़ गई और देखते ही देखते प्राणवायु अस्थि पिंजरको परित्याग कर गई । मन्दिरके पुजारी अति व्यकुल हुए । अन्त पुरमें राजा रानीने सुना तो अति विलाप करने लगे । थोड़ी देरमें राजकर्मचारियोंसे मन्दिर भर गया । अममयस्त्री मृत्यु सनके आर्तनाड एनम् मन्दिरकी प्रति र्निसे इंट इंट रुदन करती प्रतिभासित होने लगी ।

यह दृश्य देख पयिकने कहा—“धवगओ न, मै अभी युवराजको सचेत क्रिये देता हू ।”

युवराजका शव बाहर लाया गया । दिन दोपहरका समय अश्रुपूर्ण नेत्रोंको फाड फाड देखनेसे निस्तब्ध अर्द्ध रात्रिसे अधिक भयावना प्रतीत होता था । पथिकने अतिरिक्त सब ही दुःखमें किं कर्तव्यनिमूढ पापाणवत रउडे थे ।

पथिकने अपनी झोली गोली । औषधि निशाल नर्मम्यान पर लगादी, नीमके पत्तोंसे बयार क्षप करने लगा । १५-२० मिनटमें ही जयसेनने नेत्र खोल दिये, मानो घोर निद्रासे जागृत हुआ हो । चतुर्दिक अनेक मनुष्योंको गिस्मगसे देख कारण पूछने लगा ।

जयसेनने प्राणदाता पथिकका समाचार मिला तो वह अति प्रसन्न हुआ । उसने पथिकको हृदयमें लगा लिया । उसने वड़े समारम्भसे राजप्रसादमें प्रविष्ट कर अति आदर सम्मानमें कई दिनों तक आतिथ्य सत्कार किया ।

जयसेनने पथिककी कलावतीमें भेंट कराई । कलावतीने देखा पथिक चित्र और मूर्ति

निर्माणमें अति चतुर है वह अति प्रसन्न हुई उसने अनेक रहस्य चित्र विद्यामें शिक्षण दिये ।

पथिकका नाम दत्त था । वह शत्रु पुगवीश महाराज शलका कोई प्रधान कर्मचारी था । वह चिरकालमें सुन्दरी युवतीका कोई नित्र बनानेकी अभिलाषासे भ्रमण कर रहा था । कलावतीको देखकर उसकी चिर बाठा सफलभूत हो गई । शत्रु २ उसने कलावतीका चित्र भली भाँति अंकित कर लिया और ता राजा विजयसेनसे पारतोषिक लाभकर स्वदेशको पयान किया ।

२.

दत्त शङ्खपुर पट्टच गया । शत्रुने पूछा—“पथिककी परिक्रमाकर तुमने क्या विचित्रता देती ?”

दत्तने दीर्घनिश्वास त्यागकर कहा—“मैं देवशाल गया था । पृथ्वीनाथ, क्या प्रशंसा करू; राजा विजयसेनकी पुत्री स्वनामधन्या कलावती, मानो अपमरा होकर पृथ्वी पर आई है । उसके पुनीत सौन्दर्यरी तुलना नहीं हो सकती । कतिपय राजा उसके लिये लालाधित हो रहे हैं किन्तु सच तो यह है ऐसा रमणीय चराचरमें बड़े सौभाग्यसे मिलता है (दीर्घ निश्वास त्याग कर) और जैसी वह लावण्यवती है वैसे ही कलाकौशलमें भी अद्वितीय है ।”

शत्रुने अवहेलना कर कहा—“दत्त ! तुम कवि हो, कवियोंका सम्भरण अलङ्काररति नहीं होता । जन्तु, इसका क्या प्रमाण है कि कलावती जसामान्या सुन्दरी युवती है ?”

दत्तने कलावतीका चित्र दिग्वा दिया । शत्रु देखनेही मुग्ध हो गया । कलावतीके रूप



सौन्दर्यका अधिकार शंखके हृदयपट पर अंकित हो गया, प्रेमान्धकारमें उसे कुछ सुझाई न देता था, विक्षिप्तकी नाईं कुछ काल तक चित्र देखनेमें स्थिर रहा, पुनः उत्तेजित हो कहने लगा—“यह किस चड़भागीकी पाणि-ग्रहीता है ? ”

दत्तने कहा—“अभी कुमारी है । माता पिताने योग्य वर खोजनेकी अनेक चेष्टाएँ कीं परन्तु सब विफल मनोरथ । अन्तमें यह निश्चय किया है कि जो कोई कलावतीके चार प्रश्नोंका उत्तर देगा वही उसके अमूल्य करका भागी होगा । ”

शंखने अति चिन्ता निमग्न होताश हो पूछा “क्या किसी प्रकार दर्शन हो सकते हैं ? ”

दत्त बोला—“राजन्, देखियेगा क्या ! प्रश्नोंका उत्तर देकर पाणिग्रहण कीजिये । ”

शंखने दीर्घ निश्वास त्याग कर कहा—“यदि उत्तर न दे सका तो जीवनसे हाथ धोने पड़ेंगे । ”

दत्तने कहा—“उभायेन हि यच्छयं—उपायसे सब कुछ हो सकता है । ”

शंखने पूछा—“किस उपायका अवलम्बन करें ? ”

दत्तने कहा—“तप कीजिये; क्योंकि बिना तप मान मित्रता है न प्रतिष्ठा, विद्या न ज्ञान; फिर ऐसी श्री-सर्व गुणसम्पन्न बिना तप हस्तगत नहीं हो सकती । ”

दत्तने आज्ञावीर दृष्टिसे दत्तकी ओर देखा कर पूछा—“कीनता तप करूँ ? ”

दत्तने कहा—“श्रीजिन—आदेशित ब्रह्मचर्य-व्रत पालन कीजिये । सरस्वतीकी आराधनासे आपका हृदय पवित्र होगा, बुद्धि निर्मल और अन्तःकरण शुद्ध हो जायगा । अतएव जब कलावती प्रश्न करेगी तो उसका प्रतिविम्ब वाक्-देवीकी अनुग्रहसे आपके हृत्पिण्ड पर प्रदर्शित होगा और आप सुगमतासे उत्तर दे सकेंगे । तप परम पुरुषार्थ है अल्पज्ञ इसकी महिमा नहीं जानते । ”

शंखने अनुमोदन कर कहा—“मैं अभी किसी जैन महात्मासे दीक्षा लेकर ब्रह्मचर्य-व्रत धारण करूँगा । ”

४

कलावतीका अभी विवाह नहीं । हुआ कीई उसके प्रश्नोंका उत्तर नहीं दे सका, निदान विनयसेनने स्वयम्बर द्वारा विवाह निश्चय किया है ।

शंखको पूर्ण विश्वास था । दत्तके आश्वासन दिलानेपर देवशालकी ओर पयान किया । सम्भव है दत्तको प्रश्नोंका मर्म ज्ञात हो । अस्तु । उसने एक पिटारा बनाया जिसमें चार मूर्ति कण्ठः इस प्रकार स्थित कीं कि एकके उत्तर देनेके पश्चात् स्वयम् पिटारेमें दूसरी निकल आवे और उत्तर देकर अन्तर्धान हो जावे ।

देवशालमें रंगमाली मुगझित थी । कुमियों पर राना महासना विराज रहे थे । श्रेणीबद्ध अनेक रामायणके अंतिम पार्थमें एक ओर शंख भी जा बैठे । मोड़ी देरमें रामकुमारी कलावती नयमाल छिपे रंगमूर्तिमें आई । उसने किसी ओर धृष्टेन न की, कटाक्षसे शंख और दत्तको देखा कर मुग्धरा गई ।



प्रतिहारीने सबको सम्बोधन कर उच्च स्वरसे चारों प्रश्न कह सुनाए “१-देव क्या है ? २-गुरु कौन है ? ३-तत्त्व क्या हैं ? ४-परमतत्त्व कौन है ?”

अनेक राजाओंने अपने अनुभव और बुद्धि अनुसार उत्तर दिया परन्तु कोई उत्तर युक्ति-संगत न था। अतएव यही प्रश्न आगे २ प्रतिहारी कहता जाता था और पीछे २ जय-माल लिये रतिकी अनुहार कलावती नीची दृष्टि किये मन्द गतिसे शनैः २ चली जाती थी। जिस रागके पाससे कलावती निकल जाती थी वह दीर्घ निश्वास त्याग कर रह जाता था।

अब सबको मौनावलम्बित देख प्रतिहारीने कही—“जातीयताका कुछ विचार नहीं है, जैन मान्न सब हो अथवा रङ्ग, उत्तर देकर सहज ही इस अमूल्य श्रीकरका भागी बन सकता है।”

क्रमशः इसी प्रकार कहते और कुछका कुछ उत्तर सुनते कलावती शंखके सन्मुख विद्यमान हुई। शंख पिटारा रंगभूमिके बीचोबीच रख फटने लगा—“कलावती स्वयम् अपने मुससे प्रश्न कहे यह कलाका पिटारा स्वयमेव उत्तर देगा।”

घोड़ी देर तक सन्नाटा रहा परन्तु राजमहिषी श्रीमती और राजा विजयसेनके आग्रहसे कलावतीने सभामें इस प्रकार प्रश्न कहना प्रारम्भ किया “१-देव कौन है ?”

पिटारमेंसे निकलकर एक प्रतिमूर्तिने उत्तर दिया—“अर्हन्त भगवान्—” सर्वज्ञो जितरागादिदोषस्त्रैलोक्य पूजितः। यथास्थितार्थवादी च देवोऽर्हन् परमे-

श्वरः॥” अर्थात्-व्यलेश उत्पन्न करनेवाला किसी प्रकारका कारण, और अशुभ प्रवृत्ति बढ़ानेवाला मोह न हो, जिनकी महिमा तीनों लोकमें प्रख्यात हो, जो सर्वज्ञ और शाश्वत सुखका स्वामी हो, अपट्ट प्रकारके छिप्ट कर्मोंसे रहित निर्मल (जीवन्मुक्त) और जो सब नीतियोंका रचयिता हो।”

पहिले प्रश्नके उत्तरसे सन्तुष्ट हो कलावतीने दूसरा प्रश्न किया—

२-“गुरु-कौन है ?”

पिटारसे दूसरी पूतरी (प्रतिमूर्ति) ने निकल कर कहा—“सिद्ध—”

“महाव्रतवरा धीरा भैक्षमात्रोपजीविनः।

सामायिकस्था धर्मोपदेशका गुरवोमताः॥”

अर्थात् जो भिक्षा मात्रसे वृत्ति करनेवाले, सामायिक व्रतमें सदैव रहकर अपने और दूसरोंके हितार्थ धर्मका उपदेश करते हुए निरन्तर पृथ्वीपर अन्य जीवोंके छेड़को बचा करके विचरते हैं और धीर होकर महाव्रतोंको धारण करते हैं तथा-अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, त्याग (निर्ममत्व)रूप पांचों महाव्रतोंका मन, वचन कायासे स्वयम् पालन करनेवाला, दूसरोंको कराने वाला और अन्य करनेवालेकी स्तुति करनेवाला ही गुरु है।”

उत्तर ठीक है प्रसन्न हो कलावतीने तीसरा प्रश्न कहा—

३-“तत्त्व-कौन हैं ?”

पिटारसे तीसरी प्रतिमूर्तिने निकलकर उत्तर दिया—

तत्त्व नौ हैं—१ जीवतत्त्व—इसका मुख्य लक्षण

चेतन्य हैं । संसारमें जीवस्थिति ६ प्रकारसे है । यथोचित उत्तर पाकर कलावतीने चौथा २ अजीवतत्व—चेतन्यरहित वस्तु अजीव अन्तिम प्रश्न कहा— है । इसके ५ भेद हैं ।

३ पुण्यतत्व—जिसके उदयसे जीवको सुख हो वह पुण्य है जो ९ प्रकारसे उत्पन्न होता है ।

४ पापतत्व—जिसके उदयसे जीवको निरंतर दुःख हो । पाप मनुष्यको १८ प्रकारके बन्धनमें डालता है ।

५ आश्रय तत्व—जिन कारणोंसे जीवके साथ पुण्य-पापका सम्बन्ध होता है उन्हें आश्रय कहते हैं । इसके ५ रूप हैं ।

६ संवरतत्व—जीवके साथ कर्मका सम्बन्ध न होने देनेवाले हेतुओंका नाम संवर है । इसके सब रूप १७ हैं ।

७ निर्मरा तत्व—जो कर्म जीवके साथ बंध गए हैं, जिनके कारण जीवको अनेक अवस्थाएं भोगनी पड़ती हैं उनका एक देश शड़ना सो निर्मरा है । यह १२ प्रकारके तप द्वारा साध्य है ।

८ बन्धतत्व—मिथ्यात्व, अविरति और प्रमाद आदि आश्रयके रूपोंद्वारा ग्रहण किये गए कर्म पुद्गलोंका आत्माके साथ (दृढ जलके अभेद मेल समान) मेलका नाम बन्ध है । यह ४ प्रकारका है ।

९ मोक्षतत्व—ज्ञानावरणीय आदि सभी कर्मोंका नाश होनेपर आत्मा जब निर्मल और शुद्ध हो जाता है अर्थात् जीव सब अन्तर्गुल स्वरूपको प्राप्त हो जाता है तब उसे मुक्त कहते हैं ।

४ स्वतत्व—क्या है ।

पिछरेसे चौथी मूर्तिने निकल कर उत्तर दिया ।

“इन्द्रिय दमन—अहिंसा परमो धर्मः जिनका मूलधार है ।”

उत्तर पाकर राजकुमारी कलावती अति प्रसन्न हुई उसने नमित मुख लजाते हुए महाराज-शेखके पास आ कंठमें जयमाल डाल दी ।

अपूर्ण

कदा इशारा कर चले ?

किस लिए दुनिशमे आए, क्या सझारा कर चले ।  
धर्मको हलका किया, अपरमकी भारा कर चले ॥  
व्यर्थ जीवन खो दिया, लेकिन न देश और जातिका—  
कुछ नहीं उजारा किया, पर पिगारा कर चले ॥  
वो दिया है बीज ऐसा कूटका, पर परमै खूब-  
मेलसे रटने न पावे, सबको न्यारा कर चले ॥  
तन मनमे मित्रताई—ऐसी सावधी की ॥  
शील संदम नेम जब तप, सब बिनारा कर चले ॥  
मनमे जीनेका जो दोष, लग रहा है तिलविला ।  
खो नही दूँगा दरमिज, ये नजारा कर चले ॥  
धन्य जीचन है उसीका, और चाँही है मुर्गी ।  
देशका और जानिका जो जो सुझारा कर चले ॥  
जगके माया आलमें भोग पर न लीनी कुछ मुर ।  
रान दिवके बीमने होमि गुजारा कर चले ॥  
किस लिए 'पमा' मुझकी पाद फिर करने लगे ।  
दरगरीके लिए, पद दुप इतरा कर चले ।

मधरीद-

पद्मालाल जैन



# जैनियोंमें डबल ब्रिक्काह और समाजकी अवस्था

पुत्रका स्वभाव परिवर्तनशील है जो बात आज सच्ची है उसको कल भी सच्ची ही होगी यह नहीं कह सकते । द्रव्य, क्षेत्र दाल और भाव इनकी अपेक्षा यन्त्रका स्वभाव हर समय फलदा रहता है । हमारे पूर्वज किसी जमानेमें देनिक एक मन अन्न खाते थे, मगर आज यदि कोई पुरुष इतना अन्न खानेकी चेष्टा करे तो उसको समाज मूखे ही मतायगी । आज एक कुटुम्बका पुरुष जिसके कि भाइयोंको खानेको भी नहीं मिलता है अपने बल द्वारा दूसरे भाईकी रोगी भी खा जानेका प्रयत्न करे या बलपूर्वक छीनले तो, चाहे उससे डरनेवाले या उसकी श्लाघा करके कुछ पड़ा हुआ दुकचा खानेवाले भले ही प्रशंसा करें लेकिन समाजकी दृष्टिसे, धर्मकी निगाहमें और मनुष्य जातिके कर्तव्यकी दृष्टिसे तो वह पुरुष निन्दनीय ही कहलायगा इसी दृष्टांतको कुछ आगे बढ़ाइये और देखिये कि यदि इस तरहसे करनेवाला उस कुटुम्बका एक मुख्य पुरुष है एवं सर्वका अनुकरणीय है तो उसका दृष्टांत उसके छोटे भाईको और उससे तीसरेको लेते कुछ समय नहीं लगेगा और कमजोर ओर छोटे भाइयोंको इसके लिये नुकसान उठाना पड़ेगा । मतलब यह है कि उस कुटुम्बमें एक सम्य और कायदेसर संचालन होनेके विरह एक

हुल्लडा खड़ा हो जायगा और हरपुरुष अपनी मनमानीसी करनेको उद्यत होगा । क्या भी है — यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तद्वर्तेर जना ।

य यत्प्रमाणं कुर्वते स कस्तदुपतेज ॥

हमारे समाजमें कुछ समयसे कुछ नेतागण अपने २ पुनर्विवाह पर उतारू हुए हैं । हेतु इसका यह उनका जाना है कि किसीकी स्त्री बीमार है तो किसीकी स्त्रीसे बनता नहीं है और किसीकी स्त्री बृद्ध हो जानेसे उनके पति-के कानिल नहीं रही है । बाह रे हेतु ! एक स्त्री तो बीमार है दूसरीको तो सुनीधरोंका वरदान है कि कभी बीमार होगी ही नहीं । एक स्त्रीसे बनती नहीं, दूसरीके हृदयका तो बीमा विक चुका है कि कभी नाराज नहीं करेगी । एक स्त्री तो बृद्ध हो गई है परतु खुदका ठेका लिया जा चुका है कि कभी सफेद घाल आयेंगी ही नहीं । क्या यही कारण हमारी समाजकी उन्नतिके होंगे ?

पाठको, मेरा इन समाजके नेताओंके प्रति निमी तरहका द्वेष नहीं है और न मैं इनको किसी तरहकी हीनदृष्टिसे देखता हूँ बल्कि बहुतमी बातोंके लिए ये बहुत ही आदरणीय और समाजके शुभचिंतक हैं परतु फिर भी यदि ये पुरुष कोई सामाजिक दृष्टिसे अयोग्य बतोंव करें तो उनको सुझाना तथा ऐसे हटसे हटाना अपना परम कर्तव्य है । हमें यहाँ यह देखना चाहिए और बहुत ही शांति और भीर परिणामोंसे देखना चाहिये कि आया हमारे नेताओंका यह कर्तव्य दृष्ट है या अनिष्ट । हम इस कर्तव्यको दो दृष्टियोंसे



देखते हैं, एक धार्मिक दृष्टिसे और दूसरी सामाजिक दृष्टिसे ।

धार्मिक दृष्टिसे बहुतसे भाइयोंका मत है कि यह बात लाभकारी है क्योंकि यदि ये इस तरहसे अपना पुनर्विवाह नहीं करेंगे तो एक तरहसे व्यभिचारमें प्रवृत्त हो जावेंगे जो कि विशेष हानिकार होगा। क्या ही अच्छा हेतु है। परन्तु हमारे यहां यह कहाँ लिखा हुआ है कि केवल विषयोंकी तृप्ति ही विवाहका उद्देश्य है। विषयोंकी तृप्ति ही यदि इष्ट है तो इसके लिये एक दूसरे पुरुषको जिसके साथ विवाह होनेसे उसका धर्म और काम दोनोंका निर्वाह होता उसे स्त्रीसे बधित रखना कहाँ तक ठीक समझा जा सकता है। विषयोंकी तृप्तिके लिए एक स्त्रीका सहधर्मिणिपना नष्ट करना कहाँ तक धार्मिक कर्तव्य कहा जा सकता है। और इसका भी तो क्या प्रमाण है कि दूसरी आदियाँ हो जिनसे ये लोग विच्छिन्न पक्के घृणाचारी ही बने रहेंगे ।

दूसरे यदि सामाजिक दृष्टिसे देखें ( यद्यपि इन दोनोंमें परस्पर यनिष्ट सम्बन्ध है ) तो यह बात बहुत ही सामानको उगल पुर्णतः फर देनेवाली मालूम होती है। हमारे सामानमें विभवा विवाहका जोर पहलेमे ही बहुत ज्यादा मचा हुआ है इसमें याद टबल आदियाँ करना एक तरह पीकी आहुति देना है। जिस समाजमें पहले ही इनने अविवाहित पुरुष विद्यमान हैं, जिस समाजमें पहले ही मेकडिकियोंकि जिसे हजारोंही भेट देनी पड़ती है उन समाजमें पनाइयों और जातिके अनुष्ठानोंको

विवाह करना उन अविवाहित पुरुषोंको विधवा विवाहके लिये उत्तेजन देना नहीं तो और क्या है। क्या वे पुरुष नहीं हैं ? क्या उनको घनाध्यों की जैसी विषय चासना नहीं है ? क्या वे संतानोत्पत्तिके लिये असमर्थ हैं ? यदि नहीं तो फिर उनको अविवाहित अवस्थामें रखकर समाजकी एक कन्याको विषय तृप्तिके लिये उनसे छीन लेनेका धनवानोंको क्या अधिकार है ? समाज उनके चलने डरती है या उनके धनके लालचमें आगई है। इस वक्त तो समाज चुप बैठी है लेकिन जब किसी युवा पुरुषने और किसी तरहका प्रस्ताव निकाला तो समाज एकदम अन्याय अन्धाय चिल्लाने लगेगी। कारण वगैर कार्य नहीं होता यह प्रसिद्ध है। क्या अन्यायके कारणोंको मिलाना अन्याय नहीं है ? यदि नहीं है तो यह कार्य भी अन्याय नहीं है और लोग बहुत ही तंग हालतमें आनेसे उसका अवलोकन करेंगे ।

समान-जैनसामानके वीरो, उठो और इन कारणोंको मिटानेका प्रयत्न करो, इन महा-नुभावोंको समझाओ, नहीं तो याद रखो गुम्हारे समाजमें भी शूद्र जातिके समान नाते और तलजोंकी रस्में जारी हो जायगी। इन नेता-यनोंके शब्दोंके साथ और उन महानुभावोंमें टबल आदियोंके विरुद्ध एक नम्र विनम्रताके साथ मैं यह लेख समाप्त करता हूँ कि ईश्वर इनको सुखि दे ।



## वीर्य अथवा धातुक्षीण क्या है ?

\*\*\*

पुरुषोंकी निर्बलताके अभियोगोंमें वीर्य का अभियोग प्रधान होता है। कुछ लोग वीर्यको धातु अथवा धातु कहते हैं। आज कल मारतों इस व्याधि (रोग)की प्रबलता विशेष देखी जाती है। सबसे ज्यादा धातुक्षीण और प्रमहके रोगियोंकी संख्या हमारे औषधालयमें दिन प्रतिदिन बढ़ती जाती है। इसका क्या कारण ? धातु अथवा वीर्य क्या है ? तर्हण पुरुष कदाचित् समझते हैं कि शरीरमें किसी जगह वीर्यका तालान मरा है। इस ताज्जबसे जितना चाहे वीर्यका उपयोग कर लिया जावे। वे ऐसा भी मानते दिखाई देते हैं कि यह तालान खाली होगा तो शक्तिकी २-४ गोठियां खाकर फिर भर लिया जायगा और इच्छातुसार उसका उपयोग किया जायगा। यह उनके मनका भ्रम है। इस भ्रमकी दूर करनेके लिये वीर्य क्या वस्तु है उसका यहां विचार किया जावेगा। वीर्यसम्बन्धी उपयोगी वर्णन वैद्य कल्पतरु तथा बृहन्निघण्टु रत्नाकर नामक वैद्य ग्रन्थोंमें अच्छी तरह किया गया है उसी परसे आज हम अपने प्रिय पाठकगणके सामने संक्षेपसे वर्णन करते हैं।

आप जो भोजन करते हैं पाचनद्वारा उस भोजनकी एकडे बाद दूसरी ऐसे सत्त धातुएँ बनती हैं। यह बात समझने योग्य है। भोजन पचानेके लिये हमारे शरीर की रूपांशोंमें सत्त भिन्न

भिन्न कोठे हैं। जो भोजन पेटमें जाता है वह एकडे बाद दूसरे ऐसे सत्तों कोठोंमें होकर जाता है। अब इस बातकी अधिक स्पष्ट शब्दोंमें समझ लेंगे।

जो भोजन अपने मुँहमें चबाया जाता है वह आमाशयमें चुरता है और आंतोंमें पकनेको ठेका जाता है। उस भोजनका पहले स्वेत रस बनकर नाड़ियोंमें चढ़ता है। भोजनकी यह पहली क्रिया है। यह रस दूसरे कोठमें अधिक पककर लाल रक्त बनता है। यह दूसरी क्रिया है। इस रक्त पर फिर तीसरे कोठमें विशेष क्रिया होती है और रक्तसे मांस बनता है। यह तीसरी क्रिया है। मांससे मेद अर्थात् चर्बी बनती है। यह चौथी क्रिया है। चर्बीसे अस्थि अर्थात् हड्डी बनती है। यह पाँचवीं क्रिया है। हड्डीसे मज्जा-हड्डीके भीतरका मावा बनता है। यह छठी क्रिया है। और इनकी सब क्रियाओं और समयके पश्चात् मज्जासे वीर्य बनता है। यह बात तुम जानते हो। इस वीर्यका शरीरमें कोई कुवां तथा तालाव और कोई टांकी नहीं है कि जिससे जल्दीसे भा छे। सारे शरीरमें व्याप्त है। जैसे रक्त, मांस और हड्डी वीर्य अपनी बारीक बारीक नाड़ियोंसे निचुड़कर जाता है। यदि बचतमें रहे तो थोड़े भ्रमसे जितना चाहिये उतना वीर्य उपयोगमें लिया जा सके, किन्तु बचतमें न हो तो वीर्यकी नाड़ियोंको निचोड़नेमें भारी श्रम होता है। वीर्यको बचतमें रखनेका नाम ब्रह्मचर्य है।



किन्तु वीर्यके सम्बन्धमें एक बात और भी समझने योग्य है। वह यह कि जैसे रसोईकी क्रियामें पाक बिगड़ जाता तथा सड़ जाता और खराब हो जाता है वैसे ही शरीरकी इस प्रयोगशालामें भोजनका जिस तरहका मसाला काममें दया जाता है उसी तरहका पाक तयार होता है और अंतमें वीर्य भी वैसे ही गुणवाला होता है। सुन्दर और सात्विक उत्तम उत्तम भोजनका वीर्य उत्तम और शुद्ध बनता है। और बिगड़े हुए अथवा तामसी भोजन अथवा व्यसनकी खराब चीजोंका वीर्य खराब बनता है। जैसा भोजन वैसा वीर्य। यह बात अवश्य ध्यानमें रखने योग्य है। जैसे रक्त शुद्ध होनेकी जरूरत है वैसे ही वीर्य भी शुद्ध होना चाहिये। जब रक्त बिगड़ता है तब वीर्य भी बिगड़ता है, वीर्य कम होता है और निर्बल बनता है अर्थात् पतला होता है। इतना ही नहीं किन्तु वह बिगड़ता है यह बात बहुत लोग नहीं समझते। जैसी रक्तकी परीक्षा है वैसी ही वीर्यकी भी परीक्षा है। जैसा रक्त काला पड़ता और उसे दुर्गन्ध आती है वैसे ही वीर्यमें भी होता है। वीर्यके लिये शिवायन करनेवाले और दवाओंके लिये हाथ हाथ करनेवाले क्या इन सब बातोंका विचार अपना परिशोध करने हैं? कभी नहीं।

क्या? इत्यादि विषयोंमें अनजान लोग भारी भ्रान्ति तथा भूलमें रहते हैं; इसलिये उसका भी थोड़ा विचार कीजिये।

जैसे दस्तका जुलाब लेनेसे दस्त होता है और पेशाबका जुलाब लेनेसे पेशाब अधिक होता है इसी तरह वीर्यको भी एक प्रकारका जुलाब लगता है। उससे वीर्य शरीरसे खिंच आता है। यदि एकाधिक जुलाब लीजिये अथवा हल्का जुलाब लीजिये तो सिर्फ आंतोंका मल निकल जाता है। किन्तु यदि नमालगोश जैसा कड़ा जुलाब हो तो आंतोंके सिवाय शरीरकी नाड़ियोंमेंसे रक्तको भी खींच निकालता है और उससे शरीर निर्बल पड़ जाता है। इसी तरह वीर्यके जुलाबको समझो। अच्छा, तो वीर्यका जुलाब क्या और वीर्यको जुलाब किस तरह लगता है? पुरुषको स्त्री वीर्यके जुलाबकी वस्तु है अर्थात् पुरुषके मनमें स्त्री सम्बन्धी संकल्प, स्त्रीका स्मरण, स्त्रीका स्पर्श और स्त्रीका आलिंगन इत्यादि शरीर और मनकी चेष्टाएं पुरुषके वीर्यको उत्तेजित करती हैं अर्थात् वीर्य बाहर आनेका प्रयास करता है। उसीका नाम वीर्यका जुलाब है। वास्तविक रीतिसे देखिये तो मनही वीर्यको उत्तेजित करनेवाली वस्तु है और उसीसे स्त्री सम्बन्धी इच्छा अर्थात् 'काम' को 'मनोन' नाम दिया गया है।





जुझाव लेनेसे शरीर बहुत ही निर्बल हो जाता है। इसी तरह निर्बल शरीरसे वीर्यका जुझाव हुआ करे अर्थात् वीर्यका उपयोग बारबार हो अथवा दूसरी रीतिसे वीर्य बाहर जाय तो उससे भी शरीर बहुत कमजोर हो जाता है बल्कि जुझाव कड़ा लगनेसे उसके परिणाममें मरोड़ हो जाती है, रक्त पित्त आदि गिरते और पीड़ाके साथ गिरते हैं। ऐसा अनुभव कड़ा जुझाव लेनेवालेको हुआ ही होगा। वीर्यको जब ज्यादा जुझाव लगता है तब भी इसी तरह होता है। अधिक रचकसे मल निकल जानेपर पीव और रक्त गिरने लगता है अर्थात् आंतोंसे खून निकलना शुरू होता है और पेटमें मरोड़ होती है इसी प्रकार वीर्यको अधिक जुझाव लगनेसे वीर्य क्षतम हो जानेपर यदि वीर्यका जुझाव लगता रहे अर्थात् मन वशमें न रहकर वीर्यके उपयोग करनेकी मूर्खता बढती रहे तो वीर्य समाप्त हो जाते ही उसके पीछे वीर्यके बदले रक्त भी गिरता है और जैसे मरोड़में पीड़ा होती है वैसे ही इसमें पीठके ऊपरी भाग और रीढ़की नसे खिचती और सारे शरीरकी नसोंका एकदम पीड़ाके साथ खिंचाव होकर पीछे शरीर बिल्कुल शिथिल पड़ जाता है। वीर्य सम्बन्धी बहुत जुझाव लेनेवालोंको अर्थात् अतिविषयी निर्बल पुरुषोंको इस बातका अनुभव अवश्य होना ही चाहिये।

इस तरह पुरुषका वीर्यसी सम्बन्धी विचारोंसे उत्तेजित होता और बाहर जाता है। अतः स्त्रियोंको वीर्यका जुझाव कहे तो कहा जा सकता है। किन्तु उनका सब आधार पुरुषके मनोवृत्त पर है।

दृढ़ मनवाले पुरुष अथवा मनवृत्त वीर्यवाले पुरुष कदापि एकदम उत्तेजित नहीं होते हैं और उनके वीर्यको जल्दी जुझाव नहीं लगता। इससे विपरीत निर्बल मनवाला पुरुष अथवा निर्बल व कम वीर्यवाला पुरुष जल्दी उत्तेजित हो जाता है, जल्दी कामी बनता है और जल्दी वीर्यका जुझाव लगता है। स्त्री सम्बन्धी विचार करते अथवा स्त्रीके साथ बातें करते करते शरीरसे वीर्य निचुड़ कर बाहर निरल जाता है उसीका नाम वीर्यका जुझाव है और जो जुझाव अधिक लगता अथवा बारबार लगता रहा वह पानी जैसा होता है। इस तरह बहुत कामी पुरुषको बारबार वीर्यका जुझाव लगता है वह जुझाव बहुत पतला होता है। और उसीसे अधिक निर्बल और बहुविषयी लोग शिकायत करते हैं कि हमारा वीर्य पानी जैसा पतला पड़ गया है। किन्तु वीर्यसम्बन्धी इस जुझावमें दूसरी एक विशेष बात भी ध्यानमें रखनी है। वह यह कि बहुवीर्यवाले शरीरसे थोड़े ही ध्रुसे बहुत वीर्य खिच आता है। और थोड़े वीर्यवाले शरीरसे अधिक ध्रुसे भी थोड़ा वीर्य आता है।

युवा पुरुषोंमें वीर्यके सम्बन्धमें जो स्त्री शिकायतें देखनेमें आती हैं उनमेंसे एक शिकायत उनकी भारी बिन्नाका कारण बनी हुई देखनेमें आती है। वह शिकायत यह है कि उनके वीर्यका जल्दी जुझाव लग जाता है। वं ऐसा मानते हुए जान पड़ते हैं कि जुझाव लेनेपर यदि वीर्यको जुझाव लगते विभ्रम लगे तो बहुत ठीक और यही पुरुषत्व है। जुझाव



जल्दी लगे उसे वे वास्तविक पुरुषत्व नहीं मानते । वैद्यशास्त्र तो कहता है कि बड़का क्षय हुए बिना जल्दी जुड़ाव लग जाय उसीका नाम वास्तविक पुरुषत्व । और जुड़ाव लगे बिना लगनेके साथ अधिक परिश्रम पड़े और अन्तमें बड़का भी क्षय हो उसका नाम न्यून पुरुषत्व अथवा निर्बलता है । निरोगी शरीरवालेको अरंडी (कैस्टल ऑएल) आदिका सादा जुड़ाव भी जल्दी लगता है और रोगी शरीरवालेको कड़ा जुड़ाव भी बराबर नहीं लगता । इस स्वाभाविक प्रमाणसे तो वीर्यको जुड़ाव जल्दी लगना ही सच्चा पुरुषत्व है परन्तु जुड़ाव लिये बिना बराबर पाखाने जाना जैसे रोग है वैसे ही वीर्यके किसी विकारोंसे बराबर जुड़ाव लगा करे तो वह वीर्य सम्बन्धी रोग है । इस प्रकार वीर्यको जुड़ाव लगा करे तो वह कोई पुरुषत्व नहीं है ।

वीर्य सम्बन्धी इतनी बातें जाननेके बाद अब हमारे भोजनसे वीर्य कितना बनता है और उस वीर्यसे सर्व कितना करना चाहिये इस विषयका हिसाब करना चाहिये ।

विद्वानोंने अनुमान और अनुमानसे ऐसा खोज किया है कि ८० रतन भोजनसे २ रतन रक्त बनता है और २ रतन रक्तसे २॥ तोड़ा वीर्य बनता है । इन हिसाबसे ८० रतन भोजन मिलने में मगधमें खाया जाय उतने समयमें निकले २॥ तोड़ा वीर्य शरीरमें बनता है एक वृष्ण भोजनसे शरीरमें आया है कि जो सुन्दर और अस्वस्थ सुख सुख निश्चय बना सीमामें रहकर वीर्यका उपयोग करता हो उसके शरीरसे

वीर्यका जुड़ाव एक ही समय २ से २॥ तोला निकलता है । इन दोनों हिसाबोंका सार यह है कि २ मन भोजनका सन्ध (वीर्य) एक समयके जुड़ावके साथ निकल जाता है । स्वस्थ तरुण पुरुष प्रतिदिन औसत १॥ से २ रतन भोजन खावे तो ४० दिनोंमें २ मन भोजन खाये अर्थात् उपरोक्त हिसाबके साथ मिलान करनेसे ४० दिनोंमें उसके शरीरमें २॥ तोला वीर्य जमा होता है । इस सब हिसाबका सार यह निकला कि स्वस्थ पुरुष भी ४० दिनोंके बाद वीर्यका उपयोग करे तो शरीरमें वीर्य सम्बन्धी आय व्ययका खाता बराबर हो । यदि इससे कम समयमें वीर्यका खर्च हुआ करे तो बुरा हो और अन्तमें दिवाला निकले । बहुतसे लोग जो वीर्य सम्बन्धी इस आय व्ययका विचार नहीं करते वे बहुत काले नादिहंद अर्थात् दिवालियेकी स्थितिमें होते हैं । परितापका विषय तो यह है कि लोग अपनी कमाई और पैसेके खर्चका नित्य हिसाब करते हैं और कजरखोज कर पैसेका बचाव भी करते हैं परन्तु जिस वीर्य पर शरीरके जीवन और सब तात्कालिक सुखोंका दार मशर है अगर वह उस वीर्यके आय व्ययका कुछ भी विचार नहीं करते ।

पुरुषमें वीर्य परिपक्व हो जाता है अर्थात् कितने वयमें वीर्य परिपक्व बनता है यह बात भी यहाँ बताने बिना न चलेगी ; क्योंकि वीर्य सम्बन्धी निर्बलताही भारी दिवालीमें बहुत वीर्यका अभाव उपयोग करनेसे जन्म पाली हुई देखनेमें आती है । वीर्यका शायद प्रसार प्रकारकर करना है कि पुरुषका शरीर २५ वर्षकी वयमें सुदृढ़

खिल जाता है यदि किसीको संदेह हो कि उस उमरके पूर्व तर्ह लड़के संसारमें पड़ते हैं और उनके वीर्यसे लड़का भी पैदा होता है इसका क्या कारण ? इस प्रश्नका खुलासा यह है कि प्रत्यमें वीर्यका बीज तो बाल्यावस्थासे ही होता है और ११ से २० वर्ष तक यह वीर्य परिपक्व होने लगता है । ऐसे अपक्व वीर्यसे जो सन्तान पैदा होती है वह निर्वल होती है और वर्तमानमें छोटे बच्चोंके निर्वल होनेसे उनकी मृत्यु संख्या भी बहुत बढ़ी होती है उसका यही कारण है, इतनाही नहीं परन्तु ऐसे अपक्व वीर्यसे उत्पन्न हुआ बालक यदि मोटा ताना भी हो और अधिक जीता हो तो भी उस प्रमाणमें अधिक निर्वल होता है और साधारण कारणोंसे बीमार पड़ जाता है । परिपक्व वीर्यसे जनित बालककी स्थिति प्रमाणमें अत्युन्नत होती है ।

युवा प्रत्यमें १६ वर्षकी उमरसे वीर्य प्रगट होने लगता है किन्तु वह गुलाबकी कच्ची कलीके समान है उसमें सुगन्ध तो होती ही है किन्तु यह सुगन्ध बहुत प्रकट नहीं होती । जब कली पक्कर खिलती है तभी उसकी सुगन्ध प्रकट होती है । इस कलीको पकनेके पूर्व तोड़कर उसकी बिना इच्छा ही पकाओ तो उसकी पखुदियां कुछ खिलकर उसका छोटा आकार बनेगा परन्तु गुलाबके पेड़ पर रह कर जैसी खिलती फूलती वैसी वह कभी भी नहीं खिलती । इसलिये तर्ह बालकोंकी १६ वर्षकी आयुमें अरिपक्व वीर्यभण हो तो इससे भारी हानिके सिवाय और कोई लाभ नहीं । तर्ह लड़कोंके शरीरकी बनावट और उनकी सब घातुएं १६ से २५ वर्षके आयु तक

संपूर्ण हो जाती हैं । उनमें जितनी शीघ्रता होती है उतनी कच्चाई रह जाती है । बियां १६ से २० वर्षकी उमर तक पूर्ण रूपसे तर्ह पाई अर्थात् स्त्रीत्वमें आती हैं । इस प्रमाणमें स्त्री प्रत्य संपूर्ण शरीर विकसित होनेके और पूर्ण वयमें आनेके पश्चात् ही संसारमें पड़े ऐसा वैद्यक शास्त्रका भी मत है । वैद्यक शास्त्रोंकी इस आज्ञाका उल्लंघन करनेसे ही अपने भारत वर्षमें निर्वलता घातुक्षीण प्रमेह आदि २ रोगोंकी प्रवृत्ता अधिक बढ़ गई है । और असखी कारणोंको न जान कर और अपनी भूलोंको न सोच कर शक्तिकी गोलियां तथा दवाइयोंकी खोज करते फिरते हैं ।

पंडितराव वैद्य जैनी ।

दा० धी० रा० य० सर हुकमचंदजी  
पारमार्थिक औषधालय-इन्दौर

\*\*\*

पुरुषार्थ ।

बनाओ मूलमंत्र पुरुषार्थ ।

अपे निशदिन जो इसको होय सिद्ध सकल पदार्थ ॥

रहते हैं जो भाग्य-अपीन ।

शीघ्र हो जाते तेरह तीन ॥

मर जाते वे जो ही करते हाथ २ सुखार्थ ॥

पूर्ण न होती कोई आत्मा ।

कर न जो पुरुषार्थ जरासा ॥

समस्त पुरुषार्थ ही को प्रशस्त स्वर्गीय पदार्थ ॥

बनाकर अपनी उच्च आशा ।

फेंको पुरुषार्थका पाशा ॥

होगी निजय दुम्हारी, जीवन होगा पर-स्वार्थ ॥

हुए प्रत्य अरु प्रातःस्मरणीय ।

अपकर मंत्र यही रसणीय ॥

करना है यदि कुछ कार्य लोकाय तथा परमार्थ ॥

बनाओ मूलमंत्र पुरुषार्थ ।

निर्भय

# महाविद्यालय मथुरा की

## कुछ कर्तव्य ।

\*\*\*

पाठको, आपको यह बात मली प्रकार विदित होगी कि किसी कार्यकी उन्नति अगति, उसके कर्त्ताओंकी योग्यता एवं अयोग्यता पर निर्भर रहती है; जो कार्य किसी अयोग्य पुरुषके हाथमें होता है वह हजार प्रयत्न करनेपर भी उन्नति नहीं कर सकता और जो कार्य किसी योग्य पुरुषके तत्वावधानमें होता है वह बहुत शीघ्र उन्नति कर जाता है । कुछ दिन पहिले जिस जैनगज्जके केवल ३००-४०० ग्राहक थे उसीके आन १००० ग्राहक हैं, जिस जैनगज्जके किसी समय साप्ताहिक होने पर भी महीनों दर्शन नहीं होते थे आन उसीका नियमित रूपसे प्रत्येक सोमवारको प्रकाशित हो जाना अवश्यमेव कार्यकर्त्ताओंकी कर्त्तव्यपरायणता और योग्यताका परिचायक है । जिस समय अजीमद निवासी सुयोग्य पंडित श्रीबालजी इमके सम्पादक थे उस समय भी जैनगज्ज साप्ताहिक होते हुए मासिक था । और ग्राहक भी ३००-४०० से अधिक न थे । हम यह नहीं कहते कि उनमें सब सम्पादकी योग्यता नहीं, परं इन कार्यको शायद किसी मर्यादा का समायोजन कारण ही ऐसा करते होंगे या और कोई कारण हो उसे मर्यादा ही माने । अतः पाठकोंको यह विदित हो गया कि पंडितश्री जैनगज्जके उन्नतिके

द्वार पर नहीं पहुंचा सके थे ।

अत्र पंडितश्रीके हाथमें महाविद्यालय मथुराका कार्य है—यानी वे उसके प्रिंसिपल—अधिष्ठाता हैं; किन्तु हमको उनके अधिष्ठातृत्वमें भी विद्यालयमें कुछ परिवर्तन नहीं मांझूपा होता है और यही कहना पड़ता है कि 'वही चाल बेदंगी जो पहिले थी सो अब भी है, । हमको यह मालूम है कि पंडितश्री विद्यालयमें हर समय नहीं रहते परन्तु उनका यह तो कर्त्तव्य है कि वहांके कार्यकर्त्ता योग्य रहें । सबसे पहिले किसी संस्थामें उनका सुपरिन्टेन्डेन्ट योग्य होना आवश्यक है; परन्तु हमको मालूम है कि महाविद्यालयके वर्तमान सुपरिन्टेन्डेन्ट, बाबू रामकृष्ण योग्य नहीं हैं, न वे समाजको जानते हैं, न समान उनको जानती है । हिसाब किताब भी ठीक रखना नहीं जानते, यात्रियोंसे मिलते नहीं, छात्रोंकी भी देखरेख नहीं, रखते, इन्हीं त्रुटियोंके कारण वे हस्तिनापुर आश्रममें न रह सके । जैनगज्ज परका पत्र होनेपर भी विद्यालयका मासिक हिसाब नहीं करता विद्यालयमें अध्यापकगणभी नियमित तौरसे नहीं रहे जाते । किसी २ विषयके तो अध्यापक एक २ दो २ पथिक नियमित नहीं किये जाते । यह पड़े दुःखकी बात है कि मासिक कार्य दिगंबर जैन महाविद्यालयमें कितने कम हैं उनके विद्यार्थी भी नहीं हैं । यानी नाम पराविद्यालय और छात्र केवल १५-२० हैं । ऐसी अवस्थामें महाविद्यालयकी काशीके स्वा. म. विद्यालयमें मित्र देनेसे कोई



हानि नहीं। ऐसा न करनेसे वही मसल होगी 'नकटा जिये बुरे हवाल'। पं. श्रीलालजी एवं मुंशी मूलचन्दजी ऐसा करनेसे अपने स्वतंत्र अधिष्ठातृत्व एवं मंत्रित्वकी रक्षा और मथुराकी शोभा भले ही बंदाते रहें परन्तु उनके इस कार्यसे समानकी रक्षा एवं शोभा होती दृष्टिगोचर नहीं होती। हम तो यही जोरकी आवाजसे कहेंगे कि या तो मथुरा विद्यालयकी दशा सुधारी जाय या उसको बहुत शीघ्र काशीके स्या० म० विद्यालय में मिला दिया जाय। हम इस ओर इन्दौरके दानवीर सर सेठ डुकमचन्दजीका ध्यान विशेष आकर्षित करते हैं क्योंकि आप स्या० महाविद्यालय काशी एवं महासभा दोनोंके समापति हैं इस कारण आपका इस विषयमें हस्ताक्षेप करना बहुत ही आवश्यक है अन्यथा आप जैसे महापुरुषोंके समापतित्वमें इस विद्यालयकी ऐसी दुर्दशा कभी शोभा नहीं दे सकती। आपका कर्तव्य है कि विद्यालयकी दशा सुधारे या उसको काशीके विद्यालयमें मिला दें क्योंकि दोनों विद्यालयोंके एक ही उद्देश्य है। तब आपके समापतित्वमें दोनोंकी उद्देश्योंकी रक्षा होना कोई कठिन बात नहीं, आशा है सेठ साहब इस ओर ध्यान देंगे।

हम एक बात पर और कुछ कह देना आवश्यक समझते हैं। वह यह है कि कुछ दिन पहिले काशीके स्या० म० विद्यालयके मंत्री बाबू सुमतिशालजीने एक चिट्ठी मुंशी मूलचन्दजी यज्ञी महाविद्यालय मथुराके नाम जैन मित्रमें इस आशयकी छपाई थी कि दोनों विद्यालयोंको एक कर देनेमें आपकी क्या

सम्मति है। उसका जो उत्तर जैनगान्धर्वमें छपा है। उसे देखकर मुझे एकदम अवाक रह जाना पड़ा। मुंशीजी कहते हैं कि महाविद्यालय मथुराका रूपया धार्मिक शिक्षाके लिये है अतः स्या० म० वि० में नहीं मिलया जा सकता। उनके इस कथनका यही अभिप्राय निकलता है कि काशीके विद्यालयमें धार्मिक शिक्षा नहीं दी जाती। देखा पाउको, समानकी आश्योंमें कैसी धूल डाली जाती है। क्या मुंशीजीको नहीं मालूम है कि स्या० म० वि०से ही शिक्षाप्राप्त पं० माणिकचन्दजी न्यायाचार्य, पं० मनलालजी धर्माध्यापक आपके विद्यालयमें रह चुके हैं और वर्तमानमें भी पं० उमरावसिंहजी न्यायतीर्थ उसी विद्यालयसे शिक्षाप्राप्त धर्माध्यापक हैं। यदि मुंशीजीका केवल यह कारण अर्थात् काशीके विद्यालयमें धर्मशिक्षा नहीं दी जाती है इसलिये मथुरा विद्यालय उसमें नहीं मिलाया जा सकता। विस्तृत बोध है। और मुंशीजीका यह भय कि हमारा विद्यालय स्या० म० विद्यालयमें मिला देनेसे उसका रूपया अवार्मिक शिक्षामें खर्च होगा बिल्कुल व्यर्थ है। जहां तक मेर ख्याल है दोनों विद्यालय मिश्रकर समानकी उन्नति बहुत शीघ्र कर सकते हैं। मुंशीजी या अन्य कार्यकर्ता यदि ऐसा नहीं करते हैं और विद्यालयकी चोन्ही छीछलेदर करना चाहते हैं तो वह सिवाय दुर्भाग्यके और कुछ नहीं है।

बनारसके हिन्दूकालेनका एक विभाग रणवीर संस्कृत पाठशाला है। उसमेंसे अच्छे २ संस्कृतके विद्वान निकलते हैं और उसके उद्देश्यमें



कोई बाधा नहीं आती। उसी प्रकार उक्त दोनों विद्यालय मिल कर केवल दि० जैन कालिनके संस्कृत विभाग कहलायें तो उसमें कोई छूट न लग जायगी और जिस प्रकार इस समय उनमें धार्मिक शिक्षाके साथ २ संस्कृतकी शिक्षा होती है वैसी शिक्षा कालिनके एक विभाग हो जाने पर भी हो सकती है, इसमें कोई बाधा नहीं आती ।

तात्पर्य यह है कि महाविद्यालय मधुगाका कार्य वर्त्तमानमें जैसा चल रहा है उसको देखते हुए विद्यालयको स्या० म० वि० काशीमें मिला देना ही उपयुक्त है। मधुगा महाविद्यालयके कार्यकर्त्ताओंका यह कहना कि इस विद्यालयका द्रव्य धार्मिक शिक्षाके लिये है अतः काशीके विद्यालयमें नहीं मिलाया जा सकता विशुद्ध युक्तिशून्य है क्योंकि काशीके विद्यालयमें धार्मिक शिक्षा दी जाती है यह समान अच्छी तरह जानती है। इसके अतिरिक्त समानमें एक कालिनकी आवश्यकता देखते हुए यदि महाविद्यालयका कार्य अच्छी तरह चलता हो तब भी काशी और मधुगाके विद्यालयोंको एक करके उसको स्याद्वाद दि० जैन कालिनका संस्कृत विभाग बना देना भी योग्य है। १२॥ लाख जैनियोंके होने हुए एवं करोड़ार्थिपतियोंके होने हुए एक जैन कालिनका न होना जैन समानके लिये अज्ञाकी बात है। इस समय कालिनकी आवश्यकताको कोई दूरदर्शी भलीभाँति नहीं कर पाता। कालिनका

संस्कृत विभाग बन जानेसे अंग्रेजीका विभाग खोलनेमें कार्यकर्त्ताओंको बहुत सुगमता हो जायगी।

अन्तमें हमारा मुन्शी मूलचन्द्रजी, पं० श्रीला-लजीसे नम्र निवेदन है कि समानके हितकी दृष्टिसे विद्यालयका कार्य योग्य-रीतिसे चलावे अन्यथा उसे स्या० म० वि० में मिला देनेमें विरोध न करें। हम दानवीर सर सेठ हुक्मचन्दजीसे भी फिर बिना कहे न रहेंगे कि आपका नाम भारतवर्षमें ही नहीं संसारमें प्रख्यात हो रहा है, जैन समानकी उन्नति देखनेके इच्छुक हैं एवं भारतवर्षीय दि० जैन महात्मा और स्याद्वाद दिगम्बर जैन महाविद्यालय काशीके समापति हैं—आपके नेतृत्वमें मधुगा विद्यालयकी दुर्दशा एवं दिगम्बर जैन कालिनके संस्कृत विभाग बननेमें बाधा पड़ना कभी भी उत्तम नहीं कहा जा सकता है अतएव इसको दीप्ति व्यवस्था कीजिये। महासमाज अनिर्देशन कोशमें शीघ्र होनवाला है। आपको चाहिये उसमें स्वयं प्रकारकर इस माम-लेको साफ करें और उचितके मार्ग पर जैन समानको एक कदम आगे बढ़ानेमें सहायता दें। हम यह भी जरूर देना उचित समझते हैं कि यह लेख किसी देश बुद्धिके कारण नहीं लिखा गया है बल्कि समानकी हितकी दृष्टिसे ही लिखा गया है।

मदययन्ता ।



# ફિલ્ફમંચલ-ચિંતામણી

## સદુપદેશરૂપ સંવાદ.

લેખક:-પાગલ, હુસીઆ.

ચિંતામણી:-મંગળ ! તજો ! તજો ! !

આ બાલિકા સૌંદર્ય પર વધતાં જતાં મોહને; અરે ! લાલસારૂપ પ્રેમને ! ! આ હાઠ મોસાદિથી મટેલા-ચર્મરૂપ સૌંદર્યને તજો ! - મારાં આ અસાધ્યતાથી ભરેલાં દેહ પૂના નિચારેને-અરે ! તારા હૃદયમાં વિષયરૂપ હુબ્બપદ્માને આ ચાલતી ક્ષણથી તિર્જાનલી દે ! આ દુટ મોહ-મગ્નને આ સેકંડે કાપી નાખ ! તેના સુદમમાં સુદમ ! આણું આણું જેટલા તુમડા કાપી દેઈ દે ! આ મારું બાલિક સૌંદર્ય નાશ પામનારું અને જોયું યાદી રાખે યાદ ઉડનારું દેહ તારાં અરે ! તારાં દુટપણમાં-દુઃખીયો માં વધારોકારનારું નીવડી તારી આરુપ અધમ-અરે-નીચ ગતી કરાવશે ! સૌંદર્ય સાથે દેહનો વિનાશ અને દેહનાશ સાથે સૌંદર્યનો નિશ્ચયથી વિનાશ થવાનો છે, આ આવશ્ય-નિશ્ચયરૂપ જગતની કિંપાથી-કેટલું છલું છે ? આ જગતની ગોલડી જન્મ-મર્ણુરૂપ કિંપાથી દુઃસ્વા-આં કામીની-અરે-કામીની ખરી પણ તેમાં નીચ વેળા પડના મોહને તજ દે ! તજો જન્મ-મર્ણુ રૂપ દુઃખો દરે કરવા પ્રયત્ને ! આઠા ! પરમાત્માને ભજ ! પ્રભુની બક્તિ કર ! તારું અંતઃકરણ શુદ્ધ કર ! શુદ્ધ કર ! !

મિત્ર મંગળ:-શું શુદ્ધ કરે ? અંતઃકરણ ! અંતઃકરણ તો તારાંમાન છે તે ! તારા ચિનાયતી તારા રૂપ સ્વરૂપ ચિનાયતી મારી દૃષ્ટીએ અન્ય ચીજ નથી ચડતી ! તારાં ચિત્રમાં મરત બનેલો ! તારાં પ્રેમના ખ્યાલા પી-પીને હુબ્બ યોગેલો હું શું શુદ્ધ કરે ? શુદ્ધ કે અશુદ્ધ શું સમજાયું ? કંઈ પણ નહીં ! તેણે કાન નહીં ! ! પ્રિયે ! આદ ! મારો નેત્ર ચિંતામણી આમ કેમ કિલ્લ યાદ-મોહપદ્માનું મોહી મને તરકોડે છે ? ચિંતામણી:-આ તરકોડનું નથી, પાગ

તારાં મનને નિત્ય શાંત બનાવવા મારેતો આ પ્રયત્ન છે, અને આ જગતના નીચ દેહમાંથી ઉગારી શાંતીના નિર્મળ પવિત્ર સ્થાન પ્રત્યે દોરી જવાનો દાશ્ય પ્રયાન છે, આ નિષ્કામ શરીર ઉપરથી તને-અરે- તારા-આ વિષયરૂપ મંગળ પ્રત્યે મગ્ન કરનારા મનને-રે ! રે ! ! આ તારા સંચાર શક્તિના સમુદ્રના તુફાનને શાંત બનાવવા મારેતો હિદયારો છે. મંગળ ! મંગળ ! ! વિચાર કર ! વિચાર કર ! ! તારો મારા પર જેટલો પ્રેમ-તેથી વિશેષ મારો નહતો ? હનોજ ? હજુયે છે ! પણ તે હવે જુદીજ દીણી ! જુદાજ ભાવનો ! તદન જુદાજ વિચારોના પ્રતાપમાં ફેરવાયેલો ! મેં ! મારો; અરે ! આ મારો ખેરો પ્રેમ-જગતની જગતમાં ફસાવનારો પ્રેમ ! આ જગતમાં જુલાડનારો પ્રેમ ! અરે ! પ્રત્યક્ષ વિષય-રૂપ-નરકમાં તળીયે જુલાડનારો પ્રેમ ! આ નરક-વિષય તારા-મારા દેહાદિપરથી-દેહાદિ સૌંદર્યપરથી ખેંચી લઈ સાવધ યા ! સાવધ યા ! !

મિત્ર મંગળ:-શું સાવધ યા ? શું શું બોલે છે ! મને તારું કથન સમજાવું નથીને ! પ્રિયે-મમ-હાથકારિની-ચિંતામણી ! ચિંતામણી ! ! અને રચવું બોલ ! મારાં-તારાં બાહ-પાસ રૂપ અરસપરસ બંધનરૂપ-અરે ! આનંદરૂપ ! તારાં પ્રેમનંદનો દરારો ! તારા પ્રેમ-રસનો ખોલો પીવાદે ! તારાં પ્રેમ વગર-અરે તારાં પ્રેમ નિષીમાં આ મત્તયને સહકાજ નહાવાદે ! મને તો તારાં ચિવાવતું કંઈ પણ દીણે પડતું નથી ! અહા ! ચિંતામણી ! ચિંતામણી ! ! ચિંતામણી ! !

### હુડીગીત.

છે પ્રેમ એવી વસ્તુ કે તે સ્વાર્થને નથી માનતી ! લક્ષ્ય તથા જનમાનને પણ તે કદાં ન પીછાનતી ! દિપક પરે જગતી પલંગા સર્વદા નિસ્વાર્થ તે ! તે પ્રાણ અરે છે સકારો સ્વપર નિસ્વાર્થ તે ! હે પ્રાણ વસ્ત્રમ પ્રેમદા તુજ બોગતી તું બોગીતી ! દરદા નહીં કંઈ અન્યતી તું એકલી મમ પ્રેમથી ! મમ નેત્ર આ આતુર નહો છે નવ વદનના દર્શને ! ને હજુતું આ હૃદય નિરાદિત તવતુંના સ્પર્શને !

દેહ પડનાં જ છે ! જગતમાં પહેલો સંસ્કાર જન્મ ! અને છેલ્લો સંસ્કાર મર્ણ ! એ બે સંસ્કાર શરીરના ગુતળાને ! શરીરના નિયંત્રકાર જગત નિયમે બંધાયેલા છે ! જન્મનાર મૃત્યુને વશ થવો જ નોંધવો ! ઉપન થયેલો જગત-ચીન્નેનો વિનાશ થવાનો છે ! આપણી નજર આ મૃત્યુ રૂપ નિષ્કમ બાળીએ છીએ ! નહીં તત્તાં મૃત્યુ (મરણ) પર જ આપણે ! આ બારી ચડતાં સર્પ રૂપ મૃત્યુ હાજર હતો જ ! જેવું મારાં પર ચોરોનું મૃત્યુ ટળ્યું તેવું જ આ મૃત્યુના-મૃત્યુ રૂપ નહીં અને સર્પના હાથમાંથી તારું મૃત્યુ ટળ્યું ! પણ તે માટે પ્રભુને ઉપકાર માનવાનો મૂકી વળી મૃત્યુની જગતી જ્યોત સમ જગતી ભૂમી હવે જગતના વિષય રૂપમાં રૂસાય ચોરો તે કીધો મૂર્ખ હોય કે પોતાના શરીરની રાખ ઉડવાની છે તે ન જાણતો હોય ? વિચાર ! વિચાર ! મંગળ ! તારા મન-પ્રદેશમાં લીન થઈ વિચાર કર કે :—

શેર :—ચંદ દિન મહારાનો સપડવો ખુમાર !  
મચોતકો તુરશી દેંગી નીચા ઉતાર !  
જાથે મિલકે જનનાં ઊઠાવેંગા ચાર !  
હાથ મળકર કહેંગો શીર ચાર ચાર !  
કિસ લીધે આપેયે કયા કર ચસે !  
જે મહાં પાપા મહાં પર ધર ચસે !

માટે જ મંગળ ! તારા-મારા પરની મનવા મુક ! પ્રભુનો ખાડ માન ! બચાવનારને શોધવા આતુર બન ! બચાવનારાના હાથમાં તારું સર્વસ્વ છવન અર્પો દે ! તો જેમ મને થોડા અરે-સુલભ-સમયમાં પ્રકાશ થયો, મારી દિવ્ય ચમુઓ ઉધડી-તેમ તારી ઉધડશે ! તને પ્રભુને પ્રકાશ પડી-પ્રભુના દર્શન થશે ! માટે મારા પરનો પ્રેમ પ્રભુની બાજુ પર જવા દે-પ્રભુ પર વરસવા દે ! પ્રભુ વિનાંતું બધું અસત્ય છે ! ફક્ત પ્રભુ ! પ્રભુ ! એ જ સત્ય છે ! જેમ ચિંતામણીને સર્વજ્ઞ સ્વભાવે હતો તે જ દૃષ્ટી વડે દૃષ્ટિને પવિત્ર કરી પ્રભુની પ્રીતિ મેળવ ! મારા પર નેટશે પ્રેમ છે તેથી અનંત મણી પ્રેમ-સ્નેહ-પ્રીતી પ્રભુ

પ્રત્યે લગાડ ! પ્રભુ પર પતંગીયાની પેઠે બળ ! ચક્રો જેમ ચંદ પર પ્રાપ્ત અર્પે તેમ પ્રભુને તારાં પ્રાણ સોંપી દે ! અને જન્મ મર્ણ રહીતનું નિર્લય સ્થાન શોધવા તત્પર થા ! તત્પર થા ! !

મંગળ :—ખરે ! આ દેહની પણ દુરાપ ઉઠશે તે ખરું ! તારું કથન અક્ષરે અક્ષર સત્ય છે ! પણ પ્રભુ તે શું ? તે પર પ્રેમ કેવો ? તે સમજી શકાય નથી ! તારા જ માટેની ઉછળતી પ્રેમ-જવાળા હવે વખરે જીજ્ઞે છે ! આ કુના વિનાની નીકળતી બહુકલી-પ્રેમ રૂપ-અગ્નિ જવાળા ! તારા તરફ જ આકર્ષાય છે ! તો તારા શિવાય અન્યને માટે ક્યાંથી ઉછળી શકે ? તારું કહેવું સત્ય છે ? પણ તારું આ મનોહર દિવ્ય વદન માદ આવતા બધું ભૂલી જઈ કું તો ચિંતામણી ! ચિંતામણી ! ! સ્પષ્ટ બોલથી પૂર્ણ-સમજવ !

ચિંતામણી :—એટલો તો પણ સંતોષ બધામાં છે કે ; ચિંતામણીનું કથન સત્ય છે, તે ઉપરથી ખાતરી થાય છે કે ; મંગળ અવશ્ય સન્માર્ગે વળશે જ ! માટે સાંભળ ! મંગળ ! ! એક ચિંતે સાંભળ ! ! પ્રભુ ! મહાન ઉપકારી હોય ! આખા વિશ્વને તારનારો અધમેનો પણ તારક દૃષ્ટાને સંહારક અને દયાળુ મહાન દયાનો નિધી છે ! તે કૃપાવંત ભગવંત તને અને મને બેઠે તાર-શેજ ! તારાં અને મારાં તેમજ આખા વિશ્વના દુઃખો દુરશેજ ! જન્મમર્ણ્ય પણ રહિત કરાવવા તે જ સમર્થવાન છે ! આ ભવસાગરની જાળમાંથી પણ છોડાવવા તે જ શક્તિમાન છે ! એવા દયાળુ પરમાત્માનું તો વર્ણન કરીએ તેટલું થોડું જ છે ! પ્રભુ પોતા પર પ્રેમ રાખનારને પોતા તરફ ખેંચે છે ! એ પરમાત્મા જ સરળ અને સંધા મારો બનાવે છે ! તો મંગળ ! મારાં પરની જીજ્ઞાસી તારો પ્રેમ જવાળાને પ્રભુ પર ફેંક ! ભરે ! એ કવાર દૃષ્ટીમાનથી ફેંકી તો જો ! દેશતાં જ તને સ્થિતજતા પ્રાપ્ત થશે અને તારો તે વડે ઉદાર જ થશે ! આ જન્મજોનો અને દેહાદિ બાંધીનો સંસાર તોડ ! મોહછત થા ! મહાન-શરીરપણ તો મોહછત બનવામાં છે ! વિચાર કર ! !





આજ સુધિની જોતી રિયતી હતી તેવીજ હજી કાચ હરતે પ્રભુ હવે ચાંપી,  
રહેત તે મહુ પછી શું થાત ?

જન્મ મહુ દે ટાળે—સગજમન ૫

મંગળા:—અહા ! મહુ પછી અરેખર ખૂંચે  
કર્મોના ખૂંચે 'ફોળા ચાખ્યાં' પડ્યા ! ચિંતામણી !  
ચિંતામણી ! સમજાવ ! સમજાવ ! ! પ્રભુતા પ્રેમનું  
અદ્ભુત રહસ્ય સમજાવ ! ! તારાં તરફની બિડ-  
ળતા પ્રેમાશિનો પ્રવાહ-હવે-પ્રભુ તરફ જરૂર  
વાળાશ ! મહુ બમે છે ! અરેખર મુલ્યે મારાંમાં  
ધર મુલ્ય છે ! જન્મ ધર્યો ત્યારથીજ મુલ્યના ત-  
રજ ખેંચાયો જાણી છું ! મુલ્યને ખેંચી રહ્યો  
છે ! અવસ્ય મારાં દેહને હવે જલદી પકડશે !  
અહા ! હવે મારું શું કરશે ! ઓ પ્રભુ ! પ્રભુ !  
પ્રભુ ! ! જ્યાં તારા દાસપર દૃષ્ટાકર ! ચિં-  
તામણી ! ચિંતામણી ! ! સત્ય મર્ગ જતાવ !

ચિંતામણી:—અહા ભયારે તેં તારાં મુલ્યને  
નિહાળ્યો ત્યારે પ્રભુ જરૂર તને પોતા તરફ ખેંચી  
મુલ્યથી જ્યાંવશે ! નિર્ભય થા ! પ્રભુ તારી પીઠ  
પાછળજ હમેશાં હોય છે ! તે તને ચરે પોતાના  
અનુયાયીને કદી પણ મુલ્યના કાચમાં ન સોંપે !  
પ્રભુ તરફ વળ ! તારા હૃદયના પ્રવાહને પ્રભુ તરફ  
વહેતો મુલ્ય ! અને હવે સત્યને જાણી અરેખરો  
જ્યાં કુધી આ તારું દેહરૂપી સાધન છે ત્યાં સુધીજ  
પ્રભુને નિહાળી રાકોય ! આ મહાન પ્રણયે  
ખેંચા મુલ્ય જન્મના જાલમાં હવે પ્રભુનેજ  
મેળવ ! તારી કાચને જાજ મહાન મર્ગે મહાન !  
માથુ:—

કાચ પડેં ફરી પ્રભુ પ્રકાશિણ,

અરે પડેં જા દોડી—સગજમન ૬

દેહ વિધાનના કાદ રમીને,

“મંગલ” પી પ્રભુવાણી—સગજમન ૭

માટે મંગળ ! મંગળ ! ! પ્રભુતા નામની દરેક  
અવયવમાં—અરે ! દરેક રોમાંચમાં ધૂન લગાવી  
તારાં દેહરૂપ જોઆદ નિર્જન પહેલા જન્મલમાં  
કર મંગળ ! તારો ચહેરાન દોષ દિવ્ય પ્રકાશથી  
પ્રકાશિત થયેલો દેખાય છે ને ?

મંગળા:—અહા સત્ય ! સત્ય ! ! ચિંતામણી !  
સર્વ સત્ય ! ! પ્રભુ ! પ્રભુ ! ! ચિંતામણી પ્રભુ  
આ પાપીને બિહાર કરશે ? આ પાપીને પાપની  
મારી મળશે ? જોહા ! જોહા મને ઉદારવા ! મને  
સમજાવવા ! મારાં કાન પવિત્ર કરવા તારી પ્રભુ  
પ્રેરિત અમૃતવાણી જોહા ! મારી અવવાની—અરે  
ઉદારવાની રાદ જતાવ ! મને તો લાગે છે કે;  
આ દેહ—મદ અને અધર્માચરણ કરવાવાળા  
મંગળના માટે પ્રભુ નથી ! હું કેમ ઉઘરીશ !  
ચિંતામણી મારું શું કરશે ! જોહા ! પ્રભુ ! પ્રભુ ! !  
બિહાર કર ! ઉદાર કર ! ! આ મંગળનો હસ્ત  
મઢી સે ! મઢી સે ! ! જ્યાંવ ! જ્યાંવ ! !

पाणी नहीं ! तमारा भाग्यमां बड्या आगयी-  
आ धडीशी सर्वस्व तमने संप्रत करे छु ! माइ  
कंच नहीं ! दुं डोखु भाग ! !

वितागणी:—सत्य ! सत्य ! ! तने पश्चातापना  
अग्निअे पवित्र डोरी छे । तारा सुप्रत करेवां  
जधां राखेडो प्रभू भदक्ष करेण ! अने तारां-  
भारां देदने सूर्युं जनासी अंदर पोतानो स्थापना  
करेण भाडे आगयी आ देदने साइ करवा प्रयत्न  
करीअे ! अने परमात्मानुं भजन करीअे ।

सूत्र—(अग्र)

प्रभूना बेदने पाणी-भागवत से स्थानने जखी,  
प्रभूना रंगमां जखी-जंतरना बेद से जखी-१  
जगतनुं जगतमां देणे,  
ताई तुं सुप्रथी सेने.

प्रभूनी दिव्य ज्योतीमां-सकण डोरीअे आणी-२  
जगतमां जगतीं शुं ज्येथुं,  
व्यवहारे सर्वने ज्येथुं.

हवे प्रभू प्रेममां रागी-ज्येथुं सत्य से भागी-३  
शुद्धाणी शुद्धाणां शोरा,  
संगंधी निजना शोरा.

शुद्धाणी पुष्प सुभये-वे प्रभू सत्य भीजखी-४  
भर्युं तें नाम तुं ज्योरी,  
जवा दिन देन तो ज्योरी.

जगत हूअ सुअ ससारी-अण्ड मुंअ से हवे भागी-५  
अण्ड ज्योति भरी वसीधुं,  
जगत धरतां अरे जसीधुं.

नगर ज्योतिभरी धरतां-देवाणुं आत्म ३५ नागी-६  
आत्म ३५ आत्ममां भरतां,  
ज्योति ३५ निंदीमां भरतां.

विजगती हरेरी विभीमां-सुमती ज्योती से भागी-७  
अण्ड २५ २५ ज्योतीं,  
जगतना ज्ञानने लुद्धी.

पहे अमृत नारी त्वां-गीरे ध्यानमां आली-८  
पागल निज ज्योति भरतीमां,  
सदा दुमे आत्म हस्तीमां.

धीरे भद्राधीरे ध्यानने-पंडे भजनुं ताक्षीने-९



एक आइनी—ठहरो, ठहरो, कहीं बाण न छोड़  
देना। आज सुसीका दिन है। बाण छोड़कर  
किसीका दिठ न डुलाओ। मने कहा—क्यों माई  
आज क्या है ?

मै—मादूम होता है तुम सातवें आसमानसे  
उतरकर आए हो। तुमकी नहीं मादूम आज हमारे  
नगरसेठ धनपालका विवाह होनेवाला है ?

ए०—भरे तू क्या बक रहा है ? उनके घरमें  
एक सुसीका पत्नी और कई पुत्र पुत्रियां मौजूद हैं  
तथा उनकी अवस्था भी ४५ वर्षकी होनेकी आई  
है वे विवाह करके अपनी फजीहत न करावेंगे। तू  
जुठ बोलता है।

मै—इसमें फजीहत काहेकी। उनके घरमें करोड़ों  
रुपया मौजूद हैं वे एक नहीं दस विवाह कर सकते  
हैं। पहिले तो लोग छिपानवे २ हजार विवाह  
करते थे। इसके सिवाय उनका शरीर भी तो ऐसा  
निर्वल नहीं है। वे जो हटे कटे आदमियोंका सिर  
पकड़कर सड़ा सकते हैं तो एक छोटीसी दुग्धिनकी  
क्या खिठा भी न सकेंगे। उनके आगे, चूं तक भी  
कोई नहीं कर सकता है।

मै—चाहे जो हो मैं अपना बाण छोड़ता हूं। देखो,  
यह गया। बाणमें कुछ शब्द हो रहा हैं। सुनो, सेठ  
साहब विवाह मछें ही कर लें-पर यह मुझको  
छोड़नेवाला विनोदी भी फिर अपने विनोद बाण  
ऐसे ताक २ कर मारेगा कि जैन समाजमें फिर  
बदल नहीं इससे भी अधिक खिया एक धनिक रखने  
लगेगा। कई खियोंका होना भी तो धनवान होनेकी  
पहिचान है।

\* कीज कहता है जैनियोंमें विवाहके लिये  
कन्यायें नहीं मिलती हैं। उनका तो भय बाजार  
भी लगने लगा है जो अधिक रुपये लगाने उसीको  
मिछ जाय।

\* \* \*

जो यह कहते हैं कि देशमें अकाल पीड़ितों और बीमारोंकी जैनी लोग सहायता नहीं करते, वे बड़े मूर्ख हैं। क्योंकि दुःखियोंको दान देनेसे शुभ कर्मोंका बंध होगा जिससे जैनी शीघ्र मोक्ष न जा सकेगे।

\* \* \*

हमारी सरकार मजूरबन्दों पर बड़ी ही दयालु है है तभी तो उनसे छोड़ते समय कह देती है कि जाओ कुछ करना नहीं, बैठे रह जाओ। मगर सरकारने सेठी अजुनटाडको छोड़ देनेका वचन तो दिया है मगर उनका एक दुःख दूर नहीं किया अगर सरकार उनको कुछ लिफ्तमें भी मना कर देती तो सेठीजी बड़े ही सुखी हो जाते।

\* \* \*

बाबू अजितप्रसादजीने समाजसेवाके लिये जीवन अर्पण तो कर दिया है कही वे किसी जैन संस्थामें पहुँच कर भिक्षुओंके अधिष्ठाता न बन जाय।

\* \* \*

अब तो 'सत्योदय' अंकड़ा रह गया है, 'जैनहितैषी' और 'जातिप्रबोधक' ने बीचहीमें उसको छोड़ दिया। अंधेरी रातमें छप्पर भी छाया मार देना चाहिये। वस विनोदी अँगोको खुप सुखकी नींद आवेगी। दशर कुछ दिनोंमें विधवाओंके विवाहमें और शाखोंके मनगढ़पन खटनेमें हमारे विनोदीने पाया उत्तम कर ही थी।

\* \* \*

परधियाँ सरकारसे रजिस्टर्ड करा लें।

\* \* \*

श्रीमती दि० जैन बम्बई प्रान्तिक समा तो कुछ दिनोंसे खूब ही सोगई हैं। क्या बम्बईमें कोई उनको जगानेवाला नहीं है? न हो तो कहो विनोदी ही चुपकेसे आकर जगा दे।

\* \* \*

श्रीमती भारतवर्षीय दि० जैन महासभासे न मादूम जैनियोंको कोई फल क्यों नहीं मिलता! अभी तो उसके सभापति एवं महामंत्री काम करनेमें नम्रयुक्त ही हैं।

\* \* \*

जैनहार्डस्कुलोमें जैन हेड मास्टर कभी न रखना चाहिए। वे सेठोंके आगे अजैन हेडमास्टरकी तरह 'हा हजू' थोड़े ही करेंगे।

\* \* \*

आजकल हड़ताल बड़ी हो रही है कहीं जैनी भी हड़ताल न कर दें, नहीं तो संसारमें अबमें ही अपर्म फैल जायगा क्योंकि जैनियोंने तो धर्मका ठेका ले रखा है।

\* \* \*

आजकल मित्र राष्ट्र जगद्ध्यापी धाम्नि स्थापन करनेके लिये जी तोड़ परिश्रम कर रहे हैं—पर दिग्गजर और श्वेतगजर जैसी दोटा जातियोंमें धाम्नि कौन स्थापित करेगा? वे तो तीनोंके लिये अवश्य दुःख करते रहेंगे।

\* \* \*

महासभाको एक प्रस्ताव पास करके पंडित पद्मा-सतगुप्तजीको "जैनधर्म रक्षक" की पदवी अवश्य देनी चाहिये। उन्हींके उद्योगसे जैनधर्म अब तक टिका है नहीं तो न मादूम कपडा वह रसातल समा जाता।



हवा न लग जाय। बात तो अच्छी है।

\*

\*

\*

अहहहह! भरे विनोदी हम तो बड़े खुश हो गये। कुछ मिठा गया क्या! नहीं मई मिठा तो कुछ नहीं, एक बात याद आ गई। वह क्या? सुनो, आजकल जैनसमाजमें विधवाविवाहकी चर्चा हो रही है विधवाविवाहके पक्षपातियोंसे जब कहा जाता कि देखो जिस प्रकार एक सांड कड़े गोभीके साथ भोगकर सन्तान उत्पन्न कर सकता है परन्तु एक गाय ऐसा नहीं कर सकती। उसी तरह पुरुष भी कड़े विवाह करके सन्तानें उत्पन्न कर सकता है परन्तु स्त्री नहीं। इस बातपर वे लोग विश्वास नहीं करते और कहनेवालोंकी इसी बड़ाते है। इसीलिये पुनर्विवाहके विरोधियोंको कहिये कि किंभी सेठके एक साध आठ दस या इससे भी अधिक विवाह करा दें तो विधवाविवाहके पक्षपातियोंको प्रत्यक्ष बड़ाहरण मिल जायगा और विधवाविवाहका आन्दोलन करना छोड़ देंगे। विनोदी, है तो होलह आनेकी बात; शायद उदाहरण ही बननेके लिये सर सेठ हुकमचंदजीने एक और विवाह किया है। फिर तो किसीको इसका निरोध न करना चाहिये। यह धर्मकी रक्षा करना है। इससे तो विधवाओंके शीलताकी भी रक्षा होगी।

\*

\*

\*

“ विनोदी । ”



**सुशील शिक्षा**—इस पुस्तकके लेखक जीवनमाला चंपालाल जैन हैं। यह पहिले लक्ष्मी मासिक पत्रिकामें भी प्रकाशित हो चुकी है। में धियोके सुधार और शिक्षाकी बातें प्रदोत्तर रूपसे दिखाई गई है बीच २ में नीतिके पद दोहे भी दिये गये हैं। इस पुस्तकका मूल्य १- है जो अधिक मादूम होता है। पुस्तक मिलनेका पता प्रकाशक—सुशीलाल धनजी, अंजड़ ( वड़वानी )।

**धनपाल सचित्र—छोटो सादृशी** पुस्तक में १२ पृष्ठ हैं। मूल्य १-॥—पुस्तकके लेखक हैं चांदनमल भावू और प्रकाशक आत्मानन्द जैन ट्रैक्ट सोसाइटी अम्बाला शहर। इस पुस्तकमें राजा भोजकी समाके पंथित पनपालका जीवन चरित्र है। यह पहिले जैन-धर्मके कठार विरोधी थे परन्तु एक जैन साधुके संसर्गसे जैन धर्मके पक्षपाती होगये। पुस्तक एकवार पढ़ने लायक अवश्य है।

**पद्मावती पुरवाण**—यह पद्मावती परिवर्द्धका मासिक मुख पत्र है। सम्पादक है पं० गंगाधरलालजी न्यायतीर्थ और प्रकाशक पं० श्रीलालजी कायसीथि। प्रथम वर्षका अंक ९ हजार पाठ समालोचनायें आया है। इसमें केवल ४ पृष्ठ हैं। सिवाय सम्पादकीय लेखके और कोई लेख पढ़ने योग्य नहीं है। एक मासिक पत्रका ऐसी अवस्थामें निकालना अच्छा नहीं मान्य होता है। मासिक पत्र पुस्तकसादृशमें ही अच्छे मान्य होते हैं। सम्पादक महोदयको चाहिये कि लेख भी उपयोगी देनेका उद्योग करें। हम पद्मावती पुरवाण भाइयोंसे भी कहेंगे कि इसके आह्वक बनकर इस पत्रके उगत बननेमें सहायक हों। पत्रका वार्षिक मूल्य १) पेशगी है। आह्वक बननेवाटोको भेजेजर 'पद्मावती पुरवाण, कायस्थिय ८ मदेन्द्र सोलडेन पो० नाथनाजार बटकरताकी लिपरा चाहिये।

नई फसलका ताजा माल आ गया।

— भाव भी घटा दिया गया है —

**पवित्र काश्मीरी केशर**

मूल्य १।) १।=) दोला

पता—मेनेजर दि. जैन पुस्तकालय—सुरत



**મુનિ**—યહ પત્ર મહાવીર મુનિમણ્ડલકા મુસ માસિક પત્ર છે । દરમાર પાસ વર્ષે ત્રીન અંક ૫-૬ સમાલોચનાથે આયોજી હૈ । હસમે પ્રાયઃ રાવ લેખ પઠનીય હૈ । છપાદં સપાદં મી રત્તમ હૈ । આદા દોતી હૈ કિ હસ પત્રસે શ્વેતામ્બર સ્થાનકવાસી જાતિમે અંચ્છી જાગૃતિ હોગી । હસ પત્રમે હચકે પદને યોગ્ય લેખ રહતે હૈ । વાર્ષિક મૂલ્ય ર) હૈ । મૈનેજા 'મુનિ' બે.દવડ ( જ્ઞાનદેસ ) કો પત્ર ટિલ્હનેસે પ્રાપ્ય ।

**બ્રહ્મચર્ય દિગંધન:**—લેખક શાસ્ત્ર વિશા-  
રદ જૈનાચાર્ય ( પે. ) શ્રી વિજયધર્મચૂડેશ અને  
પ્રકાશક યૌગવિજય અંધમાળા બાવનગર. અ  
૭૫ ૫૪૬ના સુંદર પુસ્તકમાં આચાર્યશ્રીએ પ્રદર્યોને  
પદ્મપા પછી પાળવાના નિયમો તથા ઉત્તમ  
સંતાન દેવપત્ર કરવાની સમગ્રજ્ઞ ધણીજ સરજ  
રોતે દરવિસી છે જે દરેક સ્ત્રી પુરુષે વાંચવા  
યોગ્ય છે. વળી ધણુંજ ખુશી થવા જેવું છે કે  
જૈની ૫૦૦૦ પ્રતો જામનગર નિવાસી બ્લોરા  
ધારશીભાઈ દેવરાજના મહંમ પત્નીના સ્મરણર્થે  
તેમના પુત્ર પોપટલાલ તરફથી તદ્દન મફત  
લેવંચવામાં આવેલી છે, જે પ્રકાશક પાસેથી મળી  
સકે છે.

**જૈન દર્શન:**—લેખક ન્યાય વિચારક મુનિ  
( પે. ) ન્યાયવિજયજી અને પ્રકાશક અભયચંદ  
ભગવાનલાલ ગાંધી, બાવનગર, ૫૪૬ ૧૦૫ આ  
પુસ્તક ૫૫૫ માર્શલના મહંમ દાની રોક તણકડ  
બાઈચંદના સ્મરણર્થે ભેટ મળે છે, જેમાં નવ  
તાલક ૭ દ્રવ્યો, ત્રણ રત્ન, ગુરુધ્યાન, રચા-  
લા, આદર્શગી, અપ્રકાશ વગેરેનું દિગંધન  
કરગ રોતે કરવામાં આવેલું છે જે તમે શિશુના  
દંત્રોને ઉપયોગી છે, એવ સંપ્રદાયા આચાર  
વર્ણવના આદાર લેવાની સ્ત્રી સ્વેદાનર અને  
અદુર્ગમીને મળાનેહી છે જે હિ. ૧૦૨૦ને અન્વ  
નથી.

**યુવક રત્ન:**—પ્રકાશક સરતુ સાદિત્યવર્ધક  
કાર્યાલય અમદાવાદ. ૫. ૪૨૮ અને હિ. માર  
બાર આના. કાર્યાલય તરફથી પ્રકટ થતી વિવિધ  
અંધમાળાનું આ ૮૯થી ૯૧મું અંકુશ પુસ્તક  
છે, જેમાં વિદ્યાર્થીઓએ શાળા છોડવા પછી  
ધ્યાનમાં રાખવા યોગ્ય ઉપયોગી સૂચનાઓ  
સંબંધી ૧૦ પ્રતો તથા બીજા ૭ ઉપયોગી લેખો  
છે જેમાં શીળ સત્તાનો ઉપાસી- શીર્ષક લેખ  
ખાસ વાંચવા યોગ્ય છે. આ અંધમાળાનું વાર્ષિક  
મૂલ્ય માત્ર ૨) છે.

**સેવક:**—અમદાવાદથી પ્રકટ થતું માસિક  
પત્ર વર્ષ ૧ અંક ૧૬૦. તંત્રી-કાલાભાઈ મનોર-  
દાસ પટેલ, વાર્ષિક મૂલ્ય ર. ૨) ૬૪ ૫૪૬નાં આ  
નવીન માસિકમાં ગુણ ગુણ ૨૦ લેખો છે. જેમાં  
બે ઐતિહાસિક છે. જોકે લેખ હાલ પશુ છે.  
લેખન શૈલી સારી છે અને દરેકે આદક ધવા  
યોગ્ય છે.

નવીન પુસ્તક

જૈન સંસ્કાર વિધાન

જૈન સગા વિધિ.

સગા, મરણ, ગર્ભાગ્નિનાદિ સંસ્કારો

ગુરુદાસી અર્થે મંદિત.

મૂલ્ય રૂ. ૦-૮-૦

દિગંબર જૈન પુસ્તકાલય, ગુરુત.

સ્વસ્ત્ય સેવક સેવક હૈ ।

હુડ મોડ નમુના મુલ્ય ૧૨ નગર પત્ર-  
ઓડી મુલ્ય ૬ ।

પત્રાઃ પાટલોર રોડ, જીનગર નં. ૦૧૮



# THE DIGAMBAR JAIN.

नामा-कलामिच्छावयं सत्त्वः सत्योपदेशस्तुयवेण्याभिः ।

संशोधयस्वमिदं प्रवर्तताम्, दिगंबरं जैन समाज-मायम् ॥

वर्ष १२ वॉ.

बार संवत् २४४५, फाल्गुन, विक्रम सं० १९७५.

अंक ५.



कालचक्र की गति किसी समय नहीं रुकती

है। वह अपना कार्य

महासभा का सदा किया ही करता है।

जोर्णोडार। उन्नति अवनति काल

चक्र की दो धाराएं हैं।

जिस समय किसी जाति या देश पर कालका

प्रकोप होता है उस समय वह अपनी अवनतिकी

धारा उसकी गर्दन पर रख देता है जिसके

कारण उस जाति या देश की अवस्था बहुत ही

सोचनीय हो जाती है। यदि उसकी गर्दन परसे

उस धारा को हटानेवाला कोई कर्मवीर न उत्पन्न

हुआ तो उसका अस्तित्व भी मिट जाता है।

हम यह भूमिका जैन समाज और दि० जैन

महासभा के लिये बांध रहे हैं। जैन समाज पर

भी कालचक्र फिर रहा है परन्तु उसको ग्रह

प्रभु बहुत कठिन मादस हो रहा है कि

यै कौनसी धारा उसकी गर्दन पर रखे ?

प्राज्ञमण भी अपने हृदयमें विचार रहे होंगे

कि वास्तवमें जैन समाजके लिये यह निश्चित

करना कि वह उन्नतिके मार्ग पर जा रही है

या अवनतिके बहुत ही उल्लंघनवाला है। परन्तु

कालचक्र अभी अवनतिकी धारा जैनसमाज पर

रखनेके लिये तैयार नहीं है, क्योंकि जैनसमाज

कभी २ ऐसा करवट न है जिससे बड़े २

विद्वानोंको भी असमंजसमें पड़ना पड़ता है

कि यह जागृत है या निद्रित। अभी थोड़े ही

दिन पहिले हम भी लिख चुके थे कि महासभा

निद्रित है इस कारण जैन समाज भी निद्रित

है। परन्तु महासभा की कोठामें कायापलट देख-

कर यह आशा ही नहीं परन्तु विद्वत्तास हो

चला है कि जैन समाज निद्रित नहीं है किन्तु

बहगट जा किये हुए इस आशासे आखें खोल-

ता और मृदता है कि मुझे जगानेवाला कर्मवीर

कोई आता है या नहीं। अभी तक कोई कर्मवीर

तो समाजके जगानेके लिये नहीं आया परन्तु

उसके प्रतिनिधि आने लगे हैं।

इन प्रतिनिधियोंने भारतवर्षीय दि० जैन

महासभाके अधिवेशनमें एकत्र होकर जैनसमाजको

जगानेके लिये उसके कानोंमें भेरी बजाई है

और बहुतसा सामान एकत्र किया है। प्रथम

ही महासभाके सभापतिका भाषण जिसे हमने

अन्यत्र प्रकाशित किया है, समाजके जगानेके लिये एक अच्छी आवाज है। समापत्ति जैन समाजकी प्रत्येक आवश्यकताओं पर प्रकाश डाला है। आजकल जो अंग्रेजी पढ़े लिखे धार्मिक ज्ञानसे शून्य बंटाए जाते हैं, समापत्ति का कहना है यह अंग्रेजी पढ़नेवालोंका दोष नहीं है किन्तु कारण यह है कि उनको समाज द्वारा धर्मज्ञान रोज़रूपसे प्राप्त करनेके लिये सुभीते और अवसर प्राप्त नहीं हैं। पाठकोंके हृदयमें यह प्रश्न अवश्य उठा होगा कि उनको कैसे अवसर और सुभीते चाहिये इस प्रश्नका उत्तर हम पाठकों के सामने पहाड़ों के चूके हैं, उनको आवश्यकता है जैन कालिनकी और अंग्रेजी वस-सूत्र दोनोंकी विद्वता रखनेवाले जैन विद्वानोंकी। समापत्तिने वर्तमान युग परिवर्तनकी ओर भी संकेत करते हुए कहा है कि सारा संसार चार वर्गोंके महासमुद्रकी बटिनाइयोंसे घिरा हुआ है अब यह चाहता है कोई जैनधर्म जैसा आग्निदायी उपदेश जिससे फिर कभी ऐसा महासमुद्र न छिड़े। इसलिये जैनधर्म के अनेक नए और अमूल्य अवसर परमार्थ व परमेश्वर के लिये उपस्थित हैं। मनुष्य यह स्मर करे कि जैनधर्मके अनुयायियों, जागो, तुम्हारा कार्य कलिका समय आगया है, मतान्त सारी हैं, उठो कमर कसो और एक बार फिर महावीर स्वामीके उपदेशको संस्मरते कोने में पढ़ना दो। समापत्ति यह आज्ञा भी ध्यान देने योग्य है कि जैन समाज यदि हम असमाजका दर्शन कराना चाहती है तो उसके लिये अपने स्वामी व माताओं के

फूँकना आवश्यक है। हम यह यह स्वीकार करेंगे कि समापत्ति का भाषण, जैन समाजकी अवगति और उसकी उन्नतिके उपायको भली प्रकार दिग्दर्शन करानेवाला है। यदि समाज उसमें बताए हुए उपायोंका अवलम्बन करे तो जैन समाज अपनी आयु पंचमकालके अंत तक २१००० वर्ष तक मरण शय्यापर रोगियोंकी भांति पड़े रहने विता कर एक बार फिर नवजीवन प्राप्त कर सकता है और संसारको दिखा सकता है कि हम भी एक उन्नत समाज हैं, हमारे समाजमें भी धर्मवीर, कर्मवीर और भारतमाताके सच्चे शिष्य-देशभक्त मौजूद हैं।

हम कई बार लिख चुके हैं कि समाजोंका कार्य उनके कार्यकर्ताओंपर बहुत कुछ निर्भर करता है। हर एक विषय है कि इस वर्ष उद्योगी और समाजहितधी लाला भगवानदासजी महासभाके महासंजीवनी बनाये गये हैं। आपकी कृतव्यशीलताका बड़नगर औपचार्य जीता जागता उदाहरण है। हम केवल उक्त लालाजीके परिश्रम और जातिप्रभेदके भरोसे पर ही महासभाका जीर्णोद्धार हो गया ऐसा कह रहे हैं। पर इसके साथ इस वर्ष और भी कार्यकर्ता भेजे बनाये गये हैं कि वे यदि अपनी जगहों व जैन समाजकी अवगति पर ध्यान देकर अपने कार्य करें और महासंजीवनी के कार्यमें महासभा में ही महासभाका जीर्णोद्धार करना हमारा मकसद होगा।

महासभाके कार्यकर्ताओं इस वर्ष उत्तमतरंग परिवर्तन यह और हमारे महासंजीवनी महासंजीवनी

मंत्री सुखी मूलचंद्रके अतिरिक्त पं० बालारामजी इंदौर और उपमंत्री पं० गौरीलालजी शास्त्री और तीर्थक्षेत्र-कमेटीके महामंत्री पं० धनलालजी बनाये गये । हम इस कार्यकर्त्ताओंसे तथा अन्य मंत्री जो इस वर्ष प्रांतिक सभाओंके और महासभाके विभागोंके नियुक्त हुए हैं उनसे कहेंगे आप लोग सप्ताहके नये परिवर्तनोंकी ओर दृष्टि रख कर अपने २ कर्त्तव्योंका पालन करें । यह समय केवल नाम मात्रके कार्यकर्त्ता बननेका नहीं रहा है किंतु अपने सिपुर्द किये गये कार्योंको उचित रीतिसे करनेका समय है । यदि प्रांतिक मंत्री अपने २ प्रांतमें महासभाके उद्देश्यानुसार कार्य करना प्रारम्भ करें तो महासभाका नाम सार्थक होकर सारे भारतके जैनियोंकी महासभा कहलाने लगे और महासभा द्वारा प्राप्त किये गये प्रस्ताव सारे देशके जैनियोंके लिये लागू हो जाय, महासभाकी आवाज सारे भारतके जैनियोंकी आवाज समझी जाने लगे । हम एक बार फिर कहेंगे देव और जगत्की उत्ति अथवा उत्ति उत्तरे कार्यकर्त्ताओं पर निर्भर है, यदि महासभाके सर्व कार्यकर्त्ता अपने २ कर्त्तव्योंके पालन करनेका दृढ़ विचार करें तो जीर्ण महासभाका जीर्णोद्धार होकर नव जीवन प्राप्त करलेना असंभव नहीं है ।

आप सबको यह मालूम होगा कि सभाओंके कार्योंके लिये द्रव्यकी कितनी आवश्यकता रहती है बिना द्रव्य कार्यकर्त्ताओंका उत्साह कार्य करनेकी ओरसे कम हो जाता है और उत्साह कम होनेसे निर्धारित आवश्यक काम नहीं हो पाते हैं । इसलिये अगर

तुम महासभाको दि० जैन समाजकी जायत सभा देखना चाहते हो, यदि तुम आशा रखते हो कि महासभा जो अथवा केवल नाम मात्रकी सभा थी वह अब इस उत्तमिके युगमें हमको उत्तिका मांस वृत्ताकर हमारी आवश्यकताओंकी पूर्ति करे, मार्गमें फली हुए कुरीतियों अज्ञान अन्याय दूर करना तथा अन्य कार्य जो कुछ तुम सभासे करना चाहते हो तो इस वर्ष महासभाने अपने खर्चके लिये जो १८८०० रुपयेका बजट प्राप्त किया है उसकी पूर्तिके लिये उदारता दिखाओ । यह रकम लाखों दिगम्बर जैनियोंके होते हुए पूरी होना कठिन नहीं है । इसलिये हम समस्त दिगम्बर जैन समाजसे अपील करते हैं कि इस द्रव्यको जितना शीघ्र हो सके उतने ही शीघ्र पूर्ति कर दें । अन्यथा कार्यकर्त्ताओंकी शक्ति सारे समय द्रव्य एकत्र करनेकी ही चिन्तामें बीत जायगी और ये महासभाके उद्धारके कार्य न कर सकेंगे, अतएव द्रव्य दिगम्बर जनोंको चाहिये कि अपनी २ शक्तिके अनुसार इस बजट पूर्तिके लिये सहायता देवे और दूसरोंसे दिलवें ।

हम कई वर्षोंसे जैन समाजमें एक बंधकी आवश्यकता सुनते चले जैन बंधकी आ रहे हैं । समय २ पर आवश्यकता । समाचार पत्रोंमें भी इसका आन्दोलन हो चुका है तथा हम भी इसके लिये लिख चुके हैं परन्तु अभी तक इस आवश्यकताकी पूर्ति नहीं हुई । इस पर फिर महासभाके अधिवेशन



के समय स्वागतकारिणी समाके समापति श्री-  
युत सेठ मुखलालजी अंज. मजिस्ट्रेटने इसकी  
ओर संकेत किया है। बहुतसे लोगोंको बंकरकी  
आवश्यकता नहीं प्रतीत होती होगी परन्तु  
हम कहेंगे कि जैन समाजके संकड़ों निर्यन  
और पराधीनतासे जीवन बितानेवालोंका एक  
बंकरके होनेसे कल्याण हो सकेगा। अनसमानकी  
संस्थाओंमें किसी प्रकारकी स्वतंत्र आजीविका  
पर सहनेवाली शिक्षा नहीं दी जाती है। इस  
कारण उनमेंसे निकले हुए प्रायः सब छात्रोंको  
नौकरीकी ही शरण लेनी पड़ती है क्योंकि वे  
प्रायः साधारण स्थितिके होते हैं उनके घरमें  
इतनी पूंजी नहीं होती है कि वे बिना नौकरी  
किये स्वतंत्र कार्य करते हुए समाजकी ओर  
देशकी निःस्वार्थ सेवाके लिये आगे आ  
सकें। हमने देखा है कि संस्थाओंसे निकले  
हुए कितने छात्र जिनके हृदयमें व्यापार  
करनेकी उत्कट अभिलाषा है परन्तु पास धन  
न होनेसे एवं कोई सहायक न मिलनेसे वे  
निराश होकर नौकरी करने लग जाते हैं।  
यदि जैन समाजमें कोई ऐसा बंकर हो जो पूरी  
मानके साथ ऐसा नवयुवकोंको सुपर व्यापा-  
रके लिये धन दे तो बहुत कुछ लाभ हो सकता  
है। ऐसा होनेसे समाजकी आर्थिक स्थिति  
भड़ेगी और समाजमें स्वतंत्र निःस्वार्थ सेवक  
उत्पन्न होने निमते जैन समाज और जैनधर्मकी  
भी उत्थिति होगी।

ऐसा बंकर तो जना जैन समाजके अंदर कोई  
कठिन बन नहीं है। मगर कि समाजमें राय-

हादुर सर सेठ हुकमचंदजी, रायबहादुर कल्या-  
णमलजी, रायबहादुर कस्तूरचंदजी, लाल नम्बू-  
प्रसादजी, हरीभाई देवकरणवाले आदि संकड़ों  
करोड़पति, लाखपति मौजूद हैं। इस कार्यके लिये  
हम दानवीर सेठ हुकमचंदजीसे आग्रहपूर्वक  
कहेंगे कि आप आगे आगे और इस कार्यको  
हाथमें लेकर जनसमानकी एक भारी आवश्य-  
कताकी पूर्ति करें, आपके द्वारा यह कार्य बड़ी  
सरलता व सफरताके साथ पूर्ण होसकता है।

द्रव्यके प्रश्नके समय सेठजीको कुछ सोचने  
विचारनेकी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि प्रथमतो  
आप स्वयं समर्थ हैं इसके अतिरिक्त यदि आप इस  
कार्यमें हाथ डालेंगे तो—जैन संस्थाओं, मंत्रिओं,  
तीर्थों आदिका सब रूपया जो कि कई लाख होगा  
और इस समय दाताओं या अन्य महानुक्तों  
यहां सुपर जमा है—दानिमीनके अन्दर गड़ा  
है और उससे दूसरे-तीसरे उठा रहे हैं—सब इस  
बंकरमें आ सकेगा, जिससे अनेक लाभ होंगे।  
ऐसा होनेसे संस्थाओंका रूपया सुरक्षित रहेगा,  
अभी जिससे अन्य लोग लाभ उठा रहे हैं  
बंकरमें आ जानेसे जैन जातिके निधन, और  
नवयुवकोंके व्यापार साधनमें काम आयेगा जिससे  
वे धर धर भटकने, निरा जीवन बिजाने और  
परीषानतासे बच सकेंगे। जिससे जैनसमानकी  
प्रगतिमें बहुत सहायता मिलेगी। यहाँ पर यह  
भी कह देना आवश्यक मानता हूँ कि  
संस्थाओंका जो रूपया अभी (२), ॥, ॥२) वा-  
इतने भी कम वा अधिक व्यापार पर दूसरेके  
उठा गया है, वह ग्राह्य यदि समाजके लोगोंकी



न्यायापारके लिये दिया जायगा तो परोपकारी संस्थाओंके लिहाजसे वे इससे भी अधिक सूद देनेसे इन्कार न करेंगे ।

हम आशा करते हैं कि सेठ हुकमचंदजी तथा अन्य श्रीमान इस ओर ध्यान देकर समाजकी केवल एक आवश्यकताकी ही नहीं किन्तु समाजकी उन्नति पर लानेके एक अंगकी पूर्ति करनेका उद्योग करेंगे ।

समाचार पत्र पढ़नेवालोंको यह भली प्रकार विदित होना भारत सरकार दो ऐसे बिलोंको मिनका नाग रीजेट बिल है पास करनेका पूर्ण विचार कर चुकी है । जिस समय यह बाइसरायकी कौंसिलमें पेश किये गये थे उस समय गुरुसरकारी सब भारतीय प्रतिनिधियोंने एक स्वरसे इसका विरोध किया था पर सरकारने इसका कुछ ख्याल न करके उसको सिलेक्ट कमेटीमें भे दे दिया । इस कमेटीने एक बिलको ३ वर्षके किये और एकको स्थायी कुछ ही परिवर्तन करके रिपोर्ट पेश कर दी है । रिपोर्ट पर नानो मालवीयजी, खापर्डे, मि० पटेलने हस्ताक्षर नहीं किये असु ।

जबसे यह बिल कौंसिलमें पेश हुए तभीसे देशभरमें इसके बिलड आन्दोलन मचा और एक स्वरसे आवाज उठी कि यह बिल भारतवासियोंकी स्वतंत्रता पर वज्राघात करनेवाला है, इससे सब सत्ता पुलिसके हाथमें आ जायगी, जिसको चाहेगी उसको पकड़ लेगी,

जिसका न कोई गवाह हो सकेगा, न वकील और न अपील-इसलिये सरकार इन दोनों बिलोंको पास न करे । परन्तु सरकारने जब न छोड़ प्रतिनिधियोंका कुछ कहा माना और न जनताके ही विरोधका कुछ ख्याल किया तब महात्मा मोहनदास कमचन्द गांधी सत्याग्रहकी लड़ाईके मंथानमें उतर आये क्योंकि भारतवासियोंके पास केवल यही एक उपाय है । महात्मा गांधीने इस अमोघ शस्त्रके द्वारा दक्षिण अफ्रीकामें कई बार विजय प्राप्त की है । इस सत्याग्रहकी आवाज जबसे महात्मा गांधीने उठाई तबसे सड़कें हस्ताक्षर सत्याग्रह पत्रपर हो चुके हैं । इसमें श्रीमान गांधी, श्रीमती गांधी, मिसेज विसेन्ट, श्रीमती सरोजिनी नायडू, मि. हार्निमेन स्वामी श्रीब्रह्मनंद आदि अनेक बड़े २ नेता शामिल हो चुके हैं । तथा भारतके एक किनारेसे लेकर दूसरे किनारे तक महात्मा गांधीकी इस भीम प्रतिज्ञा समर्थन हो रहा है ।

हमारे पाठकोंको यह सुनकर आश्चर्य होगा कि महात्मा गांधी अहिंसक माननेवाले फिर ऐसी लड़ाई करनेके लिये क्यों उत्तारू हो गये आश्चर्यकी कोई बात नहीं है किन्तु जैनधर्मके प्रधान सत्त्व अहिंसाका स्थापनाही सत्याग्रह है । पाठको, जरा जंगलमें आइये और देखिये, वह सामने मुनि महाराज बैठे ध्यान कर रहे हैं जिनमें यह शक्ति है कि यदि दृष्टि उठाकर ब्रह्मसे किसीकी ओर देखे तो वह भस्म हो जाय, यदि पैर तलेकी मिट्टी उठाकर किसीके सार से तो उसका कान



तमाम हो जाय इत्यादि, ऐसी महा शक्तियोंको धारण करनेवाले मुनि महाराज को एक दुष्ट तलवार लेकर मारनेके लिये आ रहा है, उसे देखकर मुनि अपने ध्यानमें लीन हो जाते हैं और विचारते हैं कि यह मनुष्य हिंसा करने आ रहा है, यह हमारी आत्माका कुछ न बिगाड़ कर भी इस शरीरको छिन्नकर अन्याय करेगा, परन्तु उसके बुरे कार्य, अन्याय, दुष्टताको जानते हुए भी अपने ध्यानमें लीन रहते हैं और समझते हैं कि यह तो अन्याय कर ही रहा है हम क्यों इसके साथ बुराई करें। पाठको यह मुनि महाराजका सत्याग्रह है या जैन धर्मका परिपक्वमहान् व्रत है। इस व्रतका फल यह होता है कि मुनि महाराजके मार्गके पहिले ही कोई देवी शक्ति आकर या संयोगसे कोई मनुष्य आकर उस हिंसक मनुष्य को वहीं कील देता है या उसे उन्नित दंड देकर मुनि महाराजकी रक्षा करता है। यदि अपने दुर्भाग्यसे वह मनुष्य मुनि महाराजका प्राण ही ले लेता है तो मुनि महाराज तो मोक्ष या स्वर्ग या उत्तम गतिमें जाकर मुनिता उपभोग करते हैं परन्तु उस दुष्टको या तो राजा उसी भवमें प्राणदंड ही आशा देता है और तब ही तो मरने पर उसके लिये नरक भुजा ही है, महा नाता प्रकारके दुःख सहता है। परन्तु सातत्य यह है कि सत्याग्रह करनेवाले ही या महा भीत होती है और यह सत्याग्रह अन्याय और जन्मोंके रोदनको अहिंसाई मात्र ही सम्भरुने दुष्ट विरोधी रीतिसे लिये मुद्रमन्त्रक है। जगद्गुरु, जैनी पादश्री, जो दत्तवर्मे

पालनेवाले, स्वामी श्रद्धानंद (सुशीराम एम. ए. जी. १९ वर्षसे राजनैतिक मामलोंसे अलग थे) के इन वाक्योंको ध्यानमें लेकर—कि इन रौलट बिलोंने वह समय उपस्थित कर दिया है कि योगियोंको भी अपनी समझ छोड़कर आना चाहिये—रखनेवाले इन रौलटी बिलोंको दूर करनेके लिये अपना धर्म समझकर सत्याग्रहके व्रतसे पीछे न हटना।

पाठकोंको यह जान कर हर्ष होगा कि थोड़े दिनोंसे जो बम्बई प्रा-  
च्यार्ड दि० जैन न्तिक सभा कुछ निद्रित  
प्राप्तिक सभा। सी हो गई थी अब  
किं नानृत हुई है।

उसका सत्तारहवां वार्षिक अधिवेशन आगामी  
मित्री चैत्र सुदी १२-१४-१९ तारीख  
१२-१४-१९ अपरेलको गजपंथानी पर होगा।  
समापतिका आसन श्रीमान् सेठ सूरचन्द्र  
भाई शिवरामजी (मालिक फर्म सेठ गांधा  
रंगनी गांधी बम्बई-दुकान) ग्रहण करेंगे इसी  
अवसर पर दक्षिण महाराष्ट्र दि०  
जैन संडेलयात् पंच महासभाका  
अधिवेशन भी यहीं पर होगा। अतएव  
हमारा सर्व पाठकोंसे निवेदन है कि इन  
दोनों सभाओंके अधिवेशन पर पधार कर  
जानुवृत्ति और भवोन्नतिक कार्योंमें सहयता  
दे। बम्बई प्राच्य सभा केवल बम्बई प्रांतीय  
ही पर भी सारे भारतवर्षके जैनियोंकी उपनिद्रा  
उत्थाप कर रही है। इसीके द्वारा 'जैननिद्रा'  
प्रतिगमन विचार कर अनेक जग २ सेतोंके



सिवाय जैनसमाचार और देशके समाचार भारतके जैनियोंको सुनाता है इसके सिवाय इस समाका अनुकरण प्रायः अन्य समाएं कर रही हैं। इस कारण सार भारतके जैनियोंका कर्तव्य है कि इसके कार्योंमें सहायता दें। बम्बई प्रान्तके जैनियोंको तो अवश्य ही इस अधिवेशनमें सम्मिलित होना चाहिये। समाओंकी सफलता जितनी ही अधिक संख्यामें गनुष्य उसमें सम्मिलित होते हैं उतनी ही अधिक होती है इस कारण बम्बई प्रान्तके प्रान्त से जैनी भाइयोंका एक अच्छा समूह गजपंथाजी पर इसमें शरीक होनेके लिये आना चाहिये, और जो प्रतिनिधि फार्म समाकी ओरसे आवें उनको भी अपना प्रतिनिधि चुनकर और उमें भरकर समाके आकिसमें बम्बई भेज दें।

सभामें अनेक धीमान, श्रीमान् पधारे और जाति-उन्नति एवं धर्म-उन्नति पर विचार करेंगे तथा अनेक विद्वानोंके धार्मिक और सामाजिक व्याख्यानोंके सुननेका अवसर प्राप्त होगा इसके सिवाय गजपंथाजी तथा अंजननरी गवीरक्षेत्रके दर्शन करनेका लाभ होगा। हमारा समाजके विद्वानों, व्याख्याताओं, श्रीमानों, धीमानोंसे भी निवेदन है कि इस अवसर पर पधार कर समाजके हितका विचार करें और इस नये युगके परिवर्तनमें समा एवं समाजको किन उपायोंका अवलम्बन लेना चाहिये जिससे उन्नति हो सो समाके सामने रखें।



**विवाह समयदान**—इन्दौरके रायबहादुर सर सेठ हुकमचन्दजीने अपने विवाहमें डेढ़ लाख रुपया औषधालय और एक लाख रुपया जैन विधवाओं और जैन अ मधोंके लिये प्रदान किये हैं।

**स्तुत्य दान**—कारंजा (आकोला) के उदार चेता सेठ जम्बूसाह देवीदास चौरेने दस हजार रुपये श्री महावीर ब्रह्मचर्याश्रम कारंजाके भवन बनानेके लिये प्रदान किये हैं।

**सुरेना विद्यालय**—इसका जो डेप्युटेशन निकला था पूर्व प्रकाशित (१८९७ के सिवाय वर्षोंमें १९९९), पुलगांवमें (९९६), आकोलामें (१५३), आश्वीमें (७१३) और प्राप्त हुए। श्रीमती वेसरबाई बड़वाहाने बिना किसी प्रेरणाके विद्यालयके प्रीव्य फंडमें एक हजार एक रुपये दिये हैं।

**आग लगी**—गुजरात प्रान्त ता. जम्पुरर बड़च ग्राममें गत ता. ३० जनवरीको आग लग गई। मन्दिर जल गया पर प्रतिमाओंकी रक्षा कर ली गई।

**जैनियोंका डेप्युटेशन**—राजसभाओंमें जैन प्रतिनिधियोंके स्थानके आन्दोलनके लिये दक्षिण महाराष्ट्र दि० जैन सभाने अपने स्वनिधिके अधिवेशन पर मि० लट्टे और मि० कोठारीको इंग्लैण्ड नामकी अनुमति दी है। मार्ग व्यय आदिके लिये कुछ चंदा भी हो गया है।

**स्वाकाद महाविद्यालय काशीका** सप्तहवां वार्षिक अधिवेशन राय नानकचंदजीके सभापतित्वमें ता० ८ मार्चको हो गया।



समाम हो जाय इत्यादि, ऐसी महा शक्तियोंको धारण करनेवाले मुनि महाराजको एक दुष्ट तलवार लेकर मारनेके लिये आ रहा है, उसे देखकर मुनि अपने ध्यानमें लीन हो जाते हैं और विचारते हैं कि यह मनुष्य हिंसा करने आ रहा है, यह हमारी आत्माका कुछ न बिगाड़ कर भी इस शरीरको छिन्नकर अन्याय करेगा, परन्तु उसके बुरे कार्य, अन्याय, मृष्टताको जानते हुए भी अपने ध्यानमें लीन रहते हैं और समझते हैं कि यह तो अन्याय कर ही रहा है हम क्यों इसके साथ बुराई करें। पाठको यह मुनि महाराजका सत्याग्रह है या जैन धर्मका परीहमहन व्रत है। इस व्रतका फल यह होता है कि मुनि महाराजके मारनेके पहिले ही कोई देवी शक्ति आकर या संयोगसे कोई मनुष्य आकर उस हिंसक मनुष्यको वहीं कील देता है या उसे उन्नित दंड देकर मुनि महाराजकी रक्षा करता है। यदि अपने दुर्भाग्यसे वह मनुष्य मुनि महाराजका पाण ही ले लेता है तो मुनि महाराज तो मोक्ष या स्वर्ग या उत्तम गतिमें जाकर मुन्यग उपभोग करने दें परन्तु उस दुष्टको या तो राजा उसी भवमें प्राणदेष्टा आज्ञा देता है और तर्फी तो करने पर उसके क्रिये नरक मुला ही है, वहाँ नाना प्रकारके दुःख सहता है। कहनेका सार यह है कि सत्याग्रह करनेवाले ही की मर्या जीन होती है और यह सत्याग्रह अन्याय और जल्मीके सेकनेवाले अविमानों मरु है—कर्मकी मृष्ट शक्तियोंको जीनेके लिये मुद्रासनचक्र है। सत्याग्रह में जैसी शक्तियों, जो इच्छासे

पालनेवाले, स्वामी श्रद्धानंद (मुक्षीराम एम. ए. जी. २५ वर्षसे राजनैतिक मामलोंसे अलग थे) के इन वाक्योंको ध्यानमें लेकर—कि इन रौलट बिलोंने वह समय उपस्थित कर दिया है कि योगियोंको भी अपनी संमति छोड़कर आना चाहिये—रखनेवाले इन रौलटी नियमोंको दूर करनेके लिये अपना धर्म समझकर सत्याग्रहके व्रतसे मीछे न हटना।

पाठकोंको यह जान कर हर्ष होगा कि थोड़े दिनोंमें जो बम्बई प्रा. ब. ब. दि० जैन नितक सभा कुछ निश्चित प्रान्तिक सभा। सी. हो गई थी अब फिर जागृत हुई है। उसका सत्तरहवां वार्षिक अधिवेशन आगामी मिति चैत्र सुदी १३-१४-१५ तारीख १३-१४-१५ अमेलको गुनपंथानी पर होगा। सभापतिका आसन श्रीमान सेठ सूरचन्द्र भाई शिवरामजी (मालिक फर्म सेठ नाथारंगजी गांधी बम्बई दूकान) ग्रहण करेंगे इसी अवसर पर दक्षिण महाराष्ट्र दि० जैन लंडेलवाल पंच महासभाका अधिवेशन भी वहीं पर होगा। अतएव हमारा सब पाठकोसे निवेदन है कि इन दोनों सभाओंके अधिवेशन पर पथर कर जात्युन्नति और भौतिकक कार्योंमें सहायता दें। बम्बई प्रांतिक सभा केवल बम्बई प्रांत ही पर भी मोर भारतवर्षके जैनियोंकी उत्पत्तिका उद्घाटन कर रही है। इसीके द्वारा 'जैनमित्र' मजिगताए विज्ञापन अनेक उपाय २ लेगा।

## आल इंडिया जैन पोलिटिकल कानफरन्स ।

ऊपरके शीर्षिका जो लेख श्रीयुत वाडीलाल मोतीलाल शाहने "दिगंबर जैन" अंक ३ वि० सं० १९७२में मुद्रण कराया है उस सम्बन्धमें मुझे यह साफ पता चह देना चाहिये कि मैंने जो बर्धाकी हकीकत प्रगट की थी वह श्रीमान पंडित धन्नालालजी व अन्य किसीकी प्रेरणासे नहीं की थी । पं० धन्नालालजी बर्धाके पीछे मेरे लेख लिखने तक न मुझे मिले और न कोई मेरा उनसे बर्धाके सम्बन्धका पत्र व्यवहार हुआ जब मैंने श्वेताम्बर जैन हेरल्डमें पटेल चिलकी पुष्टता सहित भाषण तथा इंग्रेजी जैनगान्डमें उसके वर्णन विना भाषण ऐसे दो भिन्न भाषण एक ही व्यक्तिके देखे तब मुझे खूबसा करनेकी जरूरत पड़ी । यदि जैसा बाबू अजितप्रसादजीने मुझसे कहा था कि भाषणमें यह बात न आयगी वैसा होता तब मैं उस बातको न लिखता । पटेल चिलकी पुष्टता पर न बोलने तथा न प्रगट होने सम्बन्धी बात जो कुछ हुई थी सो मेरी बाबू अजितप्रसादजीसे हुई थी । परन्तु उन बातोंसे मुझे यही विश्वास दिलाया गया कि सभापति साह्य उस बातको सभामें न बोलेंगे । जब बोल चुके तब यह निश्चय कराया गया कि बोले तो बोले पर किसी पक्षमें प्रगट न होगा । बाबू अजितप्रसादजीने सभापतिकी राणी विना मुझसे निश्चय रूपमें कहा या यों ही कहा इसके लिये मैं कुछ क्रह नहीं सकता । वाडीलाल मोतीलाल शाहने

अपने इस लेखमें मेरे सम्बन्धमें जो कुछ लिखा है उसपर मैं कुछ लिखना नहीं चाहता । मैं स्वयं अपनी तुच्छ बुद्धिवश जैसा कुछ समझता हूं उसके अनुसार जातिसेवा जो कुछ बने वैसा रच मात्र करता हूं । मेरी अंतरंग भावना यही है कि जैनजाति श्री ऋषभादि तीर्थंकरोंके सच्चे आत्मानंदी धर्मको पहचाने और अहिंसाके तत्त्व पर चलकर मनुष्य समानको ज्ञानादि बलसे बलिष्ट बनावे, पशुके ऊपर गुजरनेवाली वृथा निर्दयताओंको निर्मूल करे, वृक्षादि पर भी वृथा प्रत्याघ नहोने दे, आवश्यकतासे अधिक अन्नादि न खाकर बचावे जिससे अन्य प्राणियोंका लाभ हो, तथा यथाशक्ति धर्म व जाति तथा देशकी सेवामें लग जीवनको सफल करे ।

शीतलप्रसाद ब्रजचारी ।

## —४३ दिव्य-गान ।—

आओ, स्वर्गजने ! कृपा करो ।

फाटो पराधीनता जाल, हमको दो आनन्द विहाल ।  
करनेको कृत कृत्य निहाल, भय, चिन्ता, संताप हरो ॥  
बिना तुम्हारे देसोपाल, (जो था अमरावती समान )  
हुआ हाव । योभक्त्य महान, अतः देशपर हाव धरो ॥  
पड़ती जहाँ तुम्हारी दृष्टि, होती वहाँ दौख जल वृष्टि ।  
जिससे प्रमुदित होती मृष्टि, अतः इधर निज दृष्टि करो ॥  
जिधमें होता है आवेश, नहीं कलेश वही गिनता कलेश ।  
इससे अब हममें तविशेष, स्वाभिमानका जोश धरो ॥  
हजार प्रेम करो विवर्ज, कृपा रखो मेरी लाज ।  
हमको दो आश्वासन शीघ्र, "धराओ मत धैर्य धरो ॥"  
हमको दे करके उरताह, शान्त करो छातीका दाह ।  
एवं कहो यही "सोत्साह, दुःख महोदधि स्वयं तरो ॥"  
हमको छँडकर परमें उदास, समझाओ था काहे —  
"धनकर अन्य जनोंके दास, हा ।"



## वृक्षारव्ययान्द ।

(भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभाके चौबीसवें व दिगम्बरजैन मालवा प्रान्तिक सभाके पंद्रहवें अधिवेशन (कोटा-राजपूताना)के सभापति श्रीमान् राय साहब सेठ माणिकचंदजी सेठी तानिखलमुखका भाषण जो गत ता= ७ फरवरीको पढ़ा गया ।)

आदि पुरुष आदीश जिन ।

आदि सुविधि करतार ।

धर्म धुरंदर परम गुरु ।

नमो आदि अवतार ॥

गतकारिणी सभाके सभापति महाशय, जनधर्मके पूज्यताता, मित्रभ्रातागण, पाताभो तथा वहिनो ।

निम प्रगठित और प्राचीन जैन समुदायको महासभाके वार्षिक अधिवेशनोंमें ऐसे ज्ञानी, अनुभवी, कार्यरक्ष, व समाज सेवक सभापतियोंको समाजके सन्मुख उपस्थित होकर उसके कार्यके अवलोकन करने, वृत्तियों पर ध्यान दिवाने, व भविष्यके लिये सुगमताका मार्ग दिवानेका सीमाव्य प्राप्त हुआ है, आन उमी स्थान पर आर महानुभावोंने एक ऐसे युवकको सा सहा किया है निगद अनुभव हमरी आंखोंके समान अन्य है, जिसके धर्म सन्दर्भो ज्ञान किमी प्रकार उन गृह कर्तव्योंके कथना नहींको, कि जिसने जैनधर्म पूरे है, आपने सन्मुख उपस्थित करनेके योग्य नहीं, और जिसको सांसारिक व्यवहार व दूसरी उत्तमोमी भावोंको वक्तव्य अवनी ही धन है कि

जितने कम अवकाश उसके प्राप्त करनेके लिये इस छोटी अवस्थामें उसको मिले हैं ।

महानुभावो ! इन वृत्तियोंके होते हुए भी यदि मैं इस समय आपके सन्मुख उपस्थित हो अपने टूटे फूटे विचारोंद्वारा आपकी सेवाके लिये उपस्थित हुआ हूं, तो उसका कारण यही है कि बचपनमें बड़ोंकी आज्ञा पालन करना, छोटेके लिये एक बड़ा धर्म बतलाया गया है । मुझमें यह साहस नहीं कि जो आज्ञा आप महानुभावोंने दी है उसका उल्लंघन कर सकूं ।

नित समय मुझे सभाका आज्ञापत्र इस वर्षके अधिवेशनमें सभापतिका आपन ग्रहण करनेके लिये मिला, मेरे मनमें तरह तरहके संकोच पैदा होते थे; परन्तु थोड़े ही विचारके बाद मुझे यह ज्ञात हुआ कि समाजके नेताओंकी इस आज्ञामें भी अवश्य कोई बड़ा मर्म होगा, और यदि मैं अपनी अल्पबुद्धिके अनुसार उस प्रयोजनको आपके सन्मुख उपस्थित कर सकता हूं, तो वह यह है, कि एक युवक को इस उंचे स्थान पर खड़ा करके आपने जैन सभाके समस्त युवकोंको चेतावनी देकर आज्ञा दी है, कि अल्प समय आ गया है कि वे धर्मके विचारोंमें सुगम हों, अपने जीवनके चरित्रोंको शुद्धकर, समाज व धर्मकी सेवाके लोको होधने लें, इस महाधर्मक्षेत्रमें सत, सने, पनते इस प्रकार उत्तमिष्ठ हों, कि एकबार फिर हमारी प्राचीन Philosophy का प्रभाव समस्त मनुष्य समाजके जीवनपर पड़कर हमारा देश दीन २ में बनने लगे ।

अगर इसी धर्मकी सिद्धिके लिये हम बड़े



पदका गौरव आपने मुझे प्रदान किया है, तो मैं उसकी स्वीकृतिमें अपना अहोभाग्य समझता हूँ; क्योंकि मेरा विचार है कि यदि मैं इस पदके संकेत व इस अवसरके महत्वको पूर्ण रीतिसे समझ उसका उपयोग कर सका, तो उसके द्वारा मेरे जीवनका कल्याण होगा और यदि समानके युवक आपकी इस आज्ञा द्वारा अपने कर्तव्योंका ज्ञान प्राप्त कर वह कर्मपरायण हुए तो समानका उद्धार होगा।

महापुरुषगण ! आपकी इस असीम कृपाके लिये, जो आपने मुझ पर प्रगट की है, मैं किसी प्रकार अपनी कृतज्ञता शब्दों द्वारा नहीं प्रकट कर सकता।

छोटा जैसी छोटी सेवा कर सकता है अपनी शक्तिभर सेवा करनेका यत्न करेगा। आप कदापि आज्ञा न करें कि मैं किसी प्रकार बड़े अथवा महत्वके विचार आपके सामने उपस्थित कर सकूँगा। युवक समानके लिये सेवा बड़ा धर्म है, इसलिये मैं अपने समानके युवक बंधुओं व बहिनोंके लिये सेवाके भाव लिये हुए कुछ विचार उचित करनेका साहस करूँगा,

### नया परिवर्तन ।

अपने इन विचारोंको उपस्थित करनेके पहिले यह आवश्यक है कि हम उस बड़े परिवर्तनका कि जो इस समय दुनियाँकी नकेपलराज्य सीमाओं में, किन्तु समस्त मनुष्य समुदायके विचारों, परस्पर व्यवहारके विषयों तथा राजनैतिक नियमोंमें हो रहा है, व्याप्त हैं। यह कहना वास्तविक होगा कि संसारके समस्त द्वीपों व

मनुष्य समानके केन्द्रोंमें मनुष्य प्राणियोंके हृदय नई आशाओंसे, सेवा, भक्ति व प्रेमके भावोंकी हिलोरोंमें लहरा रहे हैं, और यदि इस बड़े परिवर्तनका कोई संकेत है तो वह यह है कि मनुष्य समान कीतराग विज्ञान के मार्ग पर अपने विचार आरुढ़ कर रहा है। मुझे भय है कि यह बात बहुतसे सज्जन आश्रयोंकी दृष्टिसे देखेंगे, और यह ठहरावेंगे कि कीतराग विज्ञानके मार्ग पर कि, जो हमारे जैन सिद्धान्तोंके अनुसार तीनों लोकोंका सार है, समस्त मनुष्य समानका ध्यान जा रहा है। यह कहना वास्तविक नहीं, किन्तु कल्पित है; परन्तु महाभामाजी, मेरा विचार है कि यदि इस सर्वव्यापी युद्धकी उन साढ़े चार वर्षकी कठिनाइयों व दुःखोंके पश्चात् भी, कि जो मनुष्य समानने उठाई हैं, राग व द्वेषसे रहित होकर आत्मज्ञानकी ओर उनको वैराग्य न हो तो यह बात आश्चर्यजनक होगी। संसारमें नितने दुःख, लड़ाइयाँ, वैर, निर्दयता व आत्माचार हम देखते हैं, उनका एक कारण राग अथवा द्वेष होता है। राष्ट्रोंके स्वार्थ तथा उनके परस्पर द्वेषोंके कारण यूरुपमें इस महा युद्धकी रचना हुई, और जिस समय द्वेष व रागके अंग खिरने लगे, सत्य व धर्मकी जय नें, जो प्रकृतिका नियम है, अपना रूप दिखा शक्तिका झंडा दुनियाँमें फहराया। जिस राष्ट्रने अपनी अज्ञानताके कारण 'मनुष्य बाहुबल', तथा 'बुद्धिबल' को 'सत्य' अथवा 'आरिम्भिक बल' से ऊँचा समझा था, नीचा देखा जो राष्ट्र सत्य व न्यायके मार्ग पर थे उन्होंने



विजय प्राप्त की, और पिछले दो माहके समाचारपत्रोंको जिन सज्जनोंने ध्यानपूर्वक पढ़ा है वह इसको अनुभव कर सकते हैं कि राष्ट्रीय परस्पर व्यवहार, मनुष्य समानके जीवन तथा उनके विचारोंमें कितना बड़ा परिवर्तन हुआ है, और कितना और भी बड़ा परिवर्तन दुनियामें आनेवाला है ।

### जैनधर्मका गौरव ।

इस प्राचीन धर्म समुदायके सभासदों तथा अनुयायियोंके लिये इसमें बढ़कर गौरवकी और क्या बात हो सकती है कि इस परिवर्तनमें जो हुआ है और हो रहा है उसमें दुनियाकी मनुष्य समान अपने दुःख व कठिनाइयोंसे प्राप्त किये अनुभव द्वारा हमारे उन प्राचीन व उच्च सिद्धान्तोंको, कि मिल पर हमारे अन्तिम तीर्थंकर श्रीमद्दावीर स्वामीने दुनिय के उद्धारके लिये स्वयंसेहित कार्य किया, उनको मनुष्य समानके कल्याण व जीवनकी सफलताका साधन स्वीकृत करने लगी है ।

महानुभावो ! जैनधर्मके ये सिद्धान्त अब केवल हमारे सिद्धान्त नहीं हैं, उन सिद्धान्तों को मनुष्य समान आज अपना कह रही है; हमको इसमें अपना गौरव नहीं समझना चाहिये । यह मन उन्हीं परमेश्वर श्रीमद्दावीर स्वामीके प्रभावका फल है ।

बृटिजराज्य तथा सिंहासनके प्रति राजभक्ति ।

व्यापी युद्धके समयमें भी अपना जीवन यथोचित रीतिसे शान्ति पूर्वक व्यतीत कर सके हैं तो उसके लिये आज हमारा यह स्पष्ट कर्तव्य है कि हम बृटिश राज्य तथा सिंहासनके प्रति, कि जिसको सम्राट जार्ज पंचम आभूषित करते हैं, अपनी सच्ची राजभक्ति प्रकट करें । महानुभावो, जैनधर्म व जैनसमाजकी बृटिश सिंहासनकी उन्नतियोंमें बहुत सुगमताएं प्राप्त हुई हैं और इसलिये हमारा उस राज्यके प्रति भक्तिके भाव प्रकट करना स्वाभाविक बात है; परन्तु आज जब हम बृटिश राज्य सिंहासनको उन अटल नियमोंकी नींव पर नमा हुआ पाते हैं कि जो मनुष्य समानके उद्धारके लिये मंगलकारी हैं, तो हमारा प्रेम व भक्ति उसके लिये स्वयं ही दुगुनी हो जाती है । बृटिश साम्राज्य अब केवल ब्रिटेनके द्वीपके निवासियोंका राज्य नहीं है, यह राज्य आज उतना ही हमारा है कि जितना उनका । हम आज एक पड़े साम्राज्यके नागरिक होनेका गौरव रखते हैं, साम्राज्यके आधार पर बृटिश साम्राज्यमें हमारे नागरिक होनेका नया प्रमाण हमारे देश आटा लार्ड मिडका बृटिश राज्यके मंत्री पर नियम होना तथा लार्डकी उपाधि उनको प्रदान किया जाना है, कि जिसका हर एक भारतीयवासी गौरव कर सकता है । इस साम्राज्यमें जैनधर्मके अनुयायियोंके लिये उन्नतिके चरों द्वार खुले हैं । महानुभावो, भविष्य कालमें पुन व नई आशाओंमें भरा उदित-रोचक होता है ।

बृटिश नियमों तथा भारतवासियोंके

साम्राज्यके सिंहासन छान परस्पर प्रेम व भक्ति की रस्तीमें संगठित होगा दुनियाके भविष्यके लिये एक टोन्हाट व वैवी बात प्रतीत होती है । धर्म और कर्म दोनों क्षेत्रोंके संगठनसे एक नये युगका विकास हो रहा है ।

**सम्राट् के पुत्रवियोग पर शोक ।**

ऐसे समय हमें यह जागकर दुःख हुआ है कि हमारे प्रिय सम्राट् जार्ज पंचम पर; कि जिन्होंने सम्राज्ञी सहित युद्धके घोर कठिन समय अनेक महत्वके कार्योंमें रातदिन परिश्रम करके योग दिया, पुत्रवियोगका वज्र पड़ा । प्रियसन्तानगण, गीन अथवा अमीर, सन्तान सबके लिये यकसां प्रिय होती है, प्रजा और सम्राट्का संबंध जैसा मैंने निवेदन किया है हमारे साम्राज्यमें बड़ा घनिष्ठ है इसलिये स्वाभाविक रीतिसे सम्राट्के इस दुःखमें उनकी जैन प्रजा भी उनके साथ सहानुभूति करती है और राजकुमारकी अकाल मृत्यु पर शोक प्रकट करती है ।

**कोटा नरेन्द्रकी सभाका धन्यवाद ।**

महानुभावो, जब मैं आपकी आज्ञा लेता हूँ कि जैनधर्मसमाजकी ओरसे श्रीमान कोटा नरेन्द्रका, कि जिनकी राजधानीमें आज हम अन्वेषण करनेको एकत्रित हुए हैं, हार्दिक धन्यवाद प्रकट करूँ ।

**नरेन्द्रमंडलकी स्थापना पर हर्ष ।**

हमारी समानका अधिकांश भाग भारतीय देशी रियासतोंकी प्रजा होनेका गौरव रखती है, इसलिये हमको यह जानकर बड़ा हर्ष हुआ है कि इस वर्षकी सीपस कान्फरेन्समें, जो दो

सप्ताह पहिले देहलीमें हुई थी, यह निश्चित कर लिया गया है कि देशी रियासतोंके संबंधमें कठिनाइयोंको दूर करनेके लिये "नरेन्द्रमंडल" स्थायी व नियमितरूपसे स्थापित किया जावे । हमारा विश्वास है, कि हमारे भारतीय नरेन्द्रों का एक मंडल स्थापित हो जानेसे और उनके एक दूसरेसे परामर्श होनेसे देशी रियासतोंके शासनपर बड़ा उपयोगी प्रभाव पड़ेगा ।

**निस्वार्थ सेवकोंके प्रति कृतज्ञता**

मैं पहिले निवेदन कर चुका हूँ कि युवकोंके लिये सेवार्थ परमधर्म है । महानुभावो, उस धर्म मार्गपर चलनेके लिये पहिला पाठ यही है कि हम उन महापुरुषोंके जीवन पर, कि जिन्होंने स्वार्थ रहित अपने तन, मन, धन द्वारा सेवा की, उसका मनन करें, व उनके गुणोंको जानकर उनका अनुकरण करनेका यत्न करें, व उनके लिये कृतज्ञताके भाव प्रकट करें ।

ऊंचा पद उन्हीं महापुरुषोंका अधिकार है कि जिन्होंने सेवाको जीवनका मुख्य उद्देश्य समझ उसीमें अपना जीवन परमार्थके लिये व्यतीत किया । मैं क्षमा चाहता हूँ, वह परमार्थ नहीं, किन्तु उच्चश्रेणीका स्वार्थ ही है, क्योंकि आंतराय दृष्टिमें "स्व" व "पर" का अंतर वास्तविक नहीं किन्तु कल्पित है ।

जैन समाजका इतिहास ऐसे आदर्श चरित्रोंसे शून्य नहीं है कि निम्नका हमारा युवकसमुदाय अपने जीवनमें उपयोगिताके साथ अनुकरण कर सकता है ।

हम अपने जीवनमें अनेक महान् पुरुषोंको बड़ा कहते हैं क्यों ? इसीलिये कि उन्हीं



बड़ी सेवाएं की हैं और करते हैं। हम उनको मान देते हैं, हम उनसे प्रेम करते हैं उसका कारण यही है कि आत्माको 'सेवा' प्रिय है। बड़ा कहलाना अथवा सेवक होना मेरे विचारमें एक ही मानी रखता है। जो व्यक्ति विशेष-रूपसे सेवा करते हैं उनका मान विशेष रूपसे किया जाता है। यह मान हम उनका नहीं करते; किन्तु उसके द्वारा हम उनके अच्छे गुणोंका अनुकरण करनेकी हार्दिक इच्छा प्रकट करते हैं, जिससे हमारे अन्दर भी उन्हीं गुणोंका विकास हो। ऐसी विशेष रीतिसे सेवा करनेवालोंकी गणना जिस समाजमें अधिक होती है उनका ही उस समाजको महत्व अधिक होता है। मैं समझता हूं कि 'सेवा' जैन-समाजका मुख्य लक्ष्य है। परन्तु जहां इस समाजके प्रत्येक व्यक्तिका विशेष रूपसे सेवक होना चाहिये, अधिकतर भाग सेवाके भावसे शून्य दिखाई देता है। हमारी समाजके ऊंचे श्रेणीके सेवकोंकी गणना हाथ की पांच अंगु-लियों पर की जा सकती है। महागुभावो, ऐसे महान् पुरुषोंमें हम मातृ देवकुमारनी रईस आरा, टिप्पी चंपतरायनी रईस कानपुर, सेठ माणिकचन्द पानाचन्दरी जे. पी. बम्बई, सेठ दामोदरदासजी मथुरा, सेठ परमेश्वरदासजी फर्रुखाबाद, वं० गोपालदासजी न्यायवाचस्पति मुंबई, इन सबको कि जो यद्यपि आज हम समाजमें नहीं हैं, किन्तु उनकी अत्यंत सेवाके कारण हमें जानना चाहिये हैं और मेन, आर, व आचारसे हमें जानना चाहिये हैं अपना गौरव समझने हैं।

वर्तमानमें मेरे भ्राता सर सेठ हुकमचंदजी इन्दौरनिवासी जो सेवा कर रहे हैं वह प्रशंसनीय है व हमारी पूजनीय बहिन मगनबाई बम्बईवालीके अपूर्व कार्यसे आज इस समाजका बालक बालक भी भली भांति परिचित है।

**सेवाके लिये विचारोंकी दृढ़ता।**

मैं इन उदाहरणों द्वारा यदि आज अपनी समाजके युवक भ्राताओं व बहिनोंके समुदाय सेवाके भाव उपस्थित करनेका साहस कर रहा हूं तो उससे मेरा तात्पर्य यही है कि सेवाबद्ध धर्म है जिसके पालनसे न केवल अपने जीवनका कल्याण होता है, किन्तु समाज सुधार, देश सुधारके लिये भी यही एक मार्ग है, और इसीके द्वारा अन्तमें मनुष्य मोक्षको प्राप्त होता है। यदि यह विचार सत्य है तो क्या हमारे लिये यह उचित नहीं कि हम सब अपने-अपने योग्य बनानेके लिये यत्न करें। भाइयो तथा बहिनो, सेवा बिना पूंजीके नहीं होती। सेवाके लिये जिस पूंजीकी आवश्यकता है वह सोना, चांदी व जवाहरात नहीं हैं, जो चलती फिरती छाया है। उसके लिये जिस स्थायी व अमूल्य पूंजीकी आवश्यकता है, यह हमारा दृढ़ विचार है।

विचारकी दृढ़ता इसलिये पड़ी पूंजी है, कि इसके दोषों की दूसरी सारी कठिनाईयां मानने लगती हैं। इसीके एक विद्वानका कथन है, "We are there is a will, there is a way" जो सेवा हार्दिक भावोंमें होती है यही सच्ची सेवा है। जो पतनमान है वह अपने हार्दिक भावोंका प्रमाण धन अर्थात् धनके देने हैं, परन्तु



जिनके पास धन नहीं वह भी अवश्य उसका प्रमाण दूसरी रीतियोंसे दे सकते हैं। मनुष्य चाहे वह धनवान हो चाहे निर्धन हो, सेवाके अवकाश उसके लिये जहां भी हो, उपस्थित हैं।

### अधिवेशनके सम्बन्धमें ।

इतना कह कर अब मैं जैन महासभाके उन कार्य व उद्देश्योंकी ओर फिरता हूं कि जिनके लिये हम सब इतने वर्षोंसे बराबर यत्न कर रहे हैं और जिस संबंधमें आज एक बार फिर हम सब इस स्थान पर एकत्रित हुए हैं। यह उत्सव हमारी तीन सभाओंका सम्मिलित उत्सव है, अर्थात् भारतवर्षीय दिगंबरजैन महासभा, श्रीमालवाप्रांतिकसभा और हाड़ोती प्रांतिकसभा।

### भारतवर्षीय महासभा ।

भारतवर्षीय महासभाको स्थापित हुए, आज २४ वर्ष हो चुके हैं। मालवा प्रांतिकसभा १९ वर्षोंसे कार्य करती है, और हाड़ोतीप्रांतिकसभाओं यह पहिला ही अधिवेशन है। अर्थात् नामके लिये हम इन तीन सभाओंको एवम् २ नामसे पुकारते हैं, तदपि वास्तवमें वह एक हैं। भारतीय सभामें प्रांतिक सभाओंका स्थान बड़ी है जैसे मनुष्यके शरीरमें अनेक अंगोंका है। हमारी जैनसभाका शरीर भारतवर्षीय महासभा है। प्रांतीय सभाएं केवल उसके अंग हैं। इसलिये जो कार्यविवरण प्रांतीय सभाओंका है। वह स्वाभाविक रीतिसे महासभाका कार्य ही है। इतना ही नहीं, किन्तु प्रांतीय सभाओंका जन्म भारतीय महासभासे ही हुआ है और इसलिये आज जो कुछ ज्ञाति हम अपनी सभामें

देखते हैं, उसका श्रेय महासभाको ही दिया जाना है। इसी महासभा द्वारा जैनगण्ड साप्ताहिकपत्र २४ वर्षोंसे प्रकाशित हो रहा है, तथा इसी महासभा द्वारा एक महाविद्यालय मथुरामें आज २० वर्षोंसे स्थापित है कि जिसमें जैन-सिद्धांतके साथ व्याकरण, काव्य, न्याय, कोष आदि विषयों पर शिक्षा दी जा रही है। महासभाका एक उपदेशक विभाग भी है। तीर्थोंकी रक्षाका जो कुछ कार्य इस समय तक हो सका है वह इसी महासभाका प्रताप है। इस महासभाको इस समय निम्नलिखित प्रांतीय शाखा-सभाएं हैं:—

- (१) मालवा, (२) बम्बई, (३) बुंदेलखंड,
- (४) वरार, (५) नागपुर, (६) हाड़ोती (गमगुताना),

महासभाका हेड कार्टर इस समय सहरानपुरमें है। मुझे भय है कि भारतीय महासभाका जैसा यन्त्रि संघ प्रांतिक सभाओंसे होना चाहिये, वैसा इस समय नहीं है, क्योंकि यह स्पष्ट रीतिसे प्रतीत होता है कि प्रांतिक सभाओंके कार्यका निरीक्षण अथवा उनमें जैसा महासभाको योग देना चाहिये, वैसा नहीं होता, और संभवतः यही कारण है कि अनेक प्रांतीय सभाएं एक-दोरीमें काम न करती हुई एवम् एवम् अपनी सुगमताओं व विचारोंके अनुसार कार्य करती हैं। इस विचारणीय विषय पर मैं यहां संक्षेपरूपसे आप महानुभावोंका ध्यान आकर्षित करता हूं। यह बड़ा ही आवश्यक है कि प्रांतीय और महासभाका कार्य इस प्रकार संगठित कर एक-दोरीमें बांधा जाये, जिससे देशके अनेक



भागोंमें समाजसुधारका कार्य उत्तम रीतिसे चला सके, और इसके लिये मेरे कहनेकी आवश्यकता नहीं है, कि भारतीय महासभाका प्रबंध इस प्रकार निर्माणित किया जाना जरूरी है, कि जिससे समस्त प्रांतीय महासभाओंके प्रतिनिधियोंको उसमें योग देनेका अवसर प्राप्त हो सके।

### मालवा प्रांतिकसभा ।

मालवा प्रांतिकसभा, कि जिसका यह १९वां वार्षिक अधिवेशन इसीमें सम्मिलित हो रहा है, साधारण रीतिसे समाजसुधारका कार्य अपने अनेक विभागों द्वारा कर रही है। इस सभाके कार्यके मुख्य विभाग इस प्रकार हैं:-

- (१) विद्याविभाग, (२) उपदेशकविभाग, (३) अनाथरक्षाविभाग, (४) सरस्वतीमंदार, (५) सभास्थापकविभाग, (६) तीर्थक्षेत्ररक्षाविभाग, (७) ट्रेक्टप्रचारकविभाग (८) शुद्धऔषधालय विभाग, (९) मासिकपत्र विभाग ।

जो कार्य इन अनेक विभागों द्वारा हो रहा है उसका विस्तारित वर्णन आपको वार्षिक रिपोर्टमें ज्ञान होगा। विद्याविभागकी उल्लेखनीय संस्थाएं "इन्दौरका महाविद्यालय, रतनमठ जैनबोर्डिंग स्कूल, इन्दौरका प्रसिद्ध "श्राविकाश्रम" जो श्रीमती फंजनबाईकी उदारताका फल है, अथवा इंदौर व बड़वाहाकी कन्या पाठशालाएँ हैं।" मालवा प्रांतिक सभाके उपदेशक विभागका कार्य विशेष रीतिमें प्रगत्ताके योग्य है, क्योंकि इसके द्वारा मालवाके अनेक स्त्रियोंको उपदेशका लाभ पहुंचा है और इस प्रांतीयमहासभा शुद्धऔषधविभागविषय रीतिमें कार्य कर रहा है यह कार्यध्वजोंके लिये गौर-

वकी बात है। यह औषधालय समाजकी एक होनहार संस्था है। मुख्य बात इस औषधालयकी यह है कि औषधियां यहांसे सर्व साधारणको विना मूल्य दी जाती हैं। वास्तवमें इस औषधालय द्वारा प्रांतीय सभा समाजसेवाका एक अमूल्य कार्य कर रही है। इसकी इस समय शाखाएं मालवा प्रांतके उपरान्त मध्य प्रदेश, संयुक्त प्रांत, नीमाड़, गुजरात, राजपूताना, वागड़ दक्षिण, पंजाब और नेपालमें स्थापित हो चुकी हैं? जिनकी संख्या ११२४ बताई जाती है। ट्रेक्ट प्रचार विभागने गत वर्षोंमें ७ ट्रेक्ट प्रकाशित किये हैं।

### हाड़ौती प्रान्तिक सभा ।

हाड़ौती प्रान्तिक सभा जिसका यह पहिला अधिवेशन है उसके लिये हम यहांके समाजसेवकोंको हार्दिक बधाई देते हैं। आशा है कि यह सभा इस प्रान्तके लिये समान सुधारके कार्यमें सहायक होगी।

### सभाओंका प्रचन्ध व देशकाल ।

सभाओंके प्रचन्ध द्वारा यद्यपि समानसुधार इस समय तक अवश्य हुए हैं, अनेक कारणोंसे इन सुधारोंकी गति इतनी मन्द हुई है कि हम बहुधा यह नहीं बतला सके कि वास्तवमें जो सुधार हुए हैं वह समाजके कार्य द्वारा हुए हैं अथवा वे स्वयं समयके परिवर्तनका फल हैं। उन कारणोंमें कि जो इस देशमें हर प्रकारके सुधारोंमें बाधक रहे हैं, शिक्षाका अभाव अथवा शिक्षापन्थालोंकी मृष्टियां होने वहां व मुख्य कारण हैं। महासभाको, यह एक मूल कारण हमारी सारी आतमियोंका यत्न हो सकता है।

शिक्षाप्रणाली जो इस देशमें पिछले १०० वर्षोंमें रही है वह भारतनिवासियोंकी आवश्यकतानुसार कदापि निर्माणित नहीं हुई थी; लेकिन एक बड़ा कार्य पिछली शताब्दीकी शिक्षाने जो इस देशमें किया है वह यह है कि पश्चिमीय विचारों व विज्ञानका प्रभाव अधिकतासे भारतवासियों पर पड़ा, और देशमें शान्ति रहनेसे एक प्रकारकी जागृति देश व समानोंमें पैदा होने लगी, व जहाँ पश्चिमीय विद्वानोंने भारतवर्षकी प्राचीन philosophy के मंदारोंका अध्ययन करके उसके महत्वको स्वीकृत किया, हमारे देशमें समाजका अधिकतर भाग, जिसपर पश्चिमीय शिक्षाका प्रभाव पड़ा, स्वयं अपने धार्मिक ज्ञानसे बेचित रहा ।

**धार्मिक ज्ञानके अभावसे पुराने व नवोंमें विरोध ।**

धार्मिक ज्ञान, विचार तथा संभावसे शून्य शिक्षाप्रणालीने जिन पुरुष और स्त्रियोंको शिक्षित किया वह यदि हमारे प्राचीन धर्मके उच्च सिद्धांतोंको अपने जीवनका साधन बना लें, भयना ये हमारे प्राचीन धर्मसे विमुख रहें तो क्या उनके लिये आप उन्हींको दूषित ठहरावेंगे? यह दोष, महानुभावों, उनका नहीं; किन्तु उस देश का लक्षण है कि जिसमें उनको रहना पड़ता है । विषय बहुत बड़ा व महत्वका है, इसका उल्लेख यथेष्ट में संक्षिप्त रीतिसे ही यहां पर कर सकता हूं, इस समय इसलिये आवश्यक है कि हमको व कारण स्पष्ट रीतिसे माहूम होने लगते हैं कि जिनसे वर्तमान अनुसार शिक्षित युवक और उनके

परके बड़े बूढ़ों तथा वंशुओंमें जिन पर पश्चिमीय शिक्षा व विचारोंका प्रभाव नहीं पड़ा विरोध बढ़ना जाता है, इसीलिये एक ओर समानोंमें ऐसे युवक पुरुष व स्त्रियोंको देखते हैं कि जो पश्चिमीय सभ्यताके वेगमें बढ़कर उन्हींके समान विचार स्वाभाविक रीतिसे करते रहते हैं, दूसरी ओर हम उन महान् पुरुषोंको पाते हैं कि जिनको साधारण बोल चालमें "पुराने खयालातके लोग" कहनेकी प्रथा पड़ गई है ।

आज इस देशकी प्रत्येक समानके घर में यही विरोध दृष्टिगोचर होता है, जिसमें सामाजिक सुधारके कार्योंमें बड़ी बाधाएं पड़ी हुई हैं, इतना ही नहीं किन्तु घर और कुटुम्बियोंके परस्पर व्यवहार व प्रीतिमें भी अन्तर पड़ता जाता है । महानुभावों व प्रियवन्धुओं व महिलाओं इस बढ़ते हुए अन्तर व भेदका केवल एक और ही कारण है । और वह है, धार्मिक शिक्षाका अभाव, अथवा धार्मिक ज्ञानका उचित रीतिमें प्रचार न किया जाना । हमारे समानके युवक यदि धर्मसे विमुख हैं अथवा धर्मकी ओरसे उदासीन हैं तो उसका कारण यही है कि धर्मज्ञान रोचक रूपमें प्राप्त करनेके लिये उनको सुभीते व अवसर प्राप्त नहीं हैं । नये परिवर्तनमें जैन समाजके लिये नये अवसर ।

मैं ऊपर निवेदन कर आया हूं कि दुनियांमें बड़ा परिवर्तन हो रहा है, और भी बड़ा परिवर्तन मनुष्य समान पर आनेवाला है, और यह भी निवेदन कर चुका हूं, कि दुनियांकी समस्त मनुष्य समान बीतराग विज्ञानके मार्ग पर



## कलावती ।

(टैलर-श्रीपुत्र रूपदिशोर जैन, विजयगढ़)

(गतांसे बाल।)

६

कलावती विवाह कर शंख नगर आ गई उसने अपनी राजधानीमें अनेक विद्यालय, वाचनालय, अनायालय, भिक्षुको अन्न भण्ड, दान मनुष्य और पशु पक्षियोंको स्वास्थ्यागार, पथिकालय स्थापित किये, यहाँ २ जैन मन्दिर निर्माण कराए जिनमें साध विहित पूजा प्रशालनके लिये बुद्धिमान पुजारी नियत किए थे। निदान राजा और रानी बड़े प्रेमसे कालक्षय करते थे।

कलावतीके सदाशयमें राजा शंख कुञ्ज कुछ बन गया था प्रह प्रजासे दरमांश भूमि कर लेवा था सो भी बनाइ नहीं। प्रजा धन धानसे परिपूर्ण थी धन, जन, दल आदि किसी शक्तिकी कमी न थी। रानीने कुछ दिनोंमें गर्भ धारण किया।

गर्भ चिन्ह देख राजाकी अति इप्से हुआ परन्तु कुछ क्षणभंगुर था समय फलट गया। काल कालकी ऐसी ही विकराल गति है कि आयात जब किम्बा पशु इत्यादि इसके जगद्वालमें पड़ कर दवांशोल होते हैं।

सुवराज जयसेन अपनी पहिल कलावतीको इतने दिन बीतने पर भी विस्मय न कर सका अपने विश्वस्त सेवकों द्वारा शंख नगर बहिनको बुलाने सन्देश भेजा। परन्तु शंख रानीको प्रानोसि अधिक प्यार करता था प्रेमविचार भेजना अवस्थाकार किया।

जयसेनने बहिनके लिये दो उत्तम, सौन्दर्य सधित साड़ी भेजी थीं जिनमें यथास्थान घेल बूटोमें जयसेनका नाम अंकित था।

राज्ञी पाकर कलावती अति प्रसन्न हुई। उसने एक साड़ी अपने सुकोमल शरीर पर धारण कर परिचारिकाओंसे कहा—“इस साड़ीमें सब प्रेमी

गन्ध आती है, वास्तवमें इसका मेजनेवाला सुमे हृदयसे प्यार करता है।”

शंखने शान्तपुरामें प्रवेश किया—“राज्ञीवा भोजनेवाला सुमे हृदयसे प्यार करता है।” रानीके मुखमें सुनकर राजा शंखको बड़ी शंका हुई उसने समझा रानी सुमे नहीं चाहती और किसीसे इसका शुभ प्रेम है। यह सोचते २० उसका शरीर थापने लगा क्रोध सम्पित अवशो पर दन्तारोपन होने लगा।

क्रोध मनुष्यको हतबुद्धि बना देता है ज्ञान नष्ट हो जाता है। शंखका मन ऐसा फिटा कि उसने रानीको देखते निकाल देना निश्चय कर लिया। दिनभरा इसी निन्तामें बीता रातको नागदाल पुत्रा राजाने आता ही—“रानीके दोनो हाथ काट कर वनमें गाय आओ।”

रानी हो रही थी। चांडाल सुतादस्यामें ही गोथ दूर उद्यानमें ले गया। सचेत हो रानीने वनमें लानेका कारण पूछा।

काण्डालने राजाका-निर्वाण्ड १७७ कह सुनाई। रानी सुनकर मज्जाहृतकी भांति स्थग्निमत रह गई, चम्पे जैसा सज्जल रंग पाण्डु गोगीकी नाई पीला पड़ गया, सहस्र वृश्चिकदेश समान वेदना होने लगी। उसने बहुत सोचा परन्तु कोई अयाय उसे हात न हुआ उसने अचिराये भ्रष्ट बराते हुए कहा—“बन्धु, हाथ क्या समस्त शरीर ही प्राणधरका है यदि उन्हे.....” कठ भग्न हो गया आगे कुछ न कह सकी।

यद्यपि चांडाल आगेकी निधन बातों समझ गया परन्तु रानीका सुकुमार शरीर तेज पुत्र देख हाथ न काट सका।

रानीने चाण्डालको सोच निमग्न देख कहा—“तुम सेवक हो राजाकी आज्ञाका पालन कर शीघ्र लौट जाओ।”

काण्डालने देखा पास ही एक शय पड़ा है उसने इत बड़से कहा—“माताजी, अपनी अंगुली और कंगन इस साड़ीमें डाल दीजिये मैं काट ले जाऊँगा।”



यह कहकर चाटवाल अश्रुवापसे अपना यक्षस्थल भिगोने लगा ।

दूसरे दिन जब छटे हुए हाथ राजाके पास पहुँचे तो उसे बड़ा दुःख हुआ नेत्रोंसे अश्रुवाप बहने लगी । वरत बहुत दिनों तक अनेक चेष्टा करने पर भी राजा गनीशो विस्मय न कर सका ।

६

राजनहिणी कलावती निर्जन बनमें बैठी दृश्य दृश्य और भगवत्पदमें अश्रु पड़ाने हुए भगवान् जिनैष्टमे प्रार्थना कर रही है “प्रभो, मैं तो चली मेरी निष्कलङ्कताके लिये आप ही माक्षी हैं । यस अपने चरणोंमें मुझ शीततिरीनको आश्रय दो । भगवन्, तुम संपन्न हो नरण पथान्, मेरे गुहा-चाणके विषयमें प्रार्थारका यज्ञ विष्णु होने देना । यदि आप पर मेरा दह भाग हो-यदि दस अमा-भिनीशो आरक्षी लज्जा हो तो मानके पूर्व एकवार प्रार्थनकरा करण इतन मिले एक मात्र यही आशा है ।”

गनी जब अनिद्र हुई तो सामने ही एक साधु महात्मा दृष्टिगत हुए । साधुने विस्मित हो पूछा “पुत्री, तू क्यों है ?” महाराणी कलावतीने अपनी दुखें कथा अधोपान्त कह सुनाई । साधु ने वरनात शिशु देकर अति विषम हुआ उसने शीघ्रनिद्रास त्याग पूछा—“पुत्री, क्या किसी साथीके आनेकी प्रतीक्षा है ?”

कलावतीने शीघ्रनिद्रास त्याग का कहा—“साथी एक बड़ी संधे नियन्ता महावीर स्वामी हैं ।”

साधुने समझा कोई कुलीन रमणी है । व्यथकी वंदनमें यह शक्तिमें तिरस्कर हुई है अस्तु । उमने आसवसत देखकर कहा—“जब महावीरके नामसे दस इतनी श्रद्धा है तो जबतक तेरे दिन न किए हमारे महावीर नामक विहार (आश्रम) को चल गयाउम्भव तुझे कुछ लक्ष्य न होने देंगे ।

साधुने लपके से गनी विहारमें जा रही । वह सांसारिक दुःखोंसे मुक्त हो भित्तुवनियोंकी नई-आनन्दसे जितन दिवाने लगी ।

सती साध्वीको विलेखित कर भोग अपार दत्त दिया ।  
(निधे निश्वात् न्याग) आह ! ऐसा अयम करके भी म  
जीवित हू । पापानि, क्यों नहीं मुझ वृक्ष कुला-  
धर्मको भस्म कर दें ! छत्र, तु ही क्यों नहीं  
गिर पड़ती, क्या मैं सधारे सुख दिगने योग्य  
हूँ । हाय । रानी ! हा प्राणधारी ! ! ” कहते २  
राजा अचेत हो गया ।

जब राजा चेतन्य हुआ तो उभने 'निश्चय दिया  
' जिस प्रकार करविहीनरानी सिंह दिख भयानक  
पशुओंका चरत हुई है उसी प्रकार मुझे भी प्राण  
वित्तजन करने चाहिए । ” यह सोचकर राजा  
मनमें जानेको उद्यत हुआ ।

कर्मचारीगण एवम् प्रजाके कानों तक तब उपोक्त  
हुएद घटना पटुची तो अति विषम हुए । सब  
यही जानते थे कि वेपनात्ने आए हुए उनके साथ  
रानी मादिके गई हुई हैं पशु राजान निश्चा  
अमवश धनीको त्यागा और दोनों हाथ पट्टा  
चाण्डाल द्वारा निर्वासन दत्त दिया है तो यह जन  
सब तर्हि २ करने लगे । सबसे सौंदर्य आर्तनादसे  
स्वर्गात्म शत्रु नगर विगतपुत्र दर्शन लगा ।  
क्योंकि रानी जबसे विनाश कर आई प्रजामें भय,  
अन, दल अदि निनी शक्ति की कमी नहीं  
रही थी । जनता उन्नतमना नवानिश्चयोंमें लीन  
थी कि यहहा ऐसा मज्जात हुआ । अस्तु, ऐसी  
प्रजापालनेक तत्पर, शैलनगर राज्यकर्ता सभाकीको  
सोचकर प्रजा कैसे सन्तोष करता उनको अधीम  
दुःख अक्षयनीय है ।

राजा बन जानेको उद्यत है । सबही सम्मग्य पर  
लनेकी चला करते हैं पशु रानीके विधोभने  
राजाकी दत्ता विनिपतामें परिणत कर दी है ।  
अतएव यदि उसका विधको भद्र करनेमें  
समर्थ न हुआ ।

राजा के राज्य पर इसका कुछ प्रभुत्व था परन्तु  
यह बहुत दिनोंसे प्रसूत गया हुआ था अस्तु  
परन्तु परामर्श पर सब तर्क किता मज्जेधीको  
बुन लाए ।

मज्जेधीने राजाको विपन्न देखकर कहा—‘राजन  
विना विनाश एक बार जो कुछ आपने किया उसका  
परिणाम क्या नभकर और दुखदाई हुआ अब  
अप पुन दिना विचारे काम करते हैं जिसका  
प्राप्ति होना असम्भव है । कल एक योगिराज  
अमितेजसे साक्षात् हुआ था वह यही उनमें ही  
निरास करने है यदि आप उनसे उपदेश लाभ  
करें तो अवश्यमेव शान्ति मिलेगी ।

८

योगिराज अमितेजने राजाको उपदेश दिया ।  
“ यह सत्ता वमं भूमि है मन, वचन, और  
वमंमे जो कार्य सम्पदन होगा अवश्यमेव उसका  
फल भोगना पड़गा—“ वाचधोरो मज्जेधीनः  
रंरेव कमभि । कृपय सनिता दृढप्राज्ञाभ्ये-  
परात् । ”

यह समझता कि सुख दुःख की शक्ति ओ न  
जन्म दिया है अम है यह हमारे यमोका फल  
है । लौकिक भी उति है कि ‘प्रमाणमन.राण-  
प्रवृत्ता’ शान्-समस्त दर्शनकारोंने भी ‘वर्मकी  
सत्ता शब्दान्तरसे स्वीकार की है और फल भी  
तर्मातुमार ही मानकर अपने २ विद्वान्तरा  
समयन कर सके हैं, केवल वर्मके जड़ होनेमें  
उनका प्रेरक शब्द उचता कोई दूसरा कारण  
माना है परन्तु जैन लोग स्वात्माने निज को  
कारण नहीं मानते । यद्यपि वर्म जड़ है तथापि  
उसकी अमन्त्र प्रकारकी शक्तियां हैं भाएव शुद्ध-  
दुष्ट-निजजन अनन्त शक्तिके स्वामी भावमात्रो  
सत्तानी वनात्तर, अपने आधीन शुभाशुभ गतिमें  
लोहको चुम्बककी तरह खींचनेकी शक्ति रहता है  
उपमें दूसरे प्रेरककी वह अपेक्षा नहीं करता यदि  
यह शक्त की जावे कि जड़ अपक्षा या उर्तार  
कैसे कर सकजा है ? जो एत मशिकों ही ले  
सीजिये जड़ होने पर आत्माके उपकारक और  
अनुपकारक प्रत्यक्ष सिद्ध है इसी प्रकार वर्म जड़  
होने पर भी आत्माने मोहित कर लेता है ।  
वर्मके प्राप्ति तीन साधारण रूप हैं, प्राप्ति-विप-  
और सचित । प्रत्यक्ष तो वर्तमान दशामें

फल दे रहे हैं, क्रियमान् किये जा रहे हैं जिनमेंसे बहुत्वा संवित होंगे जो आगामी जन्ममें प्रारब्ध बनेंगे ।

राजन्, आपने दर्पा और सन्देश्य रात्रीको दुःख दिया। आपको विचारना चाहिए ऐसा क्यों हुआ? आपने जिसको दुःख दिया कर्मवश उसका फल अवश्य भोगना पड़ेगा "अवश्यमेव भोक्तव्यं कृत्वा कर्मशुभाशुभ।" जो बीज आपके मनमें उलब हुआ हैं जलाकर भस्म कर दीजिये यदि उसमें भङ्ग निकल आए तो आपको दुःखद यत्ना भोगनी पड़ेगी। आप विचारसे काम लें तभी बन्धाण होगा।

योगीने वपदेशसे राजा कुछ सन्त हुआ उसने मन जाना किमी और समयको बधित कर दिया।

एक दिन राजाने योगीगजमें बड़ा—"महात्मन्, रात में एक रत्न देता है-कलाशायी एक टटा नीचेरी ओर मुक्त हुई है जिसमें एक सुन्दर अनमोल फल लगा हुआ है। इच्छा करने ही लगा मेरी ओर मुक्त जाती है। और....."

धीमे बात कहकर योगीराजने कहा—"राजन्, योग होता है अब आपके दिन चिरे। यह विश्वास रहिए अभी आपकी रानी जीवित है उसने पुत्र प्रसव किया है। भाग शीघ्र ही अपने भोग जनिष्ठ नय तिनुका सुन्दर सुगन्ध अयलोन कर आनन्धित होंगे। भाग इतरजनः वनमें रानी की खोज करादये।"

थोड़ी देर पीछे दत्त राजसभामें उपस्थित हुआ। राजाने भ्रमवश रानीके प्रति किया हुआ अत्याचार से २ बार कह सुनाया।

दत्तने बड़ा पश्चात्ताप किया—"राजन्, कलावती सो नहीं थी यह मानवी वेशमें साक्षात् स्वर्ग राज्यकी अधिष्ठात्री देखी थी। ओह! आपने विना विचार हाथ कटवाकर जनसमाजमें कितनी धू धू कराई। राजासे येचारी किसीके सामने आनेगी, आह! यह अपना मुख धोने तरसे अक्षम होगी!"

'दत्त! मैं रानीकी स्वयम् सेवा सुभ्रूपा कहंगा यह बड़ी कष्टसहिष्णु स्त्री साथी है मुझे क्षमा कर भ्रमामें अंगीकार करेगी। अस्तु जिस प्रकार हो सके एकवार रानीसे साक्षात् करा दें मैं नेत्रा विर कृतज्ञ रहूंगा।" यह कहकर राजा अनुनाममें अपना बक्षस्थल भिजोने लगा।

दत्तने दीर्घनिश्चास त्याग कर कहा—"रानी अवश्यमेव आपको क्षमा कर देगी परन्तु उसका मिलना भूति पटिन है। अस्तु गद मैं जाता हूँ, यथासम्भव छंद खोजकर शीघ्र लौटूंगा।" यह कहकर दत्तने चाण्डालसे वन दलदिका पता पूछकर वड़ी और पयान किया।

साधुके उपदेशसे दश विहारमें आया । यहाँ उसने अच्छे साधुओंका समाज देखा सदृश कोनेमें बैठी हुई एक भिक्षुकी नीर उसकी दृष्टि पड़ी जो अपने बालकको गोदमें लिये लोरी गा रही थी, दत्त "हा रानी ! हा रानी ! ! " इतकर चरधर्म गिर पड़ा । रानीके नेत्र भी नीरत्र न रह सके पर भी अश्रुधारायें अपना वक्षस्थल भिगोने लगी । दत्तने राजाका पञ्चाशप, विद्योगामिने जज्जरित होश अपना दृष्ट नया आद्योपान्त कट सुनाई और रानीमें, वियोगी आसन्न मृत्यु राजाको दर्शन दे पुनर्जीवित करनेकी प्रार्थना की, परन्तु रानीने अपने अश्रुपदात साधुसे आज्ञा लेनेको बाध्य किया । अस्तु दत्तने रानीको सग ले जानेकी साधुमें प्रार्थना की ।

यद्यपि दत्तके कहनेसे राजाकी मनोवेदनाका आभास मिल चुका था परन्तु कलावती सती साध्वी है इसका राजाको पूर्ण विश्वास तथा दार्ढ्य अनुत्ताप देखनेके लक्षिप्रायसे साधुने राजासे स्वयम् आकर रानीको लिंग दे जानेकी आज्ञा दी ।

१०

साधुकी आज्ञागुहार राजा अपने पञ्चाशपों सहित महावीरविहारमें लाया । सपने पूर्ण भक्ति-भेद भगवानके दर्शन किये साधुगोत्रो पशुत कुछ गेट अलग की तब राजा उस कोठरीमें आया जहाँ, यक्षिका, आवासस्थान, था ।

कलावतीने स्वयम् अपना कविर्हीन प्रतिनिध एव कोनेमें स्थापित किया था एक और छोटी शय्या पर नवशिशु बनाया था जो अपने अगु केने चूा रहा था ।

राजाके ध्यानपूर्वक प्रतिविम्बकी ओर टकटकी लगा रही, उनका कीमल हलियद फटने लगा । महीनोसे जिस मोहनी मूर्तिसे हृदय मन्दिरमें स्थापन कर प्रति समय अराधनामें निगमन रहते थे वही प्राणप्रिया सम्मुख विद्यमान है यह ज्ञेय भला उन्हें किस प्रश्न र हस्तोप होता । आन उगड़ी विरलकला सपलीमुख हुई है वह दोइधर मुखिके देहमें गिर पड़ने की को थे कि सदृश किसीने

पीछेसे राजाका हाथ पकट कर कहा—“ आपेभर, अमागी कलावती यह है । यह तो मूर्ति है । ” यह कहकर रानी कलावती राजाके शरीरमें लिपट गटे । दोनोंके गण्डसे बह अधिल नयनाश्रु झरने लगे ।

राजा लज्जित नमित्त मुख त्यक्त कलावतीको पञ्चाशप दृष्टिसे देखते हुए भग्नस्वरसे कहने लगे “ प्यारी क्षमा ! प्यारी क्षमा ! ! ”

कलावतीने राजाके हाथ खींचकर कहा—“ है है ! प्राणनाथ, आप हाथ न जोड़ें यह काम मेरा है मैं तो आगरी दासी हूँ ” पुष्टपायि या प्रोता दृष्टा या प्रेधकक्षुपा । सप्रसन्नमुखी भर्तृभा नारी धर्मभगिनी ।

राजन दीर्घनिश्चाम त्यागकर कहा—“ ओह, मैं ने सब अराधन किया निरस्तदह मैं पापी हूँ प्यारी, मुझे कैसे क्षमा करोगी ! ”

राजी कलावतीने आचलसे राजाके आंसु पीछकर कहा ‘ स्थाभिन् आपका कुछ अराध नहीं है पूर्वाशक्ति कमवश मुझे यह सब बातता भोगनी पड़ी परन्तु आपके हृदयमें मेरे लिये प्रेम...’

गदगिजु राजदुःख नीचे बैठे रो रहा था राजाके उस गोदमें उठा लिया । अपरिचिन राजाका मुख देख पलक और अति रुदन करने लगा । राजाके मुखचुम्बन और मस्तिष्क ग्राम पञ्चत रानीसे कहा ‘ दाया टटलिये रोता है कि वह एक पापीकी गोदमें है ।

“ नही नहीं मदारान, हमने धारण यह अनुपात है । दाया समझता है अथ उक्तका मरचा आश्रय-दाता मिल गया । ”

सन्ध पटक, एति एनीकी क्षमा प्रार्थना मित्रपर अब हम इस अकाले अधिक यशसाजनक नहीं बताया चाहते परन्तु प्रार्थना करने हैं कि इनकी सहित इसी प्रकार धर्मज सती साध्वी जन भगवान् भिनेन्द्रेण आदेशित कार्याके सम्पादनमें प्रयत्न हो । तब ही नारी धर्म सधक होगा ।

पवित्र काशमीरी केशर नि. १०  
१।= तीका पता-वि. भवन पुस्तकालय-मुरत



व्याख्यान ।

श्रीमान सेठ सुखदेवजी वज

ऑ० मेजिस्ट्रेट ।

समापति स्वागतकारिणी सभा, भारत दि० जैन  
महासभा, मालवा दि० जैन प्रा० सभा और  
हाडौती प्रा० सभाका संयुक्त अधिवेशन

कोश ।

पंच परम वर प्रथम का तमू शारदा गाय ।

जा प्रसाद उद्यत भयो स्वागतार्थ सुखदण ॥

मित्र मज्जन्मवृन्द और महिलाओं,

आज आप लोगोंको इस स्थानमें एकत्रित  
देखकर जो हर्ष होता है वह बचनार्थी है ।  
और आप लोगोंका स्वागत करते हुए मुझे  
बहुत ही आनन्द होता है, जिससे वह मेरे  
कोई पुण्य प्रवृत्ति ही उदय है जो आप  
जो महासभाओंके स्वागत करनेका यह अपूर्व  
अवसर प्राप्त हुआ है । इसलिये मैं इसे अपना  
पूर्ण सौभाग्य और कर्तव्य समझ कर ही इस  
कार्यमें अवसर हुआ हूँ । यद्यपि मैं इस कार्यमें  
किङ्कृत ही अनुभव ही हूँ और इसमें पड़ने  
का भी मुझे ऐसा अवसर प्राप्त नहीं हुआ  
है तो भी अपने भाइयोंके उत्साह दिवाने  
और इस भावी आनन्दका विचार करके ही  
स्वागतार्थ उद्यत हो गया हूँ, इसमें सन्देह  
नहीं है कि मेरा यह प्रभावसागर होनेमें संभवतः  
दिल्ली ही वृत्तियों इस कार्यमें यह नांव पंहु  
तो भी आता है कि ये आप जैसे उत्तम  
पुरुषोंके सामुहिक सन्मान होगी, कारण कि

जिस प्रकार आप लोगोंने मार्गके शीतादि  
कष्टोंको झेलकर तथा अपने द्रव्य और समयको  
व्यय करके कृपापूर्वक पधार कर हम लोगोंको  
आभारी किया है और अपने धर्मानुसारका  
पूर्ण परिचय दिया है उसी प्रकार ये वृत्तियां  
भी क्षमा की जावेंगी ।

सबसे प्रथम मैं राजराजेश्वर पंचम, जग  
महाराज तथा महाराजाधिराज कोटा नरेशका  
हृदयसे अभिनंदन करता हूँ कि जिनके न्याय  
शासनमें हम लोग निर्विघ्नतापूर्वक अपने  
धार्मिक और सामाजिक उन्नति सम्बन्धी कार्य  
करनेमें समर्थ हुए हैं । इसके पश्चात् मैं श्रीमान  
न्यायाधीश दीवान नहादुर महाशय तथा अन्य  
राज्यपालीय पुरुषोंका भी आभारी हूँ कि जो  
समय समय पर उत्तम प्रबन्ध द्वारा धार्मिक  
कार्योंमें सहायता पहुंचाने रहने हैं तथा इस  
अवसर पर भी बहुत रुका दिखाई है ।

हर्षका विषय है कि इस शुभअवसर पर हम  
लोगोंको अपनी जातीय व धर्म सम्बन्धी उत्पत्ति  
विशेषक मन्तव्योंको प्रगट करनेका समय मिला  
है इसलिये हम लोगोंका भी कर्तव्य है कि  
इस अवसरको सदाके अनुसार यों ही न जाने  
देवें और अपने अपने मन्तव्योंको प्रगट करके  
सब सम्मानानुसार कर्तव्य निर करके उस पर  
चरनेका हृदय मंजूर कर लें ताकि भविष्यमें  
फिर भी हम लोगोंको किङ्कपण (धिम हुये हो  
वीरता) बराना न पड़े अर्थात् पुराने पास हुए  
प्रस्तावोंको फिरसे प्राप्त करनेका अवसर न आए  
और हम आगे आगे करनेमें समर्थ होवें ।



‘क्योंकि जिस समय अन्य समाज आगे आगे बढ़ी जा रही हैं उस समय हम लोग अपने ही स्थान पर ध्रुव रहें यह बात हमारे अस्तित्वकी विधातक है अर्थात् हम अपने स्थान पर भी नहीं रह सकते हैं । हमारा ऐसी अवस्थामें अवश्य ही पता होगा जैसा कि पूर्व कालीन इतिहासोंको देखनेसे और आजकी स्थिति पर विचार करनेसे विदित होता है । अर्थात् एक यह था कि जब भूमंडलमें यह धर्म दिगन्तव्यापि हो रहा था और जगत से उ जैसे घनी व पं० प्रवर टोडरमलजी, सदासुख-दासजी प्रभृति विद्वानोंसे यह समान परमक्रांति-युक्त हो रहा था । आज उसी समयमें गिने चुने नाम मात्रके लिये दो चार विद्वान व श्रीमान् रह गये हैं और जनसंख्या भी उत्तरोत्तर ह्रास होती हुई अर्थात् प्रति दश वर्ष (मनुष्य गणना)में अपने १०००० हजार भाई मगनियोंको खोकर चुपकी बैठी है अर्थात् इस समय इसकी कुल संख्या ( दिगम्बर, श्वेतांबर, स्थानकवासी मिठकर ) केवल १२९०००० साढ़े बाह्र लाख ही रह गई है । यदि यह क्रम बराबर चालू रहा तो अठारह सौ २९० वर्षोंमें फिर त्यच्छ मैदान दृष्टिगत होगा शायद इतिहासके पृष्ठों पर ही जैन व जैनी शब्द गिवाई देगा । महानुभावो, क्या हमारा इस समय भी यही कर्तव्य है कि हम लोग जाति व धर्मकी ओर झुट भी ध्यान न देकर केवल अपनी पूर्णवर्जित लज्जा व भोग सामग्रियोंमें तल्लीन हुये आने व नव जीवनको अन्य प्राणि-योंकी भाँति बिताकर काटते महान वन जाव ।

संसारमें यावत् प्राणी मात्र अपने अस्तित्वको रखते हुए आगे बढ़नेकी चेष्टामें लगे हुए हैं ऐसे समयमें हम भी यदि आगे न चले सकें तो कमसे कम नाथ में तो अवश्य ही चटना चाहिये । कारण-‘अवसर बीते पे जु फिर पड़ताये का होय । सूखो खो किसानको कहा करे फिर तोय ।’ आज हमको कैसा अच्छा समय प्राप्त हुआ है कि हम लोग अपने साम्राज्यके न्याय शासनमें बिना किसी प्रकारके विघ्नवाशाशोक स्वतंत्रता पूर्वक अपने २ धर्मोंका प्रकाशन कर सकते हैं । विशेष हर्ष आप लोगोंको यह जानकर होगा कि गन चार वर्षोंसे जो हमारे सम्राट् महोदय प्राणी मात्रकी स्वाधीनताकी रक्षार्थ युद्धमें लगे रहे थे और उस युद्ध कार्यमें आप लोगोंने तन वन तथा जनसे यथासंभव सहायता देकर राज्यभक्ति दर्शाई थी सो वह युद्ध हमारे सम्राट्की जयपूर्वक अंतको प्रस हो गया है । जिसके लिये हमको हर्ष मानना चाहिये । और वह हर्ष केवल हमारे लौकिक लाभ दृष्टिमें ही नहीं किंतु धर्म दृष्टि पर भी ‘अहिंसा परमो धर्म ।’ के अनुसार अनेक प्राणियोंका संसार होना बंद हो गया इसलिये भी मानना योग्य है । अब इससे और कौनसा शांतिका उत्तम अवसर प्राप्त होगा । तात्पर्य सब प्रकार यह समय हमारे अत्युत्तम है इसलिये हमारे अब इन सम्मेलनसे लाभ उठाना चाहिये ।

यहां मैं सर्व प्रथम सम्मेलनोंका अभिप्राय प्रकट कर दूं तो सुकिंपगत होगा । सुदृष्ट्युद्ध, सम्मेलन, मेला, मंथ, आदि शब्द एक र्थवाची ।



हैं। यह संवकी प्रथा तब तक नहीं है किन्तु प्राचीन कालसे प्रायः सब देशों और सब जातियोंमें प्रचलित है। जनसमुदायको किसी अवसर विशेष पर किसी नियुक्त स्थानमें, नियुक्त समयके लिये, किसी अवलम्बनसे इकट्ठित होना ही मेला, संघ व सम्मेलन कहा जाता है। सम्मेलनमें अनेक स्थानोंके सभी स्थितिके लोग जैसे विद्वान्, मूर्ख, श्रीमान्, निर्धन, बाल, वृद्ध, सुवा, नर नारी, कुमार विवाहित, विधुर वा विधवाएं, योगी वियोगी, सुखी, दुःखी भक्त अभक्त, धर्मा-तुलागी विषयातुलागी, लोभी उदार, स्वाधी परमाधी इत्यादि पचारेते हैं। ऐसे अवसरमें यदि ममानके नेतापण चाहे तो बहुत कुछ सुचारु कर सकते हैं। क्योंकि इस समय एक दूसरेको अनुकरण करनेका अच्छा अवसर है इन नेताओंका अभिप्राय यही प्रतीत होता है कि मनुष्योंको घासे निज घामसे निकलनेका असर मिलता है कि जिससे सब मायुका परिवर्तन होता है, व्यापार आदिको दृष्टि बढ़ती है, होशयारी आती है और घर पर अरहास न भिड़नेके कारण देश-पूजादि नियम कर्म यदि नहीं हो सकते थे सो भी यहां पर भरे प्रकार हो सकता है परस्पर हिंसा तत्त्व भर्त्ता व किनेपड़ों द्वारा धर्मोद्देशका लाभ होता है जातिमें अनुभवी और नेतापण परस्पर मिश्रित भावोंमें उत्पन्न हुई कर्तव्यों पर विश्वास करके उन्हें सफलता

स्थिति ठीक करनेके लिये भी परस्पर सहाय करते, उपाय सोचते, लोगोंको बताते हैं। इस प्रकारके और भी अनेकों लाभ होते हैं जिनसे आप लोग स्वयं परिचित हैं? परंतु यदि हम लोगोंने मिलकर कुछ लाभ न उठाया तो फिर समाचारपत्रोंवाले हमारी भी समालोचना करनेसे न चूकेंगे, इससे यह फल होगा कि हमारा अमूल्य समय भी गया, द्रव्य भी खर्च हुआ, और शीतादिकी बाधाओं सहन कीं लाभ कुछ भी नहीं हुआ। कहावत चरितार्थ हुई "कि चने भी गल गये और मुनाई भी लग गई फिर भी भूखे रहे।"

बन्धुवर, मैं पहिले ही कह चुका हूं कि सबके साथ न चलनेसे हमको नीवित नहीं रह सकते हैं इसलिये हमको भी सबके साथ ही दौड़ना होगा। अब हमें यह देखना है कि हम वास्तवमें पिछड़े हुए हैं या कि साथ चल रहे हैं? तो मालूम होता है कि हम बहुत पिछड़े हुए हैं। अभी हम धार्मिक विषयको धार्मिक धार्मिक दिग्गज विद्वानोंके लिये छोड़कर सामाजिक स्थिति पर ही विचार करते हैं क्योंकि "न चर्चो धार्मिके दिना" अर्थात् धर्मात्माओंके दिना धर्म भी (निराधार) नहीं चल सकता है। अब सबसे प्रथम हमारी गिया सभ्यता की नितीहीकी ले लेंगिये, तो आपको अपनी जातिमें विवाह नि० शुभमंदिशालक भेल बार



वर्षोंमें कुछ थोड़ेसे बकील व अध्यापक मिलते  
 लगे हैं, हिन्दीमें तो अब तक किसी भी जैनीने  
 हिन्दी साहित्य सम्मेलनकी उपाधि प्राप्त ही  
 नहीं की । संस्कृतमें अब तक एक भी व्याकरण  
 आचार्य नहीं है और न साहित्याचार्य ही;  
 यदि हैं तो सिर्फ दो ( जैन ) न्यायाचार्य ही—  
 १. न्यायाचार्य पं० गणेशप्रसादजी वर्णी और  
 २. पं० मानिकचंदजी न्यायानार्य, ज्योतिषी  
 पंडित जियालालजी व वैद्य कन्हैयालालजीके  
 सिवाय कोई ज्योतिषी व वैद्य प्रख्यात नहीं  
 है । ग्रियोंमें शिक्षा का अभाव ही सा है ।  
 शिक्षा शिक्षा का नाम ही सुननेसे भय होता  
 है और तो जाने दीजिये यह वैश्य  
 जाति जिसको आप लोग मुशोभित कर  
 रहे हैं वाणिज्य प्रधान जाति है परंतु  
 शोकके साथ कहना पड़ता है कि आज यह  
 जाति भी अन्य जातियोंके समान व्यापार विद्यासे  
 अनभिज्ञ रहनेके कारण अश्वन्धन दीन परावीन  
 कार्य (नौकरी) करने लगी है । वैश्य जातिके लिये  
 नौकरी ( शब्द ) वृथास्पद है परंतु व्यापार न  
 जानने अपना पंजीके अभावहीके कारण इस आ-  
 स्पाको प्राप्त हो गये हैं । व्यापार भी जो कुछ  
 देल जाता है उसे व्यापार कहते हुए रज्जा आती  
 है बाल्यमें यह तो परस्परमें जीना झगड़ी ही है  
 अथवा सराफी है । इन बातोंको हमारे लोपार पितृ  
 भार्ड भूते प्रकार समझा रहे हैं । हां! जिस जातिमें  
 नगत्सेठ जैसे बनी हो गये आज उसमें नगरसेठ  
 तक नहीं दिताई देते हैं । हमें यह कहना पड़ना  
 है कि हमलोग वास्तवमें व्यापार करना ही भूल  
 गये हैं हमको केवल धर्म रह गई है इकानशरी,

हमारे पूर्ण प्रत्य जहान भराकर देशांतरोंमें जाता  
 कयविक्रय करते और वहांका माल वहां लाकर  
 बेचते इससे अपने देशमें शिल्पकलाकी वृद्धि होती,  
 देशका कच्चा माल ( जो कि आज विदेशोंमें जाकर  
 वहांसे पक्का बनकर कई गुणी कीमत पर पीछे  
 यहां आता है ) यहीं साफ होकर उत्पत्ता पक्का  
 माल तैयार होकर विदेशोंमें जाता था । और उसके  
 बदले यहांपर वह वस्तुएं जो यहांके लिये आवश्यक  
 हों और वे यहां नहीं बनती हैं, आती थीं, इस सं-  
 सारकी बड़ी भारी आवश्यकताकी पूर्ति करनेवाली  
 यह एक वैश्य (वणिज) जाति ही थी, जो कि आज  
 मार्ग भूल गई है । यदि आज भी यह समान  
 अपने इतिहास व पुराणों परसे विचार करके कर्त्त-  
 व्याप पर स्थिति हो जाय तो इसमें सन्देह नहीं  
 है कि कुम्भारमरागत रुविर अभी भी इसके शरी-  
 रोंमें बह रहा है यह जाति पुनः शीघ्र दक्षता प्राप्त  
 कर सकती है । परंतु विद्या विना विवेक नहीं और  
 विवेक विना सिद्धि नहीं होती है । अतएव हमारा  
 सर्व प्रथम यह कर्त्तव्य है कि हम अपनी जातिमें  
 जितनी शीघ्रतासे हो सके विद्या-शिक्षाका प्रचार  
 करें । राज्यभाषा ( अंग्रेजी ) देशभाषा ( हिन्दी )  
 और धर्मभाषा ( संस्कृत ) यथायोग्य मुख्य गौण  
 रूपसे सदाचार नैतिक व्यवहार और धार्मिक शिक्षाके  
 साथ प्रचार । उच्च कोटिक विद्वान तैयार करें,  
 उन्हें साथ ही स्वतंत्र आजीवी बनायें, वर्तमान स-  
 मयके अनुकूल व्यापारी शिक्षा दें, देशमें शिक्षा-  
 कलाकी जैसे वृद्धि होवे ऐसे यत्न करें, कुछ  
 कारखाने खोलें और निराश्रित भाइयोंको कार्यमें  
 लगायें । हमें अब जातिमें शिक्षा इसके लिये नहीं  
 देना चाहिये कि जितसे नौकर तैयार हों वे किन्तु





ऐसे लोग तैयार करना चाहिये जो कि व्यापार-  
 शिके द्वारा आजीविका करके अपने जातिहितके  
 लिये कुछ समय लगा सकें। प्राचीन पंडितोंकी  
 जीवनीमुननेसे विदित होता है कि वे लोग व्या-  
 पारीयों और व्यापारी होने पर भी बड़े बड़े ग्रन्थ  
 लिख गये, बड़े ग्रन्थोंपर लम्बी टीकायें भाष्य वच-  
 निकादिकर गये हैं जिन्हेंकि प्रसादसे आज हम  
 भैरवधर्मको जान रहे हैं, दूसरी बात यह है कि  
 जो भाई व्यापार तो करना चाहते हैं परंतु पूंजीके  
 बिना लाचार होकर नौकरी करने लगते हैं तथा  
 नौकरी न मिलने पर अथवा नौकरी न कर सकनेके  
 कारण “भुसिभा किम् न वरोति पापम्” अर्थात्  
 भ्रष्टा व्यवहार नहीं करता है। सभी कुछ  
 करता है। इस दृष्टिके अनुसार और भी अनेक  
 प्रकारके नहीं करने योग्य कार्य कर बैठते हैं।  
 ऐसी दशामें आवश्यक है कि उन्हें पूंजी (योग्य-  
 तानुसार) देकर दिया जाय, इस कार्यके लिये  
 हमको भैरवधर्मकी आवश्यकता पड़ेगी। अब प्रश्न  
 होगा कि धर्ममें पूंजी कहाँसे आवेगी? तो  
 उत्तर यह है कि इसके लिये हमें धन न करना  
 पड़ेगा। किन्तु हमारे तीर्थों व मंदिरों और

महानुभावोंने कदम बढ़ाया है इत्यदि।  
 सामाजिक रीतियोंपर विचार करनेसे तो  
 वही बात है कि ‘अपनी नांव उबारिये  
 आपहि मरिये जान’। सबसे प्रथम हम दाम्पत्य  
 सम्बन्ध ही पर विचार करते हैं तो हमको यही  
 बहुत बेमेल कार्य दृष्टिगोचर होता है अर्थात्  
 कहीं तो “बड़ी बहू रो बड़ी माग” अर्थात् वर  
 छोटा और बहू बड़ी, और कहीं बूढ़े बाबाके  
 साथ छोटीसी बालिका और कहीं बहुत छोटे २  
 बालक और बालिकाओंका सम्बन्ध होता है  
 जिसके कारण अत्यन्त खराबियां हो रही हैं  
 और उसके लिये बाल्य विवाह (१८ वर्षसे  
 कम पुत्र्य और १२ से कम कन्याका) वृद्ध-  
 व्याह (४० वर्षसे उपर) तथा कन्याविक्रय बंद  
 करना पड़ेगा। इसके सिवाय जातिमेंसे अनाव-  
 श्यक व्यय कम करना होगा। जिसके लिये वेदधा-  
 नृत्य, अतिश्रावजी, फुलवारी आदि बंद करके  
 जीमन भी कम करना होगा, पुत्रोंके भी  
 व्याहोंकी कुछ हद्द (संख्या) नियत करना  
 होगी, और यह भी करना होगा कि एक पत्नी  
 तथा पुत्र पुत्रियोंके रहते हुए, भिवारी अन्धोंके

स्थानों पर ५ सेरकी गटरी और विस्तर भी बिना कुलीकी सहायतासे नहीं उतार सकते हैं। गाड़ीसे तांगे तक लानेके लिये मन माने पैसे लेकर कुली वा बूलोंको पहुँचाता है, आधे मील भी पाँच पयादे चढ़नेसे हाँफ जाते हैं, किंचित भी धूप टंड सह नहीं सकते हैं। जिनकी यह दशा है उनमें शारीरिक बड़ कितना होगा सो अनुमान कर लीजियेगा कि जब कोई इन पर कुछ बलात्कार धर बैठता है तो ये पुलिसको प्रकारते ही रह जाते हैं और जब तक पुलिसवाला इनकी सहायताको वहाँ तक पहुँचाता है उसके पहिले ही यह अतलाई अपनी मनमानी करके चले देता है और ये इस तरह गया, अभी तो तोया, यहीं था, वहाँ गया, कालासा था, जमान था इत्यादि पाठ सुनाते ही रह जाते हैं। हाय ! जिनके पूर्व पुरुष ऐसे थे कि मनो बेश उठा सकते तथा कोसों चले जाते थे, जेवढ पहचानोंमें एकाकी जानेमें नरा भी न हिचकते थे आग उनकी संतान कुली! ओ कुली! करते रह जाते हैं, गाड़ी सीटी देती है सामान भी उतारनेको रहेजाता है। यह सब निर्वृत्ताका कारण है; अपहर्षीय व क्षीणवीर्यसे जो संतान होगी वह ऐसी ही होगी, सो प्रथम तो उत्पत्ति ही ऐसी फिर जो दूध आदि पदार्थ जिनसे हमारे माँषोंके शरीरको पुष्टि मिलती थी अब देहनेको ही निरुद्धा है। दूध जो कि लपवाचा १५० सेर १५ वर्ष पहिले मिलता था। आज ३ सेर भी कठिनातासे शुद्ध मिलता है और तो नाने दीजिये, अनाज भी घर पेठ खानेको नहीं मिलता है तिस पर भी बाहरी चाकचिचय इतना बढ़

गया है कि चाहे भोजनके लिये भले ही एकवार मुख चने पिछे परंतु पैरमें पाँच रुपयाका बढ़िया चूट होना ही चाहिये, बढ़िया कलप कमीज और काजूर या होना ही चाहिये, कोट पेन्ट पर खी नित्य फिना ही चाहिये, डेडी हजामत होना और बढ़िया कामनिया आयल तथा पियर्स सोप अवश्य चाहिये इत्यादि, फिर और तुरंत यह कि उल्टे शरीर शोषक पदार्थोंका सेवन करना। जैसे बीड़ी, चुस्ट, चाय, काफी, मी, सोडावाटर, लेमनेड, बर्क आदि। भला सोचिये तो सही कि 'ग्रह प्रहीत पुनि ब्रह्मदा तिहि पुनि बीड़ी मार। ताहि पिपाइये बाएणी कहां कौन उपावा।' इसलिये बन्धुवर्गों, अब केवल चिकित्सा व ऊपरी घनावटसे ही काम नहीं चढ़ेगा, निरुद्ध आवश्यक है कि भीतरी अगत्या सुधारो। शारीरिक बड़ नष्टानेके लिये इन बाल वृद्ध तथा अनमेल व्याहोंको बंद करके ब्रह्मचर्य धन पाठन (स्वस्त्री संतोष व्रत ही ब्रह्मचर्यका ब्रह्मचर्य है) नियमपूर्वक होना चाहिये। सोडा, बीड़ी, चुस्ट आदि हानिकारक पदार्थोंके बढ़ले की दूध आदि उत्तम पदार्थोंका सेवन करना चाहिये, नित्य दयाशक्ति व्यापाम करना चाहिये। जी दूध प्राप्त करनेके लिये गौशालाएँ बनाना होंगी, गाय भैंस आदि दूध देनेवाले जानवरोंकी रक्षा और पालन करना होगा, पहिले समयमें घरवा पशु-शास्त्रज्ञ भी प्रायः प्रत्येक महत्त्वशक्ति-प्रमाण पशु गाय-महिषि आदि रक्ता पा, उससे खूब नी दूध खाते गोबरसे गृह शुद्धि होती और नष्टानेको कंठे होते सेतोत्त खाद होता इत्यादि अनेकों लाभ। वास्त भी उन्दिनी ब्रह्मचर्यसे



होती थी। आज कल घोर पशु हिंसा हो रही है इसीसे खेती आदि कार्योंमें भी बाधा पड़ने लगी है अब मछा दो दूध कहाँसे प्राप्त होवे। इसी घोर निष्प्रयोजन हिंसाका फल है कि हमारा देश प्रति वर्ष दुर्भिक्षसे पीड़ित होता चला जा रहा है। हाय, अहिंसा प्रचलन देशमें भी परमोपकारी पशुओं तक की रक्षाका न होना यह हमारे लिये ब्रह्मास्पद नहीं तो क्या है ! इसलिये हम लोगोंको पशुश्रम और पशु पावन करना भी कर्तव्य है। यह हमारे शरीर रक्षाका मुख्य साधन होगा। अब शारीरिक बलसे आगे चलिये तो विद्यावलोक सम्बन्धमें कह ही चुका हूँ। अब मानसिक बलकी भी यह दशा है कि हम सबको सत्य कहते हुए हिचकते हैं। हमसे जब कोई कर्मचारी घूम मांगता है और बिना घूम वह हमारे कार्यमें बाँटक होता है तो हम चुपकेसे उसकी मुड़ी गरम गर देते हैं परन्तु हममें यह साहस नहीं है कि उसकी इस शिकायतको अधिकारियोंके पास तक पहुँचायें। बहुतसे लोग इस प्रकार घूम देना दया समझते होंगे परन्तु यह आज लोगोंके प्रति घोर अन्याय करना, राज्यकी आज्ञाका उल्लंघन करना है। और भी देखिये कि यदि लेनीमें पूँहा भी कुछ राइसड़ा देते तो डर जाँगे इत्यादि। अब सामाजिक परदा तो बहना ही क्या है ! इनमें तो ३ और ६ वाली बात है, पशु बली तो पास पास मिट्टर द्रव्यसे भरे हैं, परन्तु हमारे कई निजी भी दिगम्बरे ऐकमन्त होकर मिट्टा नहीं गाँहते हैं। सभी अन्तरे १ वर्ष पाँचवली और

अलग पकाते हैं। कोई तेरापयो तो कोई बीस-पंपी, कोई छापेवाला तो कोई उसका निषेधक, कोई बागूदल, कोई पंडितदल, कोई ज्ञानानन्दी तो कोई केवल ब्राह्मकियानुयायी इत्यादि। इसलिये ऐक्यमत होकर समान संगठनकी भी आवश्यकता है।

अब चलिये संस्थाओंकी अवस्था पर विचारिये तो पहिले तीर्थक्षेत्रों ही को ले लीजिये। तो वहाँ पर मुनीम पुजारियों और माली व्यासोंका ही स्वराज्य है। इन्हें कमना पड़ता नहीं है, भक्तजन भंडार दे जाते हैं और ये लोग मूछों पर तन देकर मौग उड़ाते हैं। अपने अधिकारी वर्गोंको चारदूसी काफ़े खुश रखते और उल्टा पुरट समझाकर नये नये मुखदमें मामठे तैयार करते रहते हैं। इन मुखद्योंमें इन लोगोंका पूरा हाथ रहता है। और इन्हे द्वारा बकीलों आदिका भी काम चलता है। मैं निश्चय पूर्वक कह सकता हूँ कि यदि दिगम्बर तथा श्वेताम्बर समाजके नेता स्वयं परस्पर मिल कर चाहें तो इन तीर्थोंका कमीका निवेष्टा हो जाते; परन्तु नौकरशाहों के मोरे पता ही नहीं लगने पाता है। आज कल इन कोठियोंके मुनीम लोग हमी पर चढ़ते हैं। आज लोगोंने जैन-मिथ, अंक ११ वर्ष २० में 'सत्य परना मदी होगी' यह निषेधक कल्प ही दे। प्रत्येक तीर्थ पर मुनीम पुजारी चौकीदार सिपाही सामान काते हैं और इनका मांगते हैं जो इन्हे दे दें। यह उदार और उपरी कुछ मुँह पर-प्रशंसा का देते हैं। नहीं देनेका शंखन मांगी घूमके नरोंसे मृषा रिमा नग्न है ! यही दशा या इतने कुछ न्यु-



नाधिक हमारे जैनमंदिरोंकी समझिये। अब चलिए विद्यालयों छात्रालयों और आश्रमोंकी दशादा निरीक्षण कीजिये तो आपको विदित हो जायगा कि इनसे जितने लाभकी सम्भावना है उसका शतांश भी लाभ कठिनतासे होता है। सदा इनमें कर्मचारियों, अधिकारियों और छात्रोंकी लड़ा लड़ी हुआ करती है इसका कारण केवल प्रबन्धकी कमी है। इन बातोंसे कोई यह अभिप्राय न निकाले कि मैं इनकी शिकायत करके इनको उठा देना चाहता हूँ। नहीं २ किंतु मैं चाहता हूँ कि इनमें सुप्रबन्ध होवे, क्योंकि व्यय तो हो ही रहा है और लाभ यथार्थ नहीं होता है। मेरी दिगम्बर तथा श्वेतांबर संप्रदायके देवताओंसे भी सविनय प्रार्थना है कि आप लोग परस्पर मिल कर तीर्थोंके झगड़ोंको आपसमें ही, नरमा, नरमीसे निचरा लो। जैन-धर्मका सिद्धान्त कषायोंको मंद करना है न कि तीव्र करना। देतो, ये तीर्थक्षेत्र वैराग्य, ज्ञान, धर्मध्यानके ही साधन थे जो कि आज आर्त और रौद्र ध्यानके उत्पादक हो रहे हैं। इन तीर्थोंके झगड़ोंसे निवृत्ति प्राप्त भक्ति दशा पर विचार करो कि यह कहाँ जा रही है ! इसका अस्तित्व कैसे रहेगा ? इत्यादि और जो द्रव्य इन झगड़ोंसे बचेगा उसे शिक्षा-साधनेमें, अनाथ पालनमें अपना और भी ऐसे ही सर्वोपयोगी कार्योंमें लगाओ। संस्थाओंकी मुख्यस्थापकी और ध्यान दो जिस्से उपोचित लाभ होवे।

अव्यवस्थाका कारण एक यह बड़ा सारी है कि समाज मनुष्योंसे उनकी योग्यतानुसार कार्य

नहीं लेती है। यदि वकीलसे दवा कराइयेगा और वैद्यको अदालतमें खड़ा कीजिये तो दोनोंकी फीस ठीकसे भी अधिक देने पर भी रोगी मर जायगा और केश भी बिगड़ जायगा इसी प्रकार से पंडितोंसे प्रबन्ध व मेनेजरका काम लेना, नाबुओंसे हिसाब किताब व तौल नाप, व्यापारियोंसे पठनकम बनवाना इत्यादि। दूसरी बात एक यह भी है कि एक ही आदमीसे “पीर बबर्ची भिखी खर” के अर्थात् किसी संस्थाके सुपरिन्टेन्डेंटको ही लीजिये, तो वह अध्यापन भी करे अध्ययन भी करता जावे, योग्य देखरेख (संस्थाकी पूरी समझाल) हिसाब व प्रबन्ध भी रखे, भोजनशाखाकी समझाल, सामान खाना रखना, तोड़ना, चन्दा वसूल करना, लोगोंसे चन्दा नवीन भाना, सहायताकी चिट्ठियाँ लिखना, अधिकारियोंके पीछे २ फिरना इत्यादि सभी काम करना पड़ते हैं। फल यह होता है कि कोई भी कार्य पूरा नहीं होता है। तीसरी बात यह है कि कोई सार समझाल करनेवाला नहीं है। चाहे कोई ईमानदारीसे करे व येईमानीसे जिसके गले पड़ा सो ही समझाले। यशं तो चन्दा देकर झुटकारा पा लिया। इसलिये मैं इस ओर समाजका चित्त आकर्षित करता हूँ कि वह संस्थाओंकी योग्य समझाल करे और जो मनुष्य जिस कार्यके योग्य होवे उससे वही कार्य लेवे। योग्यतानुसार कार्य और अधिकार दो, एक ही व्यक्ति पर उचिततः अधिक भार मत लाओ, योग्य कर्मचारियोंको उचित शुरुस्कार और अयोग्यको दण्ड विधान रखो, व्याप्ता सुधार जावेंगी। व्यक्ति-



चाहिये यह कार्य भी तीर्थरक्षासे कुछ कम पुण्य व महत्त्वका नहीं है। और वास्तविक प्रभावनाका कार्य है।

प्रभावनाका अतिप्राय नहीं तक मैंने समझा है यही है कि जिन लोगों ने जिनधर्मको विपरीत समझ लिया अथवा जो-कुछकुछ ही जैनधर्मको नहीं समझे हैं उनको यथार्थ धर्म जैनधर्मका बता देना ही प्रभावना है।

और वह प्रभावना इसलिये नहीं कि इससे जो लोग होनी या वे लोग जैनधर्मको अच्छा कह देंगे इससे ही कुछ हमारा मछ हो जायगा इत्यादि किंतु जैनधर्म जीव मात्रका धर्म है और वह सम्पूर्ण जीवोंकी दया स्तात है उसको किसी व्यक्ति व समुदायका पक्ष नहीं है। इसीसे वह सबका धर्म है और इसी लिये सभीको उसे जानना चाहिये। आम-काठ प्रायः लोगों ने जैनधर्मके सम्बन्धमें बहुतसी किंवदंतियां बना रखी हैं। कोई इसे सरावगी व मनियोंका धर्म कहता है, कोई केवट पानी छन का पीना, आलू आदि बंदमूल नहीं खाना, शत्रुको नहीं खाना, मंदिरमें जाकर दर्शन कर आना मात्रको ही जैनधर्म मान बैठे हैं। कोई कहते हैं कि जैनधर्म महात्म्योंका धर्म ही नहीं है वह तो साधुओं ही का धर्म है। कोई कहता है जैनधर्मके अनुसार चउते पांव रखनेको भी मनुष्य नहीं मिले इत्यादि अपत्य कल्पनाएं कर रही हैं। ऐसे लोगोंकी वास्तविक धर्मका स्वरूप बता देना ही प्रभावना है। वास्तवमें जैनधर्म का सिद्धांत है कि विपरीत अभिप्रायोंको त्याग कर मन्दार्थ सबकोका प्रदान करना और दयासिन्धु बनने

पद और शक्तिके अनुसार विपक्ष और कर्मायोंको कुश करता माने, और इसलिये इसको प्रत्येक मनुष्य धारण कर सकता है। नया राजा नया रंक। वास्तवमें यह धर्म क्षत्रियों ही का है। जितने तीर्थंकर हुए हैं वे सब ही सत्ता थे। लोगोंमें ऐसे विचार फैलना स्वाभाविक है। इस लिये कर्तव्य है कि धर्मोंका उद्धार किया जावे, उपदेशक बढ़ाए जावें और उन उपदेशकोंसे केवट धर्म प्रचारका ही काम लिया जावे, उनसे जन्दा इक्षर कराना नहीं चाहिये; यह बात उनके यथार्थ कार्यके लिये बाधक है। उपदेशक लोग अच्छे विद्वान् द्रव्य क्षेत्र काल तथा भावक ज्ञाता अनुभवी दयोवृद्ध होना चाहिये, सदाचार और चारित्रवान् होना चाहिये तभी प्रभाव पड़ सकता है अन्यथा नहीं।

स्थानीय व जातीय पंचायतें और शास्त्र समायें बरानर चाटू रहना चाहिये, स्थायीयका प्रचार बढ़ाना चाहिये। इत्यादि ऐसी बहुतसी बातें हैं जिसमें बहुत कुछ सुधार व म्यूनाधिकता कामकी अवश्यकता है और जिनके सम्बन्धमें उपस्थित विद्वान् मंडली आपको मनायेगी उसे गुन वर आप लोग अपना कर्तव्य पथ इतरीतिसे निश्चित कर लेंगे अब मैं अन्तमें थोड़ासा समाओंका उद्देश्य या कर्तव्य कह कर अपने कथनको समाप्त करूंगा।

महासुभाषो समाओं व पंचायतियोंका उद्देश्य धार्मिक और सामाजिक उन्नति करना है। वे सकल श्रेष्ठ मानसमुदायके और कोई समुदाय नहीं हैं। इनमें सम्मिलित होनेवाले महासुभाष जैन धर्मके २ मंत्र प्रकट करके बहुमानसिद्धि

मत स्थिर करते हैं और फिर स्वयम् तदनुसार चला कर औरोंको आदर्श रूप बनकर मार्ग बताते और चलाते हैं। इसीका नाम समा है और यही उसका उद्देश्य व कर्तव्य है। जो लोग नेता हैं व होनेका दावा करते हैं उन्हें चाहिये कि आदर्श बनें, कारण कि केवल "परोपदेशो पाण्डित्यं" हीसे काम नहीं चला सक्ता है। यह सभ्यसे नियम चला आता है कि "महज्जनः येन गतः स पन्थः" अर्थात् वड़े पुरुष जिस मार्गसे चलते हैं वही मार्ग श्रेष्ठ सम्झा जाता है। और जो लोग केवल खुद फनीहत दीगरे नसीहत करते हैं उनका जनता पर उल्टा प्रभाव पड़ता है। इसलिये समाओंके नेतागण जैसे समापति, भंजी, समासद आदिको तथा उपदेशकोंको अवश्यही प्रस्तावों पर अमल करना चाहिये, तभी सुधारकी आशाकी जा सकती है अन्यथा आप्ण्ये रोदनें वृथा बाड़ी रहान्त चारितार्थ होगी।

आशा है कि आप मेरे इस वक्तव्य पर विचार करेंगे। अन्तमें आप लोगोंको फिर हृदय से स्वागत करता हुआ प्रार्थना करता हूँ कि आप अब अपना कार्य प्रारंभ करें।

किसलका ताजा माल आ गया।  
— भाव भी पटा दिया गया है —

**पवित्र काश्मीरी केशर**

मूल्य १। १।= तोला

प्या-मनेजर दि. जैन पुस्तकालय-मुरत

## हमारा स्वास्थ्य और यात्रा ।

हमारे पाठकोंको यह जानकर खुशी होगी कि हमारा स्वास्थ्य कुछ दिनोंसे अच्छा ही है और हम महासभादिके अधिवेशनमें गत ता० ७ फरवरीको कोठामें सामिल हुए थे। वहांसे हमारा विचार दक्षिणकी यात्राएं करनेका हुआ था और कोई ऐसा साथ बूढ़ रहे थे कि जिसका साथ होनेसे यात्रा भी सुभीतेके साथ होनेके अतिरिक्त जहां २ हम जावें वहांकी संस्थाओंका निरीक्षण करके और समादि करके कुछ न कुछ समान सुधारका भी कार्य साथ २ कर सकें। शुष्यादयसे ऐसे मनोभिलषित साथी मास्टर दीपचंदजी उपदेशोक हमें मिल गये जिनको साथमें लेकर हम गोमटसंगमी (जैनविद्वी) तथा मूलचंदी तक की यात्राके डिये प्रयाण किया है और कोठामें शालरापाटन, उज्जैन, मन्सी, पड़नगर, रतलाम इन्दौर, बडवाहा सिद्धवरकुट होते हुए खंडवा जा रहे हैं और वहांसे अंतरीक्षनी, अमोत्रा, अमरावती कारंजा, वर्षा, मुक्तागिरी, भातकुली, चार्सी, कुपल गिरी और सोलापुर होते हुए जैनविद्वी जावेंगे। इस भ्रमणमें कई संस्थाओंका निरीक्षण करते हैं और समाएं भी होती हैं जिसकी रिपोर्ट प्रकट होनेकी आवश्यकता है। इसलिये इस भ्रमणकी संक्षिप्त रिपोर्ट इस पत्रमें छपनेके लिये हम भेजते रहेंगे। यदि किसी ५५ हमसे पत्रव्यवहार करना हो तो अभी सेठ हीराचंद अमीचंद शाह सोलापुर के पते पर लिखें। हम करीब १० दिनमें सोलापुर पहुंचेंगे। ता० २४-२-१९

समानसंवर—

मूलचंद किसनदास कापड़िया



## जैन समाचार ।

### विवाह समय दान ।

भावनगरके सेठ भगवानदास छानछालनीने अपनी दो बहिन तथा पुत्रीके विवाह समय निम्न प्रकार २०२) दान किया:—(१०१) श्राविकाश्रम मुम्बई, १०१) दुष्काळ फंड, २९) ब्रह्मचर्याश्रम हस्तिनापुर, २९) स्याद्वाद महाविद्यालय बनारस, २९) सिद्धान्त भवन ? २९) संतोक् न्हेन पाठशाला भावनगर ।

सेठ कस्तूरचन्द वैचरदासनीने अपने चिरनीव पुत्र छानछालके पाणिप्रहण समय निम्न लिखित ५१) दान किये:—२९) ब्रह्मचर्याश्रम हस्तिनापुर, ११) श्राविकाश्रम मुम्बई, ९) स्या० म० वि० बनारस, ९) सिद्धान्त भवन ?, ९) संतोक् न्हेन, पाठशाला भावनगर ।

इसी प्रसंगपर अन्य गृहस्थोंने भी निम्न प्रकार दान किया है:—

ब्रह्मचर्याश्रम हस्तिनापुरको—६) अमृतछाल विट्ठलदास । श्राविकाश्रम मुम्बईको—६) अमृतछाल विट्ठलदास, २) नारायणदास नरोत्तमदास, २) यमनछाल बेगीचन्द । संतोक् न्हेन पाठशाला भावनगरको—३) अमृतछाल विट्ठलदास, १) नारायणदास प्रह्लाददास, ९) यमनछाल बेगीचन्द, ११) मागिछाल, वृत्तचन्द, ९) मोहनछाल विट्ठलदास, २) यमुनादास प्रमूदास, २) छोटछाल दीपचन्द, २) मागिछाल बेगीचन्द, २) पद्मनी सप्तमर, २) लालचन्द मोमचन्द, १) काछीदास दसुचंद ।

अनुसरणीय कार्य—श्रीशुतक्वामी अमृतछाल विट्ठलदासनी लिखते हैं कि भावनगरके पणोंने यह अनुसरणीय कार्य किया है कि जब ऐसे दुष्काळके

महासमयमें अनाज, वस्त्र, आदिकी मीमांसा माईके कारण अनेक मनुष्य दुःखित हो रहे हैं तब जिद्दा लोडपताके कारण मिठाई पूरी आदि बनाकर जातियोंको जिमाना तथा व्यर्थ व्यय करना योग्य नहीं है । इसी बातको ध्यानमें लेकर इन पंचोंने जातियोंके जीवनवार बन्द काफे उसका रूपया शुभकार्यमें उपयोग करतेका ठहराव किया है । ऐसे समयमें प्रत्येक जाति, पंचायती, सभा, मंडळ आदिको चाहिये कि इन पंचोंका अनुकरण कर जहाँ तक बने इनका दुःखयोग न करने देकर शुभ कार्यमें व्यय करनेका प्रयत्न करें और दूरमोसे करावें ।

### सूचना ।

परवार सभाका जन्मोत्सव (अधिवेशन) ।

सम्पूर्ण भारतके परवार माईयोसे नम्र निवेदन है कि श्री अतिशय क्षेत्र रामदेकनी जिल्हा नागपुर C. P. में परवार सभाका प्रपमाधिवेशन ता० २३-२४-२९ मार्चको होना निश्चित हो चुका है । अनएव सर्व परवार माईयोकी उपस्थिति शोचनीय है । आशा है उक्त समय पर आप लोग अवश्य ही पवार कर नागपुरजिते कार्यमें भाग लेंगे ।

विनीत प्रार्थी—

कन्ठेशीलाल B. A. L. L. B.

मंत्री परवार सभा—जयलपुर ।

स्तुत्यदान—कटनी निवासी सवाई सिंगे कट्टेवालाकनी गिरगारीवालाकनीके अनुम स्तनक की ता० ४ मार्चको पेटमें पीडा होनेसे बहुत व्याकुलित हुए इसी अवसामें आ जाने भावाभोर्छी अनुमदिते स्थानीय आश्रम (गोविंद) को २पीस देना २५/३/२९

# दिगंबर जैन.

## THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलानिर्विधिष्वैव तन्मैः सलोपदेशैस्तुगोपयणाभिः ।

संशोधयत्वमिदं प्रवर्त्तताम्, दिगम्बर जैन समाज-माध्वम् ॥

वर्ष १२ वॉ.

वीर संवत् २४४५, वैश्व. विक्रम सं० १९७५.

अंक ६.



पाठकोंको मालूम होगा कि चम्पई दि० जैन  
प्रांतिक समाज सत्तरहवां  
दि० जैन चम्पई वार्षिक अधिवेशन गुरु  
प्रा० सभा और धार्मी क्षेत्र पर ता० १३  
महाराष्ट्र खंडेल-१४-१५ को होना  
चाहिए।  
चाल सभा निश्चय हुआ है। इस  
वर्ष अधिवेशनके सभा-  
पति समाज हिन्दू, उन्नतिके प्रेमी सेठ मूरचं-  
दजी बनाए गये हैं। उनके सभापतित्वसे सभा  
ज बहुत कुछ सफलता मिलनेकी आशा  
काती है।

इसी आसपर गुरुपंथाजीमें महाराष्ट्र  
खंडेलवाल पंच महामपाका भी वार्षिक अधिवेशन  
सेठ हरसुन्दरदासजी सुपारीवालोंके सभापतित्वमें  
होगा ऐसे समयपर जातिमुधार, शिक्षा प्रचार  
कुरीति निवारण इत्यादि समाजहितके कार्यों  
पर विचार दिया जायगा। अनपुत्र  
आवश्यकता को सर्व म्यानोंमें जैनामाई और

खंडेलवाल माध्योंके आनेकी है परन्तु बम्बई  
प्रान्तके ग्राम २ से दश पांच मैनीयोंको तो  
अवश्य ही आना चाहिये जिम ग्रामसे अधिक  
मनुष्य न आ सके वहांवालोंको चाहिए कि  
अपना प्रतिनिधि तो गुरुपंथाजी पर अवश्य ही  
भेजें। महाराष्ट्र प्रान्तके खंडेलवालोंको अपनी  
पंच महामपामें सम्मिलित हो कर जातिहितके  
कार्योंमें अधिक भाग लेना चाहिये। खंडेलवाल  
जातिमें अधिकांश और कुरीतियोंका प्रचार  
देखकर बहना पड़ता है कि यह जाति बहुत  
पिन्ही हुई है और इसमें समदसूचकता नहीं है।

वर्त्तमानमें संसारके बड़े परिवर्त्तनको देखा  
कर और भविष्यमें होनेवाले परिवर्त्तनोंका विचार  
कर बिना किसी मित्रके स्वीकार करना पड़ता  
है कि जैनसमाजकी वर्त्तमान गतिसे उमरी  
वास्तविक उन्नति होनेकी आशा नहीं है।

आवश्यकता है कि यदि पहिले समाज दिन  
भरमें १० मील चलता रहा हो तो अब अपनी  
गति इतनी तीव्र करे कि जिससे दिन भरमें सौ  
मील चल सके और जो आगे बढ़ी हुई जाति  
शीघ्र ही उन्नतिके दौलती आकर तेर करने  
लगेगी उनके नकार हो जाए। अतएव क्या  
महासभा क्या प्रांतिक सभाएं प्रस्ताव पास करके



खिन्न देपना कर देना और प्रायः बागनी घोड़े दौड़ाना ही करती आई है परन्तु यह पली प्रकार समझ लेना चाहिये कि अब इतने हीसे कार्य न चलेगा; किन्तु जो प्रस्ताव पास किये गये हैं और जो किये जाय उनके अनुसार कार्य करनेकी आवश्यकता है ।

जो कुरीतियां समानको रसातलमें पहुँचा रहीं है और दूसरी जातिके सामने उसको मुंह दिखानेमें लजित कर रही हैं उनको इस प्रकारके नियम बना कर दवा देना चाहिये जिस प्रकार भारतकी स्वाधीनताको दवानेके लिये रौलट कानून तैयार किये गये। बिना ऐसे नियमोंके बड़े २ घनी जो अपने घनमें मदोन्मत्त हो रहे हैं वे ऐसी कुरीतियोंके करनेसे बचन आयेगे और इनके बाग न आनेसे अन्य लोग भी जो इन्हींका अनुकरण करेवाले हैं इन कुरीतियोंका गला न घोंड़ेंगे ।

समानकी मनुष्यरूपा दिनपर दिन घटती जा रही है इसके कारणोंको भी दोनों सभाओंका जोन निकालना कर्त्तव्य है। यदि ये कारण खोज कर लिये गये हों या खोजनेसे अब मित्र तो उनके अनुसार कार्य करनेमें किसी प्रकार का अगा पीछा न करना चाहिये । यदि ऐसे कार्योंके करने कुछ अदृष्टदर्शी विरोध करे तो उनकी किन्ति भी परवाह न करके कार्य प्रारंभ कर देना चाहिये । यदि समान ऐसे ही विरोधोंमें दक्ष अर्थात् ऐसी ही अवस्थाके भीतर—अनतिक्रम अवसरमय कर्त्तव्य भीतर लड़े रखेगी अपनी जनहानिके कारणोंके मनेके लिये कुछ उपाय न करेगी तो इसकी

जो अवस्था होगी उसको विचारकर हृदय कंपित होता है ।

समानमें स्त्री पुरुष—जो अब भी अज्ञानाधिकारमें पड़े हुए स्वयं अपनेको भी नहीं पहिचान पाते हैं, अपने कर्त्तव्योंको भी नहीं जानते, यहां तक कि जैनधर्मकी मुख्य बातोंसे भी अपरिचित हैं—उनमें शिक्षा प्रचार किस प्रकार हो इसका भी विचार करना दोनों सभाओंका परम कर्त्तव्य है । शिक्षाकी प्रशंसा करना व्यर्थ है केवल इतने ही शब्दोंमें समझ लेना चाहिये कि यदि शिक्षाका प्रचार सारे जैन समाजमें हो जाय तो प्रायेक प्रकारके झगड़े, सर्व कुरीतियां, प्रत्येक दुःख दूर होकर समान अवनतिसे निकल कर उन्नतिके सिंहासन पर आरुढ़ हो जाय । यहाँ पर समाजको एक बातका विचार कर लेना और भी बहुत आवश्यक है वह यह कि समानमें वैसी शिक्षा प्रचारित होना चाहिये । वर्तमान शिक्षा प्रणाली ही समानको लाभदायक है या दूसरी या इनमें ही कुछ विशेष परिवर्तन कर देना ही पर्याप्त है ।

समानके सम्मुख इस समय तीन कार्य बहुत आवश्यक हैं एक शिक्षा प्रचार, दूसरा कुरीतियोंका बहिष्कार करना और तीसरा समानकी नेगसे घनशाली जनसंख्याको रोकना ।

इन तीनों बातों पर बन्धु प्रांतिक समा और संदेशान पत्र महामाको अपने अधिकार पर विचार करना चाहिये—और जो इसकी पूर्तिके लिये उपायोंकी आवश्यकता हो उनको शीघ्र कार्यरूप परिचय होना चाहिये ।



पाठकोंको मालूम होगा कि श्रीयुत अर्जुनलालजी सेठी बी० ए० पं० अर्जुनलाल विना किसी अपराधके सेठी प्रमाणित हुए बेलोरके जेलमें पड़े सड़ रहे हैं।

जयपुर सरकारने उनको ५ वर्षके लिये दूसरी आज्ञा न देने तक कैद रखनेकी आज्ञा घोषित की थी। अब उनको ५ वर्ष जेलमें सड़ते हुए बीन गये, जयपुर सरकारकी ५ वर्ष वाली आज्ञाकी संहति बीन गयी—परन्तु अभी तक वे कारागृहमें मुक्त नहीं किये गये और न कोई दूसरी आज्ञा की ही घोषणा की गई। कुछ दिन हुए जब सरकारने उनके पीछे गला शोट लगा कर छोड़ना चाह था परन्तु तब भी वे अभी तक नहीं छोड़े गये। न छोड़े जानेका कारण कुछ विदित न हुआ, किंतु जहां तक अनुमान होता है पं० अर्जुनलालजीने जयपुर नजाना, लड़कोंको न पढ़ाना और व्याख्यान न देना यह तीनों शर्तें स्वीकार नहीं की अन्यथा कोई कारण नहीं था कि सेठीजी छोड़े जानेपर भी कारावासमें ही सड़ते रहते। यह शर्त कैसी हाथ, पैर और शंखको जकड़नेवाली है सो पाठक विचार सकते हैं। सेठीजीने इन शर्तोंको नहीं स्वीकार किये उचित किया। वास्तवमें शर्तें स्वीकार काने योग्य नहीं थी।

अब हम सरकारसे केवल इतना निवेदन करना चाहते हैं कि 'सेठीजीके' विषयमें केवल जैन समाजकी ही नहीं किन्तु सारे भारतकी यह धारणा है कि वे निर्दोष हैं फिर ऐसी अवस्थामें उनको कैद करके ही बुरा किया गया, धर्ममें

सेठीजीको शारीरिक और मानसिक दुःख दिया गया और दिया जा रहा है। बिना किसी वारण शान्तिप्रिय जैन समजके हृदयमें ऐसा आघात पहुंचाया गया जिसे वह कभी न भूलेगा और बिना किसी अर्थके भारतवर्षके एक विद्वान्को कारावासमें सड़ाया गया और सड़ाया जा रहा है। यह सब कुछ हुआ सो ठीक, परन्तु अब तो जब कि इंग्लैण्ड सरकार आयरलैण्डके उन सिनफिनरोंको कैदसे मुक्त कर रही है जिन्होंने खुल्लम खुल्ला ब्रिटिश सरकारके विरुद्ध बर्तना करना चाहा और अब भी उनका आन्दोलन जारी है तब क्या वारण है कि भारत सरकार भारतीय राजनैतिक कैदियोंको नहीं मुक्त करती है? क्या दया और न्याय भी विशेष आदिमियोंके लिये है? सबके लिये नहीं शुद्ध बन्द हो गया, सुलह भी होनेवाली है, सरकार इंग्लैण्डके राजनैतिक कैदियोंको मुक्त कर रही हैं, पर निरीह और निरुपय भारतीय राजनैतिक कैदियोंके छोड़नेकी कोई बात नहीं। अर्जुनलालसेठीके ५ वर्ष पूर्ण हो गये हैं अब सरकारका परम कर्तव्य है कि उनको छोड़कर सेठीजीके कुटुम्ब, जैन समाज और भारत वर्षके शोकाकुल हृदयको शान्त करे। •

जिम जातिको अपने पूर्वजोंका अभिमान नहीं है जो जाति महावीर जयंती अपने उद्धार कर्त्ताओंका मक्तिमें स्मरण नहीं करती है उसके जीवनका कुछ भी मूल्य नहीं, इसी प्रकार जिस धर्मके अनुयायी अपने धर्म प्रवर्त्तकोंका किसी दिन एकाग्र हो कर विशेष प्रयोजनके

साय स्मरण नहीं करते उस जाति । धार्मिकजीवन और उसकी गंका दूर हो जाती है । इसी भी शिथिल है । निवर्द्धम वाले अरने गुरु प्रकार जब महावीर स्वामी बाल्यावस्थामें ही नानककी, आर्यसमाजी स्वामी दयानंदकी, थे तब ही चारण लब्धिके धारक विजय संनय शैव महादेवकी, वैश्व श्री कृष्णकी वर्षभरमें नामके दो पतियोंकी किसी विषयकी संशय एक दिन जयंती अवश्य मनाते हैं । जैनियोंके इनको देखते ही दूर हो गई और उन्होंने भगवानका नाम सन्मति प्रसिद्ध किया । महावीर अपने किसी उपास्य देवताकी जयंती भगवान्के बाल्य कालके खेल भी ऐसे हुआ मना कर धार्मिक जीवनको दृढ़ बनाते । इसी करते थे कि स्वर्गसे देव भी आकर उनके साथ य तको लक्ष्ममें रत्न कर जैन समानमें महावीर खेलते थे । एक दिन महावीर अन्य बालकोंके जयंती चैत्र सुदी ११ को उत्साह और समा साथ २ एक दीर्घकालके बट घुसकर चढ़कर रहेके साथ यताई जाने लगी है । चाहिये तो खेले लगे किन्तु इनकी यह साहसपूर्ण क्रोड़ा यह कि जिय ग्राम या शहरमें जैनियोंकी एक संगम नामक देवको सत्ता न हुई और उसने अपनी मंथार फगवाले सर्वकारूपस्वरूप उनको दुःख पहुंचानेके लिये उस घृष्टके मूलको आकर घेर लिया । अन्य बालक तो सर्वको देखते ही भयभीत होकर गिरने लगे; परन्तु अनेक शक्तिके धारी और कर्मरूपी शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने वाले महावीर स्वामी बिना किसी भयके उस सर्पके घनार पैर सत्ता घृष्टसे नीचे उतर आए थे । कहनेका तात्पर्य यही है कि वे

करें तथा जिस प्रकार महावीर स्वामीने जगत्के जीवोंका कल्याण किया था उसी प्रकार तुम भी मनुष्यके हितके कार्योंको करके अपना और दूसरोंका कल्याण करो ।

अनन्तदिने दिन गये उन्नतिके दिन आ रहे हैं; पराधीनताकी चेष्टियाँ समझका प्रवाह खटाखट दृष्ट रही हैं, और जैनसमाज और स्वाधीनताके स्वर्ण की गति । कवन धारण किये जा रहे हैं, जहांपर स्वतंत्र-

चरिताका नगारा बजता था वहां अब स्वतंत्रताकी तूती बोल रही है । अमीरोंके दिन गये अब निर्धनोंके दिन आ रहे हैं । शताब्दियोंसे दुःख और शोखसे दबी हुई प्रजा गर्दन उठाकर सास लेने लगी है । भारतवर्षमें भी स्वतंत्रताही लहोरे बेगसे उड़ रही हैं भारत यद्यपि धर्मप्रधान देश है परन्तु वह भी अपने धर्मको अगे रख कर संसारका अनुकरण कर रहा है । संसारका प्रवाह जिस ओर बह रहा है उसी ओर बहनेके लिये वह भी अपने हाथ पैर फेंक रहा है । स्वभाव्य निर्णयका सिद्धान्त प्रत्येक राष्ट्रके लिये नव छागू है तब कोई कारण नहीं जो भारत इससे भ्रंशित रहे । अभी नहीं तो कुछसमय बाद इसको वह प्राप्त कर लेगा । जिस समय वह उसे प्राप्तकर लेगा उस समय भारतवर्ष भारतीयोंका होगा और भारतकी जो जातियाँ उन्नत होंगी उनका भारतके प्रत्येक कार्यमें हाथ रहेगा । उसके धर्म, धन आदिकी रक्षावा प्रत्येक जातिको ध्यान रहेगा, जो जातियाँ अवनत होंगी । अशिक्षित, अकर्मण्य, बान्धव होंगी वं सब या तो पहिले ही

प्रवाहमें बह सकनेकी ताकत न होने कारण कालके गालमें पड़च जायगी या उन्नत और आगे बढ़ी हुई जातियों द्वारा कुचल उड़ी जायगी, उनके अधिकारों, उनके हकों, उनकी मागोंकी ओर कोई कान न देगा । कोई भले ही यह कहे कि ऐसा न होगा; परन्तु समय हमें यह स्वीकार नहीं करने देता है । कहा है वह बौद्धधर्म जिसका भारतमें साम्राज्य था, कहां है वह ग्रीस जाति जिसका सिका यूरोप पर बैठा था, कहां है मुगल साम्राज्य जिसने भारतमें आकर शताब्दियों शासन किया । वे सब शक्तियोंको द्वारा कुचल डाले गये, बलशाली धार्मिक आक्रमणोंके द्वारा वं धर्म जिसके अनुयायी अल्प संख्यामें थे दब गये और उनका नाश हो गया या स्थानान्तरमें प्रचारित हुए । वास्तवमें यह वही नमाना है कि जिसमें शक्ति है वही जीनेका अधिकारी है शक्तिहीनको जीनेका कोई अधिकार नहीं ।

वर्तमान समयमें वे ही देश या जातियाँ जीवित रह सकती हैं—जिनमें ज्ञान, धन, बल आदि सब प्रकारसे भापूर हैं, वे जातियाँ जो अशिक्षित हैं, निर्बल हैं उनको या तो दूसरोंमें मिलकर—दूसरोंका चोला पहिनकर संसारमें जीवित रहना पड़ेगा या वे सदाके लिये पदलुलित होकर धूलमें मिल जायगी फिर उनके नाम लेनेवाले केवल इतिहासज्ञ रहेंगे—या उनके अस्तित्वको बतानेवाली पुस्तकें रहेंगी ।

भारतवर्षकी वे जातियाँ जो सामुदायिक शक्तिके हीन हैं, अज्ञानांधकारमें पड़ी हैं; परन्तु उनके मनमें अपनी शक्ति व्यय कर रही हैं, संसारमें क्या हो रहा है इस तरफसे बिल्कुल



वेपरवाह हैं—उन्हें यदि संसारमें जीवित रहना है तो अपनी सामुदायिक शक्तिको बढ़ाना चाहिये इसके लिये यदि स्वार्थीका त्याग करना पड़े तो 'सर्वनाशो समुत्पन्ने अर्द्धं त्यजति पंडितः'—इस नीतिके अनुसार अपने स्वार्थ भी त्याग देना चाहिये, जातिके प्रत्येक बालक व बालिकाको शिक्षित करना चाहिये, ऐसा कोई स्त्री पुरुष न रहे जो लिख पढ़ न सके, परस्परके अगड़ोंको अपने अस्तित्वकी रक्षाके लिये त्याग देने चाहिये और संसार विमल और जा रहा है उस ओर लक्ष्य देकर अपने कार्योंको उसी दृष्टिसे करना प्रारंभ कर देना चाहिये जिससे वह संसारकी किसी भी रूपव नातिन पीछे न रहे और न्यूनता तथा परीक्षाके लिये कसौटी पर बसी जाय तब वह भी बावन तोला पाच रत्ती और किसीसे किसी प्रकार कम न हो । तब ही वह अपने अस्तित्वको संसारमें कायम रख सकती है, अपने हकोंकी रक्षा कर सकती और दूसरे उसके हक हठार रहे हों तो उनसे छिन सकती है ।

जैन समाज भी इस समय सामुदायिक शक्ति में हीन है—अज्ञानके अंधकारमें पड़ा है, परस्परके अगड़ोंमें अपने समय घन और शक्तिको व्यर्थ कर रहा है और संसारमें क्या हो रहा है उसकी ओर ध्यान नहीं करता है । इसके वह सब लक्षण नाश होनेके हैं । यदि जैन समाज अभीसे न जाग्रत होगा, यदि जैन समाजके लोहर कूड़ाभिवादे अभीसे संसारका प्रवाह उठर सके तो योग्य समाजकी प्रवृत्ति प्रयत्न न करेंगे, यदि उसके अन्दर शिखर प्रवाह बने, पादोंके

अगड़ोंको मिटाकर भारत वर्षके प्रत्येक जैनीको एक सूत्रमें बांधनेका प्रयत्न न करेंगे तो संसारके प्रवाहमें उसका ठहरना असंभव है । वर्तमानमें तो वह संसारके प्रवाहमें ठहरनेमें विचकल अशर्म्य उसका स्थान बिल्कुल पीछे है । यदि यही दशा रही तो जैन समाज और प्राणोंसे प्यारा जैनधर्म इतिहासज्ञोंकी जिह्वापर और पुस्तकोंके पन्नों पर लिखा हुआ रह जायगा । हमारा ख्याल है—अभी जैन समाज इतनी अकर्मण्य नहीं हो गई है वह आंखोंसे देख सकती है और कानोंसे सुन सकती है, जसा देख और सुन सकती है वैसा हाथ पैरोंसे कार्य भी कर सकती है, जैन समाजके नेता भी इतने अदूरदर्शी और निरक्षयोगी नहीं हैं जो जैन समाजके अस्तित्वके मिटने न देंगे किंतु स्वयं जैन समाज तथा उसके नेता अनेक विषय बाधाओं और सर्व प्रकारकी कठिनाइयोंकी कुछ भी परवाह न करके विरोधियोंको घका देते हुए अपने मार्ग कण्टकोंको पूर करके संसारके प्रवाहमें योग्य स्थान प्राप्त करेंगे और जो कहते हैं जैन समाज एक कायर अकर्मण्य और बेबल रातको न खाना, पानी छान कर पीना इतने ही में धर्म समझनेवाला समाज है उनको दिखा देगा कि देगो हम कैसे वीर, कर्मवीर और वीर भगवानके सच्चे उपभक्त हैं ।

**नरक केसर तकर है ।**

शून्य और नगुना शून्य । हर गैह एक गोरी जलन है ।

पादः कादभीर हटोस श्रीनगर नं० १८



वार्षिक रिपोर्ट—दुधगांव शिक्षा प्रसारक संस्थाके सातवें वर्षकी। मि. कार्तिक सु. १० से आश्विन वदी ३० सं. २४४४ तक। प्रकाशक—नानारामजी पेडेकर जनरल सेक्रेटरी हु. सि. प्र. संस्था दुधगांव (वृत्त. रा) दुधगांवमें शिक्षाप्रचार करनेवाली कइ संस्थाएं हैं इनसे जैन अजैन दोनोंको लाभ पहुंचाया जाता है। प्राथमिक शिक्षण प्राप्त करनेवाले गत वर्ष ३८ छात्र थे इस वर्ष २७६ छात्र। कमीशनी कारण २४ छात्रोंको गांवमें कम हो जानेके हैं। जैनियोंके १२६ लड़के हैं। कन्याशालामें ४२ बालिका हैं जिनमेंसे ३० जैनियोंकी है। इसके साथ विद्यार्थीश्रम से भी ४० लड़के स्थानीय और अन्य स्थानोंके हैं वत्समान ८ छात्रोंको शिक्षा और भोजन सर्व दिया जाता है। अन्य छात्रोंके लिये भी उनकी इच्छा मुताबिक भोजनालयमें प्रवेश होता है। ग्रन्थ मन्दिर दे जिल्हें ८६० इस्तेके हैं—यह पुस्तकें बालकानालय मन्दिर और प्रौढ़ वाचनालय मन्दिर इस प्रकार दो भागोंमें विभक्त हैं। इसी ग्रन्थ मन्दिरके निकट मोक्षत वाचनालय है जिसमें १७ मासिक व १ अन्य पत्र अते हैं। यहां पत्रिकामें ज्ञान प्रचारके लिये शानोदय व्याख्यानमाला है इसके द्वारा मित २ नियंत्रण विद्वानोंके भाषण होते हैं। एक और शाला अंग्रेजी स्कूल है, किन्तु लोग इसमें लम्ब कम उठाते हैं। सइ संस्थाओंमें इस वर्ष २१८८५॥ की आय हुई और शिक्षा प्रचारक संस्थामें १०८५७॥, विद्यार्थीश्रममें ६४१॥॥, ग्रन्थ

मन्दिरमें ११९॥, अंग्रेजी स्कूलमें १९५) खर्च हुए।

महिला महोदय—ललक पुनर्भी, बाल. विजयबा महाराज और प्रकाशक 'जैन' वार्तालय भावनगर। १७८ पृष्ठकी गुजराती भाषाकी पुस्तकमें कन्याके विवाह समये लगाकर गर्भरक्षा, आहार विहार, प्रयत्ति, जन्म संस्कार आदि बालकके जन्मतककी सर्व आवश्यक बातोंका प्रथम स्वर्ग विमानमें दर्शन दिया है, दूसरेमें संतान पालन, तीसरेमें पुत्रीकी शिक्षा और शिक्षासे लाभ, चौथमें प्राचीन सतियोंके संक्षिप्त अनुकरणाय जीवनचरित्र और वर्तमान बालकी कुछ दोष-कारिणी त्रियोंका परिचय, पांचवेंमें विवाह कथ करना, षष्ठे वरके साथ धरना, गर्हने फैले पहिरना, पतके प्रातिपद, छठेमें प्राचीन त्रियोंका जीवनचरित्र और सतमें पुत्रियोंकी प्राचीन कालकी शिक्षा, नियमित दत्तान, बुद्धि विकास, सामान्य घमंशास्त्र, छी सुभारक उपायोंका वर्णन है। पुस्तक गुजराती जानमेवाली त्रियोंके लिये बहुत उपयोगी है। मूल्य १) प्रकाशकसे प्राप्त।

श्रीसमवेदशिवर यात्रादि विवरण (पत्रिक) ११२ पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य—यात्रा प्रचार। ललक द्वारा ज्ञानसद जैवपाल, दिगंबर जैन-राधारव (अष्टीगढ़) और प्रकाशक धीमान देठ गुर्जपंचदेजी बाला, भंशी श्री दिगम्बर जैन धर्म प्रमावनी समी सामालेक (रत्नपूताना)—इस पुस्तकमें प्रथम यात्रा जानेवालोंके आवश्यक सूचनाएं की गई हैं। फिर ललकने अपनी यात्राका विवरण दिया है। अंश चिरायका विवरण है। इसके बाद शिवरजी पर्वत्तपर जो कथा: टोके मिलती हैं—उनका नाम और प्रशाल पूजन करनेके मंत्र और पद्य दिये हैं। इसके बाद ५, जवाहरलाल कृत समवेदशिवर पूजा



है । किर-परिक्रमाकी विवरण और-हाथसंघ  
विस्तरजो तक जोर और तीर्थ पड़ते हैं उनका  
विवरण देकर पुस्तक समाप्त की गई है ।  
लेखक और प्रकाशकका परिचय प्रसंगोपर है ।  
पाठियोंकी यात्रा करते समय इस पुस्तकको  
भी रखनेसे सुभीता होगा ।

**सोनागिर यात्रा विवरण—**( सचिव ) इस  
पुस्तकके भी लेखक और प्रकाशक भी उक्त  
पुस्तकके ही महाशय हैं । मुख्य यात्रा प्रचार—  
पृष्ठ ३३९ । पुस्तकका विषय नामसे ही प्रगट  
है—विषय और आवश्यक सूचनाके पश्चात् सोना-  
गिरध्वजरी पुत्रा कवि आचारामजी कृत है ।  
इसके पाने ७० कूटा और १६ मन्दिगोदा  
विवरण है । यह पुस्तक भी सोनागिरकी यात्रा  
करनेवालोंके लिये उपयोगी है । उक्त दोनों  
पुस्तकें प्रकाशकसे प्राप्त होती हैं ।

**नूचीपत्र—**दि० जैन मासका प्रचलित समा-  
हित शुद्ध औषधालय बदनगर । प्रकाशक बाला  
भगवानदासजी जैन भागमंथी । औषधालयकी  
निषेधारणिके पश्चात् औषधालयके संछिन्न अस्ति-  
यसे प्रगट होता है कि इस औषधालयकी

और सहायता देनेके फलकी नकल है । देश  
हितार्थियोंका कर्तव्य है कि इस औषधालयको  
पवित्र औषधियोंका प्रचार करें और इस  
औषधालयकी आर्थिक सहायता पहुंचावें ।

## धर्मात्माओंकी भावनापूर्ति ।

मित्र प्रकार भारोगमताके लिये शुद्ध अन्न औ  
पवित्र मद्यकी आवश्यकता है उसी प्रकार मस्ति-  
ष्कके आनन्दोत्पत्तिके लिये सात्विक आहार और  
पवित्र प्रेमात्मिक स्थानकी आवश्यकता है तथा  
उसी प्रकार धर्मिक दृष्टिसे धर्मात्माओंकी भाव-  
नापूर्तिके लिये जिनालय—देवमन्दिर है ।  
ऐसे पवित्र स्थानोंमें व्यवहार करने योग्य वस्तुएं  
भी परम पवित्र ही होना चाहिये और तब ही  
भावना पूर्ण होती है इसीसे कहते  
हैं कि—

द्रव्योंकी पवित्रतासे भावोंकी  
पवित्रता होती है ।

पवित्र वस्तुएं यही हमारा मन्त्रालय हैं ।







પ્રમત્ત યતો ન હોવાથી કામની સ્થિતિ સુધરતી હોય તેમ લાગતું નથી, આ લેખકે લેતેલી કેટલીક કોન્ફ્રન્સોમાં અને કેટલીક સભામાં બમ લીધેલો છે, તેમાં ફક્ત કોન્ફ્રન્સો અને સભાઓ દ્વારા પસાર કરતી જોવામાં આવે છે પણ તેના અમલ ખીલકુલ યતો હોય તેમ લાગતું નથી. માટે આખા જૈન સમાજની સાર્વજનિક ઉત્પત્તિ માટે સમસ્ત જૈન જાતિના આગેવાન નેતાઓ પોતાની અંદર રહેલી માનદશ, મિથ્યાભિમાન, ધર્મપાત, અન્યાયદૃષ્ટિ, અને આપણીને ફર કરી સકાય જૈન સમાજ અને બીરહાસનની ઉત્પત્તિ માટે કોષપણ સંમીન કાર્ય લાઇ મરવું જોઈએ. જુદા જુદા શીરકાઓ વચ્ચેનો ભિન્નભાવ જેમ ફર કરવા યોગ્ય છે તેમ જુદા જુદા શીરકાઓ વચ્ચેનો ક્રમ પણ ફર કરવા યોગ્ય છે.

લાલમાં કેટલોક વખત યર્ષા દિગંબર અને ચેતામ્બર વચ્ચે સંગેદિયમ્બર અને અંતરહા પા-ર્ષનાથના સંબંધમાં જે તીર્થો સંબંધનો અમરો આવે છે જેમાં બંને તરફના લાખો રૂપીયા કેટલે ચલી ખરચાઈ ચયેલા છે, જે હવે લાંગો વખત ચાલુ ન રહે, તે એક બીજાના ખરા દહનું સંર-હણ ચાલ તેવી રીતથી એક જૈન પંચાત (સલાહ) મારફતે શાકશી વાડીવાલ મોલીલાલ ડાહના કહેવા મુજબ નીકાલ આવતી જોઈએ.

માટે જા માટે સંપ નહિ કરીયે ? બ્યારે અમારી ગતિ, અમારો જાન, જોત તેમજ શરીર, અધન, જન્મમુખી, જોગ્યપદાર્થ, રહન સહનના નિયમો અને સર્વોપરીશાસનનાં કર્તા બ્યારે એકજ છે તે કાંઈ એવું કારણ નથી કે જે અમારાં એકજ અંગનાં સ્વરૂપને સામાન્ય ઉત્પત્તિના કાર્યમાં ભિન્ન ભિન્ન બનાવી શકે. એકજ સામાજ્યમાં સંપ વાં પારિપક બગ જેટલું ચઢતું ચાય છે તેટલું બિલ ભિન્ન થઈ શકવાથી થતું નથી. માટે ઉપર જણાવેલા કુસંપરૂપી રોમનો નાચ કરવાને તથા તે ફરીથી ચવા ન પામે તે ગહારામ તે આપણી દુઃટ અનેકગતા છે, કે જેણે આપણી ધર્મ, આપણી જાતિ આપણી વિદ્યા વગેરે સર્વને નષ્ટાચ રચીતમાં લાવી મુક્યા છે, માટે આપણી સાર્વજનિક ઉત્પત્તિને માટે આપણી સંકીર્ણતાઓને ફર કરી પૃથક પૃથક શક્તિઓને એકજ કરી સંપની વિજય પતાયા શરૂાવવી જોઈએ.

૪. હાનીકારક વિવાજ—નાચે જણાવેલા હાનીકારક વિવાજે આપણા એકલાનું નહિ બહુ સારા ભારત વર્ષનું સલામત વાળી નાંખ્યું છે. આપણા આ મનુષ્ય જાવણી શેરગી અંદર તેની ઉત્પત્તિથી ખીજને દહન થવામાં સાધનજૂન હાની કારક વિવાજ એ મુખ્ય છે. ધર્મની અવનતિ કરનાર, આગાર વિવારમાંથી પતન કરનાર વળી તે સાથે આપણા સંસાર જાવણરતેલુમાં મેગવનાર તથા તમામ કામ (જે જે કામમાં તે વિવાજ ચાલુ છે તે) ને, તથા દેશને પણ અંધમ રચીતિ એ પડોડાનનાર પણ તેજ છે. મુગ દુધારે (આપણા પૂરસ્કિયે) સમયને ચાલુચીને તે પીરો કેટલાય વિવાજે મુલ આદ્યવી સમાજ રિતને ખાતર તે કેટલેક અંશે લાખક કરેલા, પણ કામકમે સ્વર્ધ અને અચનતાને વચ થઇ તેનો મુગ લેવું નહિ સમજેતાં “ગાહીવા પ્રચાદ”ની પેરે ચાલુ રહેવાથી પરિશ્રમે લાજ નહિ કરતાં હાનીકારક વિટિવ નીચાયા.



જેવામાં આવે છે. આ રિવાજે આપણી જૈન મુશ્કેલી સો વૃદ્ધ મગિયા, બાસના મુશ્કેલી સહી. કોમ એકનીને નદિ પશ્ચિમ સપાળી કિંકુ કોમને અધોગતિ રૂપી જોડા દવાડામાં ફેંકી દીધા છે. નિજ તનવું ઠેગણું નહિ તો, દેશ મરાથી સાચવે. બાળક બનાવે બાળકો, એ દિંદમા શો દમ હવે ? ૨ બાર વરસે બાપ ધાતાં લાજ નહીં ક્યાં આવતી ? યાને કરે કામાંધ, કોમળ કાય નિર્ગળ ભાવથી; સસારની શું રીત બલે કાલું કાલુ ને લાવે, બાળક બનાવે બાળકો, એ દિંદમા શો દમ હવે ? ૩ મૂંચ મા ને બાપ પોને, ભાગ્યવાળા ધારતા, નિજ પુત્રને ધર પુત્ર જોવા, પુત્ર મરદન મારતા; અભાગીયા કાલ મોકલોને, વહેલી લેતા માગે, બાળક બનાવે બાળકો, એ દિંદમા શો દમ હવે ? ૪ અભાગ રંગ ઉમંગથી, રજુ જંગમાં પસારવતા, ક્યા ગયા એવા શુર, યતુ મૈન્યને હંકારવતા ઉદાર તારો કિંકુ શુ છે ? સમય ધાવો ઓ બવે ? બાળક બનાવે બાળકો એ દિંદમા શો દમ હવે ? ૬ ! સકા છે કાય એકમાં, પણ એક સુક્તિ આદરો, સુકાન લાઇ મકંટ હાથથી, જાનિને હસે ધરો; પ્રત્યેષિતિ જેવાં જાણ, જોખમેણું કામે, તે, નહિ બાલને પણ સોપું વનમન યકો બલવાનને. ૧

૨. કલ્પેકાંવાળાં બ્રહ્મણસઃ—આ અનિદને હાનીકારક રિવાજ મિથ્યાકૃતિઓમાંથી એમાં ધણેક અંશે જેવામાં આવે છે, તેઓની માન્યતા એવી છે કે મારો હોડારો પારણામાથી પુણ્ય તો અગો કુવારું, યયા, કેમકે અમારા બાળકો વખતે મોટી ઉમરના યતા કુદરતી બોા, બાગીચ, બોરી, અઝા, બારા, વગેરે આવવાથી તેમનો કોષ ભાવ પુરે નહિ તો અમારું કુળ ઓછું થતાની સાથે અમારા બાળકો કુવારા રહી જાય, આવી ખોટી માન્યતાએ કરી મુશ્કેલી નાની ઉમરમાં એટલે વરતી ઉમર ૨ થી ૩ અને ૪ ન્યાની ઉમર ૫ થી ૬ અને તેથી ૫ થી નાની ઉમરમાં તેનાં વેલીયાગ કરવામાં આવે છે, જેમાં પછીથી કુદરતી ખોડ આવવા છતાં તેમાં ફેરફાર થઈ શકતો નથી જેથી પરિણામે એક બીજાને ગદાપાટું છ'છગી મુશ્કેલીની સાથે એ પૈદવ્ય દેહ પ્રાપ્ત થાય તો પછી "પણ ખાતું મુશ્કેલી લેવાનો" પ્રસંગ આવે છે, માટે તે બંધ થવાની જરૂર છે.

સમિત કાળમાં આ અધ્ય રિવાજે બારતરફની જૈન અજૈત તથા તમામ કિંકુકોમને કેવી અધોગતિ તિથિ-પહેલાંથી છે તે નંચેતા પદ પરથી સમજાયો.

## બાળસંગ.

(હરીગીત)

કિંકુ વદાલા દિંદ ૧૧ તાર તેજ કંઠમ આજુ થયુ. ૧  
પુરો દામે તારા, રીપ ક્યાં ગણું રહુ. ૨  
તુલ્ય તારા શિષ્યના, લાભને ના અનુભવે,  
બાળકો, એ દિંદમા શો દમ હવે ? ૧

મહાશયો ! ઈતિહાસ બાળકોને માણસ થશે કે-મધ્યાગ્ન્ય આપણા દુરેવે આપણા પર ધર્મોધને જીવની મુસલમાની સત્તાનો ઉલ્લેખો, જે ધર્મોધ પ્રજા કિંકુઓની કેટલીક મુશ્કેલી બાળાઓ હરજુ કરી પાણિ મકલુ કરતા, પરજોનીને દરાગ સમજતા હતા. જેથી તે ધર્મોધ પ્રજાના જીવનથી બચવા વધા કિંકુ ધર્મોધસાર લગના પવિત્ર રિવાજના સરક્ષણાર્થે તે બચતના આપણા પૂર્વજોએ-સગથને અનુસરીને કાલપણમાં લગ્ન કરવાનો પૃથા ચાલુ કર્યો, જે આજકાલ મુસલમાની અધાધુનીના સમય બાલક જવા છતાં પણ મગણુ વર કરી ખેડો છે, તો હવે તે અધમ રિવાજને દૂર કરવા માટે હાલમાં આપણા પર સાર્વભૌમ ચિટીય સંજ્ઞાતવની ન્યાયી તેમજ યાનિ ભરેલી અને ચીતલ તેમજ અલ્લ ઇન્સાફી રીતે સમ પ્રમુતી રહી છે. જેથી કોષ પજુ જતની વહેણત નિના સુધારો કરવાને અનુકૂળ સમય મુ

રૂપીયા હોય અને તે આપના આરંભ પ્રસંગે હોય, અને ચર્ચા કરીને હોય. ત્યારે આખી નાત જમાડે, સ્ત્રીનાં શ્રીમત (અવરજી) પ્રસંગે આખી નાત જમાડે અને સગાઈ પ્રસંગમાં મેરા મેરા વરદોશ તેમ ખીલ પૂર્વે કરે અને તેના મુઆ બાદ તેના દોશ પાસે આવવાને પાછ પછ ન હોય છતાં તે નેટલી પતરાશ રાખે છે. તેનાથી સંકેતો બહુકે હજારો થઈ રહેવાતા નિર્યામિયાની કુળવાનોમાં જોવામાં આવે છે.

મુળ પુરુષે તો-સદ્વિદ્યા, સદ્ગુણ, સદાચરણ, અને પ્રમાણિકપણથી ધન પ્રાપ્ત કરી, ધર્મ, નિતિ અને સમાજ દિનને ખાતર સ્વાર્થને ત્યાગ કરી આત્મલોગ આપી ધર્મ, માતિ, અને સમાજ સેવા બળથી કુળ સંપત્તિ સંપાદન કરેલી, તેને બદલે દાસમાં નથી જોની પાયો. સદ્વિદ્યા, સદ્ગુણ, સદાચરણ, કે સમાજ દિનના શુભ વિચાર તેમ નથી. પ્રમાણિકપણ કે સત્ય, કેવળ સ્વાર્થમાં જ મની રવા છે તો પછી તેઓનું ગુમાન “મારે મોગલને કૃષાય પાંખા” એ માફક ક્યાં સુધી ચાલી શકે? આવી રીતનું નિષ્કુરપણ અમારા લેને સમાજની કટકેક માતિ અને પેટા માનના નિર્યામિયાની કુળવાનોમાં વ્યાપી રહેલું છે, ખીજ દોષ વાતમાં નહિ પણ કન્યા આપવા લેવામાં, પણ દલે વખત આવી લાગ્યો છે કે-કુલવાન કરતાં ગુણવાન વધારે પુલકો. માટે લેન સમાજ ની દરેક માતિના આગેવાનોએ સમાજ દિનને માટે ઉદાર આદર્શથી દરેક માતિના મનુષ્યો સ્વયં એક જ રીત સમજાવના પુરો હોય, એમ જાણી પેલાનામાં રહેલી સ્વાર્થ શક્તિ અને દુષ્કર્મ ત્યાગ કરે તક અને પેટા વડથી જોણ એ ખીલ મારે કન્યા બ્યવહારી જોણ જવું જોઈએ.

## हृदयस्थान

(भारत० दि०) जैन महासभा व मालवा दि०  
जैन प्रा० सभाका संयुक्त अधिवेशन फोटा  
(राजपूताना) के सभापति-राय साहब  
सेठ माणिकलंदनी सेठीके व्याख्या-  
नका शेषांश)

### जैन धर्मका महत्त्व ।

महाशुभावो, हमारे प्राचीन जैनधर्मके जो  
उच्च सिद्धान्त आज दुनियाकी मनुष्य समाज  
पर प्रभाव डाल रहे हैं, विचार करके देखिये,  
क्या वह सिद्धान्त इतने गंभीर व विशाल  
नहीं है कि हमारे इन प्रयत्नोंकी सिद्धिका  
मांग हमको दिला सके ? यदि आज वे  
सिद्धान्त पश्चिमीय सम्य राष्ट्रोंको कि जो  
अपनेको उन्नतिशाली कहते हैं और जिनका  
अनुकरण घर-घर में हमारे युवक अपना सौभाग्य  
समझते हैं, प्रिय अथवा हितकारी होने लगे  
हैं, तो अवश्य वे सिद्धान्त इतने विशाल व  
प्रभावशाली हैं कि यदि हम और हमारे युवक  
उनको अपने जीवनका साधन बनावें तो हम  
पश्चिमीय राष्ट्रोंके समान ही नहीं किन्तु उनसे  
भी बढ़ चढ़ कर उन्नतिशाली बन सकते हैं ।  
हमारी दशा आज उनकी सी है कि जिनके  
पक्षी गनीनमें सोनेकी खान मौजूद है, परन्तु  
वह फटे हुए बिछड़े जो दूसरेने उतार कर  
फेंक दिये हैं उनकी पहिनेकी दौड़ते हैं  
हममेंकी शून्यकी बची खुची पर अपना ऊपरपूर्ण  
करना गनीमत समझते हैं । यदि हमको—मेरा  
यहां संकेत जैन समाजकी युवक समुदायसे है—

अपने सुवर्णकी खान का बोध हो जावे, यदि  
हम उस धनेको प्राप्त कर उसका उपयोग कर के  
योग्य बन जावें तो अवश्य जानिये कि हमारे  
शरीर पर अच्छेसे अच्छे वस्त्र होंगे व हमारे  
भोजन अतिस्वादित होंगे ।

तत्पर्य मेरे निवेदन करनेका इतना ही है  
कि यदि हम अपने धर्मके सिद्धांतोंका ठीक  
अनुभव कर लें, व दुनियाके परिवर्तनको दृष्टिमें  
रखते हुए उन प्राचीन सिद्धांतों द्वारा अपने  
जीवनको उपयोगी बनानेका दृढ़ विचार कर लें  
तो फिर हमारी सारी कठिनाइयां दूर हो जावेंगी ।

जैनधर्म ऐसे गूढ़ व उच्च तत्वोंके रसोंसे  
भरा हुआ है तथा इतना विशाल है कि उसमें  
हर श्रेणीके मनुष्योंके लिये अपना जीवन  
आनन्दमय व कल्याणकारी बनानेकी गुंजायश है ।

### हमारे धर्मका सार है—

अहिंसा छत्रो घमो लघमः प्राणिनो परः ।

तत्सार्धमाधि जितोके कर्तव्या प्राणिनो दयाः ॥

इसमें वह सार है कि जिसके लिये अब  
मनुष्य समाजके हृदय दुनियाके चारों कोनोंमें  
हिलोरे ले रहे हैं, वैज्ञानिक विद्या अपने  
आविष्कारों द्वारा नया नये प्रमाण देकर मनुष्य  
समाजको इस सारकी ओर खींच रहे हैं ।  
यूरोपमें जो इस समय League of Nations  
बन रहा है उसका एक सिद्धान्त यह माना  
गया है ।

उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्ब-  
कम्, अर्थात् उदारचित्तवालोंका सारा संसार  
बन्धु है और हम आशा कर सकते हैं कि  
अब दुनियाके प्रजनकी रचना इसी आधार

पर होगी। जब दुनियाकी रचना ही अब हमारे सिद्धान्तों पर किया जाना मनुष्य समाजके राजनैतिक नेताओंने स्वीकृत कर लिया, तो क्या हमारा यह कहना व्यर्थ होगा कि जैन धर्मके लिये एक नया और अमूल्य अवसर परमार्थ व परसेवाके लिये उपस्थित हो नैवाला है ? समय पुकार कर कह रहा है, जैन धर्मके अनुयाइयों, जागो, तुम्हारा समय आ गया।

### वान्धवत्व व अहिंसा।

जैन धर्म न केवल अपने सिद्धान्तों द्वारा समस्त मनुष्योंके लिये बान्धवत्वका भाव प्रकट करता है किन्तु “अहिंसा” द्वारा संसारके प्राणी मात्रके लिये दया करना सिखाता है। आचारण मनुष्य समाज, बान्धवत्वकी आवश्यकताको गान, द्वेषोंको मिटानेका यत्न कर रही है, और साथ ही यह ज्ञान भी पैदा होता जा रहा है कि मनुष्य समाजकी निम्नेदारियां दुर्मंद प्राणिगणोंके लिये भी हैं। जैनधर्मके अनुयाई अपने पवित्र आचरण व धर्ममय जीवनमें ऐसे समय मनुष्य समाज पर बहुत बड़ा प्रभाव उत्पन्न सकते हैं। मैं इन विषय पर अधिक नहीं कहना चाहता, मेरा निवेदन इतना ही है कि हमको समयके संकेत विचारपूर्वक पढ़ लेना चाहिये, समान व समाजोंके लिये आनेवाले नये समयमें अपनी गति स्थिर करना होगी, उनके काम प्रजात्योंमें पश्चिमीय प्रबंधकी नुस्खों द्वारा विनयी व हवाई न्यायकी भाँति पैदा करना होगा। जैनसमाज यदि धर्म के अमरफल उपयोग करना चाहती है, तो उसके लिये भी अपने कामोंमें व समाजोंमें नई नई कुराना आवश्यक होगी।

सभाके नये प्रबन्धकी आवश्यकता।

सबसे बड़ा काम हमारे सामने अपनी महासभा व प्रांतीय सभाओंके सुधारके संबंधमें यह है कि उनके प्रबंधको इस प्रकार रचें कि सभा हम सबकी जीती व नागती सामूहिक शक्ति बने। हमारी सभाओंने गत वर्षोंमें अवश्य सहाय्य कार्य किया है, उनके द्वारा कई सुधार हुए हैं; परन्तु अभी हमको बहुत लंबा रास्ता चलना है। इसीलिये हम उत्सुक हैं कि हमको जो कार्य करना है उसको निश्चित करें, उसके लिये उचित प्रबन्ध व अनुकूल सामग्री व सुविधाएं उपस्थित करें।

हमारी समाजका अंतिम अभीष्ट आत्म कल्याण है। आत्मकल्याणके लिये सेवा ही एक सच्चा मार्ग है, बिना पवित्र चरित्रोंके हम सेवक नहीं बन सकते। जीवनको पवित्र व सफल बनानेके लिये आत्मिक व लौकिक ज्ञानकी आवश्यकता है।

हम अब सभाके प्रथम ध्येय अनुमान उन अनेक मामलों द्वारा करेंगे कि जिनमें हम अपने कार्यको सृजनतापूर्वक विमानित कर सकते हैं। वे ये हैं:—

### १. शिक्षा

१. बालक व बालिकाओंकी शिक्षा,
२. सामाजिक कुरीतियोंका निवारण,
३. धार्मिक ज्ञानके प्रसारकी व्यवस्था,
४. समाजमें दूरदूरी उपाय,

शिक्षाके विषय पर मैं अधिक जोर देनेकी आवश्यकता नहीं। सभाका प्रथम उद्देश्य यह होना चाहिये कि जैन समुदायका कोई एक

अथवा बालिका कुपड़ न रहने पावे । मेरा विचार है कि जैन समुदायमें अनिवार्य शिक्षा समाज और समा द्वारा अभीसे किया जाना आवश्यक है । परन्तु इसके लिये स्थान स्थान पर विद्यालयोंकी आवश्यकता होगी इसलिये जितने साधन बालक व बालिकाओंकी शिक्षाके लिये इस समय प्राप्त हैं उनका पूरा पूरा उपयोग करते हुए उन सुविधाओंको किस प्रकार बढ़ाया जावे उसका विचार करना चाहिये । हमारी समाज अथवा जातिके लिये शिक्षा प्रणाली देशकी शिक्षा प्रणालीसे पृथक् नहीं हो सकती । मैं कह आया हूँ कि भारतवर्षकी शिक्षा प्रणालीमें एक बड़ा परिवर्तन, राजनैतिक सुधारके साथ होनेके स्पष्ट चिन्ह प्रतीत होते हैं । हमारी समाजको समाजकी विशेष आवश्यकताओंकी ओर ध्यान देकर उनका प्रबन्ध करना है, और वह विशेष आवश्यकताएँ मेरे विचारके अनुसार निम्नलिखित हैं:-

(१) जैनबालकों व बालिकाओं अथवा युवकोंकी धार्मिक शिक्षाका उचित प्रबन्ध ।

(२) निर्धन व अनाथ बालकों व बालिकाओंकी शिक्षा पानेके लिये उचित सहायता ।

(३) उच्च शिक्षाकी ओर जैन युवकोंको अधिकतासे लाना ।

(४) स्त्रीशिक्षाका जैन समुदायमें प्रचार किये जानेके लिये एक बड़ा आन्दोलन अथवा विधवाओंकी शिक्षाका विशेष प्रबन्ध ।

(५) व्यापारिक शिक्षा जो हमारी समाजके लिये विशेष रीतिसे आवश्यक है, उसके लिये उपाय करना, व सुविधाएँ पैदा करनेके लिये ध्यान देना ।

(६) कला व क्रीडा सम्बन्धी शिक्षाके लिये अपने युवकोंको उद्यत करना व उसके लिये सहायता देना ।

समाजका कार्य शिक्षा सम्बन्धी इस प्रकार निर्माणित होनेसे अब हम यह विचार कर सकते हैं कि इनके लिये हमको क्या करना चाहिये । मैं यहाँ पर यह निवेदन कर देना चाहता हूँ कि जैन कॉलेज, जैन हाईस्कूल, जैन विद्यालय जितने भी हैं अथवा नये खोले जायें उनका होना लाभदायक है । परन्तु उनका प्रबन्ध व व उनकी योजना उत्तम रीतिसे होना चाहिये । जैनशिक्षा संस्थाओंमें जहाँ तक धन सके शिक्षा प्रचारकी नसम व नई युक्तियाँ ग्रहण करना चाहिये ।

अब मैं क्रमपूर्वक उन ९ बातों पर आता हूँ कि जिन पर मैंने अभी कहा है कि हमारी समाजको विशेष रीतिसे ध्यान देनेकी आवश्यकता है ।

### १. धार्मिक शिक्षा ।

जैन समाजके विद्यालयोंमें तो धार्मिक शिक्षाका प्रबन्ध होता ही है परन्तु हमको ध्यान देना है उन बालक बालिकाओंकी धार्मिक शिक्षाके उपायों पर कि जो जैन विद्यालयोंके अतिरिक्त दूसरी पाठशालाओंमें पढ़ते हैं, उनके लिये धर्मशिक्षा सम्बन्धी पुस्तकोंका तैयार होना आवश्यक है । यह पुस्तकें श्रेणीवार होनी चाहिये । ऐसी पुस्तकें इस समय तक कुछ तैयार हुई हैं जिनका उपयोग जैनसमाजकी पाठशालाओंमें किया जाता है, परन्तु ऐसी पुस्तकोंके और भी अधिकतर रोचक रूपमें संपादन किये जानेकी

आवश्यकता है। यह कार्य ऐसे ही विद्वान् कर सकते हैं कि जो शिक्षा के कार्यमें निपुण वा धर्म के ज्ञाता हों।

ऐसे केन्द्रों में जहाँ जैन समुदाय की संख्या अच्छी है और जहाँ बालक सरकारी अथवा अन्य पाठशालाओं में पढ़ते हैं वहाँ इस बात का प्रबंध होना चाहिये कि उन पाठशालाओं के प्रबन्धकर्ताओं की आज्ञा प्राप्त कर धार्मिक शिक्षा के लिये मदरसों में जैन विद्वानों द्वारा सभा की ओरसे प्रबंध किया जा सके। धार्मिक शिक्षा का विषय बड़े महत्वका है। मैंने आज आरम्भमें ही इसके संबंधमें बहुत जोर डालकर आप महानुभावों का ध्यान उसपर दिलाया है।

बनारस हिंदू यूनिवर्सिटी में 'जैन किशोरों के प्रोफेसर की आवश्यकता।

धार्मिक शिक्षा का कार्य उत्तम ढंग पर लाने के लिये यह बहुत आवश्यक मालूम होता है, कि शिक्षा के प्रचार अथवा उसकी पद्धतिके निर्माण करने का कार्य एक बड़े शिक्षा के केन्द्रसे हो। बनारस हिंदू यूनिवर्सिटी जो हिन्दू जातिकी महान्वल संस्था है, और जैन समाज हिन्दुओं का आंतरिक अंग है, उससे बढ़कर दूसरा कोई केन्द्र मुझे इस कार्य के लिये अच्छा नहीं प्रतीत होता, और मैं यह विचार नवनापूर्वक आज समस्त जैन समुदाय के समुत्पन्न उपस्थित करता हूँ कि हमारे हिन्दू महाविद्यालयमें समस्त जैनतानाकी ओरसे एक अथवा दो प्रोफेसर

(Chaplain) जैन धर्म (Jain Philosophy) पर लेक्चर देने के लिये स्थाई कोष स्थापित कर नियत रीति में, और वहाँ दो या तीन

जैन धर्म के Research Scholars के लिये फण्डम् भी रखे जावें, उनके कार्य के लिये एक अच्छी Library जैन धर्म ग्रन्थों की रहे, जहाँ जैन धर्म के प्रोफेसर यूनिवर्सिटी में पढ़ने वाले जैनियों को उच्च धार्मिक शिक्षा दे सकेंगे, यह बहुत कुछ कार्य एक उत्तम रीतिसे धार्मिक शिक्षा के प्रचार का अपने आदेशमें करा सकेंगे। इस बड़े व महत्व के कार्य के लिये जैन समुदाय के तीनों सम्प्रदायों के मिलकर काम करने की बड़ी आवश्यकता है, और मैं आशा करता हूँ कि इसपर तीनों सम्प्रदायों के नेता शीघ्र विचार करेंगे।

२. गरीब भ्रमण अथवा बालकों की सहायता।

गरीब बालकों की शिक्षा पाने के लिये सहायता करना, उसके लिये धन एकत्रित करके उसका उपयोग करना, इसपर सभा को विशेष रूपसे ध्यान देना चाहिये। कितने होतुहार लड़के गरीबी के कारण उच्च अथवा उपयोगी शिक्षा के लाभसे वंचित रह जाते हैं। समाज का सबसे बड़ा धन उसके बालक हैं और इसी लिये उनको उन्नतिके पूर्ण अवसर देना सभा की ही कर्तव्य है।

जैन समाज का इस समय देहली में एक अंग भाग्य है, जिसकी व्यवस्था इस समय संतोषजनक नहीं है। मैं सभा का ध्यान उसपर दिश्रवता हूँ, उसके लिये धन की व प्रबन्ध की बड़ी आवश्यकता है।

३. उच्च शिक्षा।

मुझे यह ध्यानमें पड़ा हुआ होता है कि हमारी समाजमें उच्च शिक्षा की ओर क्या ध्यान



दिया जाना चाहिये, नहीं दिया जाता । समाजमें उच्च शिक्षा न होनेसे हम सुधारके कार्योंमें कितने असमर्थ रहते हैं, यह प्रत्यक्ष है । उच्च शिक्षाके लिये देशमें जितनी सुविधाएं हैं, हमारे युवकोंको उनसे पूर्ण लाभ उठाना चाहिये । उच्च शिक्षासे ही एक घनिष्ठ संबंध उच्च व्यापारिक शिक्षा तथा कला कौशल सम्बन्धी शिक्षासे है जिनपर मैं आगे चलकर निवेदन करूंगा ।

४. स्त्री शिक्षाके लिये आन्दोलन ।

स्त्री शिक्षाकी आवश्यकता व लाभ को समाजने स्वीकृत कर लिया है, उसमें अब कोई वाद विवाद नहीं है । समाजके सारे सुधारोंका केन्द्र गृहस्थका घर है, उस घरकी शोभा व पवित्रता स्त्रियों द्वारा है अशिक्षित स्त्रियां समाजके कुरूप हैं । शिक्षित स्त्रियां समाजका आभूषण ब बल होंगी । समाज अपनी गर्दागिरियोंको अशिक्षित रखकर कदापि आगे नहीं बढ़ सकता । दोनों अंग समान अपने अपने कर्तव्यके लिये दक्ष होना चाहिये । जैन धर्मने स्त्रियोंको उच्च स्थान दिया है ।

“ यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते  
तत्र देवताः ”

समाजमें उनके कर्तव्य स्पष्ट हैं । स्त्रियोंकी शिक्षा प्रणालीके विषयमें बहुत कुछ कहा जा सकता है । समय थोड़ा है । मैं केवल संकेत-मात्र यह निवेदन करता हूं कि हमारे देशमें स्त्रियोंकी शिक्षापद्धतिके निर्माणित करनेके लिये ध्यानपूर्वक विचार किया जा रहा है हम इस विषयमें अवश्य पश्चिमीय शिक्षा

पद्धतिको अनुकरण नहीं कर सकते । स्त्रियोंकी उच्च शिक्षाके विषयमें कुछ कहना इस समय भूल होगी समाज इस समय कर्तव्य यह है कि समाजमें उपदेशकों अथवा उपदेशिकाओं द्वारा एक बड़ा आन्दोलन स्त्री शिक्षाके प्रचारका किया जावे व कन्यापाठशालाओंके खोलनेकी ओर पूरा जोर दिया जावे । समाजकी स्थापित की हुई कन्यापाठशालाओं की संख्या बहुत ही कम है । मैं अपने समाज भाइयोंसे अपील करता हूं कि इस कार्यमें देर करना बड़ी भूल होगी ।

विधवाओंकी शिक्षा ।

विधवाओंको उचित शिक्षा दिये जानेका प्रश्न इसी संबंधमें विचारणीय है । इस समय जैन विधवाओंके लिये हमारी समाजके चार “ श्राविका आश्रम ” बम्बई, इन्दौर, देहली, मुरादाबादमें स्थापित हैं, जहां पर विधवाओंको अधिकतर धार्मिक शिक्षा दी जाती है । यह सब नई संस्थाएं हैं । हमारा उद्देश्य ऐसी संस्थाओंसे यह होना चाहिये कि हम अपनी उन यहिनोंको, कि जिनका दुःसाध्यवश जीवनका सहारा संसारसे उठ गया, जीवनके उद्देश्यका मर्म सिखाकर उनका जीवन पवित्र, मंगलमय व समाजके लिये उपयोगी बनावें । वह लोग कि जो धर्मके अटल नियमोंके तत्त्वको न समझ सामाजिक सुधारकी आड़में विधवा विवाहके लिये आन्दोलन करते हैं उनसे जैन समाज कदापि सहानुभूति नहीं कर सकता, इसीलिये जैन समाजकी जिम्मेदारियां विधवाओंका जीवन समाज व जगत सेवाके मार्ग पर पवित्र कल्याणकारी बनानेके लिये और भी अधिक है ।





यदि हमारी समाज इस जिम्मेदारीको अपने ऊपर उचित रीतिसे उठाकर पूरा कर ले तो मेरा बड़ा विश्वास है कि हम विधवा विवाहके प्रश्नको बड़ी सुगमता पूर्वक हलकर सकेंगे । जैन धर्म विवाहको धार्मिक संस्कार मानता है और उसपर इस समय भी बड़ा रीतिसे स्थिर है । विधवाओंके जीवनके लिये उपचारिका, उपदेशिका, शिक्षिका व उनके साथ ही आयेना इत्यादि अनेक उच्च मार्ग खुले हुए हैं ।

### व्यापारिक शिक्षा ।

जैन समुदायका अधिकांश भाग व्यापारिक है, इसलिये व्यापारिक शिक्षाका प्रश्न हमारे आर्थिक साधनोंके लिये बड़े महत्वका है । यह शिक्षा इस समय हमारे युवकोंको हमारी ही दुकानोंद्वारा मिलती है । हमारे यहांके हिसाब किताबकी प्रणाली व व्यापारिक दंग बिल्कुल हमारे मारवाड़ी व दूसरे देश भाइयोंसे मिलता जुलता है । व्यापारिक शिक्षाके लिये हमारी समाजको उनसे मिलजुल कर काम करना लाभदायक होगा । हमारी आवश्यकतानुसार व हमारी वर्तमान पद्धतिकी सन उत्तम यातोंको लेते हुए परिचामीय व्यापारिक शिक्षा पद्धति (Commercial Educational System) को उपयोगी यातोंको हमको अपनी पद्धतिमें शामिल करना होगा । देश देशान्तरीय प्रत्येक व समुद्र पार देशोंमें आर्थिक सिद्धिके लिये पहुंचना अब हमारे लिये आवश्यकताय मनीष होना जाता है । यह बड़े प्रश्न, निपटें हमको अपने देश भाइयोंसे निम्नर काम करना है व

समाजके नेताओं द्वारा तय करना है, समाजको शीघ्र अपने हाथमें लेना चाहिये ।

### कला कौशल सम्यन्धी शिक्षा ।

व्यापारिक शिक्षासे मिलता जुलता ही प्रश्न कला व कौशलकी शिक्षा है । कला व कौशल, व्यापारका एक बड़ा साधन है । इस समय हमारे देशमें अनेक प्रकारके नये कारखाने स्तोलनका उपाय व औद्योगिक उन्नतिके लिये कार्य किया जा रहा है । भारत सरकारने सर टॉमस हार्लेन्डकी अव्यक्ततामें जो औद्योगिक फ़ैमीशन बिठाया था उसने इसी वर्ष अपना कार्य समाप्त करके रिपोर्ट प्रकाशित की है । विज्ञानके उपयोग, खोज व प्रचारसे नये अवसर उपस्थित होंगे । जैन समाजको ऐसे अवसरमें पूरा लाभ उठानेके लिये तैयार होना चाहिये ।

मेरा इसके समबन्धमें अधिक कहना व्यर्थ होगा, नितना ही आप इस पर विचार करेंगे उतना ही अधिक इसका महत्व आपको प्रतीत होगा, हमको अपने ही कारखानोंके लिये योग्य युवक तैयार करनेका प्रयत्न अभीमें करना चाहिये और समा ही समाजको इस कार्यमें मार्ग दिखाना सक्ती है ।

### २-धार्मिक ज्ञानका प्रचार ।

शिक्षा सम्बन्धी कार्यके साथ ही दूसरा विषय हमारे समुदाय धार्मिक ज्ञानके प्रचारका है । जैन धर्मका माहित्य अनेक अपूर्व महयोगे भरा हुआ है पर रहस्य व मिथ्यात्व समुदाय समाजके कान्तके लिये है, हम जैन अनुयायियोंका यह धर्म है कि हम समुदाय समाजकी सेवा उन्हीं उच्च शिक्षाओं



के प्रचार द्वारा करें, कि जो हमको दुनियामें सब पदार्थोंसे अधिक प्रिय हैं। जैनधर्मके उच्च सिद्धान्तोंकी पश्चिमीय अनेक अनुभवी विद्वानोंने मुक्त कंठसे प्रशंसा की है, यदि वे रहस्य व तत्वकी बातें उचित रीतिमें शिक्षित समाजके सन्मुख उपस्थित की जावें तो अवश्य एक बड़ा अर्थ सिद्ध होगा, उसमें हमारा प्रयोजन कदापि यह नहीं होना चाहिये कि लोग जैन धर्मको स्वीकृत कर इस संप्रदायमें सम्मिलित हों। हमारा भाव इस प्रचारके कार्यमें सेवाका भाव है। हम अपने भंडारके खनाने विचारवान समुदायके सन्मुख इसलिये रखनेका यत्न करेंगे कि हमारे उच्च सिद्धान्तोंका प्रभाव उनके द्वारा मनुष्य समाजपर पड़े, धर्म जीवनमें है। संप्रदायमें नहीं। सेवाका प्रयोजन केवल निम्नार्थ सेवा है। इस आदर्शको लेकर जो कार्य प्रचारका होगा उसमें सफलता मिलना आवश्यक है। ऐसे महान कार्यके लिये पहिला साधन विद्वान व सदाचाही प्रचारकोंका तैयार करना है। इस समय यह कार्य मुरना, इन्दौर, हस्तनागपुर व मथुरा ब्रह्मचर्यआश्रम व महाविद्यालयों द्वारा हो रहा है; परन्तु जो विद्वान तैयार किये जा रहे हैं वह एक ही प्रकारके हैं, आवश्यकता इस बात की है कि आज कलकी शिक्षित समाजमें हमारे धर्मके सिद्धान्तोंका प्रचार करनेके लिये ऐसे प्रचारक तैयार किये जायें कि जो पश्चिमीय साहित्यमें प्रवीण हों, और जिनको हमारे धर्मके उच्च सिद्धान्तोंका ज्ञान हो। आरम्भमें इनके लिये सहज उपाय यही है कि जो मने ऊपर निवेदन किया है कि बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटीमें जैन

फिलॉसफीके प्रोफेसरोके लिये व Research scholars व Readers के लिये फौरन ही धनकी योजना कर स्थाई प्रबन्ध किया जावे।

ऊपर बताये हुए जो विद्यालय धार्मिक विद्वानोंके तैयार करनेके लिये स्थापित हैं उनका प्रबंध भी जहाँ तक हो सके इसी बताये हुए आधार पर लाना चाहिये।

सरस्वती भंडार, प्रयोग्य संग्रह व प्रकाशन।

सरस्वती भवनोंकी स्थापना पर गत वर्षोंमें बहुत बल जोर दिया गया है। जैनधर्मका कितना बड़ा साहित्य भंडार इस समय तक गुप्त पड़ा है, और उसका केवल एक कारण हमारी समाजकी उदासीनता है। इस संबंधमें बड़े खोज व कार्यकी आवश्यकता है। हम आशा करते हैं कि हमारे जो प्राचीन ग्रन्थ जर्मनी व अन्य देशोंमें चले गये हैं वह फिर ब्रिटिश सरकारकी द्वारा पीछे इस देशको लानेका यत्न किया जावेगा।

इस समय भारतवर्षमें भी अनेक स्थान पर (मैसो ईडर, नागौर) अनेक प्राचीन ग्रंथ तालोंमें बंद पड़े दीमकका आहार हो रहे हैं, यह ग्रंथ केवल जैन समाजकी ही मिल्किपत (Property) नहीं, किंतु मनुष्य समाजका धन है। इसलिये हमारी समाजको, कि जो उनकी Trustee समझी जाती है, उनके संग्रह करने व उनको नाशसे बचाने तथा उनके प्रकाशन व प्रचारका कार्य तीव्रतासे करना चाहिये। मैं अपील करता हूँ, कि इस कार्यमें हमारे योग्य भ्राता श्रीगुप्त पन्नालालजी धारुलीवाल कलकत्तावालोंको सभासे इस कार्यमें पूर्ण सहायता दी जावेगी,



मुझे यह कहनेमें हर्ष है कि श्रीयुत ऐलक प. जालालजी थहाराज द्वारा एक विशाल सरस्वती भवनकी स्थापना जालरापाटनमें भी इस समय हो रही है और मुझे आशा है कि बहुत कुछ उपयोगी कार्य इसके द्वारा होगा।

धार्मिक ग्रन्थोंकी वृद्ध सूची।

इस समय जैन मंदिरमें धार्मिक ग्रन्थ जो मौजूद हैं उनकी सूचियां मंदिरोंमें ही रहती हैं; मैं अपील करता हूँ कि ममस्त मंदिरोंके ग्रंथोंकी एक वृहत् सूची तय्यार करनेका कार्य ममाको अपने हाथमें लेना चाहिये।

धार्मिक संस्कार।

धार्मिक संस्कारोंके संबंधमें जो प्रभाव समान डालना है उसका आन्दोलन धार्मिक प्रचारकों द्वारा होना चाहिये।

### ३. सामाजिक कुरीतियोंका

निवारण।

बल विवाद।

सभाकी स्थापनाके दिवससे ही सामाजिक कुरीतियोंको मिटानेका प्रथम हाथमें लिया गया था। और हमको यह देखकर हर्ष है कि बहुतनी कुरीतियां मिट गई हैं अथवा मिटती जा रही हैं; परंतु मेरी कुरीतियां कि नितका समाजके भविष्य पर बड़ा हानिहारक अमर पड़ रहा है अब भी हमारी समाजमें उपस्थित है।

सबसे बड़ी हानिहारक बात बलविवाद है। मगध आ गया है कि जब सभाको अपने कानून द्वारा बलविवाद करनेवालोंको दंडनीय ठहराना चाहिये। हम अपने सुप्रसिद्धी शीन्ज्ज अब इसके द्वारा एक दिन भी नहीं सहन कर

सकते। बालविवाहकी रोक दंड द्वारा छोटी उम्रकी विधवाओंकी संख्याको स्वतः कम कर देगी, और एक बड़ी अशुविधा जो इस समय समाजके समने उपस्थित है, निवारण हो जावेगी।

कुरीतिवाद।

वृद्ध अवस्थाके पुरुषोंका छोटी उमरकी कन्याओंके साथ विवाहको समाजने निन्दित टहरा दिया है परंतु उसकी रोकके लिये समाजने कभी कोई शस्त्र पैदा नहीं किया, कोई सुधार उस समय तक नहीं हो सकता जब तक समाजकी पुलिस अपने शस्त्रोंके भय द्वारा समाजके कानूनकी पाबन्दी न कराये।

व्यर्थ व्यय।

व्यर्थ व्ययकी कुरीति हमारी समाजके अनेक दुखोंका एक बड़ा कारण है, नितना धन व्यर्थ रीतिते शादी, मृतकनीमन, व दूसरे अनेक कुमार्गोंमें व्यय होता है, यदि वही धन सभाको समाजके सामूहिक कार्योंके लिये मिल सके तो कोई कठिनाई हमारे सामने न रहे, शादी, मौत, अथवा दूसरे कर्मोंमें व्यय किन्तु सभाके भीतर हो इसके पक्के नियम बनाये जाकर उन पर अमल कराना चाहिये, सभाके बनाये हुए नियमोंको जो न माने उसको समाजमें दंड देना चाहिये।

मेरे धनान्न पुरुष कि नितके पास धन व्यर्थ व्यय करनेको मौजूद है उनमें हमारी अपील है कि वह धन समाजनुसार इनमें दे, यह दान नहीं, सेवा है, जिसमें उनका व समाज दोनोंका कल्याण हो।



## ४. एकपना

समा व समानका जो परम कर्तव्य व उद्देश्य होना चाहिये, अब मैं उस पर आता हूँ, और यह है "जैन समाजकी एकपता"

तीर्थक्षेत्रोंके झगड़े ।

महानुभावो, जिस प्राचीन धर्मके हम अनुयायी हैं, वह हमको दुनिया भरके लिये बान्धवत्वका भाव सिखाता है । हर व्यक्ति कि जो जैनी शब्द द्वारा सम्बोधित किया जाता है उसमें बान्धवत्वकी मात्रा इसीलिये विशेषतासे झलकना चाहिये । यही जैनियोंका वास्तव्य धर्म है । मुझे विश्वास है कि आज इस समाजमें कोई ऐसा व्यक्ति मौजूद नहीं है कि जो इस धर्मका पक्षपाती न हो, परन्तु क्या वह धर्म हमारा कयन मात्रके लिये ही है ? धर्म वही है जिसका प्रभाव अनुयाइयों द्वारा प्रकट हो । क्या हम और हमारी समाजें वास्तवमें उसका पालन कर रहे हैं ? शोक है, नहीं ।

तीर्थक्षेत्र सम्बन्धी जो झगड़े जैन समाजमें प्रचलित हैं, यदि उनका इस समय तक उचित रीतिसे निबटारा नहीं होने पाया, तो उसका एक कारण यही है कि बान्धवत्व भावमें उसको निबटानेका हमारी समाजोंने यत्न नहीं किया जिन तीर्थक्षेत्रों द्वारा जैन समाज शान्तिका मार्ग द्वंद्वी थी वही तीर्थक्षेत्र आज महा अशांतिके कारण बनाये गये हैं । महानुभावो, इस पक्षको परस्पर मेल जोलसे बान्धवत्व भावमें नष्ट निबटारेका यत्न करना चाहिये । जो धन हम अंगडोंमें व्यर्थव्यय कर रहे हैं वही धन समाजके उपयोगी कार्योंका साधन बन सकता

है । तीर्थक्षेत्रोंके झगड़े इस समय जैन समाजमें बान्धवत्व भावके विकासके बाधक हैं, इसीलिये इनकी शीघ्र तय करनेकी आवश्यकता है ।

पंचायतें ।

आपसके झगड़ोंके निपटानेके लिये नातीय व स्थानीय पंचायतोंकी स्थापना पर पिछले अधिवेशनमें जोर दिया गया था; परन्तु इस समय तक कोई उन्नति उस कार्यमें नहीं हुई । मेरा विचार है कि ऐसी पंचायतोंकी स्थापनाके लिये समाजको उत्तेजन देना चाहिये, इस सम्बन्धमें खंडेलवाल महाराष्ट्र जैन समाज व नागपुर प्रांतीय समाजों जो कार्य कर दिया है, उससे हम शिक्षा ले सकते हैं ।

महानुभावो, मुझे भय है कि मैं आपका बहुत समय ले चुका हूँ मैंने यत्न किया है कि ऐसे महत्वके अथसर पर जो प्रश्न विचारणीय हैं उनको संक्षिप्त किन्तु स्पष्ट रूपसे आपके सामने उपस्थित करूँ ।

पटेल विल ।

एक और महत्वका विषय, जिसपर आज इस स्थानसे जैन समाजकी ओरसे स्पष्ट शब्दोंमें विचार प्रकट किया जाना आवश्यक है वह है "पटेलका विवाह विल ।" जैन समाज अपने धार्मिक सिद्धांतोंके आधार पर इस विलका विरोधी है, और हमारा कर्तव्य होगा कि हम इस संघर्षमें और दूसरी हिन्दू जातियोंके साथ इस विलका विरोध करें ।

जैन समाचारपत्रोंके सम्पादकोंसे अपील

जैन समाजके समाचार पत्रोंके सम्पादकोंसे मैं एक विनयपूर्वक अपील करता हूँ, समाजके



तिके कार्योंमें समाचार, पत्रोंका आश्रय दूँदना पड़ता है, हमारे समाजके समाचार पत्र जब हमारी समाजोके प्रोगामके अनुसार विषयोंपर जोर देंगे और बार बार उनपर लेखनी द्वारा समाजको चेतावनी देंगे तभी कुछ कार्य होना संभव है। मुझे आशा है कि मेरी इस प्रार्थना पर सम्पादक महाशय अवश्य ध्यान देंगे।

महानुमानो, अब मैं इस भाषणके अंतमें फिर एक बार आपकी उस असीम कृपाके लिये व मानके लिये जो आपने मुझे प्रदान किया है सविनय धन्यवाद प्रकट करता हूँ। और अपने बंधुओं तथा वहिनोसे हाथ जोड़कर प्रार्थना करता हूँ कि "जैन धर्म व जैन समाज" का भविष्य तुम्हारा है; और तुम्हारे ही हाथमें है, उसको प्रभावशाली बनानेका यत्न करो। "जैन धर्म" का प्रभाव यदि दुनिया पर डालना हो, तो वह हमारे आचरण द्वारा पड़ेगा। वह प्रभाव सिद्धांतोंका टोक बनानेसे नहीं पड़ सकता जो मुख्य अर्थात् सही अपनेको 'जैन' कहने में चाहें उसी समय जैनी भोजेश जीव का

## देवकी चरित्र ।

(लेखक-कूरचन्द अग्रवाल, मुरार-आडवय)

आजकल होलीकी छुट्टियाँ हैं इसलिये बाजारमें खूब चहल पहल रहती है। भीड़के घमसानके कारण बाजारोंके दृश्य सुहावने देख पड़ते हैं। बार दोस्तोंसे मिलता जुलता और बाजारोंमें घूमता हुआ मैं ठीक साढ़े आठ बजे अपने घर वापिस आया। घरमें प्रवेश करते ही मेरे नौकर लल्लूने मुझे एक बात कहकर आश्चर्यमें डाल दिया। उस समय मैंने भी कुछ ध्यान न दिया और लल्लूके साथ उलटे पावों लौट गया। मार्गके बाजार और गलियाँ खंखता में बड़े बाजारमें पहुँचा। वहाँ मुझे मेरे मित्र पंडितजी मिले। उन्होंने मुझसे प्रश्न किया कि मैं कहाँ जा रहा था? मैंने उनसे कह दिया कि घरपर कोई व्यक्ति भागता हुआ कहा गया है कि मेरे मित्रगंडलके मित्रोंमें कुछ झगड़ा हो गया है वहीं पर मुझे बुलाया है। यदि मुझने और उस व्यक्तिसे मुंह पर मुंह बात होती तो मैं सत्यासत्यका विचार करता। इस प्रसंग यदि मुझे आश्चर्य हुआ तो भी चुपचाप चला आया।

रहस्यका पता लगेगा । मैंने व्यग्र होकर पूछा, "तब क्या मामला कुछ और है ? उसने अवश्य कहकर कहना आरंभ किया—“लगभग आधा घंटा हुआ जिस समय मेरे घर पर आकर किसीने आवाज दी कि तुम्हें बाबूजीके यहां बुलाया है । वस इतना कहकर वह चला गया । मैं घरके भीतर था इस कारण न देख सका वह कौन था और क्यों आया था । उनी समय मैं बाबूजीके यहां पहुंचा । बाबूजी अपने कमरमें बैठे हुए एकांतमें किसी गहन विषयपर विचार कर रहे थे । मेरे प्रवेश करने और बुलानेका कारण पूछने पर वे दृष्टिसे कुछ हुए मैं चुपचाप वहांसे लौटा । सदर द्वारपर आते ही एक अपने मित्रसे मैंने यही कथा कही तब उसने कहा यह यही देवकी है जिसने सहलौं घरोंके स्त्री पुरुषोंको नर्कका मार्ग दिखाया है । इतना सुनते ही मेरे शरीरमें बिजली दौड़ गई और उसकी खोजमें निकल पड़ा, दूती वीच आप मिल गये । बोलिये अब क्या करना चाहिये ? मेरी इच्छा तो यही है कि आज उसे पकड़कर उसको भरपूर दंड देना चाहिये ताकि फिर कभी वह ऐसा करनेका साहस न करे और उसे कुछ शिक्षा लग जाय । ”

पंडितजीका और मेरा परामर्श हो गया । मेरे अनुरोध करनेपर प्रथम हम लोग मित्र मंडलमें गये । वहांका दरवार गरम था । हम दोनोंके प्रवेश करते ही वे लोग सब एकादम हंस पड़े और कुछ आपसमें बातें करने लगे जिसको हम दोनों न समझ सके, अलवत्ता उन बातोंका हमने यही सार निकाला कि

देवकीको मगदाने भेजमें हमारे घर भेजनेकी उन्होंने भी चरखत थी; क्योंकि उनमेंसे दो एक ऐसे भी थे जो उसके (देवकीके) परम भक्त थे । यद्यपि उस समय उन लोगोंने आज्ञा भी किया, किंतु हम लोग न ठहरे उसकी तलाशमें चल दिये । समय भी ठीक ग्यारहका हो गया ।

पाठको ! इस समय जब कि मैं एक रहस्यका भंडा फोड़ने चला हूं तो आपसे कुछ भी न छिपाऊंगा और यहां यह भी कतल देना ठीक समझता हूं कि कुछ दिवससे मैं एक मामलेकी तलाशमें हूं । मैं सी० आई० डी० का एक इन्स्पेक्टर हूं और मुझे गुप्त अशुओंका पता लगानेका काम सौंपा गया है । मेरा सी० आई० डी० का कार्य करना किसी पर विदित नहीं । अपने स्वार्थके लिये न मैं किसी पर अत्याचार करता हूं और न अनाचार; यही कारण है कि सब लोग मुझसे प्रसन्न रहते हैं और मेरे कार्यसे अनभिज्ञ हैं । यहां पर व्यभिचार बड़ चला है । कुमारियोंके कौमार नष्ट होनेको बात जहां तहां सुनी जाती है और कुमारियां भगा ले जाई जाती हैं । इस कार्यके लिये मेरी मातृदत्तीमें कई आशुमी दिये गये हैं ।

मैं देवकीको केवल एक व्यभिचारिणी स्त्री समझता था इसके अतिरिक्त कुछ नहीं, किंतु मुझे बादको ज्ञात हुआ वह बड़ी साहसी शीषण स्त्री है । उसने बड़े २ अनर्थ किये हैं ।

समय अधिक होनेसे पंडितजी अपने घरको चले गये, किंतु हम लोग बालकी खाल निकासनेवाले जासूस हमें जैन कहाँ । कुछ समय तक मैं विचार करता रहा पश्चात् सदर



बानारसमें मैंने एक युवाको लम्बी डगोंसे जाते हुए देखा । मैंने उसका पीछा करना उचित न समझा । तुरंत ही एक सिपाहीके हाथमें रुपया दे उसके कानमें फट दिया कि वह किसी तरकीबसे उस आदमीको शहरके बाहर लाल कोठीमें ले आवे ।

मैं अकेला ही गलियां लांघकर नदीपर पहुंचा । नदी बेगसे बह रही थी । नाव खेना मैं जानता हूं किंतु निना मांझीके पूछे उसकी नाव कैसे खोलता ? लाल कोठी नदी पार है । मैंने मांझीको जगाया और नाव तैयार कराई । इसी बीच दो युवा पुरुष आ पहुंचे । वे भी नदी पार जाना चाहते थे । पूरी नावका किराया बांठ आना मैंने मांझीको दिया । उनमेंसे एकने आवश्यक कार्यवश उस पार जानेकी इच्छासे उसी नावमें बैठना चाहा; क्योंकि यहाँपर केवल एक ही नाव थी । मांझी कह पया सकता था उन दोनोंको बैठाना मेरी इच्छापर निर्भर था । मुझे उसकी दीनता पर कृपा आ गई और उनको बैठा लिया । मार्गमें मेरी उनसे कुछ बातचीत न हुई । केवल मैंने इतना ही पूछा कि वे कहाँ जाना चाहते हैं !

उन्होंने कहा—लाल कोठीके जहाजमें सम्मिलित होने ।

प्रश्नात् उन्होंने मुझमें पूछा कि मैं कहाँ जाना चाहता हूं ! मेरा भी वही उत्तर था । उन दोनोंमेंसे एक कुछ घपड़ाया सा जान पड़ता था मेरा उत्तर सुन उसे धीरम हुआ ।

इस समय प्रचंड हवा चल रही थी इससे मांझीका मन और भी बढ़ गया था इसी लिये

मांझी नावको तिरछी खे रहा था । लगभग आधे घंटेमें हम लोग उस पार हुए और लाल कोठीकी पग डंडीपर चलने लगे ।

पन्द्रह मिनट चलनेपर वह मार्ग समाप्त हुआ और हम लोग सिंहद्वारसे कोठीमें पहुँचे । वहाँपर बहुत कान लगानेपर भी किसी प्रकारकी गाने बगानेकी ध्वनि न सुनाई देनेपर उनमेंसे एक युवाके पैर खिसकते थे और उसका संदेह बढ़ता जाता था ।

इन दोनों अपरिचितोंके परिचयकी पाठकी आपकी बड़ी चिंता होगी । हम भी आपको कष्ट न देकर यहाँपर आपको बतालाये देते हैं । इन दोनोंमेंसे एक वह कानिस्टविल है जिसको मैंने रुपया दिया था । दूसरा वही व्यक्ति है जिसको लानेके लिये उस कानिस्टविलसे कहा था । सब कुछ जानते हुए भी नावमें बैठे हुए अथवा लालकोठीकी ओर चलते हुए मैंने उससे बात न की; क्योंकि मुझे इस बातका पूरा ध्यान था कि कहीं बड़ मेरी कार्यवाहीको समझ न ले और कहीं उसके जीमें यह संशेद न हो जाय कि मैंने उसे पहचान लिया है । अंधेरी रात्रि होनेपर भी बड़ मेरी ओर पीठ करि बैठा था ।

बार बार वह युवा उस कानिस्टविलसे अपने संदेहकी बात कहता था । कानिस्टविल बगलर उसे आश्वासन दे रहा था । बागलर ठीक बीचो बीच कोठी पर पहुंचते ही वह युवा बहुत बिगड़ा और उस कानिस्टविलको लताड़कर जाना प्रभाव जमाकर भागना चाहता था उसी समय मैं उनके पास आ पहुँचा और मैंने



कहा इस कार्यमें वेचारे कानिस्टविलका कोई दोष नहीं । दोष मेरा है ।

युवा—यहां परदेशमें मेरा अपना पराया कोई नहीं । आपको इस प्रकार मुझे बोखा देनेसे क्या लाभ ?

मैं—इस प्रकार आपका छुटकारा नहीं हो सकता ।

युवा—तब किस प्रकार छुटकारा हो सकता है ?

मैं—इस प्रकार—जब तुम अपनी जीवनी आदिसे अंत तक मुझे सुनाओ । मुझे मालूम हुआ है कि तुम्हारी जीवनीमें बड़े रहस्य है ।

युवा—कैसी जीवनी ? क्या बात ?

मैं—मेरे सामने तुम्हारी एक चाल भी काम न आयी ।

इतना कहकर मैंने जेनसे एक विस्तौल निकाल उसके माथे पर लगा दी और कहा “ या तो अपना चरित्र बताओ अन्यथा अभी तुझे यमपुर भेजकर अपना हृदय शीतल करूंगा । ”

वह पत्थरकी भांति सन्न खड़ा रहा मुखसे धोल न निकला ।

उसे मौन देख फिर मैंने उससे कहा यदि वह अपना वृत्तांत मुझे न बतलायगा तो मैं उसके प्राण लिये बिना कदापि न छोड़ूंगा । वह थरथर कांपने लगा और उसपर मेरा प्रभाव जम गया । उसके नेत्रोंसे आंसुओकी धारा बह चली । वह बारम्बार मुझसे अपने छुटकारेकी प्रार्थना करता था, किंतु मैंने एकपर कान नहीं दिया ।

अंत वह ईश्वरसे प्रार्थना करने लगा और अपनी प्राणीय भृतिगर्भा नादकर पश्चात्ताप करने

लगा । आध घंटा इसी प्रकार बीता जब उसका चित्त शांत हुआ वह बोला—बाबूजी ! क्यों वृथा उस मेरे पापकर्मको सुनते हो ? मेरी प्रार्थना है कि अब आप अपनी गोलीका शिकार बनायें अथवा अथाह नदीमें मुझे ढकेल दें, कारण अब मैं संसारमें अधिक जीवित रहना नहीं चाहता ।

नहीं, नहीं, ऐसा नहीं । मैं यह उचित समझता हूं कि प्रथमतः अपनी कथा कहो और मुझे आज्ञा दो मैं उसे छपाकर संसारको बतला दूं ताकि कभी कोई तुम्हारी भांति पापमार्गमें सुखकी आशा न करे ।

इस समय वह संसारसे विरक्त हो गया था उसके विचार शुद्ध हो गये थे । वह चाहता था कि नारी जातिको मेरी जैसी पातकी कुल फलकनी, पति हत्यारीसे संसारको कुछ भी शिक्षा मिले तो मैं नरकमें पड़ी हुई भी प्रसन्न रहूंगी । पश्चात् उसने इस प्रकार कहना आरंभ किया:—

बाबूजी ! यह तो आप जानते ही हैं कि मैं जातिकी मारवाड़ी नाइन हूं । मेरा नाम देवकी है । इस समय मेरा मन विरक्त हो रहा है और एक क्षण भी अपना कर्त्तकी सुख संसारको दिखाना नहीं चाहती । इस समय एक २ करके पिछले पाप कर्म मेरे नेत्रोंके सामने आ आकर मुझे भयभीत कर रहे हैं । मेरी इच्छा यही है कि शीघ्र ही अपनी जीवन लीला समाप्त करूं । मैं नहीं समझती कोई दंड मेरे पापोंके लिये उपयुक्त हो सकता है सुखके भ्रमों आकर मैंने बड़े २ अनर्थ किये





हैं किंतु कहीं भी सुख नहीं पाया इतना फिर भी कहती हूं कि पुरुष जाति यदि अपना कर्तव्य निभावे तो स्त्रियां इतनी दुष्चरित्रा न हों।

मैं जिस समय पांच वर्षकी थी उसी समयसे जन्मानोंके नवयुवकों तथा अड़ोसी पड़ोसियोंकी आंखोंमें खटकने लगी। वे मुझे प्यार भी करते थे और घृण्यकर भी देखा करते थे। मैं उन दिनों क्या समझती थी जो कोई मुझे प्यार करता और पैसे देता उसीकी गोदमें बैठती। दिन दिन मेरा सौंदर्य बढ़ने लगा छोटे बड़े सब ही की दृष्टि मुझपर पड़ने लगी।

हमारे यहांकी रीतिके अनुसार नित्य जन्मानोंके यहां आने जानेका काम ठहरा। नाई ब्राह्मणोंका वही परदा ही नहीं होता। बेरोकटोक हम आते जाते हैं। सेठ लोग अपने घरकी मुधि भी नहीं लेते अलबत्ता इधर उधर लार टपकाते फिरते हैं।

मेरी मांकी अवस्था इस समय २० वर्षकी है लेकिन उसका शरीर अब भी ऐसा गठा हुआ और उसकी गुन्दरतामें नामकी भी बल नहीं आया है। वह अब भी पौड्या वर्षीया सुवनी जान पड़ती है। जब वह नया गिलासे भ्रंगार करके बेप मूषण पहनती है उस समय सेठकी सेठानी बचती है। बहुतसे युवा उसे सेठानी ही कहा करते हैं। उसके सेठानी करनेका भी कारण है।

“कारण क्या है और उसका नाम क्या है ?” मैंने पूछा।

“इस समय मैं आपसे कोई भी बात छिपान रखूंगी। वैश्य जातिके कई सेठजी उसकी घातमें लगे रहते हैं, किंतु वह आज सेठ राधे-लालकी अंकशायिनी हो रही है। उसका नाम गुलाबो है। राधेलाल समझते हैं कि वह उनके प्रेमपाशमें बंधी थी किंतु उनका ऐसा सोचना भ्रम था। उसने अपना ध्येय रुपया कमाया और चैन करना बना रक्खा है”

“बायूजी ! जिस प्रकार मेरी माता सेठोंकी सेठानी बन रही है उसी प्रकार मेरा भाई फिदना जो नाचने गानेमें प्रवीण है और नाचके समाशमें सदैव नायिका अथवा नृत्यकका पार्ट लेता है, वह एक अच्छा एक्टर है, उसपर सहस्रों सेठानियां मुग्ध रहती हैं। वह भी पट्टा चैन करता है।

व्यभिचारिणी माताकी अधीनता और छत्रछायामें रहकर मैं कब सदाचारिणी रह सकती थी। इन बातका तो आप सहजमें ही अनुमान कर सकते हैं। मेरे लिये लोग व्याकुल होने लगे। इधर मैं अपनी माताकी चाल ढाल, मोली पानी, नान और नखरोंका स्वतः ही अनुकरण करने लगी। बहुत दिन तक मेरी मांने सेठ राधेलालको डाका, हांमा पट्टी भी दी। अंतमें एक दिन मुझे बेग पित्राई गई। जब मैं भंगके ननेमें घूर हो गई उस समय मुझे सेठनोंके कमरेमें ले जाकर मुला दिया। गया उन्नी दिनसे मेरी नींदनयाग दृग्गी और दह बची।

यदि मैं नायक हूं तो क्या हूँ। अंतमें मार-यादग हो हूँ। मायावादी वैश्योंके यहां बाल-विशदना सोचना दृश्य। हम लोगोंका मंत्री

वैश्योंसे ही अधिक रहता है इसी कारण हमारी रीति रिवाजमें कोई भेदभाव नहीं, वस मेरी १२ वर्षकी अवस्थामें पामके गान्तिपुर नगर-के एक नाईके बालकसे सगाई कर दी गई । आयुमें वह बालक मुझसे अधिक छोटा नहीं केवल एक ही वर्ष छोटा था, किंतु गेरी-अवस्थके मामले वह निरा बालक था । सुख और चैनसे रहने, खूब खानेको मिलने और स्त्रीजातिके स्वभाविक गुणके अनुसार मेरे उस अवस्थामें भी पूरी तबी थी । इसपर किसीने ध्यान नहीं दिया । एक तो माताकी संगतसे मैं दूसरे ही काममें फंस गई इसपर बालक पतिका सहवास; मैं किस प्रकार धैर्य धरती और अपनी बढ़ती हुई जवाग्रीकी उमंगोंको रोकती । मुझमें बेसी सामर्थ्य कहां थी । उस समय उन पाप कर्मों ही मैंने सुख सगञ्ज रखा था ।

(अपूर्ण ।)



विश्व-वन्द्य ! विश्वज्ञ ! विश्व-मित्रता-अगाध हो,  
कृपासािन्धु ! कृपातु ! दीन-जनमनाधार हो,  
दीनदयालु ! अगम्य ! परात्पर ! हृदय-सार हो,  
अमित पापना पुत्र भस्म हो, जले, छार हो ।  
मृत्यु सुग्ध पर सन नलें, सत्य धर्म स्वीकार हो,  
चहुं दिशि उदत अग्र प्रभो ! यही जैन संसार हो ।

कन्हैयालाल जैन

## वाक्यामृत ।

मैं जिसका समर्थन करता हूं वह ऐसे स्वा-  
मित्ववादका एक प्रकार—यदि उसे सर्व स्वामित्व  
वाद कहा जाय तो—यह है कि जिससे मनुष्य  
यह धारणा करे कि वह स्वार्थ और आलस्य  
पूर्ण एका-तमें अन्य सर्वसे पृथक् रह ही नहीं  
सकता—किन्तु उसे पड़ोसियों और परमात्माके  
प्रति कर्तव्य पालन करना है और उनकी ओर  
दुर्लक्ष करनेसे अथवा उनको न पालन करनेसे  
उसको ऐसा दण्ड भोगना पड़ेगा जो दण्ड  
मनुष्योंके बनाये हुए कानूनोंके दण्डसे भी  
अधिक कठोर है ।

ए. सि. वेन्सन

\* \* \* \* \*  
अन्य कार्योंकी अपेक्षा दान मनुष्योंके चरि-  
त्रको अधिक उज्ज्वल करना है ।

साउथ.

\* \* \* \* \*  
नम रखो । स्वयं अपने लिये ही नहीं किंतु  
आकाशमें भ्रमण करनेवाले सूर्यके समान मनुष्य  
मात्रको अपना भाई समझकर सर्वेकी सेवा करो ।

शिल्लर

\* \* \* \* \*  
अपनी की हुई सेवामें चारवार स्मरण कराना  
यह सेवाका बदला लेनेके बराबर ही है ।

रोसिन

\* \* \* \* \*  
दयामें अनिवार्य जादूगरी शक्ति है । अन्य  
सब योग्यताएं दयाहीन अपेक्षा हीन बलवाली हैं ।  
दया उम्र कोपको शान्त करती है । चंचल



प्रेमको स्थिर बनानी है । सौंदर्यसे हृदय मोहिन होता है किन्तु दया प्रेमकी पशुवृत्तिको उन्नत बनाती है ।

### रॉचेस्टर

\* \* \* \*

द्रव्यका नहीं तो हृदयका किंचित् दान देना चाहिये ।

### पोस्क्वीयर क्वेन्सल

\* \* \* \*

हममें हो मके उतनी, सर्व प्रकार, सर्व मनुष्योंकी, सर्वत्र, हर समय, पूर्ण शान्तिसे और हो सके वहां तक कल्याण करो

### फ्रांसिस पिगु

\* \* \* \*

प्रेमपूर्वक दिया गया छोटेमे छोटा दान भी महान दान है

### फिलीमैन



### सुधार-उपचार



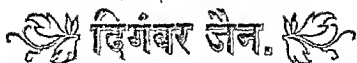
क्या प्रियवर ! यह ही है नर-कर्तव्य निमाना ?  
क्या यद्व्यगता यही-सफल निम जन्म बनाता ?  
मानव जीवनका उद्देश यही प्रियवर है ?  
यदा उन्नति पथ हुआ फगी गौरी प्रमत्त है ?  
पारम्परिक विमोक्ष ही निम उन्नति चाहते ?  
हेपायक कर्तव्य कर नमोदेन निचाहते ? ॥  
जो दुनको कर परह जाना कोई चदे,  
प्रेम शक्तिही गीनि नीमिने कहीं मगने ।  
कर शिवालोचना नातिके रोप दिमा ।

सामाजिक कुरीतियोंको बलहीन बनाए ।  
उसे आप अपना अशुभ चिन्तक क्यों है मानने ?  
उसके सन्तोदेशको आप न क्यों पहिचानने ? ॥  
कर सहायता उमे सहायक क्यों न बनाने ?  
उन्नति गतिके मार्ग कहां क्यों भूले जाते ?  
बिन कारणके कार्य मिद्ध क्या हो सकता है ?  
बिना किए उपचार रोग क्या खो सकता है ?  
तब अपने उपकारके द्वार न क्यों विस्तृत करो ?  
दिह । दृष्टिसे अम्मुदयका पथ निरस्तो प्रियवरो ॥  
दिन दिन नूतन सम्प्रदाय बन रही यहां है,  
मिथ प्रेमकी झलक दीखती नहीं यहां है ।  
होकर टुकड़े भिन्न जैन नित छिन्न हो रहा,  
चहुंदिशि भीषण परन ज्वाल है प्रज्वलित महा ।  
उन्नत हो यदि एक तब जल उठता है दूसरा,  
सूख गई हा ! भूमि अथ शम्य शामला उर्वरा ॥  
नरकर उन्नत एक-दूसरा गतिमाण हो,  
उन्नति परकी उस द्वेषीके लिए बाण हो ।  
उत्साहित तो दूर लगाते पथमें कष्टक,  
हैं ते हैं वे मय्य नाति-उन्नति-हित बाधक ।  
नलने हैं वे देगकर परिश्रान्ति अविरामको ।  
नाम चाहते हैं मनो नहीं चाहते शानको ॥  
तनकर यह सब द्वेषभाव एकना धार लो,  
विषम मनज आतङ्ग अङ्गमें नातिमार लो ।  
नाति कुगीनि विनाशक कर्ममें प्रिय ! कुठा शो ।  
मानानिक उत्थान मार उरमें विचार लो ॥  
मग्गन्दष्टि यनो जगर नर मरना डग्गान हो,  
नगर मनु पेठो मग्गानिन पनगरी नग हो ।

कन्हैयालाल जैन



॥ धावीरगान नमः ॥



# THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्योगैश्च तत्रै सत्योपदेशैस्तुगवेषणाभि ।  
स रोषयत्प्रमिद प्रवर्तताम्, दिगम्बर जैन समान मात्रम् ॥

वर्ष १२ जै

वार सन् २४४० ज्येष्ठ विक्रम सं० १९७६.

अंक ८



किसको यह जानकर शोक न होगा कि श्रीमती बम्बई दि० जन हमारा शोक । प्रातिक समाके सुयोग्य महामन्त्र बम्बईके हीराचंद गुमानजी जन बोर्डिंग, हीराग, ईडर पाटगाला, चोरमद लम्बोरी आदिने एक गृही और महामन्त्र, अहमदाबाद बोर्डिंगके सेक्रेटरी श्रीयुत लम्बोई परमानन्ददास पारिख L C E का गत २ जूनको हृदयकी गति अकस्मात् रुक जानेसे स्वर्गनाम ले गया । आपका जन्म बोरसद ग्राम जिला अहमदाबाद मेवाडा जालिम हुआ था । नातिमें आपके कुम्भको और आपका बहुत मान था । इस समय आप बम्बईमें इन्कमटेक्स डिप्टी क्लेस्टाके पद पर थे और भारी वेतन पाते थे । आपने L C E की इजिनपरिक्छी उच्च परीक्षा पास की थी और बम्बईकी अच्छी योग्यता थी । आपने कुछ दिन तक इन्कमटेक्स

कलेक्टरके स्थान पर भी कार्य किया था । और कार्य निपणता और प्रमाणिततासे जयमान्य और लोकमान्य दोनों हो गये थे । सन् १०म आप अपने छोटे भाईको लेकर व्यापारार्थ जर्मनी भी गये थे और कुछ दिन तक वहा आपकी कोठी रही थी । वहासे लौट कर आप रतलाम दि० जैन बोर्डिंगके मन्त्री और बम्बई दि० जैन प्रातिक समाके सहकारी महामन्त्री भी रहे । इस समय आप एक मामकी दुष्टी लेकर वायु परिवर्तनार्थ आवू चले गये थे वहासे लौटते समय अहमदाबादके निकट डागरवा स्टेशनके पास रेलमें ही आपके प्राण पखेरू डड गये । पाठकों यह जान कर और भी दुःख होगा कि लल्लुभाईकी वर्तमान पत्नी हमारे ज्येष्ठ सहोदर जीवनलालजीकी ज्येष्ठ पुत्री है जिसका विवाह हुए अभी केवल पाच ही मास हुए थे । कर्मोंकी लीला विचित है । जिस बातका स्वप्नमें भी म्याल न था वह आखोंके सामने आया । आप परोपकारके कार्योंमें बहुत भाग लेते थे । जो मनुष्य इनके पास किसी कार्यके लिये आता उसका कार्य ये कर देते थे । आपके



उद्योगसे बोरसद ग्राममें अनेक सार्वजनिक कार्य हुए थे । ता० २ जूनको जोगमठका सब कार-वार भी बन्द रहा था ।

माई लहलुभाईटे अकामांत स्वर्गवाससे जो हानि जैन समाजकी हुई है इसकी शीघ्र पूर्ति न हो सकेगी, और जो शोक उनके कुटुंबियों पर आ पड़ा है वह लिखे नहीं लिखे जाता । आपके एक बड़े भाई और एक छोटे भाई हैं । पहिली पत्नीसे एक पुत्र और एक पुत्री भी है ।

+ + +

समयने बिचित्र पलटा खाया है । लोगोंकी बुद्धिमें भी परिवर्तन हो सर्वत्र क्षोभ । गया है । जो वस्तु किसी समय लोग मस्तकसे

लगाते थे, आज वही पैंतोंको छूती दिखाई पड़ती है, जिनको लोग पूज्य मानते थे उन पर उनका पूज्य भाव नहीं रहा; जिनकी प्रशंसा करते हुए उनका पेट फूल जाता था उनको भी यहा तट्टा कहनेमें जिज्ञा कुपित नही होती । संसारमें एक प्रकारकी सम्मताही दुन्दभी बन रही है जो अपना घटाटोप सारे संसार पर छाये हुए है, लोग उस सम्मताके पैर नमने हैं और यहां वह नहीं है उसको लानेके लिये नवीन आसमानके कुलवे एक दिये टालते हैं । उस सम्मताकी ऐसी ज्योति है जिससे प्रजापति माथ अम्बर भी है, पर सम्मताभिमानों और उस सम्मताके धर्मोंको वह अवनति रूप-कुपर्विगम रूप-अम्बर नहीं दिखाने देता । हममें पश्यन लोग उम्मे सिरि सारे प्रकारके कार्य सम्मतासुख सम्मत्तने केने हैं । भारतवर्ष धर्म प्रमाण देन है अतः नाना

प्रकारके धर्मोंका होना भी संभव है । और उसके साथ ही वर्ण और जाति भेदका होना भी अनिवार्य है । पर नवीन सम्मताके अभिमानियोंको यह दृष्ट नहीं, अतः वे इसके दूर करने-भेदोंके मिटानेका उद्योग किया करते हैं । अनेक नये धर्मोंकी स्थापना हुई, धर्मोंमें परिवर्तन हुए । जैनधर्म और जैन समाजमें भी परिवर्तन करने-वाले पैदा हुए । अब तक तो दिगम्बर समाजमें ऐसे विचारवालोंकी धूम दिखाई पड़ती थी पर अब श्वेताम्बर समाजमें भी एक २ करके इनकी उत्पत्ति होती दिखाई पड़ रही है । वर्तमानमें श्वेताम्बर समाजमें पं० बहेचरदासके भाषणोंसे क्षोभ फैला हुआ दिखाई पड़ता है । पंडितजीके सिद्धान्तसे देवद्रव्य कोई वस्तु ही नहीं और जैनधर्म एवं जैन समाजमें परिवर्तन होना चाहिए आदि ।

x x x

उदयपुर मेवाड़में गत ज्येष्ठ वंदी २ से ७ तक दिह्मिके लाला नैमित्तिक अधि- सोहनलालजीके सभापति-वेशन । त्वमें भारतवर्षीय दि०

जैन महासभा और मा-लवा प्रांतिक दिगम्बर जैन सभाके नैमित्तिक अधिवेशन सफलताके साथ हो गये । अधिवेशनमें न्यायाचार्य पं० भाजिकानंदजी, ब्र० शीतलप्रसादजी, पं० नृपचंदजी, ब्र० कुंवर दिग्विजयसिंहजी, पं० पद्मचंद गजपदेन्द्र, पं० गौरीदासजी, पं० नन्दनगलजी, पं० शम्भुदासजी दासी, ब्र० ज्ञानानन्दजी, बा० गुरजनलजी आदि विद्वान और निवेद्य मुनि नन्दसागरजी, ऐलक त्यागी पद लालजी महाराज आदि १२ त्यागी



श्रावक उपस्थित थे। समाप्त उक्त विद्वानोंके सिवाय, अनेक विद्वान रायबहादुर पं० गोरी-शंकर झा और कन्हैयालाल मेहताके क्रमसे जैनधर्मके प्राचीनत्व और मनुष्य कर्तव्य पर प्रभावशाली एवं सारगर्भित भाषण हुए। उदयपुरमें ध्वज्वय अग्रवाल बहुत हैं जो जैनियोंसे बहुत प्रेम रखते हैं। इस उत्सव पर भी उन्होंने सर्व प्रकारसे प्रबन्ध करनेमें उद्योग किया। किसी प्रकारका जैन और अजैनमें मनमुटाव न था। एक दिन कुंवर महाराणा साहब भी मंडफ देखने पधारे थे। उदयपुरकी सेठ मोतीचंद प्रेमचन्द दि० जैन पाठशालाके लिये अपील किये जाने पर करीब ८१०० की प्राप्ति हुई। सभापतिने भी उपदेशक फंडमें ४०० दिये। जेठ बढी ७ को ऐलक पन्नालालजीका केशलोच हुआ। इसी समय एक जैनसंघी संघकी स्थापना हुई। संघपति मुनि चन्द्रसागरजी और उपसंघपति ऐलक पन्नालालजी हैं। यह उत्सव मुनि महाराज व त्यागियों व जैन अजैनके परस्पर प्रेमके कारण एक स्मारक रहेगा।

संयुक्त सभाके अधिवेशनमें निम्नलिखित आशयके प्रस्ताव पास हुए:-

१-मा० दि० जैन महासभाके सभापति सर सेठ हुकमचन्दजीने जो सभापतिके कार्यसे स्तीफा भेजा है वह अस्वीकार किया गया और कार्य करते रहनेकी प्रार्थना की गई।

२-कोटा नरेशने जो जैन मूर्तियोंको देनेकी उद्गरता दिखाई उसके लिये धन्यवाद।

३-मालियं नरेशने महुनगर औपचारिक

तीस रुपये मासिक सहायता प्रदान की है तदर्थ धन्यवाद दिया गया।

४-लाडा जेवूप्रसादजीको अवतक मंत्रीका कार्य योग्यतापूर्वक करते रहनेके लिये धन्यवाद।

५-महा सभाकी नियमावली संशोधन करनेके लिये एक कमेटी बनाई जाय।

६-उदयपुरकी जैन पाठशाला दृढ़ की जाय और प्रान्तीय छात्रोंके लिये एक छात्रालय खोला जाय और प्रबन्धके लिये एक कमेटी बने।

७-दि० जैन तीर्थक्षेत्रों, मन्दिरों, पाठशालाओं विद्यालयों आदि शिक्षा संस्थाओं धर्मादा आदिके हिसाब प्रति वर्ष कार्विक शु० १५ तक महासभाके दफ्तरमें आना चाहिये। और वे संस्थाएं अपना हिसाब साफ रखें।

८-मधुराकी किसी कंपनीने अंगूठीमें बाहु-बलिकी मूर्ति बनाना शुरू किया है उसका बनाना रोक जाय।

९-तीर्थ क्षेत्र कमेटीका हिसाब सहकारी महामंत्री आडिट कराकर महासभाके दफ्तरमें आगामी अधिवेशन तक भेजें।

१०-स्वदेशी मालका व्यवहार जैन स्त्री पुरुष करें। और घनाच भी अपना द्रव्य भारतके कच्चे मालको पफा बनानेमें लगावें।

११-वाचनगता बड़वानीकी प्राचीन मूर्तिके रक्षाके लिये छतरी आदि आवश्यक किया शीघ्र पूर्ण कराई जाय।

१२-महुमशुमारीमें सर्व दि० जैनी धर्मके खानेमें दिगंबर जैन और नातिके खानेमें अन्नवाल, मंडेलवाल आदि लिखावें।



१३-उदयपुर राज्यमें केशरियाजीकी प्रबन्ध-कारिणी कमेटीमें दिगम्बर जैन मेम्बरमें भी होने चाहिए ऐसी महाराजा साहबसे प्रार्थना की जाय।

१४-दशलाक्षण पर्वमें श्वेताम्बर पर्युपण पर्वकी तरह, कठाल, हलवाइयोंकी भट्टियां कसाई खटिकों आदिके हिंसाके कारवार बन्द रहें ऐसी महाराजा साहबसे प्रार्थना की गई।

१५-भारतवर्षीय दि. जैन संस्थाओंकी अंतरंग जांचके लिये एक कमीशन दो वर्षके लिये नियत किया जाय जो संस्थाओंकी व्यवस्था और भावी सुपबन्धकी रिपोर्ट महासभाको दे। उसमें व० ज्ञानानंद, बाबा भागीरथ वर्णा, पं० बंशीधर शाल्मी, मेम्बर और बाबू सूरजमल मंत्री नियत किये जाय।

१६-जैनगण्ड उपदेशक विभागमें कर्त्तिक कृष्ण ३० स० ७७ तक ६४००) रुपया अधिक खर्च होनेकी संभावना है। उसके ६४ हिस्से करके उदार महाशयोंसे स्वीकार करनेकी प्रार्थना की जाय।

१७-साकरोदा उदयपुर रियासतमें जैन मन्दिर बनानेकी आज्ञा अभी तक नहीं मिली अतः यहाँक ठाकुरबाहमसे जैन मंदिर बनानेकी आज्ञा देनेकी प्रार्थना की जाय।

१८-सभाओंके कार्य चलाने व उपयोगी संस्थाओंके लिये एक नजरल फंड एकत्र किया जाय।

श्रीयुत पं. पतलाल शास्त्रीवाल नरानंदी जैन मिहान्त प्रकाशनी हिन्दी पंगटा जैन संस्थाका बहुत दिनसे मासिक पत्र। यह विचार था कि उक्त संस्थाकी ओरसे जैन विद्वानोंमें जैन धर्मके उच्च कोटिके मिहान-

न्तोका प्रचार करके उनके हृदयपर जैन धर्मका प्रभाव जमानेके लिये एक हिन्दी और बंगला भाषाका मासिक पत्र निकले। पर आर्थिक स्थिति ठीकन होनेके कारण संस्था अब तक इस कार्यके लिये असमर्थ रही। संस्थाका अब पवित्र प्रेस खुला गया है परंतु कागजकी बड़ी महंगाईके कारण संस्थाका इतना साहस नहीं होता है कि बिना अन्य लोगोंकी सहायताके वह मासिक पत्र निकाल कर हजार पन्द्रह सौका घाटा सह सके। अतः पांच छः फारमका मासिक निकालनेके लिये यदि आप लोगोंसे संस्थाको (१५००) वार्षिक सहायता कुछ दिनके लिये मिल जावे तो एक मासिकपत्र सहजमें निकल सकेगा। यदि (१००) या कमसे कम (५०) वार्षिक देनेवाले ३० भी धर्मात्मा निकल आवें तो यह परमोत्कृष्ट कार्य शीघ्र प्रारम्भ हो जाय और संस्थाके मुख्य उद्देश्यकी सिद्धि हो जाय। हम अपने पाठकों व अन्य उदार सज्जनोंसे कहेंगे कि पंडितजीके धर्म प्रचारके इस कार्यमें अवश्य हाथ बटावें।

x x x

संसारमें एक प्रकारकी विचित्रिनी सेवारी तीव्र गतिसे दौड़ाया भारी रही।  
शुद्धतन प्रांतनां हे, अस्तमां पशु ते  
कीनीओनी आरामे आरतवासिओनी  
शिथिलता। गतः निद्राते अंग इती  
सुखी से ओरनी अंग

એકાદશ અવયવમાં કોઈ પ્રકારની અસ્વરંચતા હોય તો સર્વ શરીર દુઃખી થઈ પડે છે અને તે શરીરથી કોઈ પણ ઉત્તમ કાર્ય પૂર્ણ રીતેથી થઈ શકતું નથી, તેવી રીતે બધે જૈન સમાજ પોતાનામાં સુધારા ધર્મપચાર, શિક્ષણનો વિસ્તાર કુરીતિ બહિષ્કાર આદિ નાના પ્રકારનાં કાર્યો કરવામાં સતત ઉદ્યોગ કરતી રહે પણ જો તેનું એક પણ અંગ આલસ્ય, શિથિલ, ઉત્સાહહીન હોય તો જૈન સમાજનું કોઈ પણ કાર્ય સફળ થઈ શકતું નથી. આ સમયમાં જૈન સમાજની ઉન્નતિને માટે યુક્ત પ્રાન્ત પંચમપ્રાન્ત, મધ્યપ્રાન્ત, દક્ષિણપ્રાન્ત આદિ સર્વ દેશોના જૈન જન્યુ સતત પ્રયત્ન કરી રહ્યા છે પણ લખતાં દિલગીરી થાય છે કે મહારા ગુજરાત પ્રાન્તના જૈનોએ ગાઢ નિદ્રામાં પડી પોતાના કર્તવ્યને ભુલી ગયા છે અને એવી સ્થિતિ ધણી દુઃખદાયક છે હમણા એક તાલે બનાવ બન્યો છે કે બનારે ગુજામ્ દિગંધર જૈન પ્રતિનિક સમાયુ ૧૭ સુ અધિવેશન મગધયાજી પર બરાયું હતું ત્યારે બાઈ અમનલાલ વિઠ્ઠલદાસ ધામી ભાવનગરવાલા અને એચાર હોકરાઓ સિવાય એક પંજુ ગુજરાતી બાઈ ત્યાં આવ્યા ન હતા. જો કોઈ કહેવા માગે કે આવી સમયથી કંઈ પણ લાભ થતો નથી તો હું કહીશ કે આ તમેહારી ભૂલ બરેથી વાત છે. બાવા સમયમાં એક પંજુ દેશ એવો નથી કે જ્યાં સમા દાસીય પોતાની ઉન્નતિ ન કરી હોય. ભારતમાં પણ આ સમય જે કોઈક ઉન્નતિના પ્રજાતની જોવામાં આવે છે તો તે પંજુ સમાજોનીજ કૃપા છે. જૈન સમાજની પંજુ ૨૦ વર્ષ પહેલાં જીવી સ્થિતિ હતી તે વિચારતા હું કહીશ કે તેજનાં કરતાં આજ અનેક ધણી તેની સારી સ્થિતિ છે આ ઉન્નતિનું કારણ શું છે ? આ પ્રશ્નને ઉત્તર એજ છે કે સમા. સમા કોઈક મોટા મોટા મંડપ અને સારા સારા અલંકાર કરતા વસ્ત્રાણી નહીં પણ જડા લોહી કાંધપંજુ કાર્યના માટે શ્રેયઃ યાત તમ સમા કહેવાય છે. જે સમા જાતિ અને ધર્મની ઉન્નતિ માટે હોય છે તે સમામાં અમેજ થવાનું તે જાતિ અને તે ધર્મના અનુયાયીઓની ફરજ

છે. જે મુદ્દપ આવા કાર્યમાં સામેલ નથી થતા તે પોતાને જાતિને અને ધર્મને ધોષા પહોંચાડે છે. ગુજરાત પ્રાન્તના જૈનોએ પણ યોગ્ય સમયથી પોતાના કર્તવ્યને ભુલી ગયા છે. અને સમા દોન્દરસ આદિમાં સામેલ થઈને જાતિ અને ધર્મની ઉન્નતિના કાર્યમાં ભાગ લેવામાં પાછલ રહે છે. જો ગુજરાત પ્રાન્તનાં જૈનોએ પોતાની ફર્જ જન્યવમાં પાંત, સાહસ અને તન મેન ધનથી ન લાગશે તો આ શિથિલતાનું પરિણામ ધણું નહાઈ આવવા સંભવ છે. એથી હું સાનુદેશ દિગંધર જૈન બાઈઓને કહું છું કે તમે પોતાની સ્થિતિનો વિચાર કરો, તમે જાતિની દશાનો વિચાર કરો તમે પ્રાણથી પણ વડાલા પોતાના જૈનધર્મની અવનત દશાને પચાલ કરો, અને પોતાના દેશની પડ-તી દશાને વિચાર કરીને અને પોતાના હૃદયપર હાથ ધરીને પૂજે કે તમારી શિથિલતા લાભદાયક છે કે નુકસાનકારક છે. જો તમને લાભદાયક માલમ પડે તો ખુશીથી તમે આદર આદીને ગાઢ નિદ્રામાં પડી ઉદ્ધાજ કરો અને જો નુકસાનકારક માલમ પડે તો આજથીજ તમે પોતાની ભૂલનું પ્રાયશ્ચિત લઈને જાતિ, ધર્મ અને દેશના કાર્યોમાં પૂર્ણ ખડ અને પ્રયત્નથી ભાગ લેવા માંરો.



ચિત્તોરકી ચઢાઈયાં । લેલક-વાઘુ ગૌરીચંકર લાલ અક્તર । પ્રકાશક-હિન્દી સાહિત્ય મંદાર લલનક । ૧૯૧ મૂલ્ય ૧૧) પુસ્તક ઇતિહાસિક છે । હાલમાં ચિત્તોરકી ત્રીજી લઢાઈયાંકા વર્ણન છે । પહિલી લઢાઈમાં મહારાણી પત્રિનીકા સંકડો રાનપૂત રમણીયાંક સાય ચિત્તમાં પ્રવેશ હોને તકલા વર્ણન છે ।



दूसरी लड़ाईमें महाराणी करुणावतीका अनेक राजपूत रमणियोंके साथ चिताप्रवेश और महाराजा उदयसिंहका वर्णन है। जिस समय पद्मा दासी अपने इकलौते पुत्रकी बलि देकर उदयसिंहको छिपाकर कमलमेरके किले पर ले गई थी और आशासा नामक किलेके अधिका-रीसे राणाके पालन पोषणकी प्रार्थना की थी। यह आशासा वैश्य और जेनी था। उस समय पहिले तो आशासाने बनबीरके भयसे उदयसिंहको अपने यहां आश्रय देनेसे इन्कार कर दिया परन्तु नव उसकी बड़ी माताने कहा कि "प्रजाका कर्तव्य है कि राजाके लिये प्रजा दुःखका सहन करे। यह तेरा राजा है तेरे जीवन और ऐश्वर्यका स्वामी है। तेरे लिये आमका दिन सुख और ऐश्वर्यकी वृद्धिका कारण होगा" तब आशासाने उदयसिंहको अपने यहां रख लिया और पाल पोषकर बड़ा किया। तीसरी लड़ाईमें, हल्दी घाटीका युद्ध, महाराणा प्रताप, शक्तिसिंहके १९ पुत्रोंकी वीरता, दिल्ली और मेवाड़के मिलापका वर्णन है। पुस्तककी भाषा छपाई आदि उत्तम है।

**प्रेमोपहार**—लेखक—कृष्णविहारी मिश्र बी० ए० एल एल० बी० । प्रकाशक—हिन्दी साहित्य भंडार लखनऊ। मूल्य १) यह पुस्तक अंग्रेजी भाषाके प्रसिद्ध कवि 'टेनोसन' की 'पुनक आर्डन' नामक कविताका गद्यात्मक स्वतंत्र अनुवाद है। लेखकने अध्यायके आदि अन्तमें हिन्दी कवियोंकी उक्तियां मनोरंजनके लिये दी हैं। यह पुस्तक प्रेम रमकी एक गल्प है। नायक नायिका आदिके नाम भी भारतीय कर दिये हैं। पुस्तक पढ़नेसे

पाश्चात्य दाम्पत्य प्रेमका एक अद्भुत दृश्य दृष्टिगोचर होता है।

**तन मन और पारिस्थितियोंका नेता मनुष्य**—सद्दिचार पुस्तकमालाकी ८ वीं पुस्तक। अनुवादक—बा० दयाचन्द्रजी गोयलीय बी. ए. और. नाथुराम सिंघई। प्रकाशक हिन्दी साहित्य भंडार लखनऊ। मूल्य १) यह पुस्तक जेम्स एलनकी Man King of mind, Body and circumstances नामक पुस्तकका अनुवाद है। पुस्तक पढ़नेसे विचार शुद्ध होते हैं; आत्मिक बल बढ़ता है, साहस और स्वावलम्बनकी शिक्षा मिलती है।

**प्रातःकाल और सायंकालके विचार** सद्दिचार पुस्तक मालाकी ९ वीं पुस्तक, अनुवादक—बाबू दयाचन्द्र गोयलीय बी. ए०। प्रकाशक—हिन्दी साहित्य भंडार लखनऊ मूल्य २) यह पुस्तक श्रीमती लिली एल द्वारा संकलित Morning and evening thoughts का अनुवाद है। इस पुस्तक पाश्चात्य विद्वान महात्मा जेम्स एलन मिश्र २ पुस्तकोंसे मासके ३२ दिनों प्रातःकाल और सायंकालके विचारने योग्य बातें संग्रहीत की गई हैं। नैतिक पुस्तक है पढ़नेसे विचार विशुद्ध होते हैं।

ऊपरकी चारों पुस्तकें पाठकोंको एक न अवश्य पढ़ना चाहिए।

**पञ्चायती पुरचाल**—द्वितीय वर्ष प्रथम अंक। संवादक—पं० गंगाधरदास व्यासवर्ध और प्रकाशक—श्रीवाहनजी काटकीजी बार्दिक मूल्य २)। पढ़िये यह गामिका



खुले पत्रोंमें निकलता था अब पुस्तकके आकारमें निकलता है । इसमें एक हास्यजनक और शिक्षाप्रद चित्र भी है । लेख और कविताएं उपयोगी हैं । पद्मावती परवार भाइयोंको ग्राहक बन कर अवश्य लाभ उठाना चाहिए । पत्र व्यवहारका पता—मैनेजर पद्मावती पुरवाल, महेन्द्र बोसलेन श्याम नं० ८ बाजार कलकत्ता ।

**खंडेलवाल जैन**—अंक ४—सम्पादक जवरचंद मेठी । खंडेलवाल जातिके लाभके इसमें कई उपयोगी लेख हैं । समय चक्रके स्तम्भमें अच्छे नोट रहने हैं । वार्षिक मूल्य १।) मंगानेका पता—मैनेजर खंडेलवाल जैन, कार्यालय गोतमपुरा (मालवा) ।

**जैसवाल जैन**—भाग दो अंक प्रथम । ओ० संपादक 'महेन्द्र' इस अंकमें वा. मोतीलालजी जैन एम. ए. और कृष्णगोपालजी माथुरके लेख उत्तम हैं किन्तु जैसवाल जातिके सम्बन्धके कोई लेख नहीं । जिसकी प्रत्येक अंकमें आवश्यकता है, तब भी संपादकका उत्साह शून्य है । वार्षिक मूल्य १।) मंगानेका पता मैनेजर जैसवाल जैन, मानपाडा आगरा ।

**जिनेश्वर पदसंग्रह**—( प्रथम भाग ) यह पुस्तक कुचामगनिवासी म्य० कविवर पं० जिनेश्वरदासजी पद्मावती पुरवालके ६१ पद्योंका संग्रह है । प्रकाशक—जैन मित्रमंडली ८ नं० महेन्द्र बोसलेन श्याम बाजार कलकत्ता । पंडितजीके भजन पुरानी शैलीके उत्तम हैं । मूल्य ॥) प्रकाशकसे प्राप्त ।



हो गया—श्री सद्दिद्याप्रकाशिनी जैन सभा लाइन और जैन युवक सम्मेलन सुजानगढ़ (भारवाड) का अधिवेशन हो गया ।

**छात्रवृत्ति**—मथुरा महाविद्यालयके लिये १६ छात्रोंको एक वर्षके लिये दस २ रुपयेकी सहायता उदार मज्जनों द्वारा प्राप्त हुई है । अन्य सज्जनोंको इसी प्रकार सहायता देना चाहिये ।

**महावीर जयन्ति**—इस वर्ष भी भिन्न २ स्थानोंपर महावीर जयन्ति मनाई गई । इन्दौरमें यह नयती वैष्णव संप्रदायके आचार्य अकराचार्य करवीर भठके सभापतित्वमें मनाई गई । आपने अपने भाषणमें जैन धर्मके सम्बन्धमें बहुत अच्छे विचार प्रगट किये और जैनधर्मसे सहानुभूति दिखाई । एक अनेन धर्मचार्यद्वारा जैनियोंके प्लेटफार्म पर सभापतिके आसनसे ऐसे उद्गारोंका निकलना प्रथम ही बार है ।

**हार्डस्कूल**—बडौत जिला मेरठका जैन मिडिल स्कूल जलाईसे हार्डस्कूल हो जायगा ।

**जैन कालिज**—हालमें जैन सिद्धान्त भवन आराके वार्षिकोत्सवके सभापति सेठ हरप्रसादजीने आश्वमे एक जैन कालिजके लिये ९० हजारके नकद और एक २० हजारके मूल्यका म्यान देनेकी प्रतिज्ञा की है । आपने देज और जातिके हितार्थ २ लाखकी लागतकी जमींदारी जिसकी १९ हजार वार्षिक आमदनी है निकाल दी है ।



अधिवेशन-गत २७-२८ मईको बंबईमें सेठ हीराचंद नेमचंदके सभापतित्वमें जैन सैतवाल शिक्षण परिषदका प्रथम अधिवेशन हो गया । कई उपयोगी प्रस्ताव पास हुए ।

केवल ज्ञान जयंती-शोलापुरमें गत वैशाख सुदी १० को महावीर स्वामीकी केवल ज्ञान जयंती मनाई गई ।

तीर्थोंके मामले-सम्पदशिवर पर्वत पर पुष्पदंतकी टोंक पर श्वेताम्बर ऐसे चरणोंकी स्थापना करना चाहते थे जिनके चारो कोनोंपर शंख, पीछी, कमंडल और फूलकी आकृतियां अंकित थीं सो पुलिसके द्वारा स्थापना रुकवा दी गई । फेस नं० २७५ पट्टा सम्बन्धी अपीलकी बहस पूर्ण हो गई । फेसला सुनाया बाकी है । शिवरजीकी टोंकों, धर्मशाला तथा पूना सम्बन्धी अपीलकी सुनवाई भी शीघ्र प्रारंभ होगी । अतिशय क्षेत्र मकमी पादरंभाथके सम्बन्धमें श्वेताम्बरियोंने दिगम्बर समाज पर दिवानी दावा किया है ।

वेदी प्रतिष्ठा-शिमलामें जैन मन्दिर की शीघ्र ही वेदी प्रतिष्ठा समारोहसे होनेवाणी है वडे २ विद्वानोंको आनेके लिये निमंत्रण दिया गया है ।

जानिच्युति-नागपुरके कलवंतशाय यलवेकर नामक एक सैतवालने भार्दी माममें हनानत बनवा ली थी इसपर सैतवाल पंचायतने उसको जातिमें बाहर कर दिया । इस छोटीसी बातके लिये पंचायतने ऐसा बंद देना कदापि उचित न था । नागपुरके भार्दोंका कर्तव्य है कि उसको जातिमें मिला लें ।

तामिल पत्र-मद्रासके मि. आदिनेनार तामिल भाषामें 'धर्मशीलन' नामका उपयोगी मासिक पत्र निकालते हैं । उसमें कई तामिल जैन ग्रन्थोंका अनुवाद प्रगट हो चुका है । पत्रका वार्षिक मूल्य १) है ।

उत्तीर्ण-सागर निवासी पं० मुत्तलालमी बनारस संस्कृत कालेजकी साहित्याचार्यके प्रथम खंडकी परीक्षामें उत्तीर्ण हुए हैं ।

नागौरका भण्डार-इसमें जैन धर्मकी ८१ हजार पुस्तकें हैं । जिसमें भारतकी कई प्राचीन लिपियोंमें लिखी बहुतसी पुस्तकें हैं । परन्तु खेद है कि नौ वर्षोंसे पुस्तकोंके बेष्टन तक नहीं खुले । भण्डारकी रक्षा करना जैन बालक तत्काल परम कर्तव्य है । जैन समाजकी ही नहीं किन्तु भारतकी सम्पत्ति प्राचीन साहित्य ही है ।

जैन पंडितोंसे निवेदन ।

## अचरण, पुरुषार्थ

और

कर्तव्य ।

(ले० श्रीयुक्त कन्देयालाल जैन )

महात्मा 'वीर' महात्मा 'बुद्धदेव' महात्मा 'महम्मद' और अन्य पुरातन ऋषि, महर्षि, महा-पुरुषोंमें और हममें क्या अन्तर है ? वे क्यों हमसे उच्च बन गये ? वे क्यों आदर्श, और पूज्य हो गये ? इनका कारण यदि सूक्ष्म दृष्टिसे विचार करेंगे तो वह केवल उनका शुद्धाचरण और पौष्ट्य ही मात्तम होगा । वे शुद्धाचारी और पुरुषार्थी थे, वे कहना ही नहीं अपितु करना भी जानते थे । हम दुराचारी और आलसी हैं, साहस-हीन हैं, उत्साह-रहित हैं । निजीब-सम होकर मोह-निद्रामें सोते हुए आकाश-पातालके स्वप्न देख रहे हैं । हम सोचते हैं, यदि सहस्र व्यक्तियोंमेंसे एक व्याक्त सोया रहेगा तो क्या हानि होगी ? कुछ भी नहीं । किन्तु यह नहीं देखते कि एक एक बूँद करके समुद्र भरता है, एक एक बूँदसे वृष्ट मूसलाधार बन जाती है; एक एक चिन्-गारीसे भयंकर आग बन जाती है । ये बातें हम नहीं समझते; परन्तु वे समझते थे; इसीसे हममें और उन महात्माओंमें बहुत बड़ा अन्तर पड़ गया है । इसीसे वे उन्नतिके सर्वोच्च शिखर पर चढ़ गये थे और हम अवनतिके अगाध अंधकूपमें गिर गये । हममें और उनमें जो अन्तर पड़ा है

उसका कारण शुद्धाचार है; क्यों के जितने गुण हैं सब शुद्धाचारके अन्तर्गत हैं । अतएव उनकी उन्नतिका और हमारी अवनतिका कारण में तो यही कहूँगा कि उनका शुद्धाचरण और हमारा दुराचरण है । जितना शुद्धाचारमें और दुरा-चारमें अन्तर है उतना ही उनमें और हममें है । हम अपना शील-चारित्र्य उत्तम बनायें, पौष्ट्य करना सीखें, कार्यार्थी बनें तो मैं कहूँगा कि हमारे लिए भी उस दशको पहुँचना कुछ कठिन नहीं है । हम भी शनैः शनैः उन्नतिके शिखरकी ओर बढ़ने लगेंगे; कोई कष्ट या विपत्ति उन्नति-पथमें आकर हमें न रोक सकेगी । अभी हम डरते हैं; और सोचते हैं—अशुभ कार्य सम्पादन करनेमें हमें इतनी आपदाएँ सहनी होंगी; इतने व्यक्तियोंके कटु वाक्य सहने होंगे; इतने जनोंसे दुरा बनना पड़ेगा; इतने पुरानी लकड़ीके फकीरोंसे कलह (वादविवाद) करना होगा; इतने निरक्षर प्राचीन ग्रन्थानुगामियोंको समझाना होगा; इतने अपद किन्तु अभिमानियोंकी धुत्कार और फटकार सहनी होगी, इतने स्थातों पर अमुक अमुक बल्लेष्ट उठाने होंगे । परन्तु ये भाव हमारे हृदयमें उसी समय तक हैं और हमें डराते हैं जब तक कि हम सच्चारित्री बनकर अपने कर्तव्यमें नहीं लगते हैं । सच्चारित्री बनकर हम किसी कार्यका या किसी सुधारका भार अपने ऊपर लेंगे तब फिर कैसा ही कष्ट और कैसी ही दुःखकी बाढ़ हमारे सामने आवे; हमारी कार्य-गतिमें बाधा टाले-हम किसीकी भी परवाह न करेंगे, हमारी कार्य-गति चाहे वह धर्मोद्धारके पथपर हो

देखकर बड़ा ही विस्मय होता है कि आज कल लोग प्रायः मकानके अंधेरे भागमें ही रहना ज्यादा पसंद करते हैं। इसका पहला कारण या तो यह है कि उनके बाप दादे ऐसा करते चले आए हैं इस लिए वे अपने बाप दादाओंकी प्रथाको त्यागना नहीं चाहते या वे स्वास्थ्य-लाभके फायदे जानते ही नहीं। अतः वे ऐसी भूल करते हैं अन्यथा कोई कारण नहीं कि लोग जिस बातको बुरा समझें और फिर उसीको करें। हर्षकी बात है कि अब बहुतसे लोग स्वास्थ्य लाभके नियम जानने लगे हैं और उन्हींके अनुसार चलनेका भी प्रयत्न करते हैं। प्रकाश और वायु स्वास्थ्य वृद्धिके मुख्य कारण हैं इसलिये मनुष्योंको इनका पूर्ण ध्यान रखना चाहिए।

जिस मकानमें ठंड या सील अधिक रहती है वहाँके मनुष्य अक्सर सर्दी जुखामसे पीड़ित रहते हैं। अतः ऐसे मकानमें रहना निषेध है। मकान हमेशा हवादार होना चाहिये। जिस मकानमें वायुका अच्छी तरह प्रवेश न हो, उस

तक जीवित रहा इसका कारण यही है कि मैंने अपने सारे जीवनभर अच्छा खाया पिया।

मुझे क्या खाना और पीना चाहिए ?

कब मुझे खाना और पीना चाहिए ?

ये दोनों प्रश्न बड़े ही मार्फके हैं। जो लोग वृद्धावस्थामें भी स्वस्थ सुखी और चुस्त रहना चाहते हैं उन्हें इन प्रश्नोंका उत्तर स्वयं देना चाहिए।

पहली बात जो हमें मालूम करना चाहिए, यह है कि हम क्या खाएँ और क्या न खाएँ। साधारण तौरसे बहुत ही थोड़ी चीजें हमारे खानेके लिए हैं, परन्तु स्वास्थ्य लाभकी दृष्टिसे उनको भी छोड़ देना चाहिए। जो पदार्थ तालुको अच्छे लगें उन्हें कदापि न खाना चाहिए; किन्तु जो पदार्थ सात्विक हों उन्हें खाना चाहिए। लजीज और उमदा भोजन बहुत देरमें पचता है; किन्तु सामान्य भोजन बहुत जल्दी पच जाता है। इस लिए लजीज भोजनके बजाय सामान्य भोजन खाना ही अच्छा है। दूसरी बात यह है



खानेसे थोड़ा थोड़ा खाना अच्छा है । पानी भी अधिक पीनेसे नुकसान होता है । अधिक पानी पीनेसे मठरागिनि बिगड़ जाती है और अजीर्ण भी हो जाता है । इसलिए भोजन ऐसा करना चाहिए कि जिसमें अधिक व्यास न लगे ।

**पोशाक**—यह प्रश्न भी बड़ा ही महत्वका है । कपड़े स्वास्थ्यको अच्छा बनानेमें बड़ी मदद देते हैं । गर्मी, बरसात, जाड़ा की बाधाको दूर करते हैं और शरीरको सुख देते हैं । इसलिए कपड़ोंकी ओर पूरा २ ध्यान देना चाहिए । कपड़े समयानुकूल पहिनना चाहिए । इससे स्वास्थ्य पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ता है । वैद्यक ग्रन्थोंमें भी चतुर्चर्या वर्णनमें कपड़ोंका वर्णन दिया है कि किस मौसिममें कैसा कपड़ा पहिनना चाहिए । जिन लोगोंको स्वास्थ्य-अच्छा रखनेकी इच्छा है उन्हें चाहिए कि वे वैद्यकके अष्टांग हृदय जैसी पुस्तकोंका अवलोकन करें । आज कल लोग फैशनके इतने गुलाम हैं कि उन्हें स्वास्थ्यकी कुछ भी परवा नहीं । उनके जान चाहे स्वास्थ्य रहे या जाए परन्तु वे फैशनको नहीं छोड़ेंगे । इसी फैशनके कारण सैकड़ों मनुष्योंने स्वास्थ्यसे हाथ धो डाला है । अतः जिन्हें स्वास्थ्यसे प्रेम है उन्हें चाहिए कि वे फैशनपर न मर कर स्वास्थ्यकी ओर ध्यान दें । कुछ बिगड़ा हुआ स्वास्थ्य तो ठीक हो सकता है परन्तु बिल्कुल बिगड़ा हुआ स्वास्थ्य फिर ठीक नहीं होनेका । कपड़ेके प्रयोगमें एक बातका और ध्यान रखना चाहिए और वह यह कि न कपड़ा अधिक ढीला हो और न अधिक गाढ़ा ; किन्तु शरीरसे मिला हुआ हो । ऐसा कपड़ा पहिननेसे स्वास्थ्यको बड़ा लाभ पहुंचता है ।

## तुम्हीं पर मूँड़ मूँड़ाई है ।

( लेखक—मास्टर दीपचंद परवार )

किसी दिन एक चौबैसी प्रातःकाल शारीरिक नित्य क्रियासे निश्चिन्त हो तोंद पर हाथ धरे उदर देवकी अर्वा सामग्री प्राप्त करनेकी चिन्तामें जा रहे थे, कि भाग्यवशात् किसी गृहस्थने उन्हें प्रणाम किया, वस उस गृहस्थका प्रणाम करना था, कि चौबैसी आशीर्वाद देते हुए “ चिरंजीव यजमान”, उसीके घर पर जा अड़े और लगे ईश्वरको घन्यवाद देने “ जय हो गोपाल लाल श्रीकृष्ण कन्हैयाकी”, कि जिसने चिन्ता करते ही दाता भेज दिया । यजमान प्रसन्न रहो, आज हमारा भोजन तुम्हारे ही यहां होगा । श्री ठाकुरजीका भोग आज भाग्यसे तुम्हारे ही हिस्सेमें आया । अच्छा भाग्यवान, आज तो भोगके लिये मोहन खीर और हलुवा आदि मिष्ठान्न बना लेना । मेरा तो सरल स्वभाव है, टेरेने बुलानेकी अधिक अड़चन न करना । मैं आप ही समय पर आ जाऊंगा । इत्यादि ।

वह सदगृहस्थ चौबैसीकी बातें सुनकर बड़ा चक्करमें पड़ा कि यह क्या आफत आ पड़ी ? क्या प्रणाम करना ही पाप है ? या प्रणाम करनेका यह प्रायश्चित्त (दण्ड) भोगना पड़ता है ? इससे अच्छा था, कि मैं प्रणाम ही न करता । अस्तु जो हुआ तो ठीक है अब यह बला कैसे छले ? बहुतसे सोचनेके अनन्तर बोला, महाराज यह क्या प्रणामका फल है ? मैंने तो आपको निमंत्रण ही नहीं दिया, तब कहाँका भोजन और कहाँका टेरेना बुलाना ।

देखकर बड़ा ही विस्मय होता है कि आज कल लोग प्रायः मकानके अंदरे भागमें ही रहना ज्यादा पसंद करते हैं। इसका पहला कारण या तो यह है कि उनके बाप दादे ऐसा करते चले आए हैं इस लिए वे अपने बाप दादाओंकी प्रथाको त्यागना नहीं चाहते या वे स्वास्थ्य-लाभके फायदे जानते ही नहीं। अतः वे ऐसी भूल करते हैं अन्यथा कोई कारण नहीं कि लोग जिस यातको बुरा समझें और फिर उसीको करें। हर्षकी बात है कि अब बहुतसे लोग स्वास्थ्य लाभके नियम जानने लगे हैं और उन्हींके अनुसार चलनेका भी प्रयत्न करते हैं। प्रकाश और वायु स्वास्थ्य वृद्धिके मुख्य कारण हैं इसलिये मनुष्योंको इनका पूर्ण ध्यान रखना चाहिए।

जिस मकानमें ठंड या सील अधिक रहती है वहकि मनुष्य अक्सर सर्दी जुकामसे पीड़ित रहते हैं। अतः ऐसे मकानमें रहना निषेध है। मकान हमेशा हवादार होना चाहिये। जिस मकानमें वायुका अच्छी तरह प्रवेश न हो, उस मकानमें कभी पर भी न रहना चाहिए। वायुकी कमीके कारण अनेक रोग होते हैं। इसलिये मकानमें वायु और रोशनीका पूर्ण प्रवेश रखना चाहिए। सोते समय कभी लिङ्गक्रिया बन्द करके सोना चाहिए कारण कि इससे तानी हवाकी गति रुक जाती है।

**भोजन और पानी**—यदि हम इन दोनों चीजोंको सावधानतापूर्वक से तो कुछ भी आरुक्ति नहीं। परन्तु बार पक जमुबकी टाकटने कदा भी कि म ना ७० वर्ष ऐसी सर्दी अपस

तक जीवित रहा इसका कारण यही है कि मैंने अपने सारे जीवनभर अच्छा खाया पिया।

मुझे क्या खाना और पीना चाहिए ?

कब मुझे खाना और पीना चाहिए ?

ये दोनों प्रश्न बड़े ही मार्केके हैं। जो लोग वृद्धावस्थामें भी स्वस्थ सुखी और सुस्त रहना चाहते हैं उन्हें इन प्रश्नोंका उत्तर स्वयं देना चाहिए।

पहली बात जो हमें मालूम करना चाहिए, यह है कि हम क्या खाएँ और क्या न खाएँ ? साधारण तौरसे बहुत ही थोड़ी चीजें हमारे खानेके लिए हैं, परन्तु स्वास्थ्य लाभकी दृष्टिसे उनको भी छोड़ देना चाहिए। जो पदार्थ तालुको अच्छे लगे उन्हें कदापि न खाना चाहिए; किन्तु जो पदार्थ सार्विक हों उन्हें खाना चाहिए। लमीन और उम्दा भोजन बहुत देरमें पचता है; किन्तु सामान्य भोजन बहुत जल्दी पच जाता है। इस लिए लमीन भोजनके बजाय सामान्य भोजन खाना ही अच्छा है। दूसरी बात यह है कि भोजनका समय नियत होना चाहिए और उस नियत समय पर ही खाना चाहिए। ऐसा करनेसे भोजनको पचनेका समय मिल जाता है। परन्तु इसका ख्याल न करके बार बार खा लेना ठीक नहीं। बहुतसे ऐसा करते हैं कि थोड़ा थोड़ा खानेकी बजाय एकबारमें कई बारका भोजन खा जाते हैं। इससे बड़ी भारी हानि होती है। वह यह कि खाना जल्दी दहन नहीं होता और दूसरे मंशरि और अमीन पी हो जाता है। अतः एकबार एक



प्रकार यहाँ होगी। ऐसी हसी तो तुम लोग हसा ही करते हो, अस्तु तसी खुशीसे रहना ही अच्छा है, उदासीन रहना गृहस्थोंको उचित ही नहीं है, जो उदास रहते हैं वे तो रामे चलते फिरते चैतन्य तानिया है । मैं समझ गया तुम्हारी इच्छा है कि धूप हो गई है इस लिये भोजन करके ही जाना सो ठीक है । तुम दयावान हो, दूसरोंके सुख दुखको समझ सकते हो । बहुत ठीक—मैं अब भोजन करके जाऊंगा, लडके बच्चोंको सदेश लगाये देता हूँ । अरे भैया योवर्धन, घर पर जाओ तो लडकनसे कह देना जल्दी आवें, यहा सब तैयारी है ।

सदगृहस्थ—नहीं महाराज, घर जाइये हमारी कामार्थ नहीं है ।

चौबे—ठीक है, तुम बड़े विनयवान हो कहा है—  
बड़े बड़ाई न करें, बड़ा न बालें बाल ।

रहा मुखें न कह, बड़ा हमारा माल ॥

अहा ! तुम ऐसीको यही कहना उचित है परन्तु हम जानते हैं । भैया तुम सामर्थवान हो, तुम्हीं जैसे लोगों पर तो हमने भूड मुडाई है ।

सदगृहस्थ—यह क्या कहते हो महाराज, भूड मुडाओ अपने माता पिता बड़े बूढ़ोंपर, मुझ पर क्यों ?

चौबे—वारा जो खानेको देवे वही माई बाप, सो हमारे तो माई बाप तुम्हीं हो, तुम्हीं अब दाता हो । अच्छा पिताजी, अब तो मर लगी है, तुम दो तो दो नहीं तो हम घरमें धुस कर माईजीसे लेकर खायो, चाहे अच्छी तरह खिलाओ चाहे बुरी तरह परन्तु खिला ही देंगे—सुधे दो नहीं तो टेढ़े होंगे, हमारा तो

हक है । तुम्हारे जैवा साहू छोडकर और कहा जाय ?

सदगृहस्थ—महाराज, घर जाओ और कहाँ जाओगे ।

चौबे—यजमान, मो तो हम घर ही में बैठे हैं कीन जगलमें बैठे हैं । गहा खाई हो, वहीं रहें सो ।

सदगृहस्थ—महाराज, वह घर जहा चौबाइनजी गहती है ।

चौबे—सो तो बिता ही क्या ? वे भी यहीं आ जावेंगी, बच्चे भी आ जावेंगे, धन्य हो यजमान बड़े सज्जन हो । दयालु हो सो ऐसा हो, क्योंकि तुमने सोचा कि अकेली चौबाइन और पतोह क्यों रह जाय ? वे भी यहीं बना बनाया जीम लेंगी । सो ऐसा ही होगा, उन्हें भी बुलये लेता हूँ । जा रे बट्टू, अपनी माको बुला ला, जा बेटा जल्दी आना, भन्ना ।

सदगृहस्थ—महाराजजी, इस प्रकार किसी के घर बलात्कार घना धरकर आप जैसे हट पुट पुरुषोंको कदापि उचित नहीं है किन्तु आपको चाहिये कि परिश्रम करकेही भोजन किया करें ।

चौबे सत्य है यजमान, मैं नित्य ही परिश्रम करके भोजन करता हूँ, प्रातः काल उठकर घुनै रमणियोंके नायक गोपालजीका नाम लेकर भोजनकी चिन्ता करता हूँ, शीघ्र जाता हूँ, दन्त-धावन करता हूँ, नहाता हूँ, दंड पेलता हूँ, इयर उपर फिगर यजमान को दृढ़ लेता हूँ फिर उसके द्वारा प्राप्त हुआ भोजन पेट पर हाथ फेर फेर कर आनन्दसे खाँ १ खाता हूँ जग





चौबेजी—यजमान धरबाबो नहीं, मेरा कुछ बहुत खर्चे नहीं हैं, मेरा एक शिष्य और दो बालक हैं केवल वे ही साथ आवेंगे; रही चौबाइनजी सो न हो सके तो उनके लिये सासु बहु दोनोके मितना सीधा सामान भेज देना, परन्तु जल्दी करना, क्योंकि धूप पड़नेसे गर्मी चढ़ जाया करती है ।

सदगृहस्थ—महाराज, मैंने तो किसी का भी न्योता नहीं किया न सीधा ही देनेको कहा है ।

चौबे—यजमान, चिता नहीं: यह सब धरकी बात है । गैरों को न्योता देने व मनानेकी आवश्यकता होती है । तुमतो बना लेना और तुमसे न घने तो हलवाईके यहांकी ही सही उसीमें संतोष करेंगे । हम लोग जैसा समय देवते हैं वैसे ही कर लेने हैं । रही नवद दक्षिणाकी बात सो औरोंकी और बात है, तुमसे थोड़ीही में (कमसे कम पांच रु. में ही) समझ जायेंगे ।

सदगृहस्थ—महाराज, यह क्या बह रहे हैं ? किससे कह रहे हैं ? मेरी शक्ति नहीं है कि आपको न्योता दूं ।

चौबेजी—यजमान, ऐसा नहीं विचारना चाहिए । तुम बड़े सज्जन धर्मात्मा हो, आंगका पिचार आज क्यों करना ! आनेके न्योनेकी बिना करो, देरी होती है, मैं जरा विनिया में आऊँ ।

सदगृहस्थ—अनी गले क्यों पड़ने दो, मैंने न्योता नहीं दिया ।

चौबे—यजमान मुनो, हम चिपचपी मरवनोंमें श्रुत हैं सो गये क्यों पड़ने लगे ! हम तो पुत्रि जन्मे हैं और दत्तममे दत्तम भोगन करने

हैं । गले पड़े-क्षत्री, पीठ पड़े वैश्य और पर पड़े शूद्र, हम तो सिर चढ़ेंगे ।

सदगृहस्थ—महाराज, क्या बलात्कार सिर चढ़ेंगे, जब कोई चढ़ावे ही नहीं तब ?

चौबे—यजमान यह कलयुग है, इसमें यही नीति है कि “मान न मान मैं तेरा महमान” । सो क्या हम इस नीतिको छोड़कर पापी बनें, राम राम—छि: छि: यह तो न होगा । भला जब हम ही नीतिको छोड़ दें तो तुम लोग तो छोड़ोगे ही । सो भाई आजकल चाहे कोई सिर न भी चढ़ावे, तो भी अपन तो चढ़ बैठें: नहीं तो भला यह गृहस्थीका खर्चा कहाँसे पूरा पड़े । इस कलिकालमें कौन ऐसा मूख है ? जो ठाड़े बैठे बोझा उठा ले । यहां तो यह नित्यका धंधा है । अच्छा अब जाओ तैयारी करो पित्त तीक्ष्ण है ।

सदगृहस्थ—महाराज यह न होगा, आप कहीं और देखिये, नहीं तो जमानमें मुंह धो लाये ।

चौबे—अरे मूख, चौबाइनसे मैंने नल पानको मांगा था सो वे चोली—कहीं अंत देव्यो, सो मैं आज्ञा शिरोधार्य करके तो नेरे यहां आया, अब कहाँ जाऊँ ? नृ नाहक देका करता है कि मैंने दाध मुंह नहीं धोया । मैं तो प्रातःकालही चौबादि किया कर आया हूँ, नेरे पर नहीं करूंगा और मुद्रकी कौन कहे सब अंग धो आया (नहा आया) हूँ । अब तो भोग ही लगाना है । सो जरा तैरे यहां तैयार हुआ कि बस ।

सदगृहस्थ—महाराज क्या कर आप नाश्ये । यहां आपकी इच्छाकी पूर्ति नहीं होनेकी

चौबेजी—क्या क्या ? इच्छाकी पूर्ति लगे



# જૈન સામાજિક સુધારણા.

કેપ્ટન મોતીલાલ ત્રીકમદાસ ખાલસી બાકરેલ

( અંક ૭ થી ચાલુ )

તેવીજ રીતે ભારતવર્ષની અન્ય કોમોમાં વિધવાઓનું પ્રમાણ મટનું નામ છે. ત્યારે અમારા જૈન સમાજમાં તેનું પ્રમાણ દિન પ્રતિદિન વધતુંજ નામ છે. સને ૧૯૧૧ ની હેક્સી વરતી ગણતરી પ્રમાણે જાણીતી કુલ વરતી ૧૨૪૮૧૪૮ મનુષ્યની ગણવામાં આવી હતી. તે પૈકી ૬૦૪૨૯૯ સ્ત્રીઓમાં ૧૫૩૨૯૭ અર્થાત્ પ્રતિ સેંકડે ૫૬૬ સ્ત્રીઓ જૈન સમાજમાં વિધવા હતી. હાલમાં સન ૧૯૯૧ માં ૧૧૬૬ સન ૧૯૦૧ માં ૧ સન ૧૯૧૧ માં ૧૦૬૬ પ્રતિ સેંકડે વિધવા રીજો હતી. હસાધ્યોમાં સન ૧૯૯૧ માં ૨૬૬ સન ૧૯૦૧ માં ૧૨૬૬ તથા સન ૧૯૧૧ માં ૧૧૬૬ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓ હતી. પાસિઓમાં સન ૧૯૯૧ માં ૧૩૬૬ સન ૧૯૦૧ માં ૧૪૬૬ સન ૧૯૧૧ માં ૧૩૬૬ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓ હતી. મુસલમાનોમાં સન ૧૯૯૧ માં ૧૫ સન ૧૯૦૧ માં ૧૫૬૬ તથા સન ૧૯૧૧ માં ૧૪૬૬ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓ હતી. શિખોમાં સન ૧૯૯૧ માં ૧૫ સન ૧૯૦૧ માં ૧૩૬૬ તથા સન ૧૯૧૧ માં ૧૫૬૬ પ્રતિ સેંકડે ૧૫ સ્ત્રીઓ વિધવા હતી, હિંદુઓમાં સન ૧૯૯૧ માં ૧૭ સન ૧૯૦૧ માં ૧૬૬૬ અને સને ૧૯૧૧ માં ૧૬૬૬ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓ હતી. ઉપર પ્રમાણે લાખો અને કરોડોની સંખ્યા ધરાવતી અન્ય કોમોમાં જ્યારે વિધવાઓનું પ્રમાણ હવું ત્યારે અમારા જૈન સમાજની બાર અને તેર લાખની અડધ સંખ્યા ધરાવતી જૈનકોમમાં તેની સંખ્યા સન ૧૯૯૧માં ૧૩૬૬ સન ૧૯૦૧માં ૨૩૬૬ તથા સન ૧૯૧૧માં ૨૫૬૬ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓની સંખ્યા હતી. સન ૧૯૧૧ની સાલમાં જે વિધવાઓની સંખ્યાનું પ્રમાણ જાણીતું તેમાં કેવળ ૨૦ થી ૪૦

વર્ષ સુધીની ઉમરની વિધવા સ્ત્રીઓની સંખ્યા ગણવામાં આવે તો જણાઈ આવે છે કે ૨૦ થી ૪૦ વર્ષ સુધીની ૨૦૪૭૦૫ સ્ત્રીઓમાંથી ૪૮૪૬૬ અર્થાત્ ૨૩૬૬ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓ હતી, પાંચને દશ વર્ષની વિધવાનો પથ તેમાં સમાવેશ થાય છે.

મહાશયો ! ઉપર જણાવેલા બાળકો, કન્યાઓ, કન્યાવિદ્ય, વદ્ધ વિવાહ આદિ અનિષ્ઠકારક રિવાજ અમારા જૈન સમાજના જીવનનું રક્તપી અમારા સ્વાસ્થ્યનો નાશ કરી બાળક અને બાળકીઓના વિવાહ (સગન-દંપત્તિપ્રેમ) અને ચારિત્ર્યપર માઠી અસર કરી દિન પ્રતિદિન અધોગતિને પ્રાપ્ત કરી રહ્યા છે. તેનું મુળ કારણ અમારી જાતીની સંકુચિત મર્યાદા (દરેક જાતીની અંદર અંદર એકજ કોમમાં સમુદ્ધ અને પેટા સમુદ્ધ અને તેને નિભાવી રાખનાર ક્રિયાભિમાની જાતિના સ્વાર્થ દૃષ્ટિના અંધેસર શેડીયાઓ) છે. કેમકે જમાંનાને અનુસરી સામાજિક સુધારો કરવામાં તે આડખીલારૂપ છે. કે જે તડ યા પેટાતડ અને સમુદ્ધને લીધે તેમજ સ્વર્ગોત્તરને લીધે વીસા વીસા સાથે ને દશ દશ સાથે એકજ કોમના હોવા છતાં તડ યા સામાતડને લીધે એક ખીજને કન્યા પથ આપી ચકતા નથી, તેમ સાથે એસી જમતા પથ નથી, એ ખરેખર રોચનિષ છે ! જેમ કન્યા વ્યવહારની મર્યાદા હુંડી કરીયે તેમ કન્યાની બોલ પડે છે. જેથી યોગ્ય કન્યાકે વર મેળવવામાં આડચણ પડે છે, જેથી પરિણામે કન્યાઓ થાય છે, પૈસા આપીને (કન્યા વિક્રય) કન્યા ખરીદવી પડે છે, જેથી જાતિના સાધારણ તેમજ ગરીબ સ્થિતિવાળાને કન્યા ખીજકેમ ખજી સકતી નથી. જેથી છેવટે ધીર ધરના ટંટા શીસાદ વડે સમુદ્ધના સમુદ્ધ અને તર્કગ્રાસ અને પેટતડ પડે છે. તે એક સુધી કે તે એક ખીજની કન્યા વ્યવહાર ને ખાવાપીવા નો વ્યવહાર પથ તે કી નાંખે છે. માં દિકરી અને કન્યા માધ્યમે પથ ફેરવે



નહિ તો ખીચું શું? આપણે કોમ સમાજ યા  
દેશમાં સંપ અને એકમતા કરવાની વાતો કરીયે  
છીએ, પણ લોકો તો તેથી હલકું વલણ પકડે  
છે કેટલાક પોતપોતાનાં તંદેબાં સમુદ્ધ સંધારવા  
મથા કરે છે તે એવા વિચારથી કે અમુક તંદેબાં  
યા સમુદ્ધ સંધારો તો આખી જાતિ સમાજ યા  
દેશ સુધરશે, પણ આ સંકલિત મર્પદાનું કાર્ય  
ધારેલી નેમ પાર પાડી શકશે નહિ, એથી સર્વજન  
પણે જાતબાવ પ્રગટ થવાને જાહેર પોતાના તંદેબાં  
યા સમુદ્ધને મદદ કરવાનું યા પોષવાનું વલણ  
પકડશે; એથી ભારતવર્ષ એ મારો દેશ છે સમગ્ર  
હિંદી પ્રજા એ એક છે, તેના વાચાતી જૈન  
કોમ એ એક વ્યક્તિ છે, તેના મુખ દુઃખમાં  
ભાગ લેવા હું મંધાયેશો છું, તેની ઉન્નતિ કરવી  
એ મારું કર્તવ્ય છે, આવા વિચાર જાગ્યેજ  
દુઃખની શકશે.

ઉપર જણાવી ગયા પ્રમાણે મિથ્યા કૃતામિમાને

આ જાગતમાં કોઈ વ્યવહાર પગલાં ભરશે કે  
આજ બપોળાં આનીને ટગર ટગર જોયા કરશે!  
અમારા આચાર્યો, ધર્મગુરુ બદલાકોને આ જાગ-  
તની કંઈ પંડી નથી, ત્યારે આ માહી અને  
ભવંકર સ્થિતિ શું આપોઆપ સુધરી જશે!  
કે પછી દિવસે દિવસે તેથી પણ વધુને વધુ  
ખરાબ તેમજ અધમ સ્થિતિમાં આવી પડીશું!  
આ એક ગંભીર સવાલ છે. માટે, જ્યાં સુધી  
દરેક કોમ યા સમાજમાં સ્વાર્થત્યાગી અને  
આત્મજોષી વીરનરો પેદા થશે નહિ ત્યાં સુધી  
આપણી આ અવનતિ કાયમ રહેવાની, અને  
દિન પ્રતિદિન તેથી પણ વધારે ને વધારે ને વધારે  
અધોગતિએ પહોંચવાના એ નક્કી સમજવું.

પ્રિય બંધુઓ! મારે ફરી ફરીને આપને  
વાદ દેવડાવવું પડે છે કે ઉપર જણાવેલાં કરણો  
પેટી તા પેટાવડ અને સમુદ્ધ અને પેટા સમુદ્ધ  
કરી આપણી દરેક જૈન જાતિઓની સ્થિતિ ઠિલ



તેને જીંદગી પર્યંત ગાતિ બહિષ્કારની શિક્ષા થાય છે. હાલમાં ગાતિયો જેવી રીતે જીવંત છે તેવી પ્રાચીન કાળમાં હતી તેવું કોઇ પુરાણક સાંદ્રિત્ય કહી શકે તેમ નથી સાંપ્રતકાળમાં ભારત વર્ષની બીજી કોમો દિન પ્રતિદિન આગમ વધતી જાય છે ત્યારે અમારી જૈન કોમ દીન પ્રતિદીન પછાત પડતી જાય છે. અધુનિક જૈન કોમ અને સમાજ પોતાનું જીવન કેવી રીતે હટાવી રહેલ છે તે નીચેની હકીકત પરથી સમજી શકીએ.

ઉપર જણાવ્યા પ્રમાણે તક પેટાતક અને સમુદ્ધ અને પેટા સમુદાયો છોડી છોડીને પરણાવવાની (લગ્નની) દહ તદન ટુંકી યથ ગત છે. જેથી કેળવણી, વળ, લાયકાત, સ્થાવિ વગેરે કોઇ પણ જોવામાં આવતું નથી, મન વગરનાં અને ના પસંદગીનાં ફરજિયાત લગ્નો થાય છે; જેથી લાયક કન્યાને યોગ્ય વર મળતો નથી તેમ લાયક વરને યોગ્ય કન્યા મળતી નથી, જેથી પરિણામે દંપતિ પ્રેમ અને જીવનનો નાશ થતાની સાથે કેટલોક દેહનાયકો વર્ગ ટુંકવારી જીંદગી ગાળી નિર્વંશ થતાં જોવામાં આવે છે, બીજી તરફથી કન્યાવિક્રયને વૃદ્ધલગ્નના કિંમતીયો બાળલગ્નના રિવાજને સુરતપણે વળગી રહી બાળવિધવાના પ્રમાણમાં વધારો કરી રહ્યા છે, વગેરે અનેક કારણો માણસાણીની સ્વતંત્રતા પર તરસ મારે છે. પરદેશગમન કરવાનો સખત બહોજસત હોવાથી વિદ્યા, કલાને હુમલ મેળવવાનાં બારણાં બંધ થાય છે, સુવિના આગેવાન શુદ્ધિથી પણ સમજ ન સમાય તેવા કાયદા બાંધે છે, વળી આ કાયદામાં ફેરફાર કરવાનો હક કાયદા પાળનારને પણ નથી વગેરે અનેક ગેરકાયદા છે તે આ રમણે રમણસંકાયથી આપી શકે નથી.

જાણીએ ! દુરગાતિ બંધન તોડી ગાતિઓની લક્ષણકુલ ઓળંગી જવા માગતો નથી તેમ જાનિઓના ઝગડાઓમાં હું માથું મારવાને ચાહતો નથી. એટલે તો રમણ છે કે-ગાતિઓની

અંદર અમુક ઝગડાનાં કારણ નહીં હોય છે છતાં તે કેટલીક વખતે ગાતિની અમુક વ્યક્તિના ફરજિયાતને લીધે ગાતિમાં ચાલતા આવેલા શોધાઈ હક વરીકે આગેવાનોના જુદાઈ દેહ કેળવણીથી બેનસીય રહેલી ગાતિની અમુક વ્યક્તિ આગમ અસ-લની માફક પુરજોશથી ચાલતો જોવામાં આવે છે. છતાં આધુનિક કેળવણીથી વર્ગ ચાલતા આવેલા રિવાજોમાં ગાતિ હિતને સમાજ હિતને ખાતર જમાનાં અવસરનો ફેરફાર કરવાને મન કરે અને ધણ વખતથી ચાલતા આવેલા શોધાઈ હક અને આગેવાનોના જુદાઈ દેહ આગમ પોતાનું દેહ નમાવવા ના પાડે તો ઉપર જણાવેલા જુદા વિચારના જુદાઈ દેહ અલવનારો વર્ગ ગંભીર રૂપ પકડી તે કેળવણીના વર્ગને ગાતિ બહિષ્કાર વગેરેની શિક્ષા કરવાને પણ સુખનો નથી. પણ હવે દરેક ગાતિના શેઠીઆઓ અને આગેવાનોએ સમજવાનું છે કે હવે આ વાસમાં સદાગાં જમાનો બદલાયેલો છે, સ્વતંત્રતાનો દોષ છે, વડાલી છે, તેમ મોઢો પોતાનો હક શું છે તે સમજતા થયા છે, અને રાજદારી વિષયોની માફક સામાજિક બોમ્બોમાં પણ તે પોતાના હક ભોગવવાને લાયક થયા છે તો અમે આપણા રાજાને હાથે કે દરેક ગાતિના કેળવણીના તેમજ પ્રમાણિક અને કાર્ય-દક્ષ પુરોહીની કમીની નામી ગાતિમાં થતો પક્ષપાત અને અન્યાય તેમજ કોલાહલ ફેર ફેરી સાર્વજનિક હિત તરફ દૃષ્ટિ કરી પોતાના પ્રતિષ્ઠા બચાવશે તેમ નહિ કરતાં ફરજિયાત અને હક પકડી પોતાની સત્તાના તોરમાં નમું નહિ આપે તો કહેવાની જરૂર નથી કે હાલનો કેળવણીનો વર્ગ અન્યાય અને અપ જુદી સત્તાનો દેહ તોડવાને યોગ્ય કોઓનો ઉપયોગ કર્યા વિનાય રહેશે નહિ.

પ્રિય મહાશય ! હવે આ વિષય પર વધુ વિચેચન કરવાની જરૂર નથી, તો ઉપર જણાવેલાં કારણથી આપણી કોમ આપણી સમાજ આપણે ધર્મ અને દેહ અધોગતિએ પહોંચતો જાય છે એમાં તો સંમત રહીએ નહિ. ભૂતકાલની મહત્તામાં જ અભિમાન આપી રહીએ છીએ.



દેશની ઉન્નતિ, બેઠે હાથ આપણે આમજ બેસી રહીશું ? શું આપણા હાથમાં કોઇ ઉપાયજ રહ્યો નથી ? શું આપણી બુદ્ધિનો વિનાશ થયો છે ? આવી ચિંતા કરી બધા કરીશું ? ના નાતમરી સ્થિતિનો અભ્યાસ કરો ! એને અન્ય દેશની જાહેજલાલી અને ઉન્નતિનાં કારણો તપાસી તમારી શાંતિ અને સમાજહિતને ખાતર નીચેનું પદ ધ્યાનમાં રાખી સ્વાર્થનો ત્યાગ કરી ઉત્તમ કાર્યમાં કર્તવ્ય પરાયણ થવાને સોગન લેવો.

રાજર્ષિ બુદ્ધિરિનાં કહેલાં નીચે મુજબ ન નિ-  
સુત તથા શીશુત બાકશ્રી કુવચ્છ વિદુષ્ઠભાઈ મહેતાનું નીતિ પદ હાથમાં ફાટતી રાખી શાંતિ અને સમાજ હિતને ખાતર દરેક શાંતિની અંદર સ્વાર્થમાં અંત બનેલા નરાધમોની તરફથી નિંદા, અપમાન, અપયસ તેમજ એકેકે અત્યાચારો આવે તો તેની પશ્ચ દરકાર રાખ્યા સિવાય પોતાનું કર્ત-  
વ્ય સમજીને કર્તવ્યપરાયણ થાઓ, સોગન લેવો અને રાજર્ષિ બુદ્ધિરિના કહેવા મુજબ—

પ્રારમ્ભે ન હૃદ્ય વિદ્ય મયેન નીચે :

પ્રારમ્ભ વિજ્ઞવિહિતા વિરમંતિ મઘવાઃ ।

વિદ્ય પૂનઃ પુનરપિ પ્રતિહન્યમાનાઃ

પ્રારમ્ભમુત્તમઃ જનાં ન પરિચર્જંતિ ॥ ૧ ॥

ભાવાર્થ—જિના બધા અધમ પુરુષો કાર્યનો આરંભજ કરતા નથી, અને અધમ પુરુષ કાર્યનો આરંભ તો કરે છેજ પણ અતિ વિન્દ આવતાં તે કાર્ય પશ્ચ મુકી દે. પણ ઉત્તમ પુરુષો તો વિધોપાધા વારંવાર હજુવા છતાં પણ નાચીપાત્ર ન થતાં—

નિન્દન્તુ નીતિ નિરુણા યદિવા દુરુચન્તુ

છર્મ્યા સત્ત્વચિત્તકુ મંદજ્ઞવા વયંમુમ્ ।

અથૈવ વા મરગમન્તુ પુણન્તેર વા

ન્યામાન્ પપઃ પ્રવિજ્ઞંતિ પદં ન પીરઃ ॥૧॥

ભાવાર્થ—નીતિ નિરુણ પુરુષ નિન્દા કરે

પણ આલ્થો જાઓ, સુલુ આજે થાઓ કે એક સુખ પછીથી થાઓ, તો પણ ધીર પુરુષો ન્યાયને માંગેથી એક પગલું પણ પાછા હસતા નથી.

ગુજલ—કુંવાલી.

અમારી શાંતિના માટે ધરી કદની અમે અમે બધી હોડી દબે મેળે ધરી કદની અમે અમે. અમારી સુખ સંપત્તિ દીધી જલાતમ મહા દેહી દબે લગની લગી શાંતિ ધરી કરેતી અમે અમે છવાયાં છાટ પડ કાળાં અમમાં અંતરો બેંદી ખરો હન્ટેદ તે કરવા ધરી કદની અમે અમે. સદાય બેસતાં હતાં અમારી શાંતિની ચકલી ચમકવા ચોદિશા માંડી ધરી કરેતી અમે અમે. નથી નિંદાથી કરવાના નથી કંઈ માનની પરવા અમારે તો સદુ સરણુ ધરી કદની અમે અમે. રહી છે અંતરે આશા અમારી શાંતિનાં શ્રેયે, મહેન્દા પૂર્ણ એ કરવા ધરી કદની અમે અમે.

ઉપર મુજબ જૈન કોમ અને જૈનસમાજની ઉન્નતિને માટે જૈનશાંતિ વા સમાજનો ગમે તે મુખ્ય ગમેતેવી દુઃખી હાલતમાં હોય તો તેના પ્રત્યે તમારી દહાર દષ્ટિને જવાબદારીની દ્રષ્ટિ સમજ સવધા એકજ વીર બગવાનના પુત્રો છીએ એવી રીત ખરા જિગર અને ખારની સામક્ષીથી બેટી તેમની ઉન્નતિને ધધાવકાચ સદાય તેમજ આત્મભોગ આપી સમાજ પ્રેમ અને પ્રજા પ્રીતિ મેળવે નહીં તો પછી આપણી ઉન્નતિની આશા "ન જુઓ ન બરિખતિ" માની સેનાની સાથે આપણેજ હાથે નીચે મુજબ અધોમર્તિને પ્રાપ્ત થઈશું.

દાવાલિન્દુ દહરો વર્ષા જૈન માતિ,

છેરો અલેકય વરનો તણું વૈર સુર્વિ.

વેને પ્રતાલો સૌ મેન પ્રતાનો વાઠો,

રહેરો વર્ષા અલમતા તણી રાજી છાંડો.

મે આ પુરાજન મેન સમાન બેં,

પારો વિહુન મારિત્ર વેરથી સત્તે.

હો શાંતિ ! શાંતિ ! ! શાંતિ ! !



નોટઃ—સુદ વાંચક દેહ ! આ લેખ બારત-  
વર્ષની આપણી જૈનજાતિ, સમાજ, અને  
દેશોજાતિને માટે મેં મારો અલ્પમતિ અનુસાર  
નિષ્પક્ષપાત પછે લખી જૈનધર્માન પ્રણેત્રી  
મારી જે શરણ બળવી છે, તેમાં કોઇ ખામી  
યા દોષ માલુમ પડે તો તેને માટે હવે પકૃતિથી  
તે દોષો પ્રતિ અલગ કરી જૈનજાતિ અને જૈન  
સમાજ દિવસે માટે સાર વસ્તુ અલગ કરશે તો  
મારો આ લેખ લખવાનો શ્રમ સારથ્ય  
થશે સમજાશે.

## આપણી ઉદ્ધત્તિ ।

રાતનો સમય છે નવેક વગ્યા છે. જે વખતે  
અધા માણસો પોત પોતાનું કામ આટોપી  
સેવાની તકપારી કરી રહ્યા છે તે વખતે શુભરાત  
કોલેજની બોર્ડિંગમાં એક રમમાં બે વિદ્યાર્થીઓ  
કે જેઓ એકબીજાના સાથે નીચે પ્રમાણે  
વાર્તાલાપ કરી રહ્યા છે.

“મામ્ મોદન,” ઉમરમાં નાના દેખાતા  
વિદ્યાર્થીએ પોતાના સાથીને કહ્યું આજે આપ-  
ણે દિવસના સતોપકારક રીતે, વાંચ્યું છે તો  
આપારે કંઈક વાર્તાલાપ કરીએ તો હોક.”

“હા, બામ્ રમણું” મોટા દેખાતા વિદ્યાર્થીએ  
કહ્યું મારો પણ એજ વિચાર હતો પરંતુ તમને  
અધ્યાસમાં ખસવું ન પડે એવું ઠંડીજીજી આ  
વાત મેં હંમણી નહોતી. ત્યારે મામ્ મોદન,  
આપણે કંઈ આખત લગાડશું ?

વાહ મામ્ મોદન આખત બોળવાની કેરી ?  
તોને આપણે હિંદુ સંસ્કાર ! આપણે સૌ કેળ  
વણીમાં કેટલા પઠાન છીએ આપણામાં મેટ્રિક  
અગ્રેથી સીએ. તો ગણી ગણીજી છે. અને  
કેન્ડુએટસ તો આંગળાને નેટ મણાય દેટસીજી છે.

હા મામ્ મોદન, એ બધું તદન ખરું છે  
પણ એ વાતનો આપણા હિંદુઓને માટે લગભગ  
કોઈ અર્થ નથી, પરંતુ આપણા બાળકોને

બારસીઓનાં તથા યુરોપીય  
હેરિથિયાર નદિ જોતાં આ નિયમસે કાતે હોં ઓર  
જોઈએ છીએ તેવું શું કાનિયમાલુકલ હોતા હોં  
દેવચંદ્રભાઈનો પ્રેમ ફિ

બાધ રમણ, કારણ તેવન દે દિયાં હોં !  
અધાં અલારે કહેવા જઈયો સેઠ પ્રણમનમા  
મારો બાટ ખુદે નદિ. માત્ર કેટલું જુગાવજી ચવરે  
કહીશ. પહેલું કારણ તો એ જુગાવજીની ચવરે  
કેળવણી નહિ એટલે બાળકો કી હોં તથા આપ  
જોઈએ સિદ્ધાંત મળી શક્યું હોં ! ૫૦૦૦૦૦ કે  
બીચારી સીએઓ એમાં કંઈ તથા દેશનાકે  
એમનાં આપણ એમને કેળવણી જુગાવજી  
બીચારી લેને. અરે મામાપોનો ઓર જિમ પર  
કારણકે હોકરીઓને બાર તેર મી વનગા દેનેવાલે  
પરણાવી દે એટલે બીચારાં મા ફલ સંતોષજનક  
અપાવવાનો વખત કેરી રીતે દે મયે ! યહાં

વાહ મામ્, બુદ્ધિ તો હોક ! બે વ્યવહારિક  
નજ મોરી બુદ્ધ છે જો તેઓ પાંચ ધાર્મિક  
સત્તર વરસની વયે પરણાવે તો ન કમી જાને હોં  
કેળવણી મળી શકે, જે વયે બીચારો મરિયા  
“લગા” એટલે શું તે ન સમજતાં કોશિષ બી  
બીચારીઓનાં લગન કરી દે છેવડાં ચલાત્તા  
કેટલું બંને સમજણી હોતાં નથીસમા લોભોને  
થવાને બદલે હૃદય ભગ્ન થાય જ્ઞાસવવાનોકો  
પરમી સેન

હા મામ્ મોદન, જે મારી બુદ્ધિ ! આમંત્રણ  
તો તારી એ ક્યાં વધારે મારી સેઠ રતતસા  
પણ જે દુષ્યાઓ સોળ વર્ષની હો મમા હુરે  
બીચારી વરસના જોઈએ તે ક્યાંથી પડે તર

તિ પરબ્ધ  
વાહ મામ્ રમણ, બહુનું શુભાચાર્યે જિલકા  
સરાલ જેમ ક્યાંઓને મોડી પરણાવ્યો મોડી  
હોકરીઓને પણ મોડા પરણાવ્યા પાદ સેઠ  
બધું જાંતતા આપણી પાસે છે પાંચેક મહત્તમ  
મામાપ કે જે જુનાં પુરાણા મવડજીવા  
બેરેલાં તેમને તે વગી કદથ, લંન, માનેક  
અધી બાખતોની ક્યાંથી અમર હોતી હોતી  
એમ સમજે દેવચંદ્રભાઈનો અર્થ હોતો



परन्तु विद्यार्थी भी कम आते हैं तथा धर्मशिक्षाकी पढ़ाई बिल्कुल ठीक नहीं पाई गई जिसका कारण जैन अध्यापकका न होना ही है। यह जानकर आनंद हुआ कि सेठ प्रद्युम्नसा चांगसाकी पहिल बजावाई जो पढ़ी लिखी और बाल विधवा हैं वे अथकासके समय अपने घर पर ८-१० कम्पाओको बुलाकर रोज पढ़ाती हैं। और भी पढ़ी लिखी बहनों को आपका अनुकरण करना चाहिये। यहांसे चलकर ता० ४ बो-

मूर्तिजापुर आये और दूसरी दूनेके जानेमें विलंब होनेसे शहरमें गये। बशोग और सेतवालके १२ घर तथा एक मंदिर है। यहां मनोहर पापुजी महाजनसे मिले जो रत्नों जातिमें प्रथम बर्बाद होनहार हैं। आपके विचार अच्छे हैं हम लोगोको अच्छा स्वागत किया। यहांसे शामको चलकर रात्रिको एल्लिचपुर आये और यहांसे २ मील पर परतवाड़ा जाकर सेठ मोतीलाल चंपालासके यहां ठहरा। भाप लोग गिरनारजीकी यात्राको गये थे इससे सभा न हो सकी और रात्रिको २ बजे गाढ़ीमें चलकर ता० ५ को सुबह ६ बजे—

जिसका दर्शन किया। नारायण बकाराम सेतवालका एक ही घर है। शामको ४ बजे हम लोग— परतवाड़ा आये। दो मंदिर हैं जिनके दर्शन किये। एक मंदिरका जोर्णोत्तर हो रहा है। सेठ दिशान मोतीके जीनमें मनोहर चंत्पालय है जिसका दर्शन किया। यहां ठहरनेका भी प्रबंध है तथा मंदिरमें पूजन, बैठने आदि सभी प्रकारका सुभीता है। सभी कौम्रके लिये तथा यहां पशुभोके पानी पीनका प्रबंध है। यहांमें भातकुली होकर अमरवती जानेके लिये १) में गाढ़ी कर ली। भातकुली अमरावती और कुसम स्टेशनसे भी जा सकते हैं। परंतु इस तरह जानेसे समय और द्रव्यका बचाव होनेके सिवाय बहुत सुभीता हुआ। ता० ७ की दुपहरको हम लोग—

भातकुली-पहुंचे। यहां श्री आदिनाथ स्वामीकी कुछ पाषाणकी प्राचीन प्रतिमा बिना लेखंडी है जिसका दर्शन पूजन किया। यहां मंदिरमें और धर्मशालामें अस्वच्छता पाई गई जिसके लिये नवीन मनीम रावजी सावन्तो ताकीट की गई।

है, नित्य शास्त्रसमा होती है, स्त्रियोंको भी श्रीकस्तूरी भाई शास्त्र सुनाती है। मगनबाई हिन्दी कन्याशाला देखी। २९ लड़कियां पढ़ती हैं परन्तु कुछ होनेसे पुलावे पर ६ लड़कियां आई थी। प्रपथ अच्छा है। धार्मिक शिक्षा पर विशेष ध्यान देतकी आवश्यकता है, सभी शिक्षा दी जाती है। श्रीकस्तूरीबाई और एक अध्यापक पढ़ते हैं, उस पाठशाला में १ ट्रेड पाठिका रखकर प्रिन्ट करानेवा विचार चल रहा है, ऐसा होने से यह शाला अधिक बाल स्थायी हो जायगी। दि. जैन बोर्डिंगका निरीक्षण किया। सेठ चिरजीलालजीके परिश्रम से ८० १००००) लगकर बनाने की बन गया है, १० विद्यार्थी रहते हैं, और भी १०-११ रह सकें ऐसा प्रपथ है। अभी सुप्र० और धर्म शिक्षक न होनेसे धर्मशिक्षा नहीं होती है परन्तु धर्माध्यक प० अमोलकचंदजी सीधे ही आवेशल है जो कि सुप्रि० भी कार्य करेंगे। रात्रिको एक सभा बनील है। रात्रि (समापति होनहल हीन) के समापतिरमें की गई जिसमें प० दीपचरजीने हमारा (आत्माका) उद्धार कैसे हो इस विषय पर धार्मिक (अध्यापन) रीतिसे तीन घंटे तक व्याख्यान दिया और हमने सामाजिक उद्धार पर चिन्तन किया। समापतिमें पंडितजीके व्याख्यानकी प्रशंसा करते हुए हर एक कार्यमें प्रति वासाही भाई चिरजीलालजीकी धन्यवाद दिया और १० बजे सभा विहर्जन हुई। जनसंख्या ६० थी जिसमें पौना भाग अजैनका ही था बानी हमारे दि० भाई बहुत ही कम उपस्थित हुए थे। मारवाड़ी हाईस्कूल देखा जिसमें २०० विद्यार्थी पढ़ते हैं। यह स्कूल रा० ब० सेठ जमनालालजीकी विशेष सहायतासे मुचाह रूपसे चलता है। स्कूलके लिये शहर बाहर नवान मकान बन रहा है। ता० १० को स्टेशनके पास मराठा बोर्डिंग देखी जिसमें ३० विद्यार्थी रहते हैं और प्रपथ उत्तम है। मारवाड़ी बोर्डिंग भी देखी जिसमें ८० विद्यार्थी रहते हैं और प्रपथ बहुत अच्छा है। प० मित्रियोंको २०) मासिक उगा पढ़ता है बहुत विद्यार्थी पैर ही है जैसा कि हमारी १०००००) पाया जाता। सेठ जमनालालजी

साठबके उत्साह, धर्मप्रेम और इव्य व्ययने कारणसे यह बोर्डिंग उत्तमाप्रवासमें है। अपनेमें भाई चिरजीलालजी बहुत उत्साही और धर्मप्रेमी है तथा ये शहरके सार्धजनिक कार्यमें भी बहुत योग देने है। यहाँमें चल कर ता० ११ को सुप्रद्वे—  
नागपुर—आय, इतवारिमें सेठ गुलाबसावर्जके घरिमें ठहरे दशन पूजन आदि किये और म धीरेसेन स्वामी जो वहाँ आयें हुए थे मिले। कुछ धर्म चर्चा भी हुई। यहाँ १४ मंदिर हैं तथा जनसंख्या करीब २०० है। यहाँ से ता० १२ को सुप्रद्वे चल्कर—

रामटेक—भाये रखनसे तीर्थ २ मील है। यहाँ श्री शांतिनाथ स्वामीकी पीत पायाणवी करीब ९ फुट ऊंची प्राचीन खड्गासन प्रतिमा वि० लेखनी मनोज है। मंदिर ७ है अथ विशेष होनेकी आवश्यकता नहीं है। यहाँ परना क के रात्रिको—

नागपुर—वापिस आयें। यहाँके सभी परवार भाई मिले तो मानूम हुआ कि रामटेक पर परवार सभाका प्रारम्भिक अधिवेशन ता० २३ से २५ माचको होनेवाला है। हम लोग तो यहाँसे आलावा जानेवाले थे परन्तु प० दीपचरजी परवार अपनी जातिमें एक सुयोग्य विद्वान और अच्छे व्याख्याता होनेसे परवार भाइयोंने सभा होने तक यहाँ ठहरनेके लिये इतना आमद [दिया कि हम लोगोंको यहाँ रुका होन तक ठहरना ही पड़ा। यहाँ कुछ १४ मंदिर और जनसंख्या करीब ३५० होन पर भी १ भी पाठशाला नहीं न कन्या पाठशाला ही है जिसके लिये कोशिश करने पर सेठ पतेधर दीपचरने २५) मसिक तहकी अध्यापिका बनने खर्चसे बुलानकी स्वीकार किया। हम मगनबाई सचालिका अवि. काधन मन्त्र तथा ईदौरसे एक सुयोग्य अध्यापिका भेजनेकी प्रार्थना करते हैं कि दशा सह शिक्षण प्राप्त हो जाय। यहाँ स्त्रियोंका फिर पुरुषोंका साक्ष बचता है। बोर्डिंगमें भी कॉलेजक मित्र ६ विद्यार्थी पढ़ते हैं। बोर्डिंग स्कूल गुलाबसावर्जकी २०००००) २०००००)





होती है । संस्कृत धर्मशास्त्र पं० शंतिराज्यशास्त्री हैं । आप वीर संघके भी समासद हुए । व्यायामशाला है परन्तु अभी बंद थी । मासिक खर्च करीब ४००) है जो श्रेष्ठ वर्द्धमानरगानी देते रहते हैं । एक भी विद्यार्थी पैद नहीं है । सेठजी इनके विद्यार्थी हैं कि कुछ खर्चा आप ही चलाते हैं परन्तु अल्प स्थायी फंड नहीं निराश है जिसके होनेकी अतीव और शीघ्र आवश्यकता है । लायब्रेरी, वाचनालय भी है तथा साप्ताहिक समा भी होती है । इस बोर्डिंगहा कार्य देख कर हृदय दोनोंको अतीव आनंद हुआ । यहांके विद्यार्थी बहुत मित्तवर्मा हैं । गवर्नमेंट ओरिएण्टल लायब्रेरी देखी । इसमें ६००० ताटपत्रके ग्रन्थ हैं जिसमें करीब १००० जैनग्रन्थ हैं । जो कोई ग्रंथ देते हैं उनको लेकर सुरक्षित रहते हैं । ताटपत्रोंके ग्रन्थ संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, तेलगु भाषाके तथा कन्नड़ी, देवनागरी, तामीळ आदि लिपिके हैं जिसमें ६० अक्षरधारिणों है । यहां हस्तलिखित और मुद्रित कुछ ग्रन्थ करीब ३०००० हैं । अलग २ १०-१६ पैदिन फंड हुए थे । कोई संग्रोभन करना था, कोई कपी करना था, कोई बंधनता था, कोई पूत देना था, तो कोई अनुवाद कर रहा था । संस्कृत जैन-काव्यकी कपी हो रही थी । महाराष्ट्रके कविहून वर्नामाली शब्दानुशासन (भाषा भंडारी) व्याकरण मुद्रित देता । नैशराज प्रणीत व्याकरण देता । ग्रन्थोंकी सूची भी मिलती है । पं० व्यासनाथ बाइबेलियाल, पं० नाथूराम प्रेमी आदि पंडितगण यहां नाहर का दिन छारे और मणी जैन संयोग निरीक्षण करे तो कई नवीन ग्रन्थोंका स्वागत करना है । ग्रन्थोंको देना और संग्रह देना है ।

आसु (राजकीय) बोर्डिंग स्कूल देखा । २७ वर्षसे राजकीय ओरसे चलती है । १५० स्त्री लड़के रहते और पढ़ते हैं । मिडल अंग्रेजी तक शिक्षा होती है, और हाई स्कूलमें जाने वालेको स्कालार्शिप देते हैं । वार्षिक खर्च २०००) है, व्यायामशाला भी है, टोर्किंग एक्जामिनिंग यूनिवर्सिटी भी देखी, न्यू युनिवर्सिटी इंग्लिश लायब्रेरी भी देखी । इसमें ५००० पुस्तक हैं, संस्कृत कालेज भी है, जिनमें ३०० विद्यार्थी पढ़ते हैं, और १०० को मोनन मिलता है, पहारानी किमेट कालेज, खियांका बोर्डिंग हाउस आदि और भी बहुतसी संस्थाएँ हैं, जिनका निरीक्षण समयमावसे नहीं कर सके । सारांश कि यह शहर विद्याका उत्तम केंद्र और रमणीक स्थान है । हाएक यात्रीको र्म्हैसुका निरीक्षण अवश्य करना चाहिये । यहांसे ता० १७की दुपहरको चक्कर मंदगिरी स्टेशन शमको पहुँचने और वहाँ होनेसे वहाँ रातभर रहना पड़ा और सुबह यहांसे १२ माईल भेट गाड़ीमें चक्कर ता० १४-४-१२ दुपहरको १२ बजे श्री अखणमेलगोलां (गोमटस्वामी) पहुँचे ।

(अपूर्ण)

# दिगंबर जैन

## THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिरिविधैश्च तत्त्वैः सत्योपदेशैस्तुगोत्रेणाभिः ।

संबोधयत्यनामिदं प्रवर्त्तताम्, दैगम्बरं जैन समाज-मात्रम् ॥

पृष्ठ १२ पं.

वीर संवत् २४४५, माघपद, विजय म० १९७६.

अंक ११.

### दशलक्षण धर्मकी लाकरी ।

( ले.-प० गोरखाल जैन-वटगो )

है दशलक्षण धर्म परम सुखकारी ।  
ताको निज शक्ति समान करो नर नारी ॥३॥  
जे गाली देत अनान को वमें आके ।  
तिन हृदय नहीं कुछ ज्ञान मुनो चिन छोके ।  
ये अशुभ कर्मके योग देत दुःख आके ।  
उनसे मन कीजे श्रेष्ठ कर्म आके ॥  
श्रेष्ठ-सुन प्यारे यह कोष महा दुखदानी ।  
सुन प्यारे यह कोष करे नष्ट हानी ॥  
सुन प्यारे यह क्षमा भाव सुख दानी ।  
सुन प्यारे यह क्षमा धर्मकी ग्वानी ॥  
कीजे समान रस भान यही हितकारी ।  
ताको निज शक्ति समान करो नर नारी ॥

\* \* \*  
यह मान महा दुख खान, नरक पहुंचावे ।  
तु तन धन दौड़का क्या जोर जनावे ॥  
जैसा पृथ्वी मर गिया तु वैसा पावे ।  
मत कर धर्मट वयो नाहक दुर्गति जावे ॥  
श्रेष्ठ-सुन प्यारे रावणने मान गवाया ।  
सुन प्यारे वो मर कर नर सिधायी ॥  
सुन प्यारे तन मान महा दुखार्थी ।  
सुन प्यारे मन नार्द्धि गुण सुखदार्थी ॥

वर कोमल सुधा सुपान सर्भ दातारी ।  
ताको निज शक्ति समान करो नर नारी ॥

\* \* \*  
कोईके साथ मत बपट फन्द फैलाओ ।  
जो मनमें होवे बचन उसे फरमाओ ॥  
जो करना तुमको उसे साफ नतलाओ ।  
छठ कर वयो नाहक परके प्राण सताओ ॥  
श्रेष्ठ-सुन प्यारे नहि दगा किसीसे कीजे ।  
सुन प्यारे परिणम सरल निज कीजे ॥  
सुन प्यारे छलकर विष बंधन कीजे ।  
सुन प्यारे जिन मारगमें चिन दोजे ॥  
छठ कपट त्याग मन आर्जव गुण सुखकारी ।  
ताको निज शक्ति समान करो नर नारी ॥

\* \* \*  
मत बोले झूठे बैन मनुष तन पाके ।  
नहि पावोगे दुख अधिक्त नरकमें जाके ॥  
सत बचनोंमें हो लीन कहूं समझके ।  
नामे तेरा यश रहे जगनमें छाके ॥  
श्रेष्ठ-सुन प्यारे सन बचनोंमें लव लाना ।  
सुन प्यारे नहि झूठ बचन बनलाना ॥  
सुन प्यारे बसु भूत झूठ बचन हारा ।  
सुन प्यारे वो मारकर नरक सिधारा ॥  
सत बचन बोल नारदगयो दर्शन मझारी ॥ ताको



तज लोभ पापको मूल महा दुखदाई ।  
 संतोष मुखा करे पान महा सुखदाई ॥  
 जो नप तन संयम शील ध्यान शुभ प्याता ।  
 सो सदा शुद्ध पापदिक भैल बहाता ॥

शेला-सुन प्यारे गंगा जलमें नित न्हाया ।

सुन प्यारे नहि पाप भैल धुलि पाया ॥

सुन प्यारे । त धातुमय काया ।

सुन प्यारे मुनि यासे नेह रुटया ॥

तज अशुचि भाव कर शोच सुगुणसे यारी ॥ ताको

\*

\*

\*

मन जीवमात्र पर करुणा भाव विचारो ।

पाषाँ इन्द्री वेश करो कषाय निवारो ॥

घर संयम मन बच विषय भोगको टारो ।

फिर पृथोपानित पाप क्षिणकमें नरो ॥

शेला-सुन प्यारे ये विषय भोग दुखदाई ।

सुन प्यारे नहि इनसे करो मिनाई ॥

सुन प्यारे घर संयम ब्रत सुखदाई ।

सुन प्यारे यह भव भव करे महाई ॥

हे भग्नभग्न गहन अमोघ करो रम्यवारी ॥ ताको ।

\*

\*

\*

यं कृत्स्न कर्म कट्याम सक्तं सबको ।

यथा इन्द्र चन्द्र अहिमेन्द्र कृशं सबको ॥

अब आयो उत्तम दाव मन्हरो नपको ।

नासे नाशो वसु कर्म मिले सुख तुमको ॥

शेला-सुन प्यारे नृ दमो निमोद मरणा ।

सुन प्यारे किा भार दम तन बारा ॥

सुन प्यारे अब दिवा मनुष अवतारा ।

सुन प्यारे नप भाव लोभ निन्वारा ॥

हे हास्या राक्ष भेद मोक्ष करवारी ॥ ताको ॥

\*

\*

\*

यह पूर्व पुन्य संयोग लक्ष्मी पई ।

ताको निज शक्ति समान खरिये माई ॥

औपधि ध्रुव अभय आहार जिनागम गाई ।

ये दान चार चहु संघमें दीजे माई ॥

शेला-सुन प्यारे धनको विश्वास न बीजे ।

सुन प्यारे परमार्थमें व्यप कीजे ॥

सुन प्यारे नित दान चार विव दीजे ।

सुन प्यारे यह त्याग धर्म गह लीजे ॥

यह त्याग धर्म अति परम सर्वदातारी ॥ ताको

\*

\*

\*

बहुधा परग्रहको भार महा दुखदाता ।

नित चिन्ता फावक देह रुहे नहि साता ॥

संतोष चार नहि तृष्णा प्याम बुझाता ।

कंस कर परिग्रहके कन्द धर्म विरुता ॥

शेला-सुन प्यारे परिग्रहकी संख्या कीजे ।

सुन प्यारे नहि इससे अधिक गहीजे ॥

सुन प्यारे आदिशून्य मन धरा लीजे ।

सुन प्यारे मन बच तृष्णा तन दीजे ॥

कर परिग्रहको परिमाण मिटे सुख मारी ॥ ताको ॥

\*

\*

\*

हे शीत शिरोमणि राज नगमें खासा ।

हर ताकी रक्षा मिले मुक्तिका कामा ॥

तन फलामिनरा साथ महा दुखदाता ।

रुद्रमन्हवर्ष ब्रत पाट धर्मका नाता ॥

शेला-सुन प्यारे एत भवत सेइ व्यावारी ।

सुन प्यारे नशी हनी भंज्या मारी ॥

सुन प्यारे तर परत घट्टि विवारी ।

सुन प्यारे दिन रात मात अरारी ॥

विा मरकट नगरी त्या दान व्यापारी ॥ ताको ॥

\*

\*

\*

यह पाऊन नर मव अनूर सरूळ करानाजी ।  
उत्तम क्षमादि दश धर्म हृदय धारनाजी ॥  
मगदन्त श्री अरहंत-पाके करानाजी ।  
वर निन आतमका ध्यान कर्म हरानाजी ॥

शेडा-सुन प्यारे अब मुखचंद समझाते ।  
सुन प्यारे कथ गोरेलाल छंद गाते ॥  
सुन प्यारे हम विनय एक फरमाते ।  
सुन प्यारे श्रुटियां हव माफ कराते ॥  
यह रचा सत्जनपूर ख्याल स्वपर हितकारी ॥  
ताको० ॥



पाठकोंको मालूम होगा कि ब्र० मगवानदी-  
नजी पानीपतमें भाषण  
ब्रह्मचारी देनेके सम्बन्धमें प्रुलित  
भगवानदीनजी द्वारा गिरफ्तार किये गये  
थे । अब उनपर करनालके

मजिस्ट्रेटकी अदालतमें आगति जनक बातें माषणमें  
कहनेके कारण सुकदमा चल रहा है । मगवान-  
दीनजीकी तरफसे श्रीयुत बाबू अजितप्रसादजी  
एम० ए० एल० एल० वी० वकील दखतल और  
दयालराम सुखतार बरनाल पैरवी कर रहे हैं ।  
मगवानदीनजीपर जिन बातोंके कहनेके कारण यह  
राजनैतिक अभियोग लगाया गया है वह ऐसी  
ही हैं, जैसे "रोलेटबिलसे प्रुलितके कांसटिबि-  
लको गिरफ्तार करनेके सब अधिकार मिल जाते  
हैं, इस समयसे सुगल साम्राज्यके समय प्रजा  
अधिक सुखी थी, मा'तवर्षका व्यापार अंगरेजोंने  
बंद कर दिया आदि । "

ब्र० मगवानदी नजी देश हितैषी और धर्मता  
पुरुष हैं । आरने जैन जातिकी सेवा करनेके लिये  
नौकरी छोड़ दी और अपने बालबच्चोंका मोह  
त्याग दिया । जाति सेवा ही इनका एक व्रत है ।  
सरकारके विरुद्ध हमने इनको कभी नहीं सुना  
यह एक राजवक्त गृहत्यागी ब्रह्मचारी थे  
और इनका जीवन धार्मिक जीवत है । उक्त  
पं० अजुनलालजी सेठी बी. ए. को जेलमें रहने

मेवाडा ( अठेवरा ) ज.तिने मुखना.  
गुजरातना मेवाडा अधुआने ज्ञापनावतुं के  
आपणा प्रुलित मेवाडा देशना अठेवरा जानयी  
छे साक्षगां अने केवा सज्जेगोभां अर्थां आभ्या,  
अर्थां आपता अगाउ वच्चे वच्चे कथां कथां  
आपणा दोदोअने निवास कथो, अत्रे आपी कथा  
हुया गाभोभां प्रथम रक्षा, त्वार गाह कथे कथे  
रथले वरया, दशा अने वीसा अभे अने  
शाधी अने कथा आचार्यना वपुतभां पड्या,  
सोश्रता अने अकेश्वरना मेवाडा अधुआने  
संजुध दतो के नदी, मेवाडाना गोत्र केडला  
अने कथां कथां गोत्रतो युग पुरष कोषु दतो,  
कथा आचार्य गोत्र रथाभ्यां, आपणुी उत्पत्ति  
दैत्यभांधी के पछी प्नीथ कोष कोभभांधी यथ  
पुगेरे दडिक्टवतो संपूजुं केवाल प्रगट-थयानी  
अरर छे, तो ज्ञापनावतुं के ले कोष विद्वान्  
मेवाडा भाष या अन्य कोष उपरनी दडिक्टव  
पुजासावार लणी भोक्तवो तो तेने धन्याम ३.  
२५) हमारा वररथी आपणाभां आवरो, तो  
स्वार्थ साथे परभार्थतुं क्षम संगथ धविद्वसव  
अधु भोजन करी अने लणी ज्ञापारो तो उपहार  
यथे.

भोदनसाक्ष अधुसाक्ष  
काशीगा (अलात.)



हुए और इधर इनर इस प्रकारका मुकदमा होता देखकर जैन समाजको बहुत आश्चर्य और दुःख हो रहा है। सरकारकी जैन समाजके नेताओं उपदेशकोंकी ओर वकद्वष्टि देखकर बड़ी चिन्ता उत्पन्न होगई है। यदि सरकारने सेठीजीकी तरह ब्रह्मचारी भगवानदीनजीके साथ भी उचित न्याय—दुधका दुध पानीका पानो न किया तो जैन समाजमें और असंतोष फैलेगा। जैन वकीलोंको चाहिये कि क्यानाल जाकर अपने एक नातिहितैषीको संकटसे मुक्त करावें। संभव है यह मामला अधिक दिन तक चले और द्रव्यकी अधिक आवश्यकता पड़े। यद्यपि अभीतक भगवानदीनजीकी ओरसे समाजसे किसी प्रकारकी सहायता नहीं मांगी गई है पर समाजका कर्तव्य है कि इस मामलेकी पैरवीको लिये हर प्रकार तैयार रहे। दुर्भाग्यसे यदि भगवानदीनजीको मजिस्ट्रेटकी अदालतसे सजाका हुक्म हो गया तो अपील हाईकोर्ट तक ही नहीं किन्तु प्रिवी कांसिल तक करनी चाहिये। यह मामला केवल भगवानदीनजी तक ही सम्बन्धन ही रखता है किन्तु इसका सम्बन्ध कुछ जैनसमाजसे है इसलिये सर्व प्रकारका भेदभाव मिटाकर भगवानदीनजीके मामलेकी अन्त तक पैरवी करने का प्रयास प्राप्त करवाना चाहिये।

सां जैन समाजमें अंग्रेजी भाषामें प्रकट होनेवाला दायित्व इस जैन गजट। किं 'जैनगजट' ही या जा कि १५ वर्ष हुए प्रकट होता या पान्नु अंशके संवादक बन्धु भाज-

तमसादजी वकील एम. ए. एल एल. बी. लखनऊके बनारस चले जानेसे आपने ६ माहसे बंद कर दिया या पान्नु हमें लिखते अत्यंत हर्ष होता है कि जैनगजट विशेष समय बंद नहीं रहा और एक नहीं पान्नु तीन संवादकोंके संपादनसे फिर प्रकट होने लगा है जिसका प्रथम अंक जुलाई माहका हमें प्राप्त हुआ है। संवादकोंके नाम बैरिस्टर मि. जुगमदिराल जैनी एम. ए., वायू अजितप्रसादजी वकील (१६ दुर्गा कुंड बनारस) और सी. एस. मल्लीनाथ, २१ पैरोश बैरट चार, आयर स्ट्रेंड, ज्योर्जे टाउन, मद्रास हैं। श्रीधुत मल्लोनाथजीके ही विशेष परिश्रम और अर्थ व्ययका ही यह फल है कि जैन गजटका पुनर्जीवन हो सका है और वायू अजितप्रसादजी तथा बैरिस्टर साहबने लेखादि भेजना स्वीकार किया है। यह अंक १४ पृष्ठका १२ लेखोंसे सुसज्जित है जिसमें The under currents of Jainism, Jains and the Tamil Literature, Pandit Ajitprasadji's letter, Ancient J. Indian culture आदि लेख पढ़ने योग्य हैं। संपादकीय नोट भी मार्फके हैं। खेद है ऐसे एक ही अंग्रेजी पत्रकी माहक संख्या बहुत ही कम है इस लिये अंग्रेजी पत्र लिखते जैन माह-योका करने है कि इस मासिकपत्रके माहक संपादन हो जिससे कि संपादकोंका उत्साह बाध नहोने रहे। वार्षिक मूल्य किं २) है। मिड-नेरा नम मद्रास Madras ही है।



जैन सिद्धांतोंद्वाराक समानसेवक बाल ब्रह्म-  
चारी पं० पत्रालाहजो  
जैन सिद्धांत बाकलीवाल कडे वयोसे  
प्रकाशक। कुछात्तेमें हैं और वहां  
शुद्ध प्रेस भी खोला है  
जिससे कई जैन ग्रन्थ सामुवाद प्रकट हुए हैं  
और होने वाले हैं परन्तु इसके साथ-एक मह-  
त्त्वका कार्य करनेका आपने साहस किया है वह  
आदर्शनीय है। बंगाल प्रांत बहुत बड़ा है  
इससे बंगाली भाषा और लिपि जाननेवाले भी  
बहुत हैं तथा बंगाली साहित्य भी सब भाषाके  
साहित्योंसे प्रथम पंक्ति पर है और बंगाल  
प्रांतमें सत्य धर्मके खोजी भी बहुतसे विद्वान्  
मौजुद हैं अतः जैनधर्मका परिचय करानेकी  
परमावश्यकता है इस लिये पंडितजीने बंगाली  
भाषामें “ जैन सिद्धांत प्रकाशक ” नामक  
मासिक पत्र निकालनेके लिये पत्रोंमें अपील की  
है। जिसमें दर्शाया है कि इसके दो वर्षके घाटेके  
लिये कमसे कम (१५००) की आवश्यकता है  
जिसकी पूर्ति (१००) या (५०) दो वर्षके लिये  
श्रीमानोंसे प्राप्त होनेसे हो सकती है। इसमें  
अब तक (६०६) मरे गये हैं और विशेषकी  
आवश्यकता है जिस पर हम श्रीमानोंका ध्यान  
आकर्षित करते हैं। यदि अश्विन मास तक  
सहायता पूरी न होगी तो पंडितजी हताश हो  
कर आये हुए रु. वापिस करनेवाले हैं इस लिये  
श्रीमानोंका फर्ज है कि इस कार्यके लिये पंडि-  
तजीको (१००) या (५०) भेजनेका तुरंत ही  
बादा करें। पता इस प्रकार है—जैन सिद्धांत  
प्रकाशिनी संस्था, नं. ८ नईद बासठेरा, बाब  
बाजार, कलकत्ता।

हमारा सर्वोत्तम पुण्यपर्व श्री दशलाक्षपर्व  
सानंद पूर्ण हुआ है और  
उत्तमक्षमा। बहुतसे स्थानोंपर यह पर्व  
विशेष रूपसे व्यतीत  
हुआ है जिसमें मुनिश्री चन्द्रसागरजी कर्त्तवहिनो  
तथा भार्गवोंने एक माहके उपवास भी किये  
थे। धर्मके दशलक्षणोंमें सर्वोत्कृष्ट धर्म श्री  
“उत्तमक्षमा” है और हमारे सभी माई हम  
पर्वके बाद परस्पर उत्तम क्षमाकी याचना करके  
वर्ष भरमें किये गये अपराधोंकी क्षमा मांगते हैं।  
तथा स्नेही संबंधियोंसे भी पत्रद्वारा उत्तम  
क्षमाकी याचना करते हैं। हमारे कार्यालयमें भी  
बहुतसे स्नेहियोंके क्षमापत्र आये हैं उन  
सबको पृथक् २ उत्तर लिखनेको हम लाचार हैं  
इसलिये इस पत्र द्वारा ही ‘दिगंबर जैन’ के  
वाचक वर्गसे उत्तम क्षमाकी याचना करते हुए  
निवेदन करते हैं कि एक पत्रकारका कार्य ऐसा  
है कि सत्य हाल लिखनेसे या सत्य निवेदन  
करनेसे कई माइयोंको बुरा लगता है परन्तु  
पत्रकारका तो यह कर्म है कि निडर होकर  
पक्षपात रहित संपादन कार्य करना चाहिये और  
ऐसा करनेसे हमारेसे जो कुछ भी कटु शब्द  
वर्ष भरमें लिखे गये हो और जिससे किसीका  
मन रुंझित हुआ हो तो हम उसके लिये उन  
माइयोंसे उत्तम क्षमाकी याचना करते हैं और  
हम यही चाहते हैं कि अत्माका मूठ स्वभाव  
उत्तम क्षमा रूप ही है इसलिये हमारे पाठकोंमें  
भी उत्तम क्षमा धर्मका वास ही अहर्निश हो  
जिससे कि संपारमे सुख और शांतिकी स्थापना  
हो। तथास्तु।



## ઈંદરગઢના મંદિરનો

### જીર્ણોદ્ધાર.

હરર ચહેર ગુજરાતમાં આરાવલીની ઉપલક્ષમાં છે. હનિકાસથી આ નગર ધણું જુદું હોય તેમ લાગે છે. પ્રથમ અદિયાં દિગંબર લેન ધર્મની પ્રભાવના સારી હતી અને લેનીઓની સંખ્યા ઘણીજ હતી. આ દેશથીજ દક્ષિણ, મેવાડ આદિ દેશોમાં કુમક ભાષ્યો ગયા છે તે પ્રસિદ્ધ છે. હરરના પર્વતના શિખર ઉપર એક અલ્પ દિગંબર લેન મંદિર છે. આ મંદિર ખણુ જુદું અને અતિશય વાળું છે અને અત્યારે આ મંદિર અત્યંત ભગવાનસ્થામાં જીર્ણ શીર્ષ રૂપ રહેલું છે. વરસાદના દલાસઓમાં પ્રતિભાજ ઉપર વાણી પડે છે અને તે નીવ (મજા) મથી સાંધા બધા ખરી ગયા હોય તેમ છે, આ મંદિરનો જીર્ણોદ્ધાર લાલ ન થાય તો અસ્પષ્ટમંજર નામ રીય થઈ જવાનો સંભવ છે.

આ મંદિરનો જીર્ણોદ્ધાર પ્રથમ બે ત્રણવાર થયેલો છે. સંવત ૧૬૦૫ ના કાળજી વડે ૨ ના દિવસે જીર્ણોદ્ધાર કર્યો હોય તેમ આ મંદિરમાં સ્થિત કાષીસર્ગ એક પ્રતિમાથી અંકિત થાય છે. બીજી વખતે બહારક વાદીરૂપણુએ ૧૧૫૧ માઠા યુદ્ધ પના દિવસે જીર્ણોદ્ધાર કરાવ્યો હતો. આ મંદિર પચસોથી મળજુત વાંધા હોવાથી અત્યાર મુઘી અસ્તિત્વ ધરાવે છે. પછી લાલમાં એના અવરથા અતિશય જીર્ણ શીર્ષ છે અને એનો જીર્ણોદ્ધાર કરાવવાની ખાસ જરૂર છે. નવીન દેહેરાસર કરાવવા કરતાં જુના મંદિરનો જીર્ણોદ્ધાર કરાવવો તે શ્રેષ્ઠ છે. વળી જુના મંદિરનો જીર્ણોદ્ધારથી દિગંબર લેનપંથના પ્રાચીન તાના ચિન્હો અસ્તિત્વમાં રહેશે.

વર્તમાન સમયમાં દિગંબર લેનપંથનાં કંઈ પણ પ્રાચીન ચિન્હો છે તો ચાલુ, અગ્રપ્રતિમા અને જિનાલય છે, કાંચ કે કાંચમાં રહેલું છે કે—

નિરાલવત્ત્વ ધર્મસ્ય સ્થિતિદેશનાતઃ સર્વાં ।

મુક્તિપ્રાપ્તાઃ સોનાં, આત્મેવક્તો જિનાલયઃ ॥

અર્થ—જન મંદિરોથી ધર્મની સ્થિતિ સમાવેલીજ છે તેમ મોક્ષનો માર્ગ જિનાલયજ છે.

આ મંદિરના જીર્ણોદ્ધાર માટે હજારોની મલાદ લેટોં એમ બહુપ છે કે તેમાં યોજામાં યોજા રૂ. ૫૦૦૦૦) થશે, માટે સર્વે દિગંબર લેન ભાષ્યોને નમ્ર પ્રાર્થના છે કે પોતાના કમાયેલા શુભ દ્રવ્યને ઉપયોગ જે કોઈ ભાગ્યશાળી કરશે તે મહાન પુણ્ય અને પશના ભાગી થશે.

જે સદૃશ્યદરથી અથવા બહેતો પોતાના નામ આવા શુભકાર્યથી અમર કરવા ઇચ્છતા હોય તેમને અત્યે નમ્ર વિનંતિ કરીએ છીએ કે જે રૂ. ૩૦૧) આપશે તેમના મુખારક નામની તક્તીઓ સદૃશ્ય દેહેરાસરના કેપડી ઉપર મોટાઠામાં આરશે. અને જે રૂ. ૧૦૦૦) ની રકમ આપશે તેમના મુખારક નામની તક્તીઓ દેહેરાસરના સહા મંડપમાં લગાવવામાં આવશે અને જે મૂળ ગભારાએનો આરસ મથરથી તથા વેદી પવાકણ વીગેરેનો જીર્ણોદ્ધાર કરાવશે તેમના મુખારક નામની તક્તીઓ પવાસજો ઉપર લગાડવામાં આવશે.

જે ભાષ્યોને આ કાર્યમાં દાન કરવું હોય તેમ પત્રવ્યવહાર કરવો હોય તે નીચેને સરનામે લખવો—

૧. લક્ષ્મણાઈ લક્ષ્મીચંદ

સરાઈ ખમર, મુખાંક.

૨. ટારી પડમશી લેખતાદાસ

હરર (મહાકાશ).

ભાષ્યોના સેવા—

નન્દનલાલ લેન લેખ.

ઉદ્દેપુરકે મેલેકા પંદા બધીચક વગુચ નહીં દુખા હે । વીર કાલ્યાણને પ્રતિતા વી દે ફિ ન હાલક પંદા વગુચ ન હોવા મેં કિલર વગડી નાંતુતા ।

गुगुला है, जमा बराबर नहीं है। कमेटीने राय-  
देशके पंचों समस्त मद्धारकजीके हिसाबमें गरुलन  
सुनाई और यह प्रस्ताव रक्खा कि महाराज एक  
रायदेशका दि० जैन माईको मुनीम रखे परन्तु  
मुनते हैं कि सावली टप्पाक माइयोने इक्का  
भी विरोध किया था।

समान सेवी-ननलाल जैन, इंटर ।



मंडवा-के चान् गुलाबसा कचरसाने  
(०००) की जायदाद वहाँकी जैन पाठशा-  
लाको दी है।

अलौगढ़-में आसोन सुदी १५ सेवदी ४  
तक रघोत्तर होगा।

चातुर्मास-ब्रह्मचारी सुतानंदजीने मभू-  
दाबादमें, ब्र० सुवानीलाठने चारा दिवनीमें  
और ब्र० कुंशर दिगिभयमिहगांने पक्का (रीया)  
में चातुर्मास किया है। कुंशर माइने मानादे  
एक ममा रूप पित्त जगाई हैं निजमें व्याख्यान  
करना सिक्का हैं।

मुनिश्री-ब्रह्मचारीकीने प्रागेदा (पो.गरी,  
बांभराडा) में चातुर्मास किया है। आने एक  
माहके उपराम मानंद एवं व्यानपूर्वक पूर्ण बिदे  
है। दर्शनपिटपो उदरगढ़, शारंग और  
मंदपोर स्टेशनमें जा सकते हैं।

वागडमें विद्यालयकी स्थापना-  
श्रीमान् ब्र० शीतलप्रसादजीने वागडमें वागीदो-  
रामें चातुर्मास किया है और आपकें प्रयत्नसे  
बांसवाडामें विद्यालय और बोर्डिंग खोलनेका  
निश्चय हुआ है। इसके लिये बना बनाया  
अपना मकान और (२७१९०/-) नांदे-रा. सा.  
सेठ विनयचंद चंचालाठने दिये हैं। विद्यालयका  
नाम 'रायसाहब, सेठ विनयचंद दिगंबर जैन वागड'  
प्रांतीय विद्यालय और बोर्डिंग' होगा। इसमें  
मुख्यतासे संस्कृत और धर्मकी शिक्षा तथा गौण-  
तासे लौकिक शिक्षा भी दी जावेगी। सभी  
२० अनेपठ और २० पेट विद्यार्थी लिये  
जावेंगे। पेटसे सिर्फ ५) मासिक फीस लेवेंगे।  
समाप्तिसेठ विनयचंदजी, पंचो दोशी जीवराजजी  
वगीदोर, उपमंथ्री धनराजजी तडवाटा और  
अविष्ठाता पं. शुद्धचंदजी लदरर निवासी नियत  
हुए हैं। विद्यालय खोलनेका मुहूर्त आसोन  
सुदी १५ शुक्रवारको होगा निम मौके पर  
वागड प्रान्तके सभी दि० जनोंको प्रवेश करने  
योग्य लटकों सहित अवश्य पधारना चाहिये।

बांसवाडामें-ब्र० शीतलप्रसादजीके पवार  
रामें दो आम ममाणे हुई थी निममें बांसवाडी-  
जीने मधे सुगका उपाय और जन्माविक्रय  
निर्धन पर प्रभावजाडी व्याख्यान दिये थे।

स्वर्गस्थ हुए-कच्छन निधारी बाठ प्रण-  
चारी बारा मुनीचंदजी हुसई जो कई वर्षोंसे  
अपश्रममें रहने में और जिनकी उम्र करीब सौ  
वर्षकी थी, स्वर्गवासी हुए हैं। बाराके मधुपुरमें  
एक कान्ठरी घबन स्थापित किया था और  
मनोरंजन भी दिये हैं।



## ईडरगढ़ के दिगंबरी श्वेताम्बरी मंदिर ।

दिगंबरी की प्राचीनता ।

वार्दाभूषण कव दृष्ट ?

सुज्ञ विचारकष्ट ! अभी थोड़े दिन हुए ईडरगढ़ (इस्वदुर्ग) के ऊपर श्वेतांबर भाइयों ने बावन जिनालयका जीर्णोद्धार कराया है, यह जीर्णोद्धार भारतके समस्तसंघसे कोप (फंड) एकत्रित करके कराया है इसी लिये इसकी रिपोर्ट हालमें प्रकाशित हुई है। रिपोर्टके देखनेसे यह बात स्पष्ट प्रतीत होती है कि हमारे श्वेतांबर भाइयों ने यह-कार्य बड़ी योग्यता और विपुल-द्रव्य (०६४९९॥॥)४ स्वर्चकर महान पुण्य-का कार्य किया है, परन्तु इसके साथ रिपोर्टमें कई बातें नितान्त असत्य और हास्यास्पद लिख दी हैं। यद्यपि इन झूठी बातोंके प्रत्युत्तर लिखनेकी विशेष आवश्यकता नहीं थी क्योंकि इतिहाससे यह लिखना स्वयमेव ही विचारज्ञोंके हृदयमें असत्य और अप्रमाणित दीख रहा है तो भी हमारे श्वेतांबर भाइयोंमें आज कल पेसी धुन समाई है कि अन्यके तीर्थ और मन्दिरोंको अपनाने लगे हैं, पक्षपातसे सबेज कलहके बीज बो रहे हैं। अस्तु, ये बातें जून लोगोंको ही शोभा देती हैं, परन्तु जिन तीर्थ और मन्दिरोंकी बावत ये लोग प्रमाण देते हैं वे बिल्कुल बनावटी और नितान्त झूठे होते हैं। श्रीसम्मेद शिखरके मुकदमेमें जो बाद-शाही फरमान पेश किया था वह कोर्टसे झूठ साबित हो गया। हालमें तारंगा पर्वतको अप-

ना बताते हैं परन्तु वह भी अप्रमाणसा प्रतीत होता है। रासमालामें यह लिखा है कि तारंगानी पर कुमारपाल महाराजने अजितनाथका मंदिर बनाया उसके प्रथम भी वहां पर मंदिर थे अर्थात् दिगंबर मंदिर उससे प्रथमका बना हुआ था। इसी प्रकार सब जगह यही गल्लबड मच रही है, समाजकी शक्ति क्षीण होती चली जाती है, साथमें वैमनस्य बढ़ता चला जा रहा है। अस्तु, हमारे भाइयोंको सुमति हो।

रिपोर्टकी मूनीकामें यह बावन जिनालय संप्रति राजाने विक्रम संवत्से प्रथम बनाया, और उसका जीर्णोद्धार सेठ बच्छराज १, कुमारपाल २, गोविंदराज ३ और चंपकशाह ४ ने अनुक्रमसे किया। अस्तु, जो कुछ भी हो, परन्तु 'महीकांठा मेन्युअल' यह लिखता है कि श्वेतांबर भाइयोंके मंदिरसे दिगंबर जैन मंदिर अतिशय प्राचीन है। इसी प्रकार रासमालामें यह मंदिर कुमारपाल महाराजने बनाया लिखा है परन्तु सोमसौभाग्य काव्यमें इस्वदुर्गके वर्णनमें ईडरगढ़के शांतिनाथके मंदिरका उल्लेख नहीं है। क्या उस समय यह मंदिर अस्तित्वमें नहीं था ? जिस प्रकार श्री ऋषभदेवके मंदिरका वृत्तान्त सोमसौभाग्य काव्य एवं अन्य प्राचीन पुस्तकोंमें मिलता है, इस प्रकार इन बावन जिनालयका उल्लेख नहीं दृष्टिपथ हुआ। देखनेसे यही प्रतीत होता है। रासमालाकर्ता लिखता है कि "दुर्ग में जेनोंके दो मंदिर हैं उनमेंसे एक दक्षिण दिशाकाय मंदिर जो ठेकरी पर है अतिशय प्राचीन है, और दूसरा बड़ा मंदिर है", ।



प्रस्तु, दोनों मंदिरोंकी प्रतिमाओंके शिलालेख देखनेसे भी दिगंबर प्रतिमा ही अतिशय प्राचीन ठहरती हैं ।

ईडर-गुजरातमें अतिशय प्रसिद्ध प्राचीन शहर है । यहां पर दिगंबरजैन धर्मकी महिमा राजाओंके ऊपर प्रभाव डालनेवाली प्रसिद्ध थी । वर्तमानमें भी दिगंबर जैनोंकी वस्ती अधिक है । यहां पर पद्मापाचक्रवर्ति-आध्यात्मकोविद-ताकिकसिंह श्रीसकलकीर्ति-शुभचंद्र-वादिभूषण-यशकीर्ति आदि बड़े २ प्रसिद्ध भट्टारक हो गये हैं जिनके बनाये हुए हजारों ग्रन्थ ईडर भट्टारमें जीर्ण शीर्ण अवस्थामें थप भी मौजूद हैं । इन भट्टारकोंकी बृहत् पट्टावली अभी हालमें निकली है । इन लोगोंने क्या-क्या किये ? कितने वाद जीते ? कितने ग्रन्थ बनाये ? इत्यादि बातोंका उल्लेख कुछ २ मिलता है । दुःखकी बात यह है कि आज तक हमारा इतिहास छिपा हुआ भंडारोंमें गुप्त रह रहा हुआ है । अतएव दिगंबर जैन धर्मकी महत्त्वता और उनके उच्च प्रभावशाली एवं चमत्कृत व पौंड्र आभा विश्व पर नहीं पड़ी । इसलिये कितने ही झूठे उपलब्ध हमें हमारे अन्य भाइयोंसे सुननेके प्रसंग आये । एवं इतिहास दृष्टिसे भी दिगंबर जैन धर्मके नेताओंके प्रभावसे संसार वंचित रहा । ऐसा होनेसे जो देखनेमें आया या ज्ञान गुना वह साधारण जनताकी दृष्टि-पथमें सत्य प्रतीत होने लगता है, धीरे २ यह बात रह हो जाती है और सत्य छिप जाता है । भारतवर्षके इतिहासके विषयमें भी यही विद्वानोंका मत है । अगु, टाकरिपोर्टमें ईडरका

संक्षिप्त इतिहास भी लिखा है । यह इतिहास कहां तक सत्य है यह पढ़नेसे विद्वानोंको स्वयमेव निश्चय हो जायगा । यद्यपि यह संक्षिप्त इतिहास एकपक्षीय दृष्टिसे लिखा गया है और राजप्रकरण रासमाला आदि ग्रन्थोंसे तुलना करते हुए यह सिद्ध करनेका दंग रचा है कि यह जो कुछ लिखा है वह सत्य है आत्म श्लाघा नहीं है । वाचकवृन्द इसका निर्णय स्वयं करें ।

इस रिपोर्टमें एक स्थान पर " दिगंबर संप्रदायमां साधुओ तद्वदन नग्न रहे छे, आजना जमानामां नग्नपणे विचरबुं महा कठिन होई तेवा साधुओ कचित जोवामां आवे छे, नग्न साधुओ-क्षपणको दिने दिने उग्र विहार अने क्रियानी विकटतापी अविद्यमान यता गया, पण तेने बदले शिथिलाचारी भट्टारको पथे । तेने वेदने लईने अगाउ रक्तांवरो कटवामां आवता" । उपरोक्त लेखमें लेखकने भट्टारक स्थापनके लिये जो युक्ति प्रदान की है वह असत्य है कारण भट्टारकोंका उत्पत्तिमें यह कारण नहीं है किन्तु सन् १२९९ में आलम-शाह-अलाउद्दीन बादशाहकी धर्ममें आस्था नहीं थी । इसकी सभामें राधे और चेतन दो ब्राह्मण भी थे जो कि नाम्निष्ठ मतके पक्षपाती मंत्रवादी तथा विद्वान थे । ये बादशाहके मनको और भी धर्मशून्य करते रहते थे । एक दिन उन्होंने बादशाहको यहकथा कि सर्व भगोंकी परीक्षा होनी चाहिये । जो सत्य ठहरे उसके सिवाय सर्वको मुसलमान बना लिया जावे । बादशाहने देहलीमें आज्ञा दी



किं सर्व अपने २ गुरुओंको लेकर आवें नहीं तो हमारा मुसलमानी धर्म स्वीकार करना पड़ेगा । उस समय मुनिवर महावसेन ( महासेन ) अपने तपोबलसे एक रात्रिमें ही संघ सहित गिरनार पर्वतसे आकाश मार्गसे देहली आये । और इमशानमें संप्रदशसे मूर्छित बालकको अपनी तपोमहिमासे सजीवन किया एवं उक्त दोनों मंत्रवादी ब्राह्मणोंने मंत्रोंसे अनेक कौतुक दिखलाये । एक समय उक्त द्विज पुत्रोंने मंत्रके प्रभावसे मुनिके कमण्डलुमें मछली फर दी और श्रीमुनिवर महासेनकी परीक्षा ली, तो मुनिवरकी तपोमहिमासे कमण्डलुमें पुष्प मालिकायें होगई । इसलिये बादशाह प्रभृति समस्त नगर कौतुकान्वित होगया फिर तो अपमान क्लेशित उक्त दोनों ब्राह्मण पुत्रोंने मुनिवरके साथ वाद किया और पराजित हुए, जिससे बादशाहने जैन दिगंबर मुनिवरकी मुक्तकंठसे प्रशंसा की और धर्मपर दृढ़ प्रतीति हुई, हिंसाकर्म राज्यमें बंद कराये और भी इन मुनिवरने चमत्कार बतलाये जो कि ईडर भंडार गुटका नं० ७ के लेखसे स्पष्ट मालूम होता है । बादशाहकी बेगमको मुनिके दर्शनकी प्रबल इच्छा हुई तो बादशाहने मुनिवरसे प्रार्थना की तो विवश हो मुनिने वस्त्र धारण किये । तबसे ही भट्टारक स्थापित हुए ऐसा लेख और दंतकथाओंसे मालूम होता है । ये भट्टारक शिथिलाचारी और क्रियाहीन नहीं होते ये किन्तु विद्वान् और सदाचारी होते थे । यह उनकी अपरिमित ग्रन्थावलिके प्रत्येक सुज्ञ जान सके हैं ।

अस्तु, ये भट्टारक पद कोई मुनिपद नहीं है किन्तु ग्रहस्थाचार्यका पद है । ग्रहस्थ उपयोगी आवश्यक परिग्रहको रखते हुए धर्मरक्षा करते हैं । देखो भिनसंहितामें भट्टारक लक्षण—

सर्वशास्त्रकलाभिज्ञो नानागच्छाभिर्गर्भकः ।

महामना प्रभाभावी भट्टारक इतीष्यते ॥

आगे चलकर लेखकने एक अद्भुत समस्या लिखी है । वह यह है—

ईडर पुराधिप महाशय श्रीनारायण सभा समक्ष वादिभूषण क्षपणक निराकरिण्णुनां वागउदेशे पाटिल नगरे योथशूरपति रायमलदेव भ्रातव्य सहस्रमल राज्ञः पुरः पत्रावलंबन पुरसरं क्षपणक भट्टारक गुणचन्द्रनयिनां इत्थं प्रकारक प्रवचन प्रभावना समुत्सर्पण विधिवेषसां महोपाध्याय श्री १ श्री शांतिचंद्रगणिनादानां चरणाम्बुनभृंगावमाण गणि लालचन्द्रेण लेखि मुनि लामचंद्र पठनार्थं साधनें कुलवजरासक्त भी उल्लेख दिखाया है ।

इस लेखमालाके सत्यासत्यका निर्णय तो विद्वान पाठक करेंगे तो भी सत्य घटनाकी सूचना करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ ।

प्रथम तो उक्त लेखकी सच्चीमें लेखकने रासमालाके ६५६-६५७ पृष्ठ दिये हैं । रासमालामें यह बात कहीं भी नहीं लिखी है । हां नारायणराव ( द्वितीय ) के राज्य कालका वर्णन है परन्तु रासमाला ६५६-६५७में यह वृत्त नहीं है । लेखकने किस ढंग और धोखेसे लेख मिलाया है । उसका नमूना देखने योग्य है ।



“शांतिचंद्र उपाध्याये ईडरगढना महाशय श्री नारायणजी सभामां त्यांना दिगम्बर भट्टारक वादीभूषणजी साथे वाद करी तेने पराजित कर्या होता, नारायणदासे जे बंडमां मदद करी होती ते बंड अक्रवरे जाते चढीने उत्तारी बेसाड़ी वीधु ”

इन वाक्योंका संबंध भी तो नहीं मिलता । इस प्रकार एक प्रकरणमें दूसरा प्रकरण प्रेरसंग बनावटी लिखना कितना हास्यास्पद है ? भला रासमालाके पष्ठ झूठ मूठ घोखा देनेको ही लिखे थे क्या ? यद्यपि ये बातें रासमालासे नहीं मिलतीं तो भी वादीभूषण कब हुए ? और उनकी शांतिचंद्रके साथ विवाद हुआ या नहीं ? इस विषयके ऊहापोहमें इतना ही लिखना अधिक समझते हैं कि नारायणराय ईडरमें शाह अक्रवरेके अंत समयमें राज्यासन अलंकृत करते थे । देखो रासमाला पष्ठ ६४०-६९७ तक । अस्तु, इतिहासज्ञोंसे अक्रवर बादशाहका समय दिया नहीं है । सन् १९७३ में (रासमाला पष्ठ ६९६) अक्रवर बादशाहने बंड जीत कर दिया । नारायणराय सन् १९७३ में हारे और छिप कर पोटका आश्रय लिया और वीरभद्रके राज्यासन मिला । तत्काल पुत्र और पिता दोनों अश्वर बादशाहके दरबारमें गये और वीरभद्रके समक्ष राजा सिंहको पकड़ कर बंद किया, बादशाह प्रसन्न हुए, वीरभद्र स्वदेश आये कि पिता ( नारायणराय द्वितीय ) का स्वर्गवास हो गया । (देखो रासमाला पष्ठ ६९८) ।

रासमालाके आधारमें नारायणराय सन् १९७३

या १९७८ में पंचल हो गये । अर्थात् नारायणका राज्य काल सन् १९४०-१९७३ तक रहा ।

अब वादीभूषण कब हुए, कौन थे, उनसे कौन कौन कार्य किये, कितने वाद जीते, कितने ग्रन्थ बनाये ? इन विषयोंका नीचे प्रमाणोंसे बहुत कुछ निर्णय हो जायगा ।

सद्वर नगरमें संवत् १६६४ में वादीभूषणने सीताहरणरास लिखा है । ईडरगढ ऊपरके दिगम्बर जैन मंदिरमें कुछ प्रतिमाओंकी प्रतिष्ठा की है । उनका संवत् १६९१ माघ वदी ९ लिखा है । श्री केशरियाजी धुलेव रिपभद्रके मंदिरमें महान धूमधामसे संवत् १६६८ में माघ सुदी ९ को प्रतिष्ठा कराई थी । श्री वादीभूषणने श्री केशरियाजीके मंदिरका भी उद्धार उसी समय कराया था । पुनः पुनः लगातार कई बार केशरियाजीमें रह कर प्रतिष्ठा कराई । वादीभूषण महाराजने सं. १६९३ में श्री तारंगानी पर प्रतिष्ठा कराई और पद्मभुकी प्रतिमा नानचंदगी.... से हुई, यह प्रतिमा खंडित अभी तारंगामें मौजूद है । ईडर संभवनाथके प्रसिद्ध मंदिरमें सं. १६९१ ६४-६८ में प्रतिष्ठा कराई और जीर्णोद्धार कराया । ईडरके पार्श्वनाथके मंदिरमें सं. १६९९ में पद्मभुकी प्रतिष्ठा कराई । और इसी वर्ष स्वर्गरोहण हुए । वादीभूषणका जन्म अनुमान सं. १६३५ में हुआ और ये जयपुरके रहनेवाले सिद्धवाक्य केनेके शिरोमणि थे । संवत् १६९० के लगभग गटारगढ पद मुनीभित किया । सं. १६९१ में ईडरके गढके ऊपरके मंदिरमें प्रतिष्ठा प्रथम कराई । निष्का सेरा—



संवत् १६५१ वर्षे माघ वदी ५ सोमे श्री मूल-  
संघ श्रीमद्भारकगुणकीर्ति तत्प्रेष्ठ भट्टारक श्री वादी-  
भूषण गुरुपदेक्षात् इंदर (इल्लर) वास्तव्य हुमड  
शोभी आता भार्या लक्ष्मी सुता चाई जिलां श्री  
नेमिनाथ प्रतिष्ठितं नित्य प्रणमति ।

उक्त प्रतिभाओंके लेखसे वादीभूषण १६४०  
से १६६९ तक भट्टारक पदको सुशोभित  
करते रहे। इन लेखमालाओंसे तो नारायण-  
रावका वादीभूषणके समयमें अस्तित्व नहीं था  
किंतु वीरमदेवका शासन था, पाठकगण स्वयमेव  
ही विचार कर सके हैं। तो उक्त रिपो-  
टमें शांतिचंद्र उपाध्यायने वादिभूषणको नारायण-  
रावकी राज्यसभामें परास्त किया—यह लिखना  
कितना असंगत प्रतीत होता है। और रास-  
मालाका प्रमाण दिया वह भी रासमालामें नहीं  
मिला। श्री विनयकीर्ति भट्टारक सं. १५६८  
में विराजमान थे उनके पीछे शुभचंद्रजी हुए।  
यह भट्टारक न्याय शास्त्रके अद्भुत ज्ञाता थे।  
इन्होंने १६ वाद बनाये और पूजन  
आदिके ग्रन्थ बनाये एवं न्यायके अनेक  
ग्रन्थ बनाये हैं। इनका विशेष वर्णन पुनः  
लिखा जायगा। शुभचंद्रके पट्ट पर सुमतिकीर्ति,  
सुमतिकीर्तिके पट्ट पर गुणकीर्ति और गुणकी-  
र्तिके पट्टाधिकारी वादिभूषण थे।

( देखो माणिकचंद जीवन्परिज पृष्ठ ३१ )

श्री वादिभूषणके पट्टाधिकारी- रामकीर्ति  
(द्वितीय) सं. १६७०में विराजमान हुए और  
उन्होंने वादीभूषणके विषयमें अनेक  
प्रशस्ति लिखी हैं। पाठकोंके अबलोकनार्थ कुछ  
पहों पर देना अनुचित नहीं होगा—

तद्वर्णकजयिकाशनपञ्चबधुः ।

जीयात्कुवादिमुपकैरवपञ्चबधुः ॥

कात्याकुहकतिमिरनाशनपञ्चबधुः ।

वादिभूषण गुरुर्जित पञ्चबधुः ॥

यो नानागमशब्दतर्कनिपुणो मान्यैर्गुरुः पूजितः ।

कर्णाटे कलिकालगीतममो भट्टारकाधीश्वरः ॥

वादेऽनेकजिज्ञा कुवादिगणितो रत्नप्रयालंकृतः ।

श्रीमान् शुभचन्द्रवद्विजयते श्रीवादिभूषो गुरुः ॥२॥

अर्थात् आचार्य वादिभूषण गुणकीर्तिके पट्ट-  
पर असाधारण प्रतिभाशाली, न्यायशास्त्रमें  
अतिशय निपुण, अनेक मान्य नृपतियोंसे पूजित,  
अनेक आगमको जाननेवाले और कर्णाटक  
प्रभृति देशोंमें अनेक विद्वानोंको पराजित करने-  
वाले, गौतम समान तेजस्वी, यथार्थ नामवाले  
अर्थात् वादियोंमें भूषण (शिरोमणी) वादिभूषण  
गुरु विनय प्राप्त करो। गुटका नं. ८ पृष्ठ  
२३८ में वादिभूषणके लिये यह लिखा है—

पार महोत्सव घर २ जय बोलो, वादीचंद्र गुरु  
गठ सोदाकर भावो। साद वीरा तन पात पीरुधन  
जन मन मोहन पुन पावो। पंश हुमड (यहां पर  
हुमड पंश लिखा है) छ तिलक सोदित जिनमति  
हुन गयो। कुअर (भासोज) सुदांमणी (सुदां)  
पचम (५) मदागत दीक्ष धरायो। जीता अनेक  
वादिगण जेने अद्भुत विश धरायो। तर्कवितर्क  
विचार विचक्षण लक्षण वादीचंद्र मेहया ॥

इस गुटकेमें अनेक जगह वादिभूषणके वाद  
जीतनेके गीत लिखे हैं। लेख बढ़ जानेके भयसे  
नहीं लिख सके।

दुवादिभट्टारक वादे येन पराजिता

..... श्री वादिभूषो गुरुः

कुनवकोटि कुनपाटन पट्टतनमदित हुमंतवादि

स्थाद्वारनय तरित अनेक भविमन सेवाद ।

न्यायनिगम अपादिचंचू तर्कागम पोदित निनां

(पीरम) देव नृपति पूजित श्रीवादिभूषण जीजे वाद

इत्यादि अनेक प्रशस्ति मिलती हैं। वादि-  
भूषणने कौन २ से ग्रन्थ निर्मापित किये  
यह विशेषतासे भंडार खुलने पर प्रसिद्ध किये  
जायंगे।

उपरोक्त प्रशस्तिसे शांतिचंद्र उपाध्यायका वृत्त  
ठीक नहीं प्रतीत होता है। अस्तु जो हो, एक  
तो समयमें महान अंतर है, द्वितीय अपने आप  
दंत कथा रूप प्रशस्ति पर विश्वास प्रतीत नहीं  
है। उक्त लेखमें रक्तांबर क्षणक शब्द आये हैं।  
रक्तांबर और क्षणक शब्दोंका अर्थ बुढ़के  
यति होता है। भट्टारकोंको क्षणक नहीं कहा  
जाता और न प्रसिद्ध है। शब्दः शिवाभिनि  
नामक कोशमें क्षणकका अर्थ पृष्ठ १६९ में  
“बौद्धमतनो दिगम्बर साधु” ऐसा लिखा है  
और बौद्धगुरु प्रायः रक्त वस्त्र पहनते थे। शायद  
शांतिचंद्र उपाध्यायने कोई वादिभूषण बौद्ध  
साधुको पराजित किया हो। परन्तु उसका  
उल्लेख रासमालामें नहीं है। दूसरे उक्त लेख  
प्रमाण नहीं होनेका एक दूसरा भी कारण है  
यह यह है कि उक्त लेखमें (पृष्ठ ४८) ऊपर  
लिखा है :-

वादिभूषण दिगम्बरिण्युना पागलदेवो पाठ-  
शिलानगरे बोधगुप्तपति रामक देव भक्त्य सा-  
रामस्त रामः पुर वनचन्द्राव पुरःकरं क्षणक  
आगतं मुखधरं शक्तिः।

यह तो संस्कृतमें लेख है और माया मूल  
रामकी पुस्तकमें “वादिभूषण दिगंबर कीर्ती  
पाथो नय नयकारे”

मूल ग्रन्थमें केवल वादिभूषणको जीता  
लिखा है और उस ग्रन्थकी प्रशस्तिमें मुनकी-  
दिको भी जीता लिखा है। प्रशस्ति ठीक है

या मूल ग्रन्थ यह तो पाठक निर्णय करें; परन्तु  
एक बड़े मजेकी बात तो यह है कि वादिभूष-  
णके गुरु गुणकीर्ति थे। क्या गुणकीर्तिके पट्टा-  
धिकारी होने पर भी वादिभूषण पट्ट पर  
बिराजमान हुए? यह बिल्कुल सफेद झूठ है।  
इस प्रकार लेखकको उद्घाटन लिखना अच्छा  
नहीं है।

रिपोर्टमें १७महकी चोकीवाले दिगम्बर जैन  
मंदिरको अपनानेके लिये भी उल्लेख किया है  
परन्तु प्रमाण कुछ भी नहीं। केवल राज्यतंत्रसे  
संबंध मिला कर धृष्टताका हठ साहस किया  
है। उक्त मंदिरमें वर्तमानमें भी जैन दिगम्बर  
मूर्ति भग्नावस्थामें मौजूद है। साक्षात्  
हरण करना यह कैसी कुचाल? अस्तु यह  
मंदिर दिगम्बर जैनका है और उसके अनेक  
कारण तो मंदिरके देखनेसे ही प्रतीत होते हैं।  
हम भाइयोंको सूचेत कर शांतिफी प्रार्थना करते  
हैं। हो सका तो इंदरका सच्चा इतिहास भाई-  
योंकी सेवामें पुनः उपस्थित करूंगा।

शोबक—

नन्दनलाल जैन वैद्य विशारद।

नवीन ग्रंथ—

मुखसागर भजनावली।

जैन धर्मग्रंथ अ० शांतलक्ष्मणादजीके  
मनाये दृष्टे इस नवीन सम्प्रेषणमें कोई  
२५० उद्देशात्मक मन्त्रोंका अर्ध संग्रह है।  
रु. १९९ और मूल्य सिक्के ॥८॥

भैरवसर-दि० जैन पुस्तकालय-गुरग।



## महासभाके नाम

### खुली चिट्ठी ।

श्रीयुक्त महामंत्री, दिग० जैन महासभा,  
सादर गुहार । अपरंच समाचार यह है कि  
महासभाकी सीमा कहाँ तक है ? इसमें क्या  
सभी प्रकारके दिगम्बर जैन शामिल हो सके  
हैं ? क्योंकि महासभा विधवाव्याहको बुरा  
अवश्य ही समझती है और उसका कर्त्तव्य भी  
है कि इसके अनुसार वह उसका खंडन करे  
और जो लोग विधवाव्याह करने कराते होंवें  
उनको महासभामें सम्मिलित न करे और यदि  
सम्मिलित होंवें तो उन्हें पथक् कर देवे क्योंकि  
यदि वह निरंतर खंडन न करेगी और उन  
लोगोंको शामिल रखेगी तो शास्त्री पंडितजनोके  
वचनानुसार वह विधवाव्याहकी पक्षपातनी हो  
जावेगी । इस हिसाबसे यदि वह विधवाव्याह  
करने करानेवालोंको पथक् करेगी तो दक्षिण  
प्रांतका एक बहुत बड़ा भाग (सेतघाट; पंचम,  
ज्वरुथ, कासार आदि जगहियां जिनमें सैकड़ों  
वर्षोंसे यह प्रथा प्रचलित है) महासभासे पथक्  
हो जावेगा और फिर यह महासभा केवल  
उत्तर प्रांतीय रह जावेगी कारण कि वे लोग  
अब तो इस प्रथाको बंद कर ही नहीं सके हैं ।  
यदि कोई कदाचित् अपना निजी सम्बन्ध ऐसा  
न करे तो समाजसे पथक् कर नहीं सका है,  
अब ऐसी दशामें महासभा महासभा नहीं  
कही जा सकती है और न वह समस्त दिग-

म्बर जैनियोंकी ओरसे उत्तरवायित्व रख  
सकेगी । इसी प्रकार तीर्थक्षेत्र कमेटीकी कार-  
वाई भी एक देशीय ठहरेगी और बड़ा भारी  
झगड़ा खड़ा हो जावेगा क्योंकि तीर्थक्षेत्र क-  
मेटी महासभाकी शाखा है । उसके भी वे ही  
उद्देश्य हैं जो महासभाके हैं इत्यादि ।

यदि महासभामें दक्षिण प्रांतीय भाई शामिल  
हो सके व हों और वह समस्त भारतवर्ष व  
समस्त दिगम्बर जैनी मात्रकी है, तो वास्तवमें  
महासभा है ।

अब प्रश्न यह होता है कि जब महासभामें  
समस्त दिगम्बर जैनी जिनमें विधवाव्याह कर-  
नेवाले भी हैं शामिल हैं और हो सके हैं तो  
वीरसंघ पर क्यों ऐसी शंका की गई कि वह  
विधवाव्याहका यदि खंडन नहीं करता तो  
उसका पक्षपाती है । यदि यह कहा जाय कि  
महासभा ऐसे झगड़ाखू विषयोंको हाथमें न लेकर  
वह परस्पर अविरोधी बातोंको लेकर संगठित  
हुई है तो ठीक है और इसी प्रकारसे कार्य  
चल सकता है कारण कि यदि पथक् २  
विचारों वालोंके अनुसार महासभाके विभाग  
होंगे तो वह फिर महासभा न रह जायगी ।  
कारण कि कोई शुद्धजायी, कोई तेरापंथी,  
बीसपंथी, छापा पंथी, हस्त लिखित पंथी,  
विधवा विवाहके विरोधी और पक्षपाती इत्यादि  
अनेक भेदवाले भी सामान्य धर्म अपेक्षा मिल-  
कर कार्य कर सकते हैं और विशेष धर्मापेक्षा  
पथक् ही हैं ।

यदि इसी प्रकार वीर संघ भी सामान्य  
प्रकार परस्पर विरोधी बातोंको स्थान न देता

હુઆ ઓર અપને નિયમોંકે અનુસાર ( જિનમેં  
કિ પાશ્વિક શ્રાવકકી યોગ્યતા વતાઈ ગઈ હૈ )  
મર્તી કરતા તો કયા હાનિ થી ? હમારી સમ-  
જમેં તો જિતને લોગ શામિલ હોતે વે સવ સત્ત  
વ્યસન ત્યાગી, નશા ત્યાગી, દેવ ધર્મ ગુરુકે  
( દિગમ્બર જૈન સિદ્ધાન્તાનુસાર ) અનુયાયી  
તથા કિસી એક ભાષાકે જાનકાર ઇત્યાદિ, વદ-  
નેમેં લાંબ હી થા, ફિર ન જાને ચ્યોં ઉદયપુરમેં  
પંડિત ચુવંચંદની શાસ્ત્રી, પં૦ નન્દનલાલની,  
બાવા ભાગીરતી વર્ણી, વ્ર૦ જ્ઞાનાનંદની આદિને  
ઇક્કદમ વીર સંઘ પર પ્રવલ આક્રમણ કિયા ? કયા  
ઇન્હોને સંપકા કોઈ કાર્યે અનુચિત દેસતા યા ?  
જવકિ ઉસકી સમી કરિવાઈ મહાસભાસે પ્રતિ-  
કૂલ નહીં થી તો ઇસ પ્રકારસે ઉસપર આક્રમણ  
કરના, ઉસે ધર્મપાતક મતાના, સર્વપા અન્યાય  
હૈ । કયા મહાસભા વ્યસન ત્યાગ, નશા ત્યાગ,  
પદના, પદાના, દેવ ધર્મગુરુકે શ્રદ્ધાન આદિ નો કિ  
વોર સંઘકે નિયમ વ ઉદ્દેશ્યોમેં હૈ ગુરા સમ્મતી હૈ ?  
યા કોઈ મી નિયમ ઉસકા મહામભાકે પ્રતિકૂલ  
હૈ તો પ્રગટ કરના ચાહિયે; કયોંકિ વીરસંઘ  
કિસીકો મી ધોત્તેમેં હાલના નહીં  
ચાહતા હૈ । હમ ચાહતે હૈ કિ આપ રુપા  
કરકે હમ રી હમ ચિટ્ટીકા ઉત્તા િસી જૈન  
ક્ષમેં પ્રગટ કર દેવેંગે કિ વે મંચદો કયા મમજતે  
હૈ ઓર મહામભામેં દશિનકે મે માઈ મી શામિલ  
હૈ વ હો સજતે હૈ યા ગતી જિનમેં વિષય  
વ્યાહ મચન્નિ હૈ ? હમ ચિટ્ટીકે ટિગને ઓર  
ઉત્તા મોંગેકી જાલમપક્ષતા ચોં તુઈ કિ કિતને  
અદેનસકા મય રત્નનેવળે મોગ વચ તંત્ર  
ચિટ્ટિયાં ચોમંપકે કિટ્ટ મિય વર મોગોંદો

મઝકાતે હૈ । હમં ઉનંકી ઇસ કારવાઈકો  
અનુચિત સમજતે હૈ । એસા કુલિયામેં ગુડ  
ફોડના અન્યાય ઓર હરપોકપન હૈ, જો કુછ  
મી કહના હોવે સુલાસા પ્રગટ હી કહ કર  
ઉત્તર લેના ઠીક હૈ । આશા હૈ કિ આપ  
અવશ્ય હી મહાસભાકે મહામંત્રીકી હૈમિયતસે  
ઉત્તર પ્રકટ કરેંગે । આપકા—

અપમંત્રી, વીરસંઘ ।

### રક્ષા-કંઘન-રુપોદ્ધ.

( જૈન મિત્રની પહેલીને વિસ્તારથી જ્ઞાપ )

દોહરો.

વાસી શહેર કોરેના, નામ છે મુન્નાલાલ,  
પહેલી લખી નિમ ગાનથી, અર્થ લખુ દુઃહાલ.  
વરુ તેના એમ છે, શ્રાવણ મુદી મંથ,  
પુર્ણિમા જે હોય છે, હાં મજેરા થાય.  
અક્ષર તેના પાંચ છે, પ્રગટી વિષ્ણુ કુમાર,  
સાવરો મુનિનો રબો, ઉપસર્ગ તે વાર.  
નોમ ખીલ અર પ્રથમથી, અક્ષર થાયે રથ,  
તીર્થ પવિત્ર તે જાણીયે, પૂજે મોટા બુધ.  
ખીલ અને પહેલા ઘડી, દાર અને મુખ નામ,  
વેધ જન ઉપવેગમાં, આવે હરનિધ કામ.  
પંચ દાર વલો પગ, યુધ્ધ લેના છે અપાર,  
આપે તે આરોગ્યને, હખી હાં નિરધાર.  
પહેલા ખીલથી અને, રક્ષા શબ્દ એક,  
દશિવેના મર્મ છે, એમાં મીન ન મેખ.  
તીલ મોયાથી અને, અન્ધ શબ્દ નિરધાર,  
સપ્ત અન્ધમાં જાગીએ, મોયે જામનું નામ.  
દર થાય જે આતમથી, થાય પરિચ તમામ,  
શુદ્ધ અને જન આતમ, પ્યાન પર આતમ.  
હર્મ મય દો હતો, થાયે નિદ રાવન.  
મોયા પંચમ હામથી, થાયે મનનું નામ.  
સકમી કાષ્ટ રહે વરુ, દો કાલકનું નામ,  
મન લે પામે દોષ તે, દોષ મુદમ કરાર.  
વેધ મોઝ અને વરુ, રુપા દે નિરધાર,





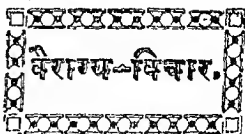
નિર્ધન જે વિદ્વાન છે, કરે ન ગણુતી કૈય.  
નિજ કન્યા દેવે નહિ, એ ધનનો મુદિઆય,  
ધનના મિથ્યા ગર્વથી, પાપ કરે બહુ વીધ.  
ગુણવત્ત સર્વને દેખીને, ગર્વ ધરે અધરીત,  
નિર્ધન તે ધન કારણે, કરે વિકંથ ન્યાય.  
આપે શુદ્ધ કે બાળને, ધન માટે કન્યાય,  
પાત વિચારે તે નહિ, કે પુત્રીને દુઃખ.  
સ્વ સુખ આપ વિચારીને દે પુત્રીને દુઃખ,  
એવા જનને આપશે, નિજ પુત્રીએ આપ.  
મરજો સ્વાર્થો તે જનો, દુષ્ટ તેહ માઆપ.  
અશુભ કૃત્ય તે આદરે, છોડી નિજનો ધર્મ.  
ગણુ થયે તે આપશે, શુદ્ધ પતિને મર્થ,  
આ જન્મે દુઃખ ભોગવી પુત્રી પિતા સંધાય  
અતે નરકે તે જશે, દુઃખ ભોગે અસદાત.  
અહો જૈની વિચારીને કૃત્ય એકથી આજ,  
સુખ પુત્રીનું ધારીને, દેજો યોગ્ય વર સાથ.  
ઉપરના શબ્દોથી બને, નામ જે એક પ્રકાર,  
રક્ષા બધન નામ છે. ઉંચ નીચ તહેવાર.  
પુણ પર્વ જિન ધર્મનું, કલું છે શાસ્ત્રોમાય,  
અદપ છુદ્ધિ હું શું કહું, પાળો બરી સુખ હેય.  
પૂર્વ પહેલીની કંગો, જૈન મિત્રને કાજ,  
કહે સુઆગક જૈન યદ, વહી શ્રીજિનાગજ. \*

સાહિત્ય સેવક—દુઃખી હૃદય.

\* વીર સંવત ૨૪૪૩મા જૈન મિત્રમાં રક્ષાબંધન  
પહે પહેલી અર્થાત્ સમસ્થાં દરેક નિવાસી સુઆ-  
ગક જૈન તરફથી પૂછેલી, તેનો ઉત્તર એ દ્વિંદીમા  
ખેત્રે મોકલેલા, તેનું શુભવાતી ભાષાંતર ઉપરોક્ત  
પાનવાથી સખી મોકલ્યું છે

જલ્દી લિખો ! ધોડી કાપી હું !!!  
દાનવીર સેઠ માણિકચન્દ્રજીકા  
જીવનચરિત્ર ।

૧૯૦૦, સચિત્ર ઔર મૂલ્ય સિર્ફ ૧ !!  
વિગ્નવર જૈન પુસ્તકાલય  
ચન્દાવાડી—મૂરત ।



(લેખક—એક દુઃખી હૃદય)

મનાકથી માહુ.

સ્થળ—બનાર—એક.

પાત્રો—કોટવાવ, ધનદત્ત શેઠ, યશપાલ શેઠ,  
સિપાઇઓ અને પાણીની સચીવ સહિત નરપતિ  
(રાજા)

(કોટવાવ ધનદત્ત તથા યશપાલને પકડી બળ-  
રમા થઇ ન્યાય મંદિર તરફ લઈ જાય છે. રસ્તામાં  
મધ્ય એકમા આવતા કોટવાવ ધનદત્તને ઉદ્દેશી  
કહેવા લાગે)

કોટવાવ—કેમ શેઠ, આપ સમગ્રુ થઇ પરાયા  
માણસને બિખત્ત શબ્દોથી અપમાન આપો તે  
સારું કહેવાય કે ?

ધનદત્ત—સાહેબ, આ માણસ (યશપાલ શેઠ)  
પગલા નથી, પણ મારા વેવાઇ અને વળી ગાંતિના  
છે. તેથીજ આટલાથી માંડી વાળવું પડ્યું છે,  
નહિ તો ક્યારનોએ યમમનનો રસ્તો મપારી  
દીધો હોત.

યશપાલ—(ધનદત્તના વજ્ર પ્રકારથી ક્રોધ  
કરી) હવે બસ ? જોયો છે મોટો મારકણીયાનો  
છોકરો છું તે મારાથી કંઈ અબલ્યું નથી. જો  
હવેથી એક પણ શબ્દનો ઉચ્ચાર કરીશ, તો  
જોયા જેવું થશે.

(યશપાલના આ જવાબથી ધનદત્ત ખીજવાઇ  
ગયા અને યશપાલને મારવા દોડ્યા તેમજ કેટલીક  
અધારિત ગાળો પણ દઇ વાળી.)

(કોટવાવે પોતાની હયાતિમા તકરાવ ચની  
અટકવતાં ધનદત્ત શેઠને એક ફટકો લગાવી પોલી-  
સને હવાયે ક્યો.)

(એટલામાજ તે નગરનો ગળ ત્યાં આવી  
મથો.)



નૃપતિ—અરે રત્નસિંહ (કોટવાસનું નામ) ! આ ઉચ્ચ ગણતા શ્રેયીગણેને કેમ બંધનયુક્ત ત્રિયતિમાં ઉભા રાખ્યા છે ?

ધનદત્ત—હા, મહારાજ, કોટવાસ સાહેબ નાહકના હમરી ધન્યત પર પાણી ફેરવવા પ્રયાસ કરે છે.

રત્નસિંહ—હવે ખેસ ધન્યતા ખાં ! એક અક્ષર પણ બોલ્યો તો આ ફટકાનો બોમ ચલુ પડશે.

હજુર, આ સંદિમાંથી આ ધનદત્ત શેઠે પોતાની આઠ વર્ષની પુત્રી આ યશપાલ શેઠના પચાસ વર્ષના પુત્ર સાથે પરણાવવા દરાવ કર્યો અને તે આ દુષ્ટ હરપના અને કુળવાતનો ડોળ કરનાર યશપાલ શેઠે મંજુર રાખ્યો અને લગ્ન દિવસ પણ મુકર કર્યો, પરંતુ કોણ જાણે કે સાચી તે લગ્ન ગણતિના પંચોને અપરિત લાગ્યું, જેથી તેઓએ ખંતે રોકેને બોલાવી એ સંબંધ તોડી નાંખવા સુચનું, પરંતુ આ દુષ્ટ હરપના સ્વાર્થાંધ યશપાલે તેમ સંન્યાસનો ડોળ કરનાર ધનદત્તે માન્યું નહિ, જેથી ગણતિવાળાએ દિલગીર ચઇ ઉત્તમ (બને) ને ગણતિમાંથી બદિદ્ધાર કર્યાં.

ગણતિ પંચમાંથી પેર જતાં કવેરીચોક્કમાં ઉત્તમ સામસાથી ગાયોનો વાંદ વર્ણવતા હતા, ત્યાં હનુરો મનુષ્યોની ૧૬ જાતી હતી અને ૨૬ વર્ણોનું ૨૬ હમ અગણિત સંવત્સર સંભળતા હતા તેજ અરસામાં યશપાલ શેઠે ૨૬ વસ્ત્રો દોવા છતાં એકએક કોષ મરી આપ્યો અને તેમને લાકડી ઉપાડવાનો મનુષી વુરુચે કપત્ત ચલે અને ધનદત્ત ગેરેને એક સપાટી વચાતી પણ દિલ, જેનાથી તેમની પાપવી જાતીનોત્તમ કમ મઠ અને તેપણ જાતીને દેવના મના જગી મના. આ જનાર મારી લાગે રીમા જનનો દત્તો, જેથી મારી પેલિસનની ફરત આ દરવાના ગણાથી મેં ખંતેને શાંત પાડ્યા, પણ તેની દરે અક્ષર સ્પર્શ નહિ, જેથી નિષ્વાયે મારે કોમલારી નિષ્વાયે માન આપી બંધન મુખ દરવા પડ્યા અને તેમને તેમ ત્રિયતિમાં દુઃખ આપી દાનુરેમ લાગેને હાંતી રત્નવાન સ્વપ્ન અને પપાલ.

ધનદત્ત—મહારાજ, હું પરતાઈ છું, પણ હવે સુવા પછી હહાપણ શા કામનું ? બાપજી, હું ગરીબ માંથી જાઈ છું. મને આપ એવો રસ્તો બતાવો કે-મારી પુત્રીનું લગ્ન પણ ચાપ અને ગણતિવાળા મારા તરફ રહેમ રાખે.

યશપાલ—મહારાજ, બધી વાત ખરી પણ મારા પુત્રના નિમિત્તની કન્યા બીજી આપી સકાશે નહિ. એકને માટે નિર્માણ ફરેલી કન્યા બીજાને આપવી એ મહા અધર્મ ગણાય.

બાપજી, મારે આટલે એકી વર્ષે વંશ જરો તેનો વિચાર કરી મારા પુત્રનું લગ્ન ચાપ તેમ બતાવો.

નૃપતિ—શેઠીવાઓ, મને વણી દિલગીરી ચાપ છે કે-ભારતવર્ષમાં દિંદુઓની ચાર વર્ગો પેકી ઉચ્ચ વેશ્ય અર્થાત્ વાણીયા કે-જેઓ વંશ પરંપરાથી જાન પામેલા અને વિચાર પૂર્વક કામ કરવાવાળા છે, જેઓ અગમ શુદ્ધિવાળા કહેવાય છે, વળી તેમાં પણ તમે તો વીર પ્રજાના સેવા એટલે કે શ્રાવક અર્થાત્ જૈન ધર્મનું અવલંબન કરવાવાળા છે, દિંસાના પરિવારો છે, અહિંસા ધર્મના પ્રચારક છે, પ્રાણી માત્ર પર દયા કરનારા કહેવાયો છે, તો તમેજ ન્યારે આમ તમારાં પુત્ર પુત્રી પર દયા ખાતા નથી, પુત્ર પુત્રીના બલિયતો વિચાર બાંધતા નથી, તેમ ગણતિના નિષ્વાયે પણ પાળતા નથી, તો પછી તમે શ્રાવક ચાના ? તમે અદિવા પામો ધર્મ પામવાવાળા શેના ? વળી ખતાવો કે-તમારા કમી ચાલખાં આઠ વર્ગની પુત્રીને પચાસ વર્ષના ૨૬ બચ્ચર સાથે પરણાવવા ખાતા છે ? વળી ખતાવો કે-તમારા દયા શ્રાવખાં આપાં અવેગન જેમાં તોણાવ નહિ, એમ લાગ્યું છે.

શ્રાવખાં તો એમ ખાત લાગેનું છે કે-વિવાહ કરી પછી પર ફેરવતર આઓ જમ ને જમ વર્ષે સુદી ખગર દવાયે નહિ તેમ નમુસક વધ વધ અંજલે કામ, રેણી શાં વધ, યા કમવાનને મોંની સંબંધ કરો દોષ છતાં નીચ નિહાં દોષ એ સંબંધથી પર કન્યા વિચ્છ બંને નારાજ મેં

તો પંચને જણાવી વિવાહ ભંગ કરવો અને બીજે યોગ્ય સ્થળે લાયક નોકરી સંબંધ બાંધવો.

વળી બતાવે છે તમારા કયા શાસ્ત્રમાં સામસામી ગાળાગાળી ટરો કરવાનું બતાવ્યું છે. કહ્યું તમારા શાસ્ત્રોમાં તો દુનિયાના સર્વે જીવો ભ્રાતૃ છે, જેથી એકબેકથી સલાહસંપથી વર્તવું અને દાહની પણ, લાગણી દુખાય એ સમજ-એ ભરે કરવું નહિ, એમ બતાવેલું છે.

અને કહેતાં પણ શરમ આવે છે કે-તમારા જેવા શ્રીમંત અને ગણવાળા વેશ્યો જ્યારે આમ નેદરે અને ઘાતકીપણે બતાવી પોતાનાં સંતાનોના મુખ પર રાધ્યા મુકશે, તો બિચારા ગરીબ અને પુદ્ગલી તો વાતજ થી કે જેને સારાસારનો વિચાર નથી, જે પોતાનાં સંતાનોને યોગ્ય નોકરીથી વિશ્વ-પિત કહે છે. તમેને જરા પણ શરમ આવે છે કે-તમારું શ્રાવણ કર્તવ્ય શું અને તમે કરો શું ?

છપો.

શ્રાવક તેડું નામ, જે જે સત્ય અનુસરતા,  
શ્રાવક તેડું નામ, દિલથી હિંસા ત્યજતા,  
શ્રાવક તેડું નામ, ચોરી નહિ મુદત કરતા,  
શ્રાવક તેડું નામ, ખરેલી ફરયા ત્યજતા,  
વળી શ્રાવક તેડું નામ છે, જે શુદ્ધિથી નવ રાખતા;  
નિજ ધર્મ કાર્યે દડ રહી, સત્ય પંથે મ્હાલતા.

(૨)

શ્રાવક તેડું નામ, દાન કન્યાનું કરતા,  
શ્રાવક તેડું નામ, સંતતિ સુખને ધરતા,  
શ્રાવક તેડું નામ, પુત્રીનું ધન નવ લેતા,  
શ્રાવક તેડું નામ, નીતિને પંથે પગતા.  
વળી શ્રાવક તેડું નામ છે, જે ક્યેકા કિત રાખતા;  
દેહ સન્ન-ને બાળકન, દુ-નથી પરિભ્રમતા.

(શાદુલ વિકિટીતમ)

એવા શ્રાવક વંશમાં નિપજ્યા, તેથી પ્રત્ય કૃષ્ણને.  
આત્મી બીમ પ્રધિર વપ વળી, લોકો પૂજે પરિને.  
જળ મન્છી સમ હેત ભાવ ધરતા, બધું થયા ધર્મિકા  
આચાર્યો જિનસેન કુંડ જનમ્યા, જેના થયા શ્રાવકો.

(પસંત તિલકાવૃત્તમ)

કે સુવંશ પ્રગટી જગમાં નરો જે,  
અર્પી જીવન નિજતણું જગમાંહી પ્રમે;  
બેલી પ્રીતી સુકીર્તિ જગમાંહી કર્મે,  
પાલે નહું લગી લગી દીવશી હું, તેને.  
કર્મો તણો જય કરે જિન નામ કહાવે,  
જેનો સુવંશ જગમાં જનને દીપાવે;  
જેના સુપંથમાં જન શિવ ભણે,  
સ્કર્મો તણાં સુખથકો વધુ સુખ જ્યાં હે. - ૨

એજ ખરા શ્રાવક છે અને એમના પ્રમાણે તમે વર્તન સુધારો અને બવિધમાં તમારી પ્રજા-તમારી સંતતિનું શ્રેય ધરકો. બાળકનથી તમને, તમારી શાંતિને, તમારા સમાજને અને તમારા દેશને સુદૃઢ ગુકશાન છે. પૃથ્વીલગ્ન અને કળેકાંથી પણ તેમજ છે.

જળી તે દુષ્ટ પ્રથાઓના પ્રતાપે પતિ પતિને સામ-સામી અણગમે ઉત્પન્ન થાય છે અને તેનાથી બનેને પ્રેમ જામી શકતો નથી. તેમજ તેમના પ્રેમનો આખરે અંત આવે છે અને તેમ કરવા જતાં વખતે એકાદ દંપતિના સૌભાગ્યને પણ હાનિ પહોંચે છે. શેઠિયાઓ! પ્રેમ ત્યાંજ સુખ અને પ્રેમ તેજ સંસાર સાગરમાંથી પાર કરવાવાળી વસ્તુ છે. જેમ હમ્મર પ્રણે પ્રેમ કરવાથી, તેના ચિદ્રૂપ સ્વરૂપનું ધ્યાન કરવાથી અને આત્માનું શોધન કરવાથી આ જીવ સંસારનાં તુચ્છ સુખોના ત્યાગ કરી પરમ દૈવિક અને અત્રોક્તિ સુખનો સ્વાદ કરવા આગળ વધે છે. અને અંતે તે સિદ્ધ બુદ્ધિને પ્રાપ્ત થાય છે, તેથીજ રીતે પતિ પતિને સામસામી પ્રેમ કરવાથી સંપૂર્ણ સુખનાં મોના થઈ અંતે મનુષ્ય દેહનું કરવાણું કરે છે.

તમારી શાંતિ-તમારા ધર્મ સંબંધે વધુ હું બજુતો નથી, પણ મને આશા છે કે આકલેથીજ તમારું મન તમારાં સંતાનોના ભલા તરફ ઉત્તરું હશે.

શેઠિયાઓ, માનો ને માંધે રસતે દામ ચઢાવો, નહિ તો આખરે નિરપારે હમારે ન્યાયના બધા રજુમાં ઉતરી અમનતે રસ્તે દોરણું પડશે.



ધનદત્ત—મહારાજ, મ્હારે હવે મારી કન્યા  
યશપાલના પુત્ર અરે ! જલ્દ સમાન તે શેઠીયા  
મોથે પડણાવવી નથી, પણ યશપાલ મારા સામે  
અદાલતે દોડે તેનું શું કરું, જેથી કરતાં મારી  
હા, હા, હું છું, બાકી વિવાદ ક્યો ત્યારે તેમના  
પુત્રને જેવા સિવાય-પચીસ વર્ષનો બાળકોને  
વિવાદ કરેલો, પણ પછી ચાલીસ વર્ષની વાત  
બાળકોમાં આવી, ત્યારથી માફ મન હતાસર  
રહેલું હતું, પરંતુ સાતિના બંધારણને લીધે  
ઈલાજ હતો નહિ, જેથીજ લગ્ન દિવસ મુકરર  
કરતા મુવતીના વળત આવી પહોંચેલા બાપજી;  
તમે કહો તેમ કહું.

(આનંદપુર નગર સાત લાખ માણસની વસ્તી-  
વાળું આગાધ શહેર હતું. તેમ ત્યાં તે શેઠીયાઓની  
નાતનાં ૨૦૦૦ થર હતાં જેથીજ સામસામી  
પિછાન ઝાઝી હતી.)

નૃપતિ—શેઠ, તમારે નિશ્ચિંત રહેવું. હું હજુ  
એક વખત યશપાલને સમજાવી નેકું, પછી તેનો  
રસ્તો કરતાં ચુક પડે. કેમ યશપાલ શેઠ, તમે  
આ વિવાદ ફેક ક્યાંનો કરાર ધનદત્ત શેઠને લખી  
આપો છો કે નહિ ?

યશપાલ—સાહેબ, ગમે તો મારી તમામ  
મિલકત નાશ પામે યા હું અને મારા પુત્રો  
નાશ પામીએ, પણ તે વાત મારાથી બનવાની  
નથી. મહારાજ, બેચ્છાઈ માર કરો ?

નૃપતિ—શેઠ, માનો, હજુ માનો અને ધનદત્તની  
નિર્મળ જાગ્રાને સિરકો વૈષમ્યતા ક્ષી બધા  
પાડી લાઇ ર્યા અને એમાંજ તમે રૂખી થોડો.  
તમારા જેવા નીચ પુરોએજ જાગ્રાજ્ઞ અને  
જલ્દબત્તની થયા મુસાફી લીધી છે, પણ નેકું છું  
કે તમારો વિચાર કેટલે દુર્લભ બદલાય છે.

યશપાલ—મહારાજ, મારા સ્થિતિભેદની તક-  
કારમાં રાજ્યએ વાગે પાડુંએ ન્યાય વિદ્યાર્જન  
છે. કેટલા ધર્મમંત્ર-સંકલ્પના અવકાશમાં રાજ્યએ  
હાથ ધાવેલો રહેલો નહિ.

રાજા—પ્રજાને સુખર્ષી મેલવથી એ રાજ્યનો  
ધર્મ છે અને તેથીજ મેં સ્થાનિ-નૃપાલના નામનો  
જો નિરમ પડી કાર્યો છે અને રાજ્ય વર્ધમા

પસાર પહું કદી દીધો છે તે તેમને બખર નહિ  
હોય. બસે બખર ન હોય પણ અત્યારનાજ મારા  
દુશ્મને માન આપી તમારે ધનદત્તને કરારનામું  
લખી આપવું પડશે.

યશપાલ—મારાથી મારી ઇચ્છાતે ખસેલ કર-  
નાર કોઈપણ કાર્ય થઈ શકશે નહિ, તેમ કરારનામું  
પણ લખી શકશે નહિ.

નૃપતિ—( શેઠ કદી ) અરે રત્નસિંહની આ  
હા પશુક સમજાવ્યો સમજે તેમ નથી, તેને  
એકદમ લોકબંધથી બંધનયુક્ત કદી દરબારગઢમાં  
હાજર કરો ( એટલું કદી રાજા નગરચર્ચાએ  
ચાલી નિહાળ્યો.)

( રાજાના ગયા પછી કોટવાએ પોલીસને યાદ  
પાળેને દરબારગઢમાં સમ્પત પેહેરા સહિત લઈ  
જવા દરબારગઢ અને ધનદત્તને તેમની પુત્રી મારે  
યોગ્ય થર શોધવા કહ્યું, અને પોતે એકદિસે જવા  
રવાના થઈ ગયો.)

( પોલીસ અને શેઠ યશપાલ બન્નેર વચ્ચે  
દરબારગઢ તરફ જવા લાગ્યા. રસ્તામાં રીખાતે  
લોકો શેઠને મરકરી કદી ચીડવવા લાગ્યા જે શેઠથી  
સહન નહિ થવાથી આખરે તેમણે શુભ રસ્તો  
આરંભ્યું. દરબારગઢ જતાં મુઠી રસ્તામાં પહોં  
વખત પોલીસે શેઠને દંડ પ્રહાર પણ કર્યા હતા  
પણ પુત્રવધુ મોહુથી જલ્દ બચ્ચર તે બધું સહન  
કરતા હતા.)

( એક બાજુ યશપાલને બંધનમાં રાખે  
રાજ્યએ ધનદત્તની હાકરીને તેમ નગરના દર  
સાધારણ રિપતિના વખિટના પુત્ર સાથે પરબાર  
સરી કે જેની ઉપર ૧૫ વર્ષની હતી. હજી વખતે  
પોતે પણ હાજર રતા.)

હજી કાર્ય થઈ રવા પછી રાજ્યએ યશપાલને  
ન્યાયની કેટમાં હાજર કર્યો ત્યાં તેમને બચાવે  
પુરાણ માગ્યા સિવાયજ સાતિ સુધારણા નિષ્કર્ષ  
જ રાખમ પ્રમાણે રૂ. ૫૦૦ ના દંડની સા  
સાથે જોડીત કયાક કેદ ર્યો, યશપાલે બચાવ  
પણી લખાવિત કદી, પણ તે સખતી સ્વર્ણ  
અને પેશાએ દંડ અમેશ રહેવા, કેદ મોખતી  
દરબાર મળે પુત્રવધુ મહા અને ગંદ વધુ

કેમકે ત્યાર પછી કોઈએ તેમના પુત્રને કન્યા આપી નહિ કારણ કે તેમની શાંતિઓએ તેવાઓને કન્યા આપવા બંધી કરી હતી.

હું ઉપરો સંવાદ વાંચી ધણેજ પુણી થયો અને મને આહોભાગ્ય સમજવા લાગ્યો કે હજુ દીક છે કે મારા પિતાને શિર કંઈ ઉપાધિ નહી નથી નહિ તો ટકાના બની જાત, એમ વિચાર કરી સંસારની અનિત્યતા સમજી તે વખતે ધરમાંજ રહ્યા.

આ વાતને યોગદે દિવસ થયા પછી એક વખત મારા પિતાએ મારાં ગૃહિણીને કંઈક કાર્ય કરવાનું કહ્યું હતું, જે તેણે કહ્યું નહિ અને જ્યારે મારાં પિતાએ કામ ન થવાનું કારણ પૂછ્યું ત્યારે જવાબ આપ્યો કે-હું કંઈ તમારું કોડીપણ કરવાને આવી નથી, તમારે કાને તો કરો, હું તે કાર્ય કરવાની નથી. તમે વધુ સંતાપશે નહિ. વહુને ઉદત જવાબ સાંભળી મારા પિતા દિલગીર થયા અને વિચાર કરી બોલ્યા કે વહુ, આમ ઉતાવળા શું થાઓ છો ? જરા ધીમે રહી કામ કરો. આવું નાજુક કાર્ય તમે નહિ કરો તો કોણ કરશે ? વહુ બોલી ઉઠ્યા કે-હું, મારેજ માટે સરખાયું છે ? હમેજ એવી ગુલામગીરી કરીશું ? તમારે કાને તો કરો નહિ તો સુધ જાવ, મને આ ધરમાં આવી ખેસવા વખત મળ્યો નહિ અને તમારા કામને અંત પણ આપ્યો નહિ, હવેથી મને કંઈ પણ કહેવું નહિ, નહિ તો હું મારા પિયર માલી જાઉં.

આ જનાવંથી મારા પિતા બહુજ દિલગીર થયા અને કમળે હોય દેતા મન સાથે કહેવા લાગ્યા કે-ચંદન કહેતો હતો કે-મારું લગ્ન મારી સંમતિ સિવાય તથા કન્યાના ગુણની તપાસ કર્યા સિવાય થાય છે એમાં મુખ્ય મળશેજ નહિ, એ વાત ખરી પડી ને મેં મોટામાં મોટી ભૂલ કરી કે-પૂરું તપાસ કર્યા સિવાય મારા પુત્રને લગ્નાદીક્ષાને ત્યાં પરણાવ્યો. અરેરે દેવ ! મેં મારે હાથેજ મારા પુત્રના ભવિષ્ય પર પરા દીધો અને તે બિચારને દુઃખી કર્યો. છાની તપાસ કરતાં તેનું વલણ પણ તેને લીધે

વેરાળ તરફ ખેંચાતું હોય એમ જણાય છે તેનું કારણ પણ હું જ છું. ખરેખર સાસ્ત્રમાં કહ્યું છે તે ખરું છે કે આપ તેવા બેટા ને વડ તેવા દેટા, એથી રીતે તે તેના બાપ પ્રમાણે લગ્નાદીક્ષા છે, તે નહિ હોય તો હવે યશ, તે તેના શબ્દો લાગર શાક્ષી પુરે છે. સાસ્ત્રમાં કહ્યું છે કે કુળવાન જેડે વિવાદ કરવો, પુત્રવધુ કુળવાન, રૂપવાન લાવવી એ વાત ખરી છે.

આમ વિચાર કરતા હતા કે અચાનક મારાં ફાઇ ત્યાં આવી પહોંચ્યાં. તેમણે મારા પિતાને (તેમના બાપને) ઉદ્દિગ્ન બોલુ પૂછ્યું, બાપ ઉદાસ કેમ દેખાઓ છો ? મારા પિતાએ ઉત્તર વાળો-કાંઈ નહિ, મારાં ફાઇ આશ્ચર્ય કરતાં બોલ્યા કે ના બાપ કહે, તને મારા સમ ! કેમ ઉદાસ છે અને વિચારમગ્ન સ્થિતિમાં હોય તેમ જણાય છે. ચંદન કંઈ બોલ્યો તો નથી ? આ સાંભળી મારા પિતાએ સર્વે હકીકત તેમની ખુલેતને કહી સંભળાવી તે સાંભળી મારા ફાઈ દિલગીર થયાં અને આંખમાં આંસુ લાવી ગદગદ કંઈ બોલ્યા-અરેરે પ્રભુ ! મારાં બાપને આટલે વર્ષે જંપના વખત આવતું, પણ પુત્રવધુ તેના માખણ જેવી દુટ મળી. શું મારા બાપને હાથેજ સર્વ કામ કરવાનું લખ્યું હતું ? ના, ના, ગમે તેમ કરી હું મારા ચંદનને કરી પરણાવીશ અને મારા બાપને કામથી મુક્ત કરીશ. બેડું છું કેં એ અઘાન છોકરી ક્યાં સુધી તેનું ધાર્યું કરે છે.

આવો પ્રકો કરાવ કરી મારાં ફાઇએ મને બોલાવ્યો, અને પૂછ્યું—

બાપ ચંદન, હું સાચું ન બોલે તો મારું સગાં ! તારે તે રૂપિણીને જાતે છે કે નહિ ? હું સરમ નાખ્યા સિવાય ખરું કહી દે.

મેં કહ્યું-ફાઈ, મેં સંસારમાં આવી કોઈ પણ સુખનો દાવો લીધો નથી. મારી મા મને નાનપણમાંજ મુકી મરણ પામી, ત્યારથી મારા મુખને સ્થ અસ્થ થએલો છે. વળી બધારથી મારું લગ્ન થયું ને આ કર્મચંડાળ મારે ઘેર આવી ત્યારથી મેં મુખે ભોળન તરખું પણ કંઈ નથી. ધરમાં

કાશરથી શત્રુ ઘર ઘાલી બેઠો છે, તે ઘરનાં સર્વ માણસોથી વાતે વાતે લડી ઉઠે છે. ને તે સર્વ માણસ મનેજ મેણાંનાં વાદ-પ્રહાર કરે છે, જેને સીધેજ હું રાત્રિ દિવસ વિચારઅસ્ત રહું છું. મને ક્યાં જવું, શું કરવું, એ કંઈ સૂઝતું નથી. એ મહારાં વદાસાં ફોઈ! મને આ હુખ દરિયામાંથી બચાવો, નહિ તો હું હુળી જશ. મારે આ દુનિયામાં આશરો ફક્ત મારાજ છે. મારા પિતાએ મને આ સાલ વળગાડ્યું છે, જેથી મારે અંધારા વારો નથી.

ફાઈ, શું હિંદુ સંસારમાં આખ લાકડે માફડું. વળગાડ્યાના વિવાહો ચાલે છે? ના, ના. હું ઘણાજ જણને જોઈ છું કે તેમને મારા જેવું દેજ નહિ. આ માણસ તો વિચિત્ર જણાય છે. તે મને જુએ છે તો ખરા ચાહે છે. જો હું ન હોઈ તો આનંદ, તેમ અંત આપી તે દરિ પશુ હસમુખી રહી નથી. પણ પીયરમાં ને જીવન એકીને ઘેર આનંદથી રહે છે, ત્યાં ધરનાં દામ પોતાનાં જણી કરે છે અને અર્ધા ચિંતા વગર પરાધું સમજી કરે છે, એટલે તેમાં બીજીવાર આવેજ નહિ.

ફાઈ, મારાં વદાસાં ફાઈ, મારાથી આ બધી કપટજન સદન થતી નથી. તેમાં તો મને તેના માતા પિતાની ધિખવણી હોય. તેમ બાંહે છે. ફાઈ, આપ. રહો, સમજી હો, મને રસો ગતવો કે જેથી હું સુખી થઈ.

બાઈ, તારાં હુખ સંભળી મારી છાતી યારી જાય છે, પણ તું કાં, વાન જાં મજ છે મારે તમતીર પર બેસો. રાખ. જે બનવા દામ દરો તે જનરો, નહિ તો નારો વિવાદ દરની વખતેઈ મેં તારા પિતાને ના હજું દતું. પણ તે વખતે તેમજ મારાં કાં માન્ય નહિ ને તારાં સમજણ તારી નાની હમરખાંજ કરી હાં, તેજ. આ રજ માંખમાં પડે છે.

તપાસ કરું ને તારી ધ્યાનમાં આવે તો. સંબંધ જોડીએ કે જેથી કરી આવા બવારો થવા વખત આવે નહિ.

મેં કહ્યું-ફાઈ, હું આ એકજ જુખવાથી ચાંકી ગયો છું ત્યાં તમે વળી ખીજતી વાત કરો છો. બે મારા ભાગ્યમાં સુખ હોય તો આજ અવકાશ હોય, પણ મારા ભાગ્યમાં નહિ. એટલે કેનો દોષ કદીએ? હું ફરીથી લગ્ન કરી ખીજતો જવ જાણીશ નહિ. વળી જો ભાગ્યયોગે મારા સ્વભાવની મજે તો હરકત નહિ, પણ વળતે છે તેવી મજે તો દાખવા ઉપર દામ તરિકે વળી દહાડમાં વૃદ્ધ થાય, મારે મારો તો દહાડાવ છે કે હવેથી લગ્ન કરવું નહિ.

મારાં ફાઈએ કહ્યું-બાઈ, આપણે તપાસ કરી થોમ સાથેજ સંબંધ કરીશું, પણ લગ્ન તો કરવુંજ પડશે. મેં કહ્યું-પણ મારો શવ ફાઈ ખીજતજ સ્વપ્નમાં પરિણમે છે એટલે મને હવે એ સંબંધમાં કહેવું નહિ.

મારાં ફાઈ નિરાશ થઈ મારા પિતા પાસે ગયાં ને કહેવા લાગ્યાં-બાઈ, ચંદનના ચિચારો પલટાઈ ગયા છે. તે ફરી લગ્ન કરવાનો નથી તેમ તેના જવાબોથી મને તેનો બરોસો પણ પડતો નથી, મારે આપણે તેની પૂર્ણ તપાસ રાખતી નહિ તો પરતાવું પડશે.

બાઈ, જો માને તો એક સલાહ બતાવું. મારા પિતાએ કહ્યું-બેન, ખુશીથી કરો. હું મારે સારાંજ બોલીસ એમ મને ખાતી છે. મારાં ફાઈએ કહ્યું-બાઈ, હવે તું લગ્ન કરે તો મારાં કેમકે ચંદન એકતો એક પુત્ર છે તેમ તેના ગુરુચાચખ્યા પુત્રની આશા દખાવું નહિ, કેમકે પૂર્ણ. ચંદ્રથી સદવાસ થાય ત્યારેજ સંતાનનો સામ થાય, મારે તું જરી લગ્ન કરે તો આપણા વંદનો આનંદ આવતો અંતકે કેમકે કહ્યું છે કે-એક આંખની આંખ નહિ ને એક પુત્ર ને પુત્ર નહિ, મારે તું ફરી લગ્ન કરે તો આપણા વંદની કદિ નાવ, મારે ચિર કામનો આજ એકો દામ અને મને પણ સામ થાય.

મારા પિતાએ કહ્યું-બેન, આજે જરૂર. પુત્ર મેરી ઉમરનો કરો. પણ મેર-રહેવા લાગી અને



કુ લગ્ન કરે તે કેમ શોભે? વખતે આવનાર  
ઓ દુર્ગુણી નિકળી તો મારે કમળ દુર્યુધ.

મારા ફાઇએ ક્યુ-માઇ, આપણે તપાસ કરી  
પછીજ સંબંધ જોડીયું, પણ મારા પિતાએ ક્યુ-  
દયે આ શરીરનો ખરોસો નહિ. વખતે કું પરચું ને  
મરણ થાય તો તે બિચારીને કેટલું સોસયું પડે ?  
વળી લોહા વાનો કરે તે શુદ્ધી.

મારા ફાઇ બોલ્યાં-પણ બાઈ, શાસ્ત્રમાં કહ્યું  
છે કે-વંશની શક્તિ કરવાની ઉમેદવાળો પુરુષ પચાસ  
વર્ષની ઉંમર સુધી લગ્ન કરી શકે છે. વળી મોવ  
ક્યુ થવું નથી, તે તો કુદરતી બનાવ છે. વખતે  
સો વર્ષ પણ જીવાય ને વખતે પચીસે પણ જીવાય,  
માટે તું લગ્ન કર અને મારું કહ્યું માન.

મારા પિતાએ પૂર્ણ વિચાર કરી, કસક ઓછો  
કરવાના, કામનો બોલો ઉતારવાના, વંશશક્તિ કર-  
વાના, બહેનને પ્રસન્ન કરવાના, એક વિધવા બના-  
વવાના વિગેરે વિગેરે શુભાશુભ ઉદ્દેશથી લગ્ન કરવા  
હા પાડી અને મારા ફાઇ કન્યાની તપાસ કરવા  
ઉત્તર આપી નીકળ્યા.

બીજે દિવસે અગીયાર વાગે આખા ને  
મારા પિતાને કહેવા લાગ્યા કે-બાઈ સ્વરૂપચંદ  
શોભી કાન્તા નામની કન્યા ૧૩ વર્ષની છે. નિશાળમાં  
છટ્ટી ચોપડી બાજે છે ને ધરકામમાં પણ હોશિ-  
આર છે. રૂ. ૨૦૦૦ માં આપવાનું તેના પિતા  
કહે છે ને વિચાર ફાઇ તો ચાલ મારી સાથે  
ઝોટસે તપાસ કરી સંબંધ જોડીયો.

મારા પિતા બહેનના આચરણથી કહો કે દુર્યુ-  
ધો બાર ઉતારવાના ઉદ્દેશથી કહો કે મારી નથી  
મા લાવવાના ઉમંગથી કહો પણ ને બહેનની સાથે  
જવાને તરતજ તૈયાર થઈ ગયા ને સ્વરૂપચંદ  
શોભે ત્યાં ગયા. ત્યાં જઈ તપાસ કરવાનીવાલ  
આશુ પેર મૂકી રા. ૨૫૦૦ માં વિવાહ નક્કી કર્યો.  
અરે વિધમ કાળ ! તને ધિક્કાર છે કે તારા પ્રતાપે  
આશુસ પોતાની ગાય જીવી કન્યાને કસાઈવાડે  
આપવા તૈયાર થાય છે, અર્થાત્ વેચાણ કરી  
પૈસાને આપવા લાગ્યા છે.

વિવાહ કરી લગ્ન પણ કરી દઈ પાંદર  
પણું દક્ષિત સંપાદિત રથાન આપતાં  
અચકાચ માટેજ દુકામાં પતાવું કું. (અપૂર્ણ)

## પછીવાલ જાતિકા ઉદ્ધાર કैसे હોય ?

વર્તમાનમાં પછીવાલ જાતિમાં જેવા અજ્ઞાનાંધકાર,  
કુરીતિ પ્રચાર, અનૈક્યતા ઔર અસાવધાનતાકા  
પ્રચલ સામ્રાજ્ય હૈ વૈસા કિસી ઔર જાતિમાં ન  
હોગા । વિના લિખા પદા મનુષ્ય પશુકે સદૃશ  
હી હોતા હૈ । ઉસકા મનુષ્ય હોના ન  
હોના બરાબર હૈ । જિસ જાતિમાં કુરીતિયોંકા  
ફૈલા રહના, વિધવાઓં ઔર કુંવારોંકી વૃદ્ધિ  
હોના, કન્યાઓંકી ગાય મૈસકે સમાન વિક્રી  
હોના, વ્યભિચાર, નિર્વલ સન્તાન હોના યા  
उनमें रोग बना रहना आदि जारी रहता है  
उस जातिका अघःपतन हो जाता है और  
उस जातिमें रहना योग्य मनुष्योंके लिये  
दुष्कर हो जाता है । अनैक्यताके होनेसे जातिमें  
विद्याप्रचार, जातिसुधार, धर्मप्रचार, कुरीति-  
बहिष्कार आदि कोई उत्तम कार्य जातिमें  
सफलताको प्राप्त नहीं हो पाते । अनैक्यताके  
होनेसे बड़े १ साम्राज्य, बड़े २ राज्य, जातियां,  
समान, घर, मनुष्य नष्ट हो-गये और हो  
रहे हैं । भारत और जैन समाजकी इस अधो-  
गतिका कारण एक फूट ही है । जहां इसने पैर  
रखा वहीं चौपट कर दिया । असावधानता  
यानी प्रमाद भी सब शक्तियोंके होते हुए  
मनुष्यको उन्नति नहीं करने देता है । जिस  
जातिमें इसका राज्य है वह भी अधोगतिके  
ग्राम हुए बिना नहीं रहती ।

પછીવાલ જાતિમાંજે અજ્ઞાન, કુરીતિયાં,  
અનૈક્ય, પ્રમાદ આદિ-સબ બુરી વાતોંકા ઉન્મૂલન



करनेके लिये भारतवर्षीय पल्लीवाल जैन सभाका जन्म हुआ है। यह सभा जातिमें ज्ञानका प्रकाश करेगी, बालक बालिकाओंको शिक्षित बनायेगी, बूढ़ोंके साथ ९-१० वर्षकी कन्याका विवाह होना बंद करायेगी, गाय भैंस जैसे पशुके समान विक्रती हुई कन्याओंकी रक्षा करेगी, आठ २ नौ २ वर्षके लड़के लड़कीका विवाह होनेसे जातिको रोकेगी, जातिमें फैली हुई फूटका काला मुंह करके निकालेगी, कुंवारा और विधवाओंकी बढ़ती हुई संख्याको रोकनेका प्रयत्न करेगी, और ऐसा होनेपर ही पल्लीवाल जातिका उद्धार होगा। अतः जिन बूढ़ोंकी अपनी संतानको अधोगतिकी ओर जाते देख दुःख होता है वे अपनी जातीय समामें सम्मिलित होकर अपनी संतानकी रक्षा करें, जिन नवयुवकोंकी अपनी दुर्दशाग्रस्त पिछड़ी हुई जाति पर दया आती है और वे उसके उद्धारके लिये कुछ करना चाहते हैं तो वे भी अपनी सभाके सभासद बन कर एक बार जातिमें मिदनाद बना दें और बता दें कि दुन्दारे उद्धारके लिये सभा सब कुछ करनेकी तैयार है। बिना सुसंगठित सभाके जातिका कल्याण नहीं हो सकता और बिना उत्साही नवयुवकोंके सभाका कल्याण नहीं। इसलिए हम बार २ उत्साही नवयुवकोंके जोर देकर कहते हैं कि अब आओ अपनी शक्तियोंके समुदाय बनानेका समय आया है। उद्यो, अब न मोओ, बिना कुछ मोच बिनार दिये सभाके सभासद बन नाओ। सभासदी कामें नियम पढ़ पढ़ते। कहे जिसघर

मंगा लो। तुम स्वयं सभासद बनो और दूसरोंसे बननेके लिये प्रेरणा करो। जब सौसे अधिक सभाके सभासद हो जायेंगे तब इसका किसी स्थानपर प्रारंभिक अधिवेशन भी किया जायगा। उसी समय सभाकी प्रबन्धकारिणी कमेटी बनाई जायगी, नियमावली बनकर पास होगी और सभाको प्रथम जात्युन्नतिके लिये कौन २ से कार्य करने चाहिये आदि निर्णय होगा। अतएव हमारा पुनः निवेदन है कि पे पल्लीवाल भाइयो १-यदि आप अपना, अपनी सन्तानका और अपनी जातिका कल्याण चाहते हो तो इस सभाके शीघ्र सभासद बनो। सभासदी फीस केवल १) तीन रुपये वार्षिक है। विज्ञेपु कि बहना।

जातिसेवक—

जुगमंदिरलाल जेवरिया  
मंत्री, भा. पल्लीवाल जैन सभा,  
चंदावाड़ी, सूरत।

हमारे यहांके उत्सव ग्रंथ

आदि पुराण	१६)
उत्तर पुराण	१०)
दोनों एक साथ	२५)
पंचाध्यायी टीका	५॥)
धर्म-प्रदनांतर	२)
जिनशतक	॥)
दिव्याली पूजन	२७)

मिडनेरा पना—

मालाराम जैन,

मन्थाली, इंदौर।



## ईडरमें रायदेशके पंच ।

### बड़ालीकी प्राचीनता ।

गत, ज्येष्ठ, आषाढ़ मासमें यहां पर रायदेशके समस्त पंच एकत्रित हुए थे। जन संख्या १०० से अधिक थी। पुराने जमानेकी रीति और ढंगसे पंचायत तथा सभायें प्रति दिन होती थीं, अनेक विषयोंपर ऊहापोह पूर्वक विचार किया जाता था। दुःख केवल इतना है कि रायदेशमें पढ़े लिखे विचारशील कम हैं, इसलिये इतने दिनों तक पंच एकत्रित होने पर भी कुछ भी कार्य नहीं हुआ। अस्तु, क्षेत्रका उदय न होनेसे जनतामें भी सुबुद्धि नहीं होती है। रायदेश ज्ञानमें कितना पीछे है जिसके कहनेसे लाम आती है। एक तो रायदेशके भाई छोटे २ ग्रामोंमें रहते हैं जहां पर न तो सर्कारी पाठशाला (मदरसा) ही है और न खानगी चटशाल ही है कि जिससे व्यवहारिक शिक्षा तो ले सकें, धर्मशिक्षाकी बात दूर रही। धर्मशिक्षाके बिना आचार, विचारकी जो हालत है वह किसीसे छिपी नहीं है। ग्राम्य जीवन होनेसे संतान भी जड़रूप होती चली जा रही है, ऐसे विकट समयमें रायदेशके पंचोंका कर्त्तव्य था कि अपनी संतानको सुधारनेके लिये कुछ उपाय करते। दानवीर सेठ प्रेमचन्द मोतीचन्द मुंबई से यहां पर पधारे थे और इस देशकी जड़ता और अज्ञानको देखकर चकित हो गये थे, तब तत्काल ही अहमदाबादमें सेठ प्रेमचन्द मोतीचन्द दिगम्बर जैन बोर्डिंग खोल दिया,

परंतु दुःख है कि उस बोर्डिंगसे रायदेशके भाई लाभ न ले सके। आज तक, रायदेशमेंसे एक भी विद्यार्थिने बोर्डिंगमें रहकर अपने जीवन सुधारनेका कार्य नहीं किया। हां, ईडरसे दो चार विद्यार्थियोंने कुछ लाभ लिया। रायदेशकी इतनी गिरी हुई हालत है कि शुद्ध णमोकार मंत्रका पाठ किसी महाशयको आता हो, तो फिर शास्त्र स्वाध्याय पूजन किसको आता है यह आप ही विचार करिये।

रायदेशके पंचोंके समक्ष, ईडरमें दिगम्बर जैन बोर्डिंग खोलनेका प्रस्ताव रखता गया था और सेठ लल्लूभाई लखमीचन्द चौकसी वम्बई प्रभृति अनेक महाशयोंने पूर्ण प्रयत्न भी किया, प्रति दिन इसका विचार भी पंचायतमें उपस्थित होता था। बोर्डिंगकी व्यवस्थाके लिये फिलहाल यह प्रबंध किया था कि प्रति घर वर्षमें २) ६० चंदा लिया जाय। रायदेशमें दिगम्बर जैनियोंके अनुमान ४०० घर हैं इसलिये अनुमान ८०० रुपये। वार्षिक आमदनी बिना फंडके एकत्रित सुगमतासे हो सकती है और दो रुपये अनुमान एक वर्षमें किसी भाईको देना कठिन नहीं होगा। दो हजार रुपये बोर्डिंगके लिये पाठशालामें जमा भी हैं। सिवाय शोलापुरके कई धर्मात्मा दानवीर सज्जनोंने बोर्डिंग खुलने पर पूर्ण सहायता देनेकी पाठशालाकी विजिटबुकमें सम्मति-प्रदान की है, साथमें पाठशालाके फंडसे पूर्ण सहायता हो सकती थी। इतने सरल और उत्तम उपाय होने पर भी रायदेशके पंचोंने अपनी संतान सुधारनेका प्रयत्न नहीं किया। दो महीने तक एक-



त्रित होनेमें करीब दस हजार रु. खर्च हुये होंगे । यदि इतना रुपया बोर्डिंगमें लगाया होता तो आधकी संतान बिरकाल तक जीवनको सुधार कर उत्तम भोजन करती ।

रायदेशमें यह भी प्रथा है कि पंच और मंदिरका एक बहीवट है इसलिये जहां कहीं पंच एकत्रित होते हैं तो वस उसी खातामेंसे सभी खर्च होता है अर्थात् देवद्रव्यका उपयोग किया जाता है जब कि देवद्रव्य सुलभ कार्य करनेके लिये होता है । भाइयो, विचारो तो सही यह कितना अंधेर है ! रायदेशके पंचोंके सम्मानार्थ आठ दस पाखी (जीपन) हुई थीं और उसमें बड़े हजार ५० खर्च हुए थे ।

रायदेशके पंच वहाँ एकत्रित हुए थे ? ईदरके पास बडाही प्राचीन नगरी है, इसको पुराने जमानेमें बछपुर शहर कहते थे । वहां पर अमीछरा पार्श्वनाथ नामका अतिशय तीर्थ है । प्रथम बडाहीमें दिगंबर जैनियोंके बहुत घर थे । और इस मन्दिरमें अनेक अतिशय म्नामाविक निरंतर होने रहते थे । प्रतिमासी (जो कि दिगंबरी है) में अमृतकी वर्षा हुआ करती थी । और देश विदेशसे अनेक दिगंबर जनोंका संघ घटना करनेके लिये आता था ।

• इस तीर्थकी घटनाके संबंधमें एक भजन इस प्रकार है:-

रायदेश मंदिर कपर बडाही,

जिन भजन भक्त दीगंबर ।

दत्तान जेरी प्रपाषो पावरी,

सीट जेरी परत दीगंबर ॥

अतिशय वेत मनेर मरति,

गुनार बरि हरेद्वारे ।

संघ सह मली यात्रा आधि,  
अमीद वरधि मेहनरे ॥

अंग अनोपम सुन्दर सोह,

वासव तथा मन मोहनरे ।

नीलवर्ण काया जिन दीपि,

दिनकर कोटिन जीन्यरे ॥

विपण ध्याधि वेलाज्वर व्याधि,

बागि दुरगति दुरनरे ।

पावन बंदन प्रनपोल करी,

नित पूजो केदार कपूरनरे ॥

श्री शुभचंद्र विष्णुवात पदार,

मुनि वीरचंद पास पाय लागिर ।

जन्म जग मरण रोग निशारे,

एतलु जिन पास मागीयेर ॥

ये शुभचंद्रके पट्टाधिकारी वीरचंदजी कारंगा गरीके अधिपति थे । इनका पट्टाभिषेक सं० १९९७के सालमें हुआ ऐसा अनुमान होता है और वीरचंद्रके पट्टाधिकारी श्री प्रभाचन्द्रजी हुए । श्रीमुनि वीरचन्द्र संघ सहित बडाहीकी यात्रा करनेको पधारे । सुनते हैं कि इनने अमीछरा पारसनाथका नीर्जोहार कराया था । यह पद गुटका नं० २६में लिखा है और संम-वनाथके चैत्यालयमें मौजूद है । पाना १९०० बडाही वावत इस गुटकेमें कई प्रमाण मिले हैं । वर्तमानमें दक्षिणके भाई अपनी मंतानका सौर संस्कार ( मुंउन ) बडाहीमें ही आकर करते हैं । संवत् १६०३में छत्र-साल नामक दूमट दिगंबर भजने इस मंदिरकी यात्रा की और वहां पर नीर्जोहार कराया; देखो गुटका नं० ७ सं० १७०० भट्टारक यादिवन्द्र (प्रभाचन्द्र) निम्नोर्ण मनरंथ तीर्थ पर भट्टार-क पर प्राप्त किया जिसका वर्णन गुटका नं० ७ में इस प्रकार है:-

“श्री प्रभाचंद्र गुरुराय; तस उपदेशे श्रवणे सुनी, मन वसियुं वैरागरे । छाउनी गहये कर जोडी गुरु प्रति कहि; मझइ संजम सार, आदेश विना नवि दीनिये; घरिजई करो विचार । मायकनी आदेश मागवोरे, चाल्यो अति उल्लास; मझ अनुमति देज्यो सही, लेसुं संजमभार । संसार दुख है अति घणां; नवि कोई शरने होय, गजपंथे यात्रा करी; लीघी दीक्षा चंग, हांसीबाई उच्छव करी, संघनी वीरा रंगरे । कनक भाई श्रावक दई; कंकोत्री एक लक्षरे, आव्या संव सहु साथरे ।”

अर्थात् प्रभाचंद्रजीने गजपंथ शिखर पर दीक्षा ली और एक लाख कुंकुमपत्रिका सर्वत्र भेजी थी । जनसंख्या अनुमान उस समय लाखों की हुई थी । वे ही प्रभाचंद्र भट्टारक जिनने अनेक ग्रन्थ निर्मापित किये हैं, संघ सहित बडाली अमीशरा पार्श्वनाथ चंदना करनेको खास पधारे थे और वहां पर कई मास रहे । इन्हीं प्रभाचंद्रजीने रत्नकरण्ड श्रावकाचारकी संस्कृत टीका अमीशरामें बनाई थी ऐसा अनुमान होता है ।

संवत् १६८० वर्ष फाल्गुन मासे वज्रपुर (बडाली) नगर अमीशरा पार्श्वनाथचैत्यालय भट्टारक श्रीगुणचंदे लिपिकृत परमदेस राजप्रथ पूजे भूयान ।

यह पुस्तक ईडर संभवनाथके मंदिरमें मौजूद है । और रामकीर्ति महाराजने भी बडाली अमीशरामें संघ सहित यात्रा की । यशकीर्ति महाराज सख्खरसे आते हुए अमीशरामें ठहरते थे । कनककीर्ति महाराजने संवत् १९३१में अमीशरामें प्रतिष्ठा कराई थी । अमी-

शरामें ११०९ सालकी खडगासन दि० मूर्तिया हैं । यहां पर अभी दिगंबर भाइयोंकी वस्ती न होनेसे श्वेतांबर भाइयोंने उक्त मंदिर पर ध्वजा-दण्ड चढ़ाया था और उसके करनेकी खास जरूरत थी । वज्रा बहुत वर्षोंसे गिर पड़ी थी । हमारे भाई अतिशय प्रमादी हैं । यह कार्य कडियादराके पंचोंको करना उचित था परंतु रायदेशके भाई प्रमादी हो रहे हैं अस्तु हमें बडालीके श्वेतांबर संघका धन्यवाद मानना चाहिये कि वे इस मंदिरका [ जहांपर दिगंबर जैनोकी वस्ती नहीं होनेसे ] प्रबंध करते हैं और रायदेशके पंचों समक्ष बडालीके संघने यह वचन दिया है कि आप अपने मंदिरकी संभालिये और कश्त (एंड) चढ़ाहये व प्रतिमा विरानमान कराहये इत्यादि । हम बडालीके श्वेतांबर संघकी वास्तव्यताकी सराहना करते हैं और सब भाईयोंको हिल मिलकर चलनेकी प्रार्थना करते हैं और बडालीके पंचोंकी सुमतिकी प्रशंसा करते हैं ।

नन्दनलाल जैन चैद्य विशारद ।

दिवालीके लिये अवश्य मगाइये ।

**दिपमालिका सिंघान्न**

(दिवालीपूजन महावीरपूजन सहित)

मूल्य एक आना ।

**सहाकीर चरित्र**

निर्वाणकांड भाषा, गाथा और महावीर पूजन सहित, मूल्य सिर्फ डेढ़ आना ।

मगानेका पता—

मैनैजर, दि० जैन पुस्तकालय-  
खुरत ।

## हमारी दक्षिण कन्नडा ।

( लेखक :—मूलचन्द किसनदास कापटिया )

( गतांकसे आगे )

श्री गोमटस्वामी ( श्रवणबेलगोला )—  
 वा. १८-४-१९ की दुपहर को पहुंचे और भट्टारक  
 चारुकीर्तिजीकी धर्मशालामें ठहरे । यहां मधुवावाले  
 टाला कियोडीलालजी और आगरावाले बाबू लक्ष्मी-  
 चंदजी बन्दर्से आगे हुए थे उनका मिलाप हुआ ।  
 पूरा हो जानेमें पहाड़ पर नहीं चढ़ सके परंतु  
 स्नानादिसे-निवृत्त हो कर गांवमें सभी मंदिरोंके  
 दर्शन किये तथा नित्य नियमादि पूजा भी की ।  
 गांवमें ७ मंदिर हैं जिसमें एक मंदिर बड़ा है ।  
 पास ही जिननाथपुरमें २ मंदिर तथा बस्तीहल्लोमें  
 १ मंदिर है । सभी मंदिर करीब सं. १२०० के  
 बने हुए हैं । जैन उपाध्यायके ३५, योगारके ५०,  
 चतुर्थके २ और पंचमका १ घर हैं । उपाध्या-  
 योही आजीविता गोमटस्वामीसे ही चलती है ।  
 श्री गोमटस्वामीको भट्टारक राज्यकी ओरसे ४ गांव  
 द्याके १५३२ से मिले हुए हैं जिसकी आमदनी  
 वार्षिक १००० आती है और इस तीर्थका सब हिस्सा-  
 बादि पं. भट्टारक चारुकीर्तिजीके पास ही रहता है ।

जमीन तथा खास पाषाण के चोर्ड पर पाये जाते  
 हैं, जिनका तथा आसपासके प्राचीन मंदिर तथा  
 पहाड़ोंका सचित्र वर्णन इन्सक्रिप्शन्स एंड श्रवण  
 बेलगोला ( Inscriptions at Shravan-  
 belgola ) नामक लेप्रजी ग्रंथमें प्रकट हुआ है  
 जो करीब १८ में आर्यप्राज्ञोजिकल सारेक्टर  
 बेर्गेलोर तथा गवर्नमेंट बुक डिपो बेर्गेलोरमें मिलता  
 है । एक मंदिरमें निरी कश्मीरीके दो खम्भे प्राचीन  
 कारीगरीके हैं जिसकी परीक्षा सोनेका आभूषण घिस  
 कर की गई थी । यहां पंचामृत अभिषेककी प्रथा  
 इतनी अधिकता पर पहुंचा है कि कई प्रकारकी  
 दाल, चावल, खोरेका चूरमा, खीर, केले, आदि  
 भगवान पर चढ़ाते हैं तथा नित्य पके चावलका  
 नैवेद्य धरने हैं, यहांतक कि बहुतसे शिवाज पणव  
 जैसे हो गये हैं जिसको उपाध्यायोंने ही अपने  
 स्वार्थके लिये चढ़ा दिया मान्य होता है क्योंकि  
 वे ही उदात्त उसका उपयोग करते हैं । भट्टारक  
 चारुकीर्तिका मंदिर-मठ कई प्रकारके परिग्रहोंसे  
 पूर्ण है । उनके पास स्फटिक, पराशा, हीरा,  
 आदिकी १२ प्रतिमा हैं जिनका पूजन होता है ।  
 सभी मंदिरोंमें मात्र मूलनाथकी ही पूजा प्रचाल  
 और अभिषेक बार २ होता है परंतु अन्य सभी  
 प्रतिमाओंकी सेवा मात्र प्रसाध कभी भी नहीं होती



दरभ अतीव मनोहर है। पहाड़पर कुछ ७ मंदिर हैं जिसमें मुख्य मंदिर तो श्री गोम्मटस्वामी यानी श्री बाहुबलस्वामीका ही है जिसका वर्णन करना हमारी छेत्तीसे चाहर है। कई वर्षोंसे हमारी अभिलाषा श्री गोम्मटेश्वरके दर्शन की थी वह आज ही पूर्ण हुई। श्री गोम्मटस्वामीकी प्रतिमा करीब २५ फिट चौड़ी और ६० फिट उंची सुंदराकार ऐसी भव्य और अतिशय युक्त है कि कितने वर्ष बीते गये तो भी शीत धूप और वर्षाकी बाधा सहते हुए भी प्रतिमा इतनी निर्मल और सुवर्ण वर्णकी है कि जैसे आज ही निर्माण की गई हो।

मात्र चरण ही नित्य पूजन अभिषेक करनेके कारणसे काले पड़ गये हैं। इस भव्य और सारे सभारमें प्रसिद्ध प्राचीन प्रतिमाका निर्माण श्री चामुंडराजे करीब सन् ६०० में काया था और प्रतिष्ठा श्री नेमीचंद सिद्धांतचक्रवर्ती की थी। प्रतिमाजीके अंगपर वृक्षवेल छिपटी हुई है तथा सर्पादि चरणके पासमें खेल रहे मालूम होते हैं। कमलके आसनपर प्रतिमा खड़ी की गई है और कमरसे ऊपरका भाग चारों ओरसे बिलकुल निराधार है। प्रतिमाजीकी छाया नहीं पड़ती है ऐसा सुननेमें आता था परंतु अभी हमको तो छाया पड़ती हुई दिखती थी। शायद पहले न भी पड़ती हो। प्रतिमाजीकी एक ओर 'कनड़ी' लेख है और दूसरी ओर लिखा है कि "चामुंडराजे ऋषिबले गंगराजे सुताल्य करवि-यले" प्रतिमाजीकी चारों ओर खड़ासन और श्याम २४ तीर्थंकरोंकी २४ प्राचीन प्रतिमाएं तथा अन्य प्रतिमाएं भी हैं। हमने श्री गोम्मटस्वामीका दूध, दही, जलादिके अभिषेक किया और बड़े आनंदके साथ नित्य पूजा, निर्वाण दोत्र पूजा, श्री बाहुबल स्वामीकी पूजन जो कि पं. दीपचंदजीने ही बनाई है पढ़ी। आजकी पूजनका आनंद अपार था और श्री गोम्मटस्वामीकी प्रतिमाजीके पाससे हटनेका मन नहीं होता था। अंतमें पं. दीपचंदजीने एक नवीन पद बना कर पढ़ा जो हमें बहुत पसंद आया स्वयंसे पीछेसे लिख लिया था जो इस प्रकार है—

धन्य धन्य बाहुबली स्वामी,  
अविचल ध्यान लगाया है ॥ टेक ।  
राज्य विषय जय चक्रवर्ती,  
आज्ञापत्र पठाया है ।

आन न मानी तब स्वामीने,  
बहु संश्राम मन्त्राया है ॥ धन्य० १ ॥

नेत्र मल्ल, जलधुध मांही,  
चक्रेश्वर मान घटाया है ।

चक्र चलत लख ज्येष्ठ श्रातका,  
उर पैराग समाया है ॥ धन्य० २ ॥

धिक धिक अभिर विषय इन्द्रिय सुख,  
श्रमश जगत लुभाया है ।

जीरण तृणवत् रयाग धृणक्रो,  
निजानंद मन भाया है ॥ धन्य० ३ ॥

ध्यान लगायो अचल मंथवत्,  
मृगमण राज जुजाया है ।

च्यूटी आदि घसीट रोपे,  
नागवेल लपटाया है ॥ धन्य० ४ ॥

लेह शाल्य निःशेष होत ही,  
केवल लह शिव पाया है ।

सो अनंत बलधारी प्रभुको,  
दीपचंद शिर नाया है ॥ धन्य० ५ ॥

श्री विष्णुगिरिका दर्शन करके उत्तर और फिर पूर्व ही दूसरी ओर आये हुये चंद्रगिरि पहाड़पर चढ़े। यह विष्णुगिरिसे छोटा है। इस पर कुल १४ प्राचीन मंदिर और बहुतसे शिलालेख हैं। इसके पास एक ग्राममें दो मंदिर और हैं उनके भी दर्शन किये। इस प्रकार दर्शन करके ग्राममें आये और ग्रामके मंदिरोंके दर्शन भी किये और २ बजे धर्मशालामें पहुँचे। शामको वहाँ देवा, देगरपुर, शाय्या आदिके ७ माई यात्रावे आये, वे हम दोनोंको देखकर आनंदित हुए क्योंकि उनको भी सूत्रविद्दीकी यात्राके लिये साथीकी आवश्यकता थी। ता. २० को गोम्मटस्वामीकी दूसरी वेदना अभिषेक तथा पूजन पूर्वक की और होमादिसभी किया करके हमने श्री गोम्मटस्वामीकी समस्त यज्ञोपवीत धारण किया। किया पं. दीपचंदजीने कराई थी।



इसकी खुर्चा में ११) शास्त्रदान और ११) विद्या-  
दान किया। इस प्रकार ता. २१-२२ को भी  
पंदना की। हिसाब सच भट्टारकजी ही रखते हैं  
इसलिये प्रबंधक कमेटी की आवश्यकता है। मूर्तिपूजक  
फंडके करीब १५०००) हैं परन्तु इतनेमें मूर्तिपर  
भंडक होनेका प्रबंध नहीं हो सकता और न आव-  
श्यकता भी है इसलिये इसके व्याजसे प्रति १०-  
१२ वर्षके बाद महाभूमिक करना चाहिये। तीर्थक्षेत्र  
कमेटीमें १०००) बोहोलाके जमा है परन्तु प्रबंध  
कुछ भी नहीं होता। भट्टारकजी और शास्त्रीजीके  
प्रबंध कालेपर ही बोडिंग तथा अन्य प्रबंध हो  
सकेगा। शास्त्रीजीको 'दिगंबर जैन' की भेजना  
स्वीकार किया। यहां ८ दिनपर बाजार भरता है  
यह भी देखा। यहां केले और शीतल सस्ते मिलते  
हैं तथा आम भी यंत्र महीनेमें कच्चे पके  
मिलते थे। 'जैनमित्रका' एक माहक हुआ। यहांसे  
मुरविंदी रेलवे भी जा सकते हैं परन्तु हमारा  
बेलगाछीसे ही जानेका निश्चय था क्योंकि इससे  
बीचकी सभी यात्रा हो जानी है। ता० २२ की  
रात्रिको दम दोनो, गमनदेवाले, टगरपुरवाले, कोटवा-  
पुरवाले दम सरह ३० आरम्भी ७ गाड़ीमें हासनके  
जिये रहना हुए क्योंकि मुरविंदी तककी गाड़ी  
यहां दो दिन विशेष ठहरनेपर भी न मिल सकी  
थी (पटुत करके तो मिल जाती है) ता० २३  
की दुपहरको ३० मांछ पर—

हासन—आये। यहां दो मंदिर हैं। मंदिरों  
ही धर्मशाळा चली हुई हैं उसमें ठहरे। यहां २  
घर भ्रंत ब्राह्मण और २२ घर जैन घरोंके हैं।  
यहांके मंदिरकी प्रतिमा भी प्राचीन है। गैर है  
कि विद्याय मृतवापदके किसीकी प्रशाल नहीं होती।  
यहांसे मुरविंदी तककी पांच गाड़ी पंढीस २  
हफ्तेमें की और ता. २४ की रात्रिको यहांसे बल-  
रहा. २५ की सुपहको १० बजे २० मीन पर-  
हालिवीडे—पहुंचे। यह छोटासा ग्राम होनेपर  
भी अतीव प्राचीन और देखने योग्य स्थल है।  
धर्मशाळा न होनेमें मुरी जगहमें ही ठहरे। यहां  
३ मंदिर प्राचीन प्राचीन हैं जिसमें एक बड़ेमें

पार्श्वनाथजीकी प्राचीन श्यामवर्ण कार्योत्सर्ग प्रतिमा  
विना छेसकी है। इसमें कई शिलाछेख भी बड़े २  
हैं। और कसोटीके बड़े २४ खंभे हैं इसकी भी  
परीक्षा की थी। दूसरे शान्तिनाथजीके मंदिरमें भी १२  
कसोटीके खंभे और खुदाईका काम सुंदर है। मानस्तेम  
भी है। तीसरा मंदिर मल्लिनाथका है। यह छोटा  
है। यहां शिवके भी २ मंदिर प्राचीन हैं जिसमें  
एक तो इतना विद्याल और भव्य है कि जिसकी  
बनावट और खुदाईके काममें लाखों तो बया करोड़ों  
रुपये लगे होंगे। यह देखनेके योग्य ही है। इत  
कथासे मालूम हुआ कि यहां पहले विष्णुवर्धन राजा  
जैन थे जिन्होंने १४० जैन मंदिर बनवाये थे परंतु  
उनके वैष्णव हो जानेसे उन्होंने ही सभी मंदिर तोड़-  
वा डाले तब राजाकी माताके आग्रहसे ३ मंदिर  
ऐसे ही रहने दिये थे। यहां जैन भाषणका एक  
ही घर है। मैसूर सरकारसे कुछ जमीन मिली  
है जिसकी आय ८०) रु० आती है उसीसे जैसे तैसे  
सर्च चलता है। गाजी भी विशेष नहीं आते।  
यहां धर्मशाळाकी साठ आवश्यकता है। इस तीर्थका  
विशेष हाल भ्रमणवेत्तगोलाके भट्टारकके पास है।  
हमारे साथवाले बाबू, उन्नीसवींजी 'दिगंबर जैन'  
और 'जैनमित्र' के माहक हुए। रात्रिको यहांसे  
पठकर ता. २६ की सुपहको २८ मांछ—

गोनेवीड—पहुंचे। मंदिर नहीं है। घाला  
पर ठहरना पड़ता है। यहांके जंगलका दृश्य  
मनोहर है। यहांसे रात्रिको बलरहा १२ मांछ  
पर ता. २७ को बनकण्ड पहुंचे और नदी  
पर मुकाम किया। यहां भी मंदिर आदि नहीं  
हैं। यहांसे रात्रिको चन्नर २० मांछ पर ता.  
२८ को चारमांही आये। यहां भी मंदिर  
नहीं है। पोस्ट आफित है। एक धंगलेमें ठहरे।  
यहांसे रात्रिको बल और सुपह दोपहर ४ बजे  
निर्मल आये जिसमें मंदिर होनेसे ठहरकर  
दर्शन किए। यहां जैन ब्राह्मणोंके २ घर हैं  
और पार्श्वनाथजीकी प्रथम प्रतिमा विना छेसकी  
बाति प्राचीन है। यहांसे बलरहा ता. २९ की  
सुपहको १०) रु०—



धर्मस्थल—पहुंचे। जैन उपाध्यायके ३ पर और मंदिर २ हैं—उसमें एक श्री चंद्रप्रभु का प्राचीन मंदिर १०० वर्षका पुराना है। सिवाय मूलनायकके सभी प्रतिमाओंकी प्रशाल नहीं होती। यहां मनजग्गा हेंगडे रहते हैं जो जैन हैं और सारे गांवके प्रबंधक हैं। इनके मकान पर दूसरा मंदिर है। यहां वैराग्य (धिव) मंदिर बना है जिसकी मान्यता बहुत है और उसका प्रबंध हेंगडेके बंदाज ही करते आये हैं। यहां जो कोई आते हैं, उनको तीन दिन तक भोजन-दिस्ते सरकार करते हैं। मंदिर बादिराज मधवा-चार्यने करीब ७००-८०० वर्ष पर बंधाया था ऐसा कहते हैं। जिसको आवश्यक्ता हो उसको यहांसे 'वध' धन भी मिलता है। जैन अजैन सभीको कुछ भी बिना भेदभाव देते हैं। इस तरह प्रति वर्ष १ लाख रुपये दानमें खर्च होता है। यहां बिना कीसका प्राथमिक स्कूल है और संस्कृत, पाठशाला खुलनेवाली है। ५ जैन विद्याधि-योंको स्कूलरशिप भी भेजी जाती है। हेंगडेजी संस्कृत अच्छी जानते हैं और जैन शास्त्रके भी जानकार हैं। आप जैनधर्मका बहुत कुछ उपकार कर सकते हैं। आप 'जैनमित्र'के ग्राहक हुए। यहां मास्टर हुआ कि बेंगलोरसे 'जिनमत प्रकाशिका' नामक मासिक फनटो आपमें प्रकट होता है। सं० पद्मराज पंथित और मूल्य १॥) बंधित है। तथा 'धर्मसाधन' नामक तमिल भाषाका मासिक मद्राससे प्रकट होने लगा है। सं. आदि नियंत्र है। चंद्रनयनके मंदिरमें सभी प्रतिमाओंकी प्रशाल करानेसे हेंग-डेजीके निवेदन किया। दिन भर यहां आनंदसे बिता। गंधिजे जाते समय हेंगडेजीने हमको और ५० दोषचंदजीको एक २ पपरकटर चंदनकी लकड़ीकी दोनों और एकमी नकाशीके कामका

भेंटमें दिया। यहांसे चटकर करीब १५ माइल पर ता. ३० की दुपहरको—

वेणूर—आये। ८ घर जैन उपाध्याय और ७ घर जैनियोंके हैं। पास २ के ग्रामोंमें और भी ५० घर जैनियोंके हैं वे भी आते जाते हैं। ठहरनेके लिये धर्मशाला है। प्राचीन ८ मंदिर हैं। ए६में श्री गोम्पटस्वामीकी प्रतिमा विशाल-भेदानमें २१ फीट ऊंची है। प्रति फात्सुन सुदी १५ को मेला भरता है तब १००० आदमी एकत्र होते हैं। एक मंदिरमें श्यामवर्णकी कापोत्सर्ग २४ तीर्थंकरोंकी २४ प्रतिमाएँ हैं। मंदिर ८०० वर्षका पुराना है। यहां भी सब प्रतिमाओंकी प्रशाल नहीं होती। यहांसे रात्रिको चटकर ता. १-५-१९ की सुबहको मुडविट्टी आये।  
(अपूर्ण)

## फौलशकारण भावना ।

दोहा-जें तुम पोइस भावना, भावहु नित दुलसाय ।  
पाप बटे, पातक नशै, तिथै कर धंध लहाय ॥

### चौपाई ।

पहिली भावना 'विशुद्धि' कहाई ।  
ताहि वेग अत्र धारो भाई ॥  
तत्वादि श्रद्धा चित्त धराई ।  
सेउ तो अन्नत सुख लहाई ॥ १ ॥  
दुसर 'विनयसम्पत्ता' आई ।  
सबकी चितय करो मन लाई ॥  
दर्श, ज्ञान, चरित्र, तप उपचारी ।  
विनय पंच प्रकार बताई ॥ २ ॥  
अहिंसादि व्रत पालन भाई ।  
'अनतिचार शील' व्रत गाई ॥  
कुशीलादि जु मन भावै लुड़ाई ।



ताहि भाउ निर्दोष धराई ॥३॥  
 'आनन' को नाम 'ज्ञान' कहाई ।  
 तामें चित्त लगावन भाई ॥  
 'उपयोग' कहो सो मन ल्याई ।  
 सदा तत्त्व अभ्यास कराई ॥ ४ ॥  
 संसार 'विषय' भुजंग लखाई  
 अनुरागो धरम, चित्त लाई ॥  
 धर्मात्मामें नेह बढाई ।  
 सेउ 'संवेग' तो सुख पाई ॥५॥  
 शक्ति समदाल प्रीति लगाई ।  
 देउ सुपात्रै पुन्य लहाई ॥  
 भोजन, औषध, ज्ञानादि जोई ।  
 दान चार प्रकार नताई ॥ ६ ॥  
 इच्छा निरोधे सम्यक् लाई ।  
 सोई 'तप' दृढ जानो भाई ॥  
 बाह्य अभ्यंतर भेद लाई ।  
 सो दोय प्रकार चतलाई ॥ ७ ॥  
 मरण काल समीपे नव आई ।  
 तण भुद्ध भाव मनमें लाई ॥  
 त्याग प्राण निःशून्य होई ।  
 सु 'साधु समाधि' जानो भाई ॥ ८ ॥  
 मेवा सम मंत्र और न कोई ।  
 मन इच्छित फलशता सोई ॥  
 गेगी, धर्मनेही नु होई ।  
 तामु 'मेवा' करो मन लाई ॥ ९ ॥  
 मन्त्र दर्शन, ज्ञान, चारित्र लाई ।  
 जाने चारो घाति नशाई ॥  
 ता आनन्दो मनमें धारी ।  
 भक्ति कर सु 'अरह भक्ति' भाई ॥ १० ॥  
 तो दिग, दीभा, देखे शक्ती ।

अरु असते सत दृढ़ कराई ॥  
 तिन संघ पतिको सेवो भाई ।  
 'आचार्य भक्ति' सोई गाई ॥-११॥  
 पूजो, सेवो वे तत्त्वज्ञानी ।  
 जिन द्वादशांग मन भाई ॥  
 'बहु श्रुतिभक्ति' भावना सोई ।  
 तामु भावो जु करम नशाई ॥ १२ ॥  
 अब जिनवानी वेग मन लाई ।  
 पूजो भज; भव दुख हराई ॥  
 नशावन हारी चसु करम नई ।  
 'प्रवचन भक्ति' भावना कई ॥ १३ ॥  
 निज पद कर्तव्य हानि न लाई ।  
 सामायिक, बन्दनादि कराई ॥  
 भावना 'अवश्यका परिदार्पणी' ।  
 पुन्य बड़ावन हारि कहाई ॥ १४ ॥  
 मिथ्यागत फेलो चहुँ ओरी ।  
 अब जिन भानु प्रभा नशाई ॥  
 रत्नत्रय मुक्ति पथ प्रगाई ।  
 'मार्ग प्रभावन' कर भाई ॥ १५ ॥  
 सदा कर जीवनकी मलाई ।  
 'वात्सल्य अंगहि' मन लाई ॥  
 सुश्रावक उत्तम नम गोही ।  
 तामु सम अवर नाहि कोई ॥ १६ ॥

सोरठा ।

पूरन नई ते मोय, सोलह कारण भावना ।  
 मधु सो मति होय, माँय मैनी भावना ॥  
 पाँव मैनी मोय, मोक्षसदन नु मुहावना ।  
 अब मोय ही होय, 'भारत' गुरी प्रवीना ॥

कामनाप्रसाद जैन,

अमीमंज (पृष्ठा) ।



# दिगंबर जैन.

## THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिविविधश्च तत्त्वैः सत्योपदेशैस्तुगवेषणाभिः ।

संबोधयत्प्रमिदं प्रवर्त्तताम्, दैगम्बरं जैन-समाज-मानम् ॥

वर्ष १२ वॉ.

वीर संवत् २४४५. आश्विन. विक्रम सं० १९७६.

अंक १२.



दस्तावेज, हिसाब वही आदिमें सबसे प्रथम संवत् लिखते हैं जिसमें आजकल ई. सन् लिखनेका तो सामान्य रिवाजसा पड़ गया है और इसके साथ २ विक्रम संवत् और शालिवाहन शक भी कई कई लिखते हैं परन्तु कई वर्षोंसे आन्दोलन करनेपर भी अब भी हमारे बहुतसे जैनी मई वीरनिर्वाण संवत् नहीं लिखते यह शोचनीय है । वीर निर्वाण संवत् लिखनेसे हमारे वर्षका गौरव बढ़ता है और महावीर प्रभूको हुए कितने वर्ष हुए यह तुरंत मालूम होता है इस लिये हम सब माइयोंको एकवार फिर याद दिलाते हैं कि अपनी बहियोंमें तथा चिट्ठी पत्रोंमें आगामी वर्षमें श्री वीरनिर्वाण संवत् २४४६ लिखना न भूले । वहीमें इस प्रकार लिखना चाहिये—वीरनिर्वाण सं. २४४६ विक्रम सं० १९७६ ( मा. १९७७ ) कार्तिक शुक्ल १ वार शुक्र ता० २४-१०-१९ । दूसरी एक सूचना यह भी है कि नयी बही-में ॐ और स्तुति के साथ २ श्रीकृष्ण निर्वाण संवत् भी वर्षमें एकवार अवश्य लिखना चाहिये । कृष्ण निर्वाण संवत् इस प्रकार लिखे—श्री कृष्ण संवत् ४१३४५२६४०१० २०८२०३१७७७४५१२१९१९९९९९९

जन्मसे करीब २९०० वर्ष पहले श्री पावापुरीमें हमारे अंतिम तीर्थंकर वीरनिर्वाण श्रीमहावीरस्वामीने आश्विन व. १४ ( गु. ) की पिछली रात्रिको और १४ ( गु. ) की पिछली रात्रिको वीर संवत् । निर्वाणपद प्राप्त किया था तबसे मात्र जैनोंमें ही नहीं परन्तु जैन अजैन सभी भाइयोंमें दीपावली पर्व भूमधामसे मनाया जाता है और यह सार्वजनिक पर्व हो गया है । जैनियोंमें इसी अमावास्याकी प्रभातको महावीर निर्वाण पूजन किया जाता है और निर्वाणलड्डू चढ़ाया जाता है उस वस्त्र निर्वाणकांड भूषा और गाया तथा संक्षिप्त महावीरचरित्र भी सब भाइयों—बहनोंको सुनानेकी परम आवश्यकता है तथा इसी दिन सुबह या रात्रिको एक जाहिर सभा करके महावीरके गुणानुवाद और उत्सपरसे हमें क्या २ शिक्षा लेनी चाहिये इस पर जाहिर व्याख्यान होनेकी भी आवश्यकता है । अब हर एक माई चिट्ठी पत्री,



शिकायत नहीं है आदि.... गवर्नमेंटने उनको पूछा है "यदि तुम जयपुर दरबारकी बिना प्रथम आज्ञाके जयपुर राज्यमें प्रवेश न करो और ब्रिटिश हुकूमतमें रहनेसे तुम पर साधारण जांच रहेगी और सर्कारको संतोष हो जाने पर वह जांच भी हटा ली जायगी" ये शर्त स्वीकार करो तो छोड़ देंगे। सेठीजीने ये शर्त स्वीकार कर ली हैं और अब उनको कहां और किसके पास रहने देना इसका संतोषप्रद निर्णय नहीं हुआ है आदि। "अब यह देखनेका है कि सेठीजीकी नीमच खून केस यातो देहली षड्यंत्र केसमें जुबानी तक नहीं ली गई है और न उनमें इनकी निकार भी है। फिर सेठीजीका कोई अपराध भी नहीं बताया गया और न माफला चढ़ाया गया है तथा सेठीजी सर्कारकी शर्त भी स्वीकार करते हैं तब न जाने क्यों अब सर्कार इनको छोड़नेमें विलंब कर रही है! शर्त स्वीकार करनेको ९ माह हो चुके तो भी कहां और किसके पास रखना इसका निर्णय भी सर्कार नहीं कर सकी यह बड़ा मारी आश्चर्य है! गवर्नमेंटको पूर्ण अधिकार है कि ये इनको नब कभी जो कुछ चाहे कर सकती है और जांच भी रख सकती है तथा तो एक लेश मात्र भी विलंब न करके उनको तुरंत छोड़ देने चाहिये और जैन समानमें कौली हुई अशांतिको दूर करनी चाहिये। यह तो अब खुल्लुला माहूम होता है कि जैपुर सर्कारका अब इसमें कुछ भी हस्तक्षेप नहीं है। हमारे मध्यकों भी पूर्व है कि हरएक नगरसे

एक २ तार नामदार वाइसरोय सिमलाको भेजे कि सेठीजीको शीघ्र मुक्त करो। इसी प्रकार चार पांच अग्रगण्य श्रीमानोंका एक डेप्यूटेशन भी ना० वायसरोयके पास जैनकी परामर्शयुक्तता है। आशा है कि रा० ब० सुब-नसिंहजी देहली, रा० सा० प्यारेलालजी, सेठ हुकमचंदजी अदि इसके लिये खास कोशिश करेंगे।

\* \* \*

कई जातीय समाजोंके वार्षिक अधिवेशन घड़ाघड़ हो रहे हैं और प्रांतिक समाजका होनेवाले हैं परंतु हमारी अधिवेशन। बम्बई दि० जैन प्रांतिक समा और महासमाके अधिवेशनका निश्चय अभी तक नहीं हुआ है। महासमाका अधिवेशन तो रजिस्टर्ड स्थान मधुरा में अभी होते रह गया और आगे कहां और कब होगा उसका पता नहीं है यद्यपि नये महामंत्री इसके लिये बराबर कोशिश कर रहे हैं। बम्बई दि० जैन प्रांतिक समाका अधिवेशन गमपंथामें तीन बार हो चुका। अब वहाँ दूसरे स्थानपर ही होना चाहिये। कई वर्षोंसे गुजरातमें अधिवेशन नहीं हुआ है इसलिये अहमदाबाद, तारंगगाजी, प्रांतिन, ईडर, आनू, आदि स्थानपर होनेकी आवश्यकता है अथवा दक्षिणमें भी अधिवेशन करनेकी आवश्यकता है। दक्षिणमें अधिवेशनके योग्य स्थान श्री कुंथलगिरीजी सेव है और वहाँ अधिवेशन होनेकी बहुत आवश्यकता है। यहां वार्षिक मंडा मगसर पासमें होता है उन्नी मोंकार ही

यहां अधिवेशन अच्छी सफलताके साथ हो सकेगा। अभी सोलापुरमें त्यागीजी ऐश्वर्य यन्त्रालयकी केशलोच उत्सव होनेवाला है तब परंडा, भूम, आदिके माई भी शामिल होंगे इसलिये आगामी अधिवेशन कुंवलगिरीमें करनेके लिये हमारे सोलापुरके माइयोंको कोशिश करनेके लिये हम प्रेरणा करते हैं। तारंगाजीमें भी उत्सव होनेवाला है तो वहां भी अधिवेशन हो सकता है इसके लिये ईडरके माई तथा खास वरके सेठ लल्लूमाई, लक्ष्मीचंद कोशिश करेंगे ऐसी पूर्ण उम्मेद है।

\* \* \*

दिगंबर देवताओं धार्मिक तथा संस्कृत शिक्षणों को प्राप्त पठान्त्र गुजरातमें विद्या-रूप तो ते गुजरात प्रांतज लक्ष्मी नर. छे, डेभके गुजरातभांथा आज सुधी एक पक्ष पंडित तेषार यथो नथी डेभके डोष पोताना पुत्रोने भावी, भारेना, हस्तीनापुर पालयर्षात्रम वनेरे विद्यालयोंमें अल्पता मोक्षसदा नथी तेमज गुजरातमें तेनुं साध विद्यालय पक्ष नथी नथी पदसाशा भारे दिदी पंडितोत्र शास्त्रा पडे

इसे आपी शक्य. जो धरर रायदेव अने हांडा-ना भाधयो ओधन भणा प्रयास करे तो ये नारे एक लाभ इत्यानु इंड यतां वार सांजे नदि. हसल्योत्र छेडियाभां ओराज प्रतितरना दशा दुभड भाधयोनी सभा भरानार छे तो ते प्रसंगे धरर, राय देव अने हांडाता भाधयोने पक्ष आमंत्रण करी विद्यालय जोधवा संबंधी अत्यंत करवाने येना भंत्री नेमयंद उगरयंद गांधीने अमे सुयना दरीछे छिये. अक्षयारी शितलप्र साधलता हपदेश अने प्रमत्तपी पागडभां वसवाभां तो गत आसो सुद १५ ते दिने रा. सा. विन. बंधल द्वारा मोटुं विद्यालय प्रुधी सुक्युं छे ते २६ विद्यार्थी पक्ष लाभल यध सुभा छे तो तेनुं अनुकरषुं दमारा गुजरातना भाधयो नदी करे।

**उदारताका परीचय**—सिवनीसे घर पर जाते सेठ गंभीरमलजी पांडेया वर्षा ठहरे थे। वहां आपका अपूर्व स्वागत हुआ और आपने १०१) वर्षा कोटिंगमें धार्मिक शिक्षाके पंडितके लिये दिये तथा रायपुरको आप पवार और वहां भी जैन बाळ कोषिनी पाठशालाको तीन वर्ष तक १) मासिक सहायता तथा १०) की पुस्तके और मिठाई बांटी थीं।

**फेसरगंज**—(अजमेर)में वेदी प्रतिष्ठा होनेवाली है और वहाँके माइयोंका इरादा वहाँ मन्वे दि० जैन प्रांतिक समाका वार्षिक उत्सव करानेका मात्प हुआ है।

**दिगंबर जैन** हितयर्थक प्रांतिक सभाको ११ मे वारिक मेगादो छेडियाभां पाठना इरावाग सा. देवयंद नरेसरासना प्रमुपयुता नीये शर्वक पर २ पर बनार छे, तेभां वोडरिपर सुनुं देन तेमजे सा. सुनीलस साधयंद वेसपुरने ताथीरे करछ करी. १५ वंथी दोली वमनंजी काछ नदि करीसद.



**જયજિનેંદ્ર (ચિત્ર)**—પ્રકાશક, શ્રીધર વા-  
મન નગરકર—નાસિક । इसमें जिनेंद्र इस  
पवित्र शब्दमें महारक, त्यागी, मुनि, ब्रह्मचारी  
आदिके २५ फोटो खूबीके साथ दिये हुए हैं ।  
चित्र संग्रह करनेयोग्य और दर्शनीय है । मूल्य  
बड़ी साइज १) और छोटी साइज आठ आने हैं ।

**औपधालयकी रिपोर्ट**—श्री ओसवाल  
औपधालय अजमेरकी यह दो वर्षोंकी रिपोर्ट  
देखनेसे ज्ञात होता है कि दो वर्षोंमें ९२६८  
रिपोर्टोंने इसका लाभ लिया । ५०००) के  
न्यायी फंड और मासिक चंदेसे कार्य चलता  
है । (वर्च १९२४) हुआ है ।

**जिनपथ रत्नावली**—प्रकाशक—रावजी  
सखाराम दोशी, सोलापुर । इसमें दत्तात्रय श्री-  
माजी रणदिवे कृत २० मराठी अच्छे पदोंका  
संग्रह है । प्रकाशकसे विना मूल्य मिलता है ।

**लावनी संग्रह**—प्रकाशक, मूलचंद गुप्त,  
हिन्दी जैन ग्रंथ प्रकाशक कार्यालय, श्याम बाजार  
कलकत्ता । मूल्य ०) यह संगीत जैन ग्रंथमाला  
का छठा ग्रंथ है । सातसे बार तकका सम्मिलित  
ग्रंथ भी प्रकट हुआ है ।

**जैनपथ प्रदर्शक**—प्रकाशक, प्रसासिंह जैन  
मानपाडा, आगरा । यह प्रथम वर्षका सचित्र  
विशेषांक ८८ पृष्ठोंका है । जैन स्थापकशास्त्री  
माइयोंका चित्र होनेपर भी कई लेख समी

जैनियोंके पढ़ने योग्य है । मुखपृष्ठके चित्रमें  
वज्रके नामका अच्छा भाव दर्शाया है । कुल  
२० लेखोंमें जैन फिलोसफी, कर्मक्षेत्र, परहित  
साधन, जैन समाजपर एक दृष्टि आदि लेख  
पढ़ने योग्य है । कुल ८ चित्रोंमें लाला बनौ-  
मलनी एम० ए० जड़नका भी चित्र है ।

**दश धर्माभूत पान**—प्रकाशक, महेंद्रप्र-  
ताप जैन, मानपाडा आगरा । मूल्य ०) ।। इसमें  
पं० इन्द्रराज शास्त्री कृत दश धर्मोंपर उपदेशा-  
त्मक मन्त्र है तथा बाबू जुगलकिशोर  
कृत 'भेरी भावना' भी प्रकट की गई है ।

**वैराग्य शतक**—प्रकाशक जैन पुस्तक  
प्रकाशक कार्यालय—व्यावर । मूल्य ०) ।  
इसमें आचार्य गुणविनयनी (श्वे.) विरचित  
वैराग्य शतकका सिर्फ हिन्दी अनुवाद दिया  
गया है जो आत्मचित्तवनके लिये अवश्य  
योग्य पढ़ने है ।

**વ્યાયામશાળાના રિપોર્ટો**—સોલાપુરની  
દોશી જાતન તેમચંદ વ્યાયામશાળા તથા માર-  
વાડી વ્યાયામશાળાના આ બંધુકા શુદ્ધ વાર્ષિક  
રિપોર્ટો છે જે જેતાં જણાય છે એ જાનેમાં દૂક  
અર્થમાં અતિ ઉત્તમ કાર્ય થાય છે. જાનેમાં  
દોશી દોશચંદ મધુકચંદ કાકા જાનસરી તરીકે  
શીખવે છે. નિયમિત દેશી વ્યાયામ પદ્ધતિથી  
ઉત્તમ કસરતો શીખવાય છે તથા એવાં આસનો  
અને કસરતો કરાવાય છે કે જેથી શરીરનાં અનેક  
રોગો પશુ સારા થઇ શકે છે. એવા કેટલાક  
રોગો સારા થયેલાના પશુ એમાં દાખલાઓ છે.  
આપણી દરેક કસરતમાં આંતરિક વ્યાયામશાળાની  
જરૂર છે. વ્યાયામશાળા સંબંધી ઉપયોગી સાહિ-  
ત્ય, સાધન તથા સલાહ સર્વેને એ બાઇ પુરો  
પાંડે છે. એમની આ નિસ્વાર્થ સેવા અતીન્

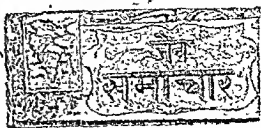
હે. સર્કસમાં થતી અનેક મોટી મોટી કસરતો પણ એજો કરી શકે છે તે શીખવે પણ છે.

**ઔપધાસયનો વિષેટ**—સખારામ નેમચંદ જૈન ઔપધાસય સોલાપુરનો આ બે વર્ષનો રિપોર્ટ જોતાં જણાય છે કે એમાં વિલાયતી સૂફી અને પાકી દેશી દવા વપરાય છે. ૨૦૦૦૦) સખારામ શેઠ આપેલા છે જોથી કાર્ય ચલે છે. ૫૨૪ ૧૧૫૩, ૬૩૧ થયો હતો અને ૨૫૭૩૬ રોગીઓએ બે વર્ષમાં લાભ લીધો હતો. પ્રકાશ મંત્રી જીવરાજ ગોતમચંદ દોશી છે, જ્યાં એમાં સખારામ શેઠનો ફોટો પણ અપાયેલો છે.

**મુનિ તિલકચિત્રપત્ર (૨૩.)** એ પનાર (નવસારી)ના જૈન બ્રાહ્મણોમાં લગ્ન, મરણ, પર્વોત્સવ, ક્રાંતિ વગેરે સંબંધી લેખિત સુધારાઓ કરાવ્યા છે તેનું એક પુસ્તક તથા એકસોજ ઉપદેશ આપીને ગાંધીશા વાસજીના માધી મદાનમાં લેખિત સુધારાઓ કરાવ્યા છે તેનું એક પુસ્તક એમ બે પુસ્તકો મળ્યાં છે.

**ચિરાગ**—પુ. ૨૦ મુ' ૦ અ' ૭૫૦ વાર્ષિક મૂલ્ય ૩) આ પારમોજીને લગતું જીવંત આસિષ પત્ર છે અને નવસારીથી પ્રકટ થાય છે.

**જીવંત જીવંત ઇન્દ્રજીનો રિપોર્ટ**—મુંબઈમાં જે 'જીવંત જીવંત પ્રસારક મંડળ' છે તેની તરફથી મુંબઈમાં જત વર્ષમાં જીવંત વાર્ષિક સભા મેદાન પાયા ઉપર જિ. એન. નિચેટ તથા જિનસારાસના પ્રમુખપદે ઘણી દલીલો આપીને રિપોર્ટ અંગેજી બાબતમાં મેદાની સમસ્યામાં અનેક બાબતો તથા ૪ નિર્ણય સહિત છે જે પર મંજૂર અને કરવામાં આવેલો જણાય છે. જોથી મેદાન: અર્થમાં પણ મારો રિપોર્ટ પ્રકટ થાય શકે ખરી. આ સંરેષાનું જીવંતને લગતું કાર્ય જીવંત પ્રકટ કરીય છે તેમ જીવંતને જે અંગેજી તથા મુંબઈની આસિષ પણ પ્રકટ કરવા માંડ્યું છે.



**ઉપદેશક**—ફિરાનકે લિયે હમરે શેઠ જૈન માદ્યોમેં અમી એક લાસ રૂ. કા પંડ હો ગયા । એસા હી પંડ દિગંધર જૈનીયોમેં કવ હોગા ?

**જિનવાણીકી સેવા**—દાનવીર સેઠ માણિકચંદનીકી સ્મૃતિમેં સંસ્કૃત ગ્રંથમાલા પ્રકટ હોતી હૈ इसके लिये १००००) की आवश्यकता प्रकट की गई थी जिसमेंसे करीब ४०००) भरे गये हैं और अभी ही १०१) वांस्वाड़ा वाले खोडनिया बाबरचंद पूनचंद और १०१) सि० पन्नालालजी अमरावतीने दिये हैं । १०१) से कम नहीं लिये जाते । धनिकोंको और सौ २ ६०) भेजकर यह रकम पूरी कर देनी चाहिये । भेजनेका पता—नाथूराम प्रेमी, मंत्री, हीराबाग—रम्हई ।

**છઃ માસ કૈદ ઓર અપોલ-જૈન** સવાનસંવત્ર ૩૦ મગધાનવીનગીકો વાનાલ મમી-ફટ્ટેને છઃ માસકી સાદી વેદકા વંદ કિયા હૈ નિત પર અરીલ હુઈ હૈ । અપીઝમેં પૂર માનેકી આરા હૈ । નાચૂ અનિતપ્રસાદમી ફટકે લિયે જો માનસે કોનિયા વર રહે હૈ । મેવારે મગધાનગી નિવરાણ મરે નાતે હૈ ।

**સ્વાસ્થ્યલાભમેં દાન**—સિપદં વચ્ચેવચ્ચ માદ્યોને નિર્મોલતા લાભ હોને પર ૨૦૦૦) કા દાન દિયા હૈ નિતમેં ૧૧૦૦) પન્નાસી પાટ-સાગી દિયે હૈ । પન્નાસી :

जैन द्वितेय्य—मु'भाधधी श्री वाडीलाव  
भोतीलाव शाह ०७/१५/७६ छे । के 'जैन द्वितेय्य'  
अंध पाठयुं नथी पक्ष जेना ४०० पानीना  
भोटो अंक तैयार थवा आओये छे न० ८-१०  
दिवसमां प्रकट थशे भाटे आदंडाये धीर०० शम्भरी.

भक्त भ'गात्री लो—'जाननीपड' पृ. ६४  
अने पर्युण्य पर्य अथवा पवित्र जवनने  
परिचय पृ. ८० आ नामनां जे पुरतेश भाव  
अंक आनानी दीक्षीट पीडी नयेने ठेकायेथी  
भक्त भ'गात्री शक्य छे—नअस्थली जेम मुष्पी,  
शेजी टांछल वरुस गच्छेदी (वडोदरा २०२८)

श्वे० जैन कोन्फरेंस—कां आगामी अधि-  
वेशन सादरी (जोधपुर)में होना निश्चित हुआ है ।

गौलापूर्व—जैन जातिकी भी समा स्थापित  
हो गई । समापति सि० कुंदनमलजी और मंत्री  
बालचंदजी अर्जीनवीस—सागर हैं ।

श्री खंडगिरी—उदयगिरी—की रक्षाके  
लिये और उसकी मरम्मतमें सरकारको हस्तक्षेप  
न करनेके लिये कलकत्ता कमेटीने बिहारके छोटे  
लाटको अर्ज की है ।

अमरावती—में जैन नाइट स्कूड खुलना  
निश्चित हुआ है और शिक्षककी आवश्यकता है ।  
वर्धा—में बोर्डिंग, लायब्रेरी और मगनवाई  
कन्या पाठशालाका उत्सव सानंद होगया । कुठ  
२००)—३००) चेदा भी हुआ था ।

बोर्डिंग स्थापन—बारासिबनीमें पाठशा-  
लाके साथ २ बोर्डिंग भी स्थापन हो गई ।  
९०००) का स्पाई फंड होगया और नवीन  
भवन भी बनेगा ।

परवार सभा—के लिये एक उपदेशककी  
आवश्यकता है । वेतन ६०) मासिक तक ।  
पत्ता—सि० कुशसेन मंत्री—सिवनी ।

तिथिदर्पण मंगालो—वीरसं० २४४६  
का तिथिदर्पण प्रगट हो चुका है । विनामूल्य  
मंगालो । पता—मुनीम बदामीलाल, जंबरीबाग—  
इन्दौर ।

खुरई—के श्री० सेत मोहनलालजीने स्या०  
महाविद्यालयको (१००) प्रदान किये ।

हिंसा बंद—मैहरमें सारदा मंदिरमें दशहराके  
दिन ४००० बकरोका बलिदान प्रतिवर्ष होता था  
जिसको इस वर्ष हमेशके लिये महाराना ब्रज-  
नाथजू सरकारने बंद किया है और आज्ञा दी  
है कि यदि कोई बकराका बघ करेगा तो ९)  
दंड और छः मास जेल होगी । यह उपदेशक  
पं० मौजीलालजी, त्यागी गोकुलप्रसादजी  
आदिके प्रयत्नका फल है ।

चौरनिर्वाण—भूमि—श्री पात्रापुरीनीमें  
निर्वाणपूजन तथा रथयात्राका मेला कार्तिक कृ०  
अमावास्याको होगा ।

चांसवाड़ामें विद्यालय और धर्मा-  
मृत वर्षा—गत आसोज सुद १५को चांस-  
वाड़ामें वहांके दीवान मुंशी मिहिरलालजीके  
हस्तसे "सेठ चंपालाल विनयचंद बागवर प्रांतीय  
विद्यालय और छात्रालय" बड़े समारोहके साथ  
खोला गया था । इस कार्यके उत्पादक ब्र०  
शीतलप्रसादजी खास उपस्थित हुए थे । खुज्जे  
ही बागीदौरा, आंगणा, अरथोणा, कालिनरा,  
तलवाडा, नोगामा, डेडुका, परतावर, पारोदा,  
जेतमाड, और गोटोलेके २९ विद्यार्थी दाग्विज  
हुए हैं जिसमें ८ पेइड व १८ अनपेड हैं । पेइ-  
टसे भी सिर्फ ४) मासिक सवे लिया जाता  
है । पं० कुंवरलालजी न्यायतीर्थ धर्माध्यापक



नियत हुए हैं और अंगरेजी संस्कृतके जाननेवाले सुग्री० की आवश्यकता है। अगले दिन दीवान साहबके समापतित्वमें पब्लीक उपदेशक समा हुई थी जिसमें ब० शीतलप्रसादजीने आत्मोन्नति पर बहुत ही प्रभावशाली व्याख्यान दिया था और धर्मके नाम पर जीवहिंसा न करनेका खास उपदेश दिया था। इसमें दशहराके कारण आए हुए १५ राजपूत सरदार और ठाकौर उपस्थित थे। मास्टर दीपचंदजी उपदेशक भी खास पधारे थे और आपके भी दो जोशीले व्याख्यान हुए थे। अब वागड़मार्गको इस विद्यालयका काम उठाना चाहिये। इसके लिए एक उपदेशकको वागड़के हरेक छोटे बड़े ग्राममें घूमना चाहिये।

**परिवार सभा**—का आगामी अभिवेशन सिवनीमें होना निश्चित हुआ है।

**सिवनी**—में श्री० सेठ पुरनसावजीके पिताका स्मारक—गोपालसावजी जैन औपचार्य खुल गया। व्यय १००) मासिक होगा। वैद्यका काय पं० नंदनलालजी इंटरवाले करेंगे।

**जालापुर**—में दशहरा पर गौतम नेमचंद व्यायामशालामें मर्दाना खेल हुए और वार्षिक पुरीक्षा हो गई थी तब त्यागी पन्नालालजीके हस्तसे सर्टिफिकेट और रौप्य पदक दिये गये थे। त्यागीजी विद्यापियोंकी कसमसे बहुत प्रमत्त हुए थे। यहां जैन गायन समाज है जिसके भजनदि सुन कर त्यागीजीने अच्छा रिमार्क लिखा है और मेरी सुझावें गायन समान-को प्राप्त, पूमानेका निश्चित हुआ है।

३५०००)का दान—सागाके मोदी धर्मचंदजीने २५०००) जैन सर्वहितैषी औपचार्य और १००००) दीन मनुष्योंको मुट्ठी बांटनेके लिये दिये हैं।

**सिवनीमें उत्सव और दो सभाएँ**—सिवनीमें गत ता० २७ से २ तक रथोत्सव और नागपुर प्रांतीय खंडेलवाल वि० जैन सभाका उत्सव सेठ गंभीरमलजी पांड्या कलकत्ताके समापतित्वमें और जैन शास्त्रीय परिषदका अधिवेशन न्यायालंकार पं० मवलनलालजीके समापतित्वमें सकलतापूर्वक हो गया। इसमें बहुतसे खंडेलवाल तथा २०-२२ पंडितगण उपस्थित हुए थे। कई महत्वके प्रस्ताव पास हुये हैं और “जैनदर्शन” नामक मासिक पत्र शास्त्रीय परिषदकी ओरसे पं० वंशीधरजीके सम्पादकत्वमें प्रगट होना निश्चित हुआ है जिसके एक वर्षके बादके लिये ५००) की तनवीज हुई है तथा समापति सेठ गंभीरमलजीने इसके लिये तीन वर्षके १२५) वार्षिक देनेके स्वीकार किये तथा २१००) समाको शिक्षाप्रचारके लिये और ५००) समा लक्षके लिये दिये और ८००)-२००) सभामें भी भरे गये थे। खंडेलवालकुलमृग पं० चन्नालालजीका इसमें विशेष प्रयास था और मंत्री चैनमुखजी लावड़ाने तो इतनी प्रशंसनीय सेवा की कि आपको १००) का मंडप समायी तरफसे देना निश्चित हुआ है। यहां दो मूत्र फोटो भी लिये गये थे।





## हमारी दक्षिण खास।

( लेखक-मूलचन्द किसनराव चापदिया )

( गतांसे भागे )

मूलापत्री-ता. १-५-१९ को पहुँचे। यह बड़ा भारी प्राचीन जैनस्थान है। सिद्धांत प्रत्य और अमूल्य प्रतिमाओं के लिये बहुत प्रसिद्ध है। यहाँ की दि० जैन पाठशाला देखी। १५ वर्ष से स्थापित है। संस्कृत कानड़ी और इंग्लिश की शिक्षा दी जाती है। ७० विद्यार्थी रहते हैं। अभ्यापक ६ हैं जिनमें धर्मभ्यापक पं० लोकनाथ शास्त्री उस्तादी और पोषकारी हैं। प्रत्येक विद्यार्थी को परमोद्दिष्टा जबरन देने की आशयकता है। छुटी होने से सिर्फ १६ विद्यार्थी आ पाये थे जिनकी परीक्षा ली। फल संतोषजनक रहा और ३) का इनाम बाँटा गया। स्थायी फंड २००००) का है और ३५०) वार्षिक सर्किल में फाँट मिलती है। प्रोप्रेट वृद्ध की आशयकता है। यहाँ जैनियों के ५० घर हैं जिनमें २२ जैन उपाध्यायों के हैं। यहाँ पंडिताचार्य भटारक त्वादकीर्तिजी का निवास है। आप वृद्ध, अनुग्रही और संस्कृत तथा धर्मशास्त्र के जानकार हैं। आपके मठ में परिग्रह बहुत है। आपने पाठशाला को १५०००) देने की कहे थे वे अभी तक दिये नहीं सिर्फ १०००) ही दिये थे। पाठशाला का दूल्हा भी नहीं है। मेरी पड़नाम बोटी को इस पर उवाच करना चाहिये। यहाँ १८ छोटे बड़े प्राचीन मंदिर प्राचीन बनावट के हैं जिनमें चंद्रनाथ वस्ती (मंदिर) बहुत ही विराट है। छह छंद में जाने पर दर्शन होते हैं। श्री चंद्रप्रभु की पातु की कङ्गावन विशाल और बहुत मूल्य प्रतिमा विराजमान है। तीसरे मज्जले पर वेदी है जिसमें स्फटिक की छोटी नदी ४० प्रतिमाएँ हैं। इस मंदिर में बहुत ऊँचा मानस्वतम भी है। दूसरा बड़ा मंदिर युक्वस्ती मंदिर है जिसमें श्री पार्थनाथ स्वामी की कायस्थान प्राचीन प्रतिमा बिना छेद की है। यह भी विराट है और अभी इसका जीर्णोद्धार हो रहा है। इसमें ७ चौबीसी प्रतिमाएँ (सदृशान)

इसमें, चक्रें, धातु तथा समान वर्ण के पाषाण की अतीव दर्शनीय हैं। इसमें तो साफ नहीं कि यह स्थान बड़ा प्राचीन है। पांतु खेद है कि जहाँ देखा वहाँ प्रशासक के नाम का मूल्य है। सिर्फ मूलनाथ की प्रशास और अभियेक भारती बार बार होती है। पांतु शेष सैकड़ों (सभी) प्रतिमाओं पर कभी पानी की बूंद तक नहीं पड़ती तथा ऊपर से धूल तक नहीं साफ की जाती इसका पारावार खेद होता है। जैन उपाध्यायों का गुजारा मंदिर की भावसे होता है और उनकी कमी भी नहीं है तथा प्रबंधक भटारकजी मौजुद हैं तो भी प्रशासक प्रबंध क्यों नहीं करते! भटारकजी पार्श्वी से भटारकजी लिफाने में तो सिद्धांत है तब उनका प्रथम फर्ज और कर्तव्य है कि हर एक मंदिर में हर एक प्रतिमाजी की मूल्य प्रशास होने का प्रयत्न कर ली करें। मूलनाथ की प्रशास अभियेक अपने को नहीं करने देते यह रुढ़ि भी अयोग्य है। इसी मंदिर में एक तीजोरी में सिद्धांत शाख और अमूल्य प्रतिमाएँ हैं जिनके दर्शन के लिये बहुत कोशिश करनी पड़ी। कमसे कम ५१) देने पर ही भटारकजी सिद्धांत शाख तथा प्रतिमाओं के दर्शन चाँदी की बेदी पर विराजमान करके कराते हैं। सामान्य रूप से पाँच दश ६० में भी प्रतिमाएँ निकाल कर एक २ दिखला देते हैं। इसको तो बगल देखना था इसलिये हमारी-साथों के ३० और हैदराबाद के ६० आदमी भाये थे उन सबने मिलकर ५१) देने स्वीकार किये तब ता० २ को दर्शन हुए। कुछ पूजनचामद्री और १२ तोला कपूर ले जाना पड़ा था। दुपहर को मंदिर के कमांड बंद कर दिये गये और मंडफ में सबको बिठाकर दर्शन कराये थे। भटारकजी चौकी पर बैठे थे और कपूर जलते थे। भीतर के कमांड पर कुछ देर तक पददा लगाया था और पीछे खोला गया था। प्रथम तादृश पर लिखित सिद्धांत-शाख का दर्शन कराया। कोई २ फीट लंबे पत्र हैं। इसकी नकल देखागयी और कानड़ी लिपि में कागज पर दो चुट्टी



नियत हुए हैं और अंगरेजी संस्कृतके जाननेवाले सुप्री० की आवश्यकता है । अंगले दिन दीवान साहबके समापतित्वमें पब्लीक उपदेशक सभा हुई थी जिसमें व० शीतलप्रसादजीने आत्मोन्नति पर बहुत ही प्रभावशाली व्याख्यान दिया था और धर्मके नाम पर जीवहिंसा न करनेका खास उपदेश दिया था । इसमें दशहराके कारण आए हुए १५ राजपूत सरदार और ठाकोर उपस्थित थे । मास्टर दीपचंदजी उपदेशक भी खास पधारे थे और आपके भी दो बोशीले व्याख्यान हुए थे । अब बागड़प्रांतको इस विद्यालयका काम उठाना चाहिये । इसके लिए एक उपदेशकको बागड़के हर एक छोटे बड़े ग्राममें घूमना चाहिये ।

**परधार सभा**—का आगामी अधिवेशन सिवनीमें होना निश्चित हुआ है ।

**सिवनी**—मे श्री० सेठ पुरनसखजीके पिताका स्मारक—गोपाटसावनी जैन औषधालय खुल गया । व्यय (१००) मासिक होगा । वैद्यका

३५०००) का दान—सागरके मोदी धर्मचंदजीने २५०००) जैन सर्वहितैषी औषधालय और १००००) दीन मनुष्योंको मुट्ठी बांटनेके लिये दिये हैं ।

**सिवनीमें उत्सव और दो सभाएं**—सिवनीमें गत ता० २७ से २ तक रथोत्सव और नागपुर प्रांतीय खंडेलवाल दि० सभाका उत्सव सेठ गंभीरमलजी पांडव्या कृत ताके समापतित्वमें और जैन शास्त्रीय परिषद अधिवेशन न्यायालंकार पं० मयसुखलाल समापतित्वमें सकलतापूर्वक हो गया । बहुतसे खंडेलवाल तथा २०-२२ परिषद उपस्थित हुए थे । कई महत्वके प्रस्ताव पड़े हुये हैं और "जैनदर्शन" मासिक मासिक शास्त्रीय परिषदकी ओरसे पं० पंडीत सभादकत्वमें प्रगट होना निश्चित जिसके एक वर्षके घाटेके लिये तनवीन हुई है तथा समस्त प्रतिभाओं जौने हमरेका एक ग्राम होता है । मैहराकोको पोपनीला और पंचमहावकी ही है । बापू दामोदरजी आमाने पाठश १ वर्षके लिये १) मासिक, तथा काका रि टमजीने २) मासिक १ वर्षके लिये स्वी ही तथा सेठ गुरुजमल अलोगदशलेसे ३) स्त्रीलागीने दिये गये । यहाँमें शामकी ता० ५ से १० बजे पर—



निर्माण सन् १४०२ में हुआ था ऐसा चरणपादु  
काके पास लिखा है । इसकी स्थापना भैरवेंद्रके  
पुत्र वीर पण्डित की भी ऐसा कहते हैं । यहा  
भटारक ललितकीर्ति रहते हैं । उम्र ६० वर्षकी  
है । जैन ब्राह्मण ८ और जैनके १० घर हैं ।  
जैन पाठशाला बाबू देवेन्द्रकुमार भाग  
द्वारा १२ वर्षसे स्थापित है । प्रबन्धक नेमिराज  
पकीवाल है । सर्व भटारसे चलता है । ताड़पत्रके  
४० तथा अन्य मिलकर सरस्वति भटारमें ४००  
ग्रन्थ हैं । २० विद्यार्थियोंमें ७ जैन हैं । स्थायी फंड  
५०००) का है । एक मंदिरमें श्याम रत्नप्रयकी  
चौमुखी प्रतिमा खड्गासन, मनोहर और प्राचीन है ।  
मंदिरकी बनावट भी अच्छी है । पाठशालामें धार्मिक  
विशेष तथा सस्कृत शिक्षाकी आवश्यकता है ।  
पाँटको चौट होने पर भी सभी मंदिरोंके दर्शन  
आनंदसे किये तथा पहाड़ पर भी बड़ आये जिससे  
दर्द होता तो दूर रहा परंतु पांड सीधा हो पाया  
और दर्द भी कम हो गया । लाला किरोधीलाल  
दि० जैन और जैनमित्रके प्रादक हुए । यहासे चलकर  
ता० ६ को १५ मील पर—

चारण-आये । दो प्राचीन मंदिरोंमें एक श्री  
नेमिनाथस्वामीका है और दूसरा तालाबके पथमें  
अति प्राचीन है जिसका जीर्णोद्धार हो रहा है । नावमें  
बैठकर जाना पड़ता है । यहाँ नमी, नेमि, पार्थ,  
और महावीरकी चौमुख श्याम कायोत्सर्ग प्रतिमादिना  
लेखकी प्राचीन है । जैन उपाध्यायके ३ घर हैं ।  
देवेन्द्रकीर्ति भटारकका साम्राज्य है और सभी प्रति-  
माओंकी प्रशाल नहीं होती । मंदिरके पास ठहरनेका  
सामान्य प्रबंध है । यहासे शामको चलकर ता० ७  
की सुबहको १८ मील पर—

आशुस्थी-आकर मुकाम किया । ९ मील तक  
काटी बराबर है । अनेक प्रकारकी वनस्पतियोंसे जगह  
हराभास होनेसे प्राकृतिक दृश्य अतीव मनोहर था ।  
नालियरी, एलायची, फाजू, अनास, फणस, सुसारी  
आदिके बहुतसे वृक्ष देखनेमें आने थे । हमारी गाड़ीका  
बेल निबल होनेसे हम लोगोंको बहुत चक्का पड़ा  
था । यहासे चलकर ता० ८ को १८ मील पर—

तीर्थस्थी-आकर मुकाम किया । बड़ा शहर है ।  
सब चीज मिलती है । मंदिर नहीं है । यहासे  
शामको चलकर फिर १८ मील पर ता० ९ की  
सुबहको—

हूमच-आये । यहा पद्मावतीकी प्राचीन प्रतिमा-  
की बड़ी मान्यता है । १५) लेते हैं तत्र पद्माव-  
तीका अभिषेक पूजन कर दिखाते हैं । इस तीर्थका  
नाम ही हूमच पद्मावती कहते हैं । कुल मंदिर ७  
हैं और छोटी टेकरीपर एक पुराना प्राचीन मंदिर  
है जिसमें श्री वाटूवली स्वामीकी श्याम प्रतिमा  
विराजमान है । अस्वच्छता बहुत थी । टेकरीपर  
चढ़नेको मार्ग भी साफ नहीं था । बहुतसे मछोढ़े  
व चींटी ही चींटी नजर आती थीं जिससे बहुत ही  
रुग्णाल घर चढ़ना पड़ा था । खेद है कि  
भनरकजी मार्ग तक नहीं बनाने । दोफो छोड़  
कर पांच मंदिरोंमें कुल करण्ड और गाय भैंसकी  
विठा ही विठा नजर आई थी । प्रशाल तो  
होती ही नहीं । दो तीन मंदिरमें मूलनाथकजी  
पूजा प्रशाल होती है । यहा ६० वर्षके बड़े  
भटारक देवेन्द्रकीर्ति मंथि ताने है । एक हाथी,  
घोड़े, टेवल, कुर्सी, छत्रीफलंग, हजी, झूमर,  
वागीचा आदि परिमल गृहस्थीसे भी सज्जकर है ।  
नाटक जैसे एक दो दूर भी बना रखे हैं ।  
भटारकके पट्टासिपेके बहिर्द्वार २ वर्षको ~~नया~~  
होता है और उसको ३६ वर्ष पूर्ण हुए थे । न-  
तीवरा पद्माभिषेक वस्त्रज जो कि ७ दिनोंमें हो-  
वाला था उसकी जोर शोरसे तैयारियाँ हो र-  
थी । मठके मंदिरमें चारो ओर रसमी और जरीकी  
साटीए ऐसी छा दी गई थी कि जानो बड़ी भारी  
दुष्मान ही लगी हो ! भटारकजी अपने पास  
आटा, दाळ, चावल, चो, तर्कीरी सब रखते हैं  
और बाब्रियोंको आवश्यकतानुसार देते हैं जिसके  
पैसे नहीं मंगते परंतु बाब्रक लोग विशेष मूल्य  
ही चीजसे दे जाते हैं । बाब्रिक आग भी अच्छी  
है । हाथी भी पलता है परंतु मंदिरोंमें तो जीर्णो-  
दध्या और धूल गोबर ही स्थान २ पर नजर  
आते हैं । हम और ५० दीपगद्गीने भटारकजीसे



જેવો ચંચળ છે, આયુષ્ય વધુએ એકાં કલાં વાદળાના બળ જેવું ક્ષણ બંધુર છે, પ્રાણીની યોગ્ય લક્ષણ ચંચળ છે, એમ માનીને ધર્મ અને સમધિથી સિદ્ધિ પ્રાપ્ત થાય એવા ચોખ્ખાં પુણ્યો પ્રેર અર્થાત્ સંસાર ત્યાગ કરી ઉત્કૃષ્ટ લાભમાં જવા પુણ્યવાન થા.

માટેજ મને તે રસ્તો ખતાવે કે જોથી હું 'સંસારની ઉપાધિથી બચું'.

(જે કે મેં કુખના માર્યા વગર લેવા માંડ્યો હતો છતાં થોડેક અંશે સુવાની નિદાર તો હતોજ.)

મદારાજ, મરા આવામદથી વિરમ્ય પામ્યા ને વિચાર કરી કહેવા લાગ્યા કે-હજુ તુ વૈરાગ્ય તરફ વળવાને પૂર્ણ લાખક થયો નથી, માટે પ્રથમ તુ મારી પાસેથી શુદ્ધતાગી થાવકનેાં ધર્મ સ્વીકાર કર ને મારી સાથે ચાલ. તું જેમ જેમ ધર્મમાં જાણકાર ને દેહનાત્યાગી થઈશ, તેમ તેમ હમ્ય પંથથી મેળવશે જાણ, એવું કહી તેમણે મને આગ્રહાચારમાંના શુદ્ધતાગી આવકનેાં ધર્મ સમજાવ્યો ને મારી પાસે કૌશલ મનો પણ સોગવ્યા.

તેમના ખતોલેલા રસ્તાને મેં માન્ય કર્યો ને તેમની સાથે શુદ્ધતાગી પદ્ધતિના વેશથી રૂપા લાગ્યો. હું મદારાજ સપે થઈ્યા ગામ કપો ને મે માત્ર પણ પ્રાપ્ત થઈ.

છ એક મામ થયા પછી હજારી રવારી કે સખી આવી પહોંચી ત્યાં મરૂં મન ચાડે. તે સ્થળે લાગ્યું ને મને મદન જવરે કુખ દેશ લાગ્યો કેમકે-મને મદારાજની સાથે આવકનેાં વેર પુષ્ટ અને સાત્ત્વિક ખોરાક મળતો, તેમજ જુદી જુદી ભાતની સુવાન-દહ-પાળા સ્ત્રીઓનાં સુખાવેદ્ય રચેન દરબડી રતું તેમાં પણ વળી મદારાજનેાં નરો પદ્ધતિ ને વળી સ્વાસ્થ્યવાન ને અનુરૂપ એટલે તે પછે પુણ્યવંતુ છું ? એટલે તે પછી ખરી થઈ ગિજો જે પુણ્યવંતુની દલી તેને મને જોવાના બદલાથી કલાકેનાં હાથો સુધી મદારાજ પાસે ભેસવા લાગી ને મદારાજથી મારી દબકત પણ પૂજ્યા લાગી પરંતુ મદારાજ બસને જવાબ વગતા.

પ્રિય પાકકમળ, બપોરે આમ મને યોગાજન દિવસના રહેવાથી, ફરવાથી, પૌષ્ટિક આહાર લેવાથી મદનજવર સતાવા લાગ્યો, વિચારો સ્ત્રીમય ખની ગયા તેમાં પણ હું તો વળી તે સ્ત્રી પાત્રથીજ દેરાગી શુદ્ધતાગી થયો છું તેમ મેં વિષમતો રવાદ પ્રીયો છે, પણ જેઓ સંસારના તુરજ સુખનેાં આસ્વાદ લીધા મિવાય ૧૧ વર્ષ કે તેથી વધુ ઉંમરે શુદ્ધ ત્યાગી બ્રહ્મચારી બદારક કલ્યાદિ થાય છે, તેમને તેમના હમેશના પૌષ્ટિક આહારથી અર્થત સ્ત્રી સમાજમાં રહેવાથી કેમ વિષય સતાવતો નહિં હોય ? શું તેઓ નપુંસક છે ? શું તેઓએ પોતાની કદીનો નાશ કર્યો હશે ? શું તેઓ મધ દવાથી શક્તિનો નાશ કરતા હશે ? ના ના તેમ કંઈ નહિં. તેઓમાંથી સેકડ પચાવન જાણને ને તેથી પણ વધુને તે કુષ્ટ મદન સતાવતો હશે પણ તેમાંના યોગાજન જાણ મન મારી જોરી રહેતા હશે, ખાદીના તમામ પોતાની કુષ્ટ ગમના પૂર્ણ કરતા હશેજ. એ તો નિરમદેહ છે કે તેઓ તે મારી શુદ્ધતાગી કરતા હશે ને નગવાસનાને મદાન દેખ ખાધતા હશે. અદા ! કળીકાળ તારી અજબ અસિદ્ધારી છે.

એ પછે બેસાર હું ચારિત્રી બજા થયો હતો અને આખરે મારું મન વૈરાગ્ય તરફ દબ થયું જેથી હુતજ મે નૈકિક બ્રહ્મચારીનો વેપ ધારણ થીધો ને તે કિયાઓ પાળવા લાગ્યો. મને સિદ્ધિમાં હું મુખે પ્રમોદનપન કરી શકું છું. હાથમાં મને કુષ્ટ પણ પ્રમાણની ઉપાધિ નથી. માત્ર મનના પ્રમાણે હું મમાજગેવા કરવા ને ને જોના સુચનેને મારા જેવાં સંદેશી બચાવવા મારીશ કંઈ છું. મને મારો આત્મો પૂર્ણ રૂપથી સમગ્રજ ગયો છે, જેથી મને હવે સંનગના દક્ષિણ સુખની લાખમાં થતી નથી. વધારામાં હું પૌષ્ટિક ખોરાકનું ચેવન કડું છું છતાં મરૂં મન કુષ્ટ હૈદ્રિય સુખ તરફ તમિલુજ નથી. એ મારી દેહના પિત્તવા નિશાની છે અને તેથી કરી બનિષ્ઠમાં હું મુખેથી ધર્મ માધન કરી આ રહેલું રહવાથી કરી સકીશ, એમ મને